माधुर्य लहरी

(निम्बार्कमत का काव्य-ग्रन्थ)

रचयिता—

श्रीकृष्णदास जी

सर्व्वेश्वरो जयति

श्रीनिम्बार्कमहामुनीन्द्राय नम

माधुर्य लहरी

(निम्बार्कमत का काव्य ग्रन्थ)

रचयिता

श्रीकृष्णदास जी

सम्पादक—

केशवदेव शर्मा "प्रपन्न"

प्रकाशक—

बाबा श्रीविहारीदास जी "त्यागी"

गौतम ऋषि का आश्रम, बाराह घाट,

वृन्दावनधाम ।

दो शब्द

वृन्दावन के पावन धाम म पनपने वाले वैष्णव मता म श्री निम्बार्काचार्य का मत अन्यतम है। इनकी आध्यात्मिक दृष्टि भेदाभेद वाद की है जो भारतीय दर्शन के इतिहास म एक नितान्त प्राचीन वाद है। मध्ययुग म आचार्य निम्बार्क इसके प्रतिष्ठित प्रतिनिधि ह। ब्रह्मसूत्र के रचयिता बादरायण अपने ग्रन्थ म भेदाभेदवादी आचार्य औडुलोमि तथा आश्मरथ्य के मता का सादर उल्लेख किया है। शंकरपूर्व आचार्या म भर्तृप्रपञ्च इसी मत के अनुयायी थे तथा शंकरपश्चात् युग मे भास्कर का भी यही मत था। निम्बार्क मत म उपास्य देव श्री राधाकृष्ण हैं जो 'सर्वेश्वर' के नाम से विशेषत उल्लिखित किये जाते ह।

प्रस्तुत ग्रन्थ इसी मत से सम्बन्ध रखता है इसके रचयिता है—'कृष्णदास' जो काशीमण्डल के ही निवासी थे। ग्रन्थ के अन्त मे उनका परिचय इस प्रकार उपलब्ध होता है।

विन्ध्य निकट तट सुर्धुनी, गिरजा पत्तन ग्राम।
हरिभक्तन कै आश्रै, कृष्णदास विश्राम॥
ग्रन्थ माधुर्य्य सुलहरि, अस कहियै जाको नाम।
कृष्णदास मुख श्री कृपा, प्रगट भयो ता ठाम॥
अष्टादश सत लीजियै, सम्बत् बावन संग।
भाद्र मास सुखसिंधु, श्री जन्मारम्भ तरंग॥
तिरपन सम्बत् को अमल, अति वैसाख सुमास।
लहरि माधुरी सुख लह्यौ, सपूरन बन आस॥

इससे पता चलता है कि वे विन्ध्याचल के पास गंगा के तीरस्थित किसी गिरिजापत्तन के निवासी थे। ग्रन्थ की समाप्ति १८५३ सम्वत् म हुई थी।

यह ग्रन्थ इस प्रकार डेढ़ सौ वर्ष प्राचीन है। ग्रन्थकार निम्बार्क मत के अनुयायी ह। उन्होने व्रजमण्डल के सत आवरणा या मण्डला का वर्णन बड़े

ही समारोह के साथ किया है। भगवान् राधिकारमण के सखाओ का तथा रासेश्वरी श्री राधिका की रूपमाधुरी तथा सखीसमाज का जो वर्णन यहाँ प्रस्तुत किया गया है वह भागवत शास्त्रानुरूप है। राधाकृष्ण के विविध विलासो के भक्तिमय वित्ररण करने मे कवि ने अपनी शक्ति का अच्छा परिचय दिया है। ग्रन्थ वैष्णव भक्ता के मनन की वस्तु है। काव्य की दृष्टि से इसमे भले ही त्रुटि दीख पडे, परन्तु भक्ति की दृष्टि से निरखने वाले भक्तो के लिए यह सर्वथा मनोज्ञ, सरस तथा रोचक प्रतीत होगा।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन के लिए वृन्दावन के बाबा विहारीदास जी "त्यागी" हमारे धन्यवाद के पात्र हैं। ग्रन्थ के सम्पादन मे उतनी सावधानी न होने पर भी यह बहुत कुछ शुद्ध छपा है। आशा है कि प्रकाशक महोदय अन्य ग्रन्थो का भी इसी प्रकार उद्धार कर भक्त तथा काव्य-रसिक दोनों का कल्याण साधन करते रहेंगे।

काशी,
५-२-५०

—बलदेव उपाध्याय

—· परिचय ·—

मा‌धुर्य लहरी' के कर्ता श्री कृष्णदास जी निम्बार्क सम्प्रदाय में दीक्षित भक्त थे। ये मिर्जापुर के निकट गंगा तट पर गिरिजापत्तन नामक ग्राम में रहते थे। इन्होंने अपने को हरिभक्तदास का शिष्य बतलाया है इनके नाम पर खोज में कई ग्रन्थ चढे हुये हैं पर छानबीन करने से पता चला वस्तुतः इनके तीन ही ग्रन्थ हैं।

१—"माधुर्य्य लहरी" (रचनाकाल १८५२ से १८५३ तक) २—"भागवत भाषा" (रचनाकाल १८५२ से १८५३ तक) ३—"भागवत माहात्म्य" (रचनाकाल १८५५)

खोज में इनके नाम पर एक मंगल भी मिलता है किन्तु इनकी रचना न होकर श्री विहारिनिदास जी के शिष्य श्री नागरीदास जी की है।

खोज में "गिरजापुर" व मिर्जापुर या गाजीपुर मानने की संभावनायें भी प्रगट की गयी हैं। पर गिरजापत्तन या गिरजापुर ग्राम मात्र था या कोई बड़ा जनपद रहा होगा, मिर्जापुर या गाजीपुर से उसका कोई सम्बन्ध नहीं जान पड़ता, समुचित सामिग्री के अभाव में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता।

कृष्णदास जी केवल अनुवादक ही न थे, उनमें स्वतन्त्र निर्माण की शक्ति भी थी, "माधुर्य्य लहरी" नाम का ग्रन्थ उन्होंने स्वतन्त्र रूप से प्रस्तुत किया है, वह आकार प्रकार में बहुत बड़ा है। यह हिन्दी में ही कविता नहीं कर सकते थे, संस्कृत में भी लिखने की क्षमता इनमें थी इसका प्रमाण मंगलाचरण के संस्कृत श्लोकों और उपसंहार की संस्कृत रचनाओं से मिल जाता है।

"माधुर्य्य लहरी" में राधाकृष्ण की साम्प्रदायिक लीला का विस्तृत कथाबद्ध वर्णन है। ग्रन्थ में काव्यगत चमत्कार का प्रभाव और भावगत रसात्मकता का प्राचुर्य्य है, कवि की रचना में काव्य गुणों का सद्भाव और दोषों का अभाव है, इससे यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि कवि में अच्छी क्षमता थी।

हिन्दी में प्राचीन काव्यों का अनुशीलन भी कम हो रहा है, और उनका प्रकाशन भी न्यूनातिन्यून, अधिकतर वे ही प्राचीन ग्रन्थ छपा करते हैं जो धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं, या पाठ्यक्रम में चलते हैं। हिन्दी की संस्थायें भी प्राचीन ग्रन्थों का छापना बन्द करके पाठ्य पुस्तकों के प्रकाशन में लीन हैं—कर्तव्यमौन हैं व्यवसाय मुखर, नवलकिशोर प्रेस, वेङ्कटेश्वर प्रेस भारतजीवन प्रेस, खड्ग विलास प्रेस, यहाँ तक कि बंगवासी प्रेस आदि ने जितने प्राचीन ग्रन्थ प्रकाशित किये थे उतने एक संस्था तो क्या सब संस्थाएँ मिलकर भी प्रकाशित न कर सकी, अपने प्राचीन काव्य साहित्य की गौरव की बातें करने वाले तो बहुत मिलते हैं पर उसके सम्पादन, प्रकाशन तथा अनुशीलन पर ध्यान देने वाले अत्यल्प।

साहित्य के लिए यह शोचनीय स्थिति नहीं कही जा सकती, ऐसी स्थिति में भक्ति की साम्प्रदायिक दृष्टि से ही सही जो प्राचीन ग्रन्थों का सम्पादन व प्रकाशन कराते हैं वे श्लाघ्य हैं, माधुर्य लहरी का सम्पादन यद्यपि आधुनिक, वैज्ञानिक और साहित्यिक प्रणाली से नहीं हुआ है किन्तु, भक्त सम्प्रदाय के बीच जिस प्रकार सम्पादित और मुद्रित ग्रन्थ प्रचलित थे या हैं, उस रूप में भी यह ग्रन्थ प्रकाशित नहीं किया गया है, इस युग में साहित्यिक ग्रन्थ जिस छपाई सफाई शुद्धता से छापे जाते हैं उसी पद्धति पर इसको सम्पादन प्रकाशन करने का प्रयास किया गया है इसके सम्पादक और प्रकाशक दोनों रूप में प्राचीन काव्य का उद्धार करने के लिये अनेकानेक धन्यवाद देता हूँ। और आशा करता हूँ कि भविष्य में भी इसी प्रकार अच्छे अच्छे ग्रन्थों का सम्पादन और प्रकाशन करने में संलग्न रहेंगे। श्री विहारीदासजी ने "गोपालतापिनी उपनिषद्" प्रकाशित करके सम्प्रदाय को बहुत सी अलभ्य सामिग्री दी है, और मेरा विश्वास है कि वे भविष्य में भी इसी प्रकार इस कार्य में संलग्न रहेंगे। वे तप पूत भक्त हैं उनके लिये इस प्रकार का संभार कर लेना कथमपि असक्य नहीं है, हिन्दी साहित्यिक के नाते मैं उनके प्रति कृतज्ञता प्रगट करता हूँ।

ब्रह्मनाल काशी,
महाशिवरात्रि, २००६,

—विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

सपादक का वक्तव्य

— * —

माधुर्य लहरी" के कर्ता श्री कृष्णदास जी निम्बार्क सम्प्रदाय के एक पहुँचे हुये भक्त थे आप के जन्म-सम्वत् तथा वंश परिचय आदि पर अभी पूरा प्रकाश नहीं डाला जा सकता है, केवल इनके ग्रंथ के आधार से इतना पता अवश्य लगता है कि आप श्री हरिभक्तदास जी के शिष्य थे, तथा विन्ध्याचल के पास गंगा तट पर स्थित गिरिजापत्तन नामक ग्राम के निवासी थे। माधुर्य लहरी का रचनाकाल सं० १८५२ से १८५३ सं० तक माना गया है जो कि आपकी रचना से भी स्पष्ट होता है जिसका ग्रंथ में उद्धरण इस प्रकार है,

विंध्य निकट तट सुर्धुनी, गिरजापत्तन ग्राम।
हरिभक्तन के आश्रै, कृष्णदास विश्राम॥
ग्रंथ माधुर्य सुलहरि, अस कहियै जा को नाम।
कृष्णदास मुख श्री कृपा, प्रगट भयौ ता ठाम॥
अष्टादश शत लीजियै, सम्वत् बावन संग।
भाद्र मास सुखसिन्धु, श्री जन्मारंभ तरंग॥
तिरपन सम्वत् को अमल, अति वैसाख सुमास।
लहरि माधुरी सुख लह्यौ, संपूरन मन आस॥

इनके सम्बन्ध में विशेष अन्वेषण, ग्रन्थ मे "परिचय" लेखक श्री विश्वनाथ प्रसाद जी मिश्र ने किया है जो कि इनकी बहुत सी बातों को स्पष्ट करता है वह विशेष अन्वेषण हमारे पूज्य मिश्रजी के पास ही रक्खा है, समय आने पर वह लेख जनताजनार्दन के दृष्टिपथ भी हो सकेगा।

कृष्णदास जी एक उद्भट कवि थे इनके दो ग्रन्थ और भी मिलते हैं जो कि "भागवत भाषा" तथा "भागवत माहात्म्य" के नाम से प्रसिद्ध हैं, संस्कृत रचना में भी इनकी अच्छी रुचि थी, जो कि ग्रन्थ ही स्पष्ट कर रहा है।

प्रस्तुत ग्रंथ में श्री राधाकृष्ण की अष्टयाम लीलाओं का वर्णन इतने सुचारु सुस्पष्ट रीति से किया गया है कि जो भक्तमंडल को भक्ति रस में ओतप्रोत कर सकेगा, श्री वृन्दावन गोलोक धाम के सतावरण का विशद वर्णन भी ग्रन्थ मे किया गया है।

सक्षिप्त कथानक —अधिक न लिखते हुये इतना ही पर्य्याप्त होगा कि एक समय सनकादि महर्षि तथा नारद जी आदि बहुत से देवगण ब्रह्माजी की सभा मे बैठे थे, वहाँ पर सनत्कुमार द्वारा प्राणियो के कल्याणार्थ प्रश्न, ब्रह्माजी को सभ्रमित देखकर श्री हंसावतार भगवान का प्रादुर्भाव तथा प्रश्न समाधान, विशेषजिज्ञासा के लिये गोपेश्वर जी के पास जाने का आदेश, बाद मे हंसरूप भगवान् का अन्तर्धान होना, तदन्तर सनकादि ऋषिया का गोपेश्वर जी के पास आना, उनसे भगवान की नित्य लीला के सम्बन्ध मे प्रश्न करना, प्रश्न होते ही गोपेश्वर जी का कथा वर्णन करना आदि ।

हस्तलिखित इस महान ग्रन्थ का प्रकाशन हमारे स्वनामधन्य वीतराग श्री बाबा बिहारीदास जी "त्यागी" ने करके निम्बार्क सम्प्रदाय की तथा भगवान सर्व्वेश्वर की महान सेवा की है "त्यागी" जी का अधिकतर समय ग्रन्थो के प्रकाशन मे व्यतीत होता है ।अभी हाल म ही "गोपालतापिनी उपनिषद्" को बृहत् सस्कृत टीका सहित आपने प्रकाशित किया है, तथा "नारद रहस्य गोष्ठी" नामक निम्बार्क सम्प्रदाय का महान् ग्रन्थ प्रेस म मुद्रित हो रहा है, शीघ्र ही प्रकाशित होने वाला है, और कई ग्रन्थ भी छपने वाले ह यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि "त्यागी" जी सम्प्रदाय के हृदयभूत व्यक्ति हैं ।

त्यागीजी की तरफ से हम उन महाविभूतियो को भी हृदय से धन्यवाद देते हैं जिन्होंने इस ग्रन्थ मे अपनी सम्मतियाँ प्रदान की हैं ।

हमारे वे महानुभाव भी धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होने इस हस्तलिखित प्रति लिपि को सुरक्षित रखा है, जिनका नामोद्धरण ग्रन्थ के अन्त म इस प्रकार है, **स० १८७१ वर्षे मासोत्तममासे शुक्लपक्षे तिथौ चन्द्रवासरे लिखित जसराम ब्राह्मणेन लिखायित लाडिलीदासेन ।। शुभम्**

इस ग्रन्थ का सम्पादन कार्य त्यागीजी ने मुझ अज्ञ को प्रदान किया, इस नाते अशुद्धियाँ रहना स्वाभाविक ही है । यह ग्रन्थ इतनी शीघ्रता से प्रकाशित हुआ है कि हम इसकी विषय सूची आदि बहुत सी बाते प्रकाशित न कर सके, यह ग्रन्थ जिस रूप से आपके सामने उपस्थित है भक्तगण उसे अपनी वस्तु समझकर अपनायेंगे तो मे अपना परिश्रम सफल समझूँगा, ||इतिशम्||

फा० कृष्ण शिव चतुर्दशी
स० २००६

भगवत्प्रेमियों का दास
केशवदेव शर्मा "प्रपन्न"
वृन्दावन धाम

❋ श्री हरि ❋

श्री सर्वेश्वरो जयति

॥ श्रीराधाकृष्णाभ्या नम ॥

❋ माधुर्य लहरी ❋

श्लोकः – श्री राधावरपादपद्मयुगलं नित्य शरण्य भजे, लब्धं श्रीहरिभक्तदामकृपया तान्सद्गुरून्सन्नमे । राधाकृष्णविलास-धाम प्रकटी कर्त्तु मनो धावति लिप्साप्रौढतरा तु यस्य हृदये हास्य न मः पश्यति ॥१॥

॥छ०॥ श्री स्वामिनीपदकमलनखमणिचारु चद्रमयूषता ॥
ब्रह्माड अमितप्रकाश प्रसरप्रमोद पूरपियूषिता ॥
अनगम्य अकथ अनत अनवधि अप्रमेय महीमन ॥
कुरु पान चित्त चकोर इव रसकृष्णदास दृढीमन ॥

दोहा—हरि द्वय अक्षर बीज तरु, भक्तिदास भल जोय ।
त्रिपदी सगम सेय सब, तरे रह्यौ नहि कोय ॥१॥
हरि कहि भक्ति सुदास भजि, षट् अक्षर कौ मत्र ।
महिमा वेद पुरान मैं, जाहि कहैं सब तन्त्र ॥२॥
हरिहित भक्ति सुदास के पद नख छटा प्रकास ।
महामोह तम निबिड अति, वदत होत विनास ॥३॥
योग सिद्धि फल चारि मय, मगल मोद अभिष्ट ।
हरिहित भक्ति सुदास पद कृष्णदास के इष्ट ॥४॥
दुर्गम भीम अपार दृढ, भवनिधि अति दुख हेतु ।
कृष्णदास गुरुदेव के, चरन तहा सुख सेतु ॥५॥
भूत भविष्यति काल औ, वर्त्तमान पुनि गाय ।
जुगल उपासक जे भये, मो शिर तिनके पाय ॥६॥

मदन मोहन राधा चरन, पद्म पराग सुवास।
मन मलिंद ह्वै जिन लई, कृष्ण दास तिन आस।७॥

परब्रह्म श्री कृष्ण की, माया रचित निकाय।
जड चेतन जग जीव जे, हौ विनवौ सिर नाय॥८॥

श्री ललिता पद कमल जुग, सुमिरौं बारहि बार।
जासु कृपा लवलेस लै, होत सकल निरधार॥९॥

नाम लिये वृन्दाविपिन, तपनि मिटै तत्काल।
अनायास हिय आवही, राधा मदन गुपाल॥१०॥

चाह हिये अस उमगि ससि, गहि लीजै कर माहि।
भाग्य बुद्धि जस योग्यता, ते एकौ अग नाहि॥११॥

हरि गुन गाय लह्यो सबन, सुख जस दोऊ लोक।
मोहि अजस हू जौ मिलै, कृष्ण लिये मुद ओक॥१२॥

ऐसें चित्त विचारि कै, उर बाढ्यो उत्साह।
अब तौ यह सुख लीजिये, आगें जथा निबाह॥१३॥

समत वेद बखानिये, सबही को मत एह।
राधाकृष्ण रहस्य थल, निश्चै गत सदेह॥१४॥

जिहि जाने ससृति मिटै, मिलै परम पद ठाम।
ताहि सुनें मन चेत करि, ज्यों पावे विश्राम॥१५॥

हरि सब दिन करुणा भरें, जीव सुगति के हेतु।
विविध रूप लीला करै, तेई भवनिधि सेतु॥१६॥

हस रूप गोपाल श्री, चरन कमल रज वद्य।
सनकादिक नारद सुखद, निबारक अभिनद्य॥१७॥

बरनौ नित्य बिहार की, लीला नित्य स्वरूप।
जाहि सुमिरि लव निमिषि हू, मिटै अध भव कूप॥१८॥

एक समय ब्रह्मा निकट, बैठे चारौ भाय।
सनकादिक मुनि वृन्द बहु, नारद चित्त लगाय॥१९॥

आगम निगम पुरान जे, सब्द प्रबध अपार।
देव दनुज उपदेव सब, साहैं सभा अगार॥२०॥

वर सिहासन मध्य तहा, चतुरानन जग हेतु।
तेज धाम सोभा सदन, सोभित मगल सेतु॥२१॥

ताहि समै कर जोरि नय, बोले सनत्कुमार।
महाराज सरवज्ञ तुम, अन्तर जानन हार ॥२२॥
आप पितामह जगत के, प्रजा सकल हम लोग।
धर्म नीति उपदेस के, और न दूसर जोग ॥२३॥
सक एक मन में महा, निसि वासर दुख देत।
कहिये सो निरवारि कै, ज्यो पावै हम चेत ॥२४॥
कर्म भूमि सब जगत मै, भरत खड दृढ नेम।
जीव करैं तहँ कर्म जे, भुगतैं छेम अछेम ॥२५॥
जज्ञ दान तप कष्ट करि, पावत है बहु स्वर्ग।
सत्य लोक पुनि हरि भजै, कितने हूँ अपवर्ग ॥२६॥
सकल ठौर ते देखिये, खिस खिस परै बहोरि।
पुनि चौरासी परिकरै, कर्म बधे दृढ डोरि ॥२७॥
सर्वोपरि वैकुण्ठ है, गुणातोत निर्माय।
पतन भयो जय विजय को, जोनि आसुरी पाय ॥२८॥
गर्भवास दुखप्रद सकल, मिट्यौ न नर्क निवास।
कहा भयौ दिन चारि के, पायें लोक विलास ॥२९॥
श्री मुख श्रुति ऐसे कह्यौ, परम धाम दृढ सोय।
जहा न ससि सूरज कहैं, पुनरावृत्ति न होय ॥३०॥
कहौ कौन सो लोक है, कहा नाम किहि ठाम।
जिहि जाने ससृति मिटै, जीव लहै विश्राम ॥३१॥
अधिष्ठान तहाँ को बसै, जाते पर नहिं और।
सर्वाराध्य परात्पर, अवधि लहै करि दौर ॥३२॥
सुनि बानी सब सभासद, उर बाढ्यौ अति हर्ष।
ससै विधि मन मै भयो, जानि प्रश्न उत्कर्ष ॥३३॥
उत्तर अग न पावहीं, सोचि रहे सब भाँति।
महत प्रतिष्ठा हानि लखि क्यो हूँ लहत न शाति ॥३४॥
विधि चितानिधि मगन ह्वै, कियो हिये हरि ध्यान।
हस रूप गोपाल तहाँ, प्रगट भयो भगवान् ॥३५॥
महिमा तेज प्रभाव अति, दिसा प्रकास निहारि।
चकित भये अज सभा सब, सभ्रम सहित सभारि ॥३६॥

निकट जानि अकुलाय सब, उठे एक ही बार ।
परे दंड इव प्रेम जुत, करें प्रणाम अपार ॥३७॥
अभिवादन अस्तुति करी, अपनी मति अनुरूप ।
मायापति श्री कृष्ण को, जानि सकै कौ रूप ॥३८॥

दै आदर सनमान लहि, चतुरानन गहि पानि ।
वर सिंघासन अपर सुचि, पधराये प्रभु आनि ॥३९॥
सेवा सकल प्रकार करि, जानि कृपा निज ओर ।
सबैं निहारैं वदन दिसि, जैसे चंद चकोर ॥४०॥

अन्तरजामी सकल उर, बोले मृदु मुसिकाय ।
ससै ग्रस्त सबै लगौ, नैनन प्रगट लखाय ॥४१॥
ब्रह्मा विनय प्रणाम करि, भाख्यौ सकल प्रसंग ।
मंद हसे सुनि कृष्ण प्रभु, जानि प्रश्न कौ अंग ॥४२॥
चितये सनत्कुमार दिसि, दया विलोचन पूरि ।
सीस नवाये जानि तिन, कृपा करी हरि भूरि ॥४३॥
करुना सील सुभाव प्रभु, सब पर कृपा समान ।
भक्त सदा उर मैं बस, रसिक अनन्य सुजान ॥४४॥

गिरा श्रवन सुखदायिनी, ससै भंजक मूल ।
वस्तु हिये दरसावनी, श्रवन अमिय के तूल ॥४५॥
दयासिंधु हिय अंग ते, उमगे वचन तुरंग ।
मंद बिहसि श्री कृष्ण प्रभु, बोले सोइ प्रसंग ॥४६॥
एहो सनत्कुमार जू, प्रश्न कियो सुख चैन ।
और नहीं कोउ जाग्य है, याकौ उत्तर दैन ॥४७॥

सुनिये सकल प्रकार अब, निश्चै एक निदान ।
बरनौं ताको जानिये, सत्र की अवधि प्रमान ॥४८॥
विश्वास मो को प्रथम, कहै सकल श्रुति गाय ।
आदि मध्य परिणाम मैं, सेषी सेष लखाय ॥४९॥
माया ईक्षण सक्ति मम, मो इच्छा बल पाय ।
अमित कोटि ब्रह्मांड की, रचना करै बनाय ॥५०॥
भूत भविष्यत काल त्रय, सकल ठौर मे एक ।
गुण स्वभाव निज प्रकृति बस, मानै जीव अनेक ॥५१॥

मै अपने निज रूप ते, सब दिन एक समान।
जा जैसें मोहि मानिहि, ता को तथा प्रमान ॥५२॥
जथा तरनि निज ठौर ते, व्यापक सब जग माहि।
जहाँ किरन को परस है, तहा भानु दरसाहि ॥५३॥
तैसै मैं निज लोक में, विहरौ नित्य बिहार।
व्यापक सत्ता सकल जग, महिमा इहै अपार ॥५४॥
लोक भेद बहु भाति के, मैं थापे लखि हेत।
भरत खड बसि जीव करि, यथा कर्म फल लेत ॥५५॥
और लोक ब्रह्माड के, भीतर ही सब जान।
रमारमन जो वास मम, सो वैंकुठ बखान ॥५६॥
ऊपर सो ब्रह्माड के, जोजन कोटि पचास।
दिव्य अलौकिक विमल वर, लक्ष्माकान निवास ॥५७॥
भरत खड महि जीव जे, भजै भक्ति के हेत।
तिन्है चतुरधा जथाविधि, नारायन फल देत ॥५८॥
असी अस कला विभू, ज्यो अवतार अलेख।
अवतारी पर भिन्न है, सो ए लोक विलेख ॥५९॥
जा तें सब अवतार ए, होत लीन पुनि जाय।
सो अवतारी जानिये, नित्य विहारी गाय ॥६०॥
जो ब्रह्मा कौ बरस है, सो शकर पल चारि।
महादेव वय वरष जो, सो पल विष्नु निहारि ॥६१॥
उदै अस्त जो विष्नु कौ, प्रति ब्रह्माड समान।
नित्य विहारी लाल सो, पलक विलास प्रमान ॥६२॥
ज्यौं अवतारी लोक त्यौं, सदन धनी के हाथ।
परम धाम याते कहै, सब धामन पर माथ ॥६३॥
जहा एक रस है सदा, नित्यानद विहार।
तहा गयें पुनि है नहीं, आवागमन विकार ॥६४॥
सनत्कुमार न सुगम है, तासु जानिवौ मीत।
जानै तौ पुनि है नहीं, माया ससृति भीत ॥६५॥
लव निमेष जो मन लगै, इन बातन के माहि।
परम धाम पावै सही, गभवास मिटि जाँहि ॥६६॥

जा महिमा वरनन करौ, मेरौं चित्त लुभाय।
वै लीला मन भावनी, कहै ग्रथ अधिकाय ॥६७॥
बोले सनत्कुमार तब, महाराज गुरु पाय।
मदभाग्य अति जानियै, जो ससै नहि जाय ॥६८॥
लघु दीरघ आचरन जो, आपु करौ मन लाय।
केवल जीव उधार हित, और न हेतु लखाय ॥६९॥
कहिये मोहि बुझाय अब, कौन लोक किहि ठाम।
नित्य बिहारी रूप को, लीला जे अभिराम ॥७०॥
जैसे हमरी होय गति, तहाँ जाइबे जोग्य।
सो साधन वरनन करौ, सब विधि परम मनाज्ञ ॥७१॥
सनत्कुमार बचन ए, सुनि पायो अतिचैन।
बोले हसगुपाल श्री, निज भक्तन सुखदैन ॥७२॥
या प्रसग मैं अब सुनो, पुराचीन इतिहास।
जेहि जाने ते होत है, सब विधि ससै नास ॥७३॥
ईश्वर इच्छा ते जगत, सब दिन ऐसे होय।
काल नेम ता कौ नही, कहै अग लै कोय ॥७४॥
एक समै यह जानिये, महाप्रलय के अत।
जग उपजावन की करी, इच्छा श्री भगवत ॥७५॥
प्रथम नासिका स्वास ते, प्रगटे वेद सुजान।
सकल जगत मरजाद हित, धर्म अधर्म प्रमान ॥७६॥
जग कारज कारन कोउ, ते जिमि जाने जाहि।
तीनि कल्प की रीति जो, कछू कही तिन माहि। ७७॥
ब्रह्म कल्प औ पाद्म पुनि, स्वेत वराह पवित्र।
कल्प कल्प प्रति ब्यास हैं किये पुरान विचित्र ॥७८॥
पद्मकल्प भागवत में, नाभि कमल अजसृष्ट।
कह्यो वराह पुरानमै, श्वेत वराह विसृष्ट ॥७९॥
ब्रह्मवैवर्त पुरान को, ब्रह्मखड सुभ जानि।
ब्रह्मकल्प की रीति जो, तामे कहा बखानि ॥८०॥
ब्रह्मकल्प की रीति अब, स्वल्प सुनौ मन ल्याय।
ज्यों ससै नासै, सकल, जीव परम पद जाय ॥८१॥

परब्रह्म श्रीकृष्ण तन, ब्रह्म प्रतिष्ठा सोय।
अमृत अव्यय धर्म दृढ, सुख एकांतिक होय ॥८२॥
कृष्नब्रह्म निज देह ते, सकल सृष्टि निरमाय।
वामा वाहन लोक वर, सब कह दिये बनाय ॥८३॥
ब्रह्मा विष्नु महेस औ, लोकपाल भूखड।
स्वर्ग मृत्यु पाताल करि, थापी रीति अखड ॥८४॥
जथा जहाँ जो चाहिये, जड चेतन व्यवहार।
तथा तहाँ सब कर दिये, जिन्हकें शक्ति अपार।८५॥
वेदाधीन बताय कै, सब के धर्म दृढाय।
जो जैसी करनी करै, सो तैसे फल पाय ॥८६॥
कला अस विभु रूप ते आप बसे बहु ठौर।
जहाँ तहाँ निश्चै लहै, जाकी जैसी दौर ॥८७॥
रचना श्रीवैकुंठ की, करी विचित्र अनूप।
रमारमन ह्वै कृष्न प्रभु, बसै तहाँ अनुरूप ॥८८॥
मुक्ति मना हेत जे, भजन करै मन लाय।
तिनि कह जथा विधान ते, देहि मुक्ति सुखदाय ॥८९॥
लघु दीरघ जो जगत मैं, ईश्वर ताको काम।
सो नारायन करत सब, सदा लोक अभिराम ॥९०॥
जो निज सुख चाहत हिये, कहै सकामी सोय।
स्वामी सुखते सुख लहै, दास नाम सो होय ॥९१॥
रूप माधुरी छवि छटा, जिनकें जीवन प्रान।
पल पल सुख वाछत रहै, रसिक अनन्य सुजान ॥९२॥
सेवा आठौ जाम की, करै भरै सुख पूर।
चोप चाह छिन छिन नई, जानत सेवा मूर ॥९३॥
ऐसे बहुत न होत हैं, प्रेम सिंधु गभीर।
नित्य विहारी लोक ते पावत भाव सरीर ॥९४॥
परब्रह्म श्रीकृष्न प्रभु, ऐसें सब निबटाय।
काम न राख्यौ एक हू, जाते चित्त बढाय ॥९५॥
तब मन मै इच्छा करी, कीजै रास विहार।
नैन मूंदि पल एक हिय, कीन्हौं तासु विचार ॥९६॥

दोय रूप ता छिन प्रभु, रहैं परस्पर देखि।
जुगलविहारी नाम यह, अचल अनादि विलेखि ॥९७॥
गौर माधुरी एक तन, कृष्न माधुरी एक।
भिन्न भिन्न ते कहत हैं, जिन के नाहिं विवेक ॥९८॥
तब प्यारे कर जोरि हसि, कही सुनौ जु बैन।
रास ईश्वरी नाम तुम, करौ रास सुख चैन ॥९९॥
तब प्यारी निज अग ते, प्रगट करी बहु बाम।
ललितादिक ए अष्टवर, अमित अगजा नाम ॥१००॥
जोरि पानि अभिमुख खरीं, सकल सखी बहुवृन्द।
जुगलविहारी तन प्रभा, निरखैं मुख सुखकन्द ॥१०१॥
आज्ञा श्रीस्यामा करी, मडल रचौ बनाय।
करै रास हम आय तहँ, सकल भाँति सुख छाय ॥१०२॥
सकल सक्ति पूरी सखी, गिनती किमि कहि जाय।
रचना लोक समस्त की, करी अधिक मन लाय ॥१०३॥
परम धाम गोलोक है, नाम विदित श्रुति गाय।
रूप न कहते बनि परै, सिन्धु न सीप समाय ॥१०४॥
ऊपर या ब्रह्माड ते, जोजन कोटि पचास।
प्रथम कह्यौ वैकुठ जो, लोक रमापति वास ॥१०५॥
ता ऊपर सो कोटि है, जोजन तासु प्रमान।
परम धाम याते कहैं, जापर और न थान ॥१०६॥
सप्तावरन कहैं तहाँ, वृन्दावन मधि लेख।
बीच रास मडल गनौ, नित्य विहार विसेष ॥१०७॥
राधाकृष्न सरूप द्वय, जुगल विहारा नित्य।
बनै मिटै ब्रह्माड बहु, रास न पावै नित्य ॥१०८॥
सनत्कुमार गनो सोई, कारन परम निदान।
तासु जानि वो ज्ञान है, और सकल अज्ञान ॥१०९॥
जुगल विहारी रूप ते, अनत कहूँ नहि जाहि।
नित्य विहार बन्यौ रहै, श्री वृन्दावन माहि ॥११०॥
पावै हिय धरि भाव ते, सेवा करि भरि प्रेम।
यथा भाव पद सो लहै, इहै सकल विधि नेम ॥१११॥

मंत्र एक हम सौं गहौ, जपो जुगल वर नाम।
राधा कृष्ण सरूप मैं, कीजै मन विश्राम ॥११२॥
भाव सिद्ध जब होय गौ, तब देखो निज नैन।
स्वल्प रीति सौं हम कह्यौ, जो पूछ्यौ पद ऐन ॥११३॥
मथुरा मडल निकट है गोपेश्वर कौ वास।
इन्ह बातन कौ अधिक सुख ह्वै है तिनके पास ॥११४॥
रसिक सग सुख लीजिये, कीजै विधि विस्तार।
भक्त सदा प्रिय कृष्ण कें, समत यह श्रुति सार ॥११५॥

सोरठा—हँस रूप गोपाल, विदा भये उपन्देश करि।
सब हो नायो भाल, वन्दन ता दिशि तन कियौ ॥ १ ॥
सनकादिक सुग्व कद फिरत फिरत आये तहाँ।
गोपेश्वर छवि वृन्द जिहि आश्रम हित राजहीं ॥ २ ॥
मिले परस्पर जानि, भाव प्रम दृढ इष्टता।
भई कथा रस खान, जुगल रूप सेवा सुथल ॥ ३ ॥
गाँवौ सोइ बखानि, जथा बुद्धि मम गहि सकी।
छमिहैं मोरि अयानि, सज्जन रसिक सुजान हँसि ॥ ४ ॥
तिनके हँसि वे हेत, मैं हूँ करऊँ चौकि यौ।
दुर्लभ फल सो लेत, जाके बुद्धि विवेक वर ॥ ५ ॥
मद अज्ञ को धर्म, अपनी रुचि कारज करै।
यातें मोहि न सर्म सुख सोई हिय होय जो ॥ ६ ॥
गोपेश्वर सवाद, सनकादिक मिल जो भयो।
सुनिये भूरि अल्हाद, ए मन सुख रस भीजियो ॥ ७ ॥
परम धाम कौ रूप, वृन्दावन गोलोक ब्रज।
सेवा जुगल अनूप, नित्य विहार सकल सुनो ॥ ८ ॥
रूप अनूप अमाय, वृन्दावन पर धाम कौ।
कृष्न दास श्रुति गाय, कृपा किसोरी की मिलै ॥ ९ ॥
इत उत वेद न मान, जहाँ प्रभू तहाँ लोक सो।
भक्ति दृष्टि परिमान, अजौं सनातन पेखिये ॥१०॥
जो व्यापक सब ठौर, एक देस ताकौं कहाँ।
ब्रज वृन्दावन और धेन लोक ते को कहै ॥११॥

ज्यौं हरि त्यौं तिन लोक, पूरित और न हो वही।
जिन्है अविद्या ओक, ते चाहौ तैसें कहौ ॥१२॥

कुडलियाँ—परमधाम वृन्दाविपिन विहरैं नित्य विहार।
मदनमोहन राधा सदा सहचरि सग अपार ॥
सहचरि सग अपार पार किमि कहि को पावै।
हरि लीला कौ अन्त सत मन मै नहि ल्यावैं ॥
श्रीललिता हिय वर्म ह्वै धरैं जथा जो धर्म।
जुगल रूप सेवा सुथल कहौ सुमरि पद पर्म ॥ १ ॥
श्रीराधा श्रीहस्त मैं गहैं जलज मुद हेतु।
ताहीको प्रतिबिब अपर तैसो पूरन गुन सेतु ॥
ता ऊपर वेदी विमल हाटक योजन पाँच।
और भूमि विस्तार जो पत्र भेद सो साँच ॥
ज्यौं कुलाल के चक्र को दारु दड पर धृ।
त्यौ वृन्दावन कमल गत अमित अड की श्री ॥ २ ॥

गो इद्री समुदाय व्रज तन कहि लोक प्रमान।
हृदय कमल सो कज दृढ़ वृन्दावन हरि थान ॥
वृन्दावन हरि थान अमित ब्रह्माडन व्यापी।
दंपति चरन सरोज विमुख पावैं नहि पापी ॥
विरजा निरमल नाम लै जम नातौ भय गो।
निश्चल जब हो होय तू जब यह जानैं गो ॥ ३ ॥

छप्पै—वृन्दावन व्रज भू इतै गोलोक सोई है।
नाम ठाम गिरि ग्राम सरित नहि और कोई है ॥
निश्चै श्रुति परिमान जानि जिय वरनन करिये।
श्री ललिता मति देहि जथा पथ सो अनुसरिये।
दपति सुखद निवास थल रचना किमि कहि जाय।
देव दनुज मुनि वृन्द वर वेद गिरा सकाय ॥ ४ ॥

चिंतामनि कह उपल कहत नहि सोभा पावै।
मोरे मुख यह बात अमल नग पीत रितावै ॥
कहि आये सब कोय जथा हरि जाहि जनाई।
उतकंठित ह्वै चित्त तथा मैं लाज बहाई ॥

अति साहस विनती करौं क्षमा भरौ सुनि एह।
सत सहायक मद के निश्चै गत सदेह ॥४॥
मैं अपने मन सों कहौं सुनौं मीत करि चेत।
सेवा धाम सरूप गुन श्री ललिता कहि देत॥
विरजा सरित सरूप दिव्य व्रज मडल घेरै।
सकल काचनी भूमि चहूँ दिसि श्री बन केरै॥
ताकौ जथा विभाग दिसा मैं जो जैसे हैं।
राधाकृष्ण अनन्य भक्त आलय तैसे हैं॥५॥

नील अरुण मनि स्वेत पीत रग हरित कहावै।
नाना विधि की जाति लगे नग सद्म सुहावैं॥
चौहट बीथी घाट कूप वापी सर जो हैं।
बन उपबन आराम बाटिका कुसुमित सोहैं॥
फूलि रहे जलजात भाँति च्याऱ्यो सुभरगा।
कूजै द्विजगन सब्द बिमल गूजै मृदु भृङ्गा॥६॥

द्वार द्वार घट दीप खभ कदली के भ्राजै।
तोरन वदनवार पताका ध्वजा विराजै॥
अगर धूप के धूम घटा नभ मडल छाई।
कूकैं केकी नाद मानि अभ्रावलि आई॥
सौंज अलौकिक सदन वदन काके कहि जाई।
राधाकृष्ण प्रसाद भाग्य पूरे निज पाई॥७॥

श्री महारानी भक्ति एक बर भाव सुपचा।
दास्य साति वात्सल्य सखा नर है जिन सचा॥
भाव नृपति शृगार कठिन राधा आधीना।
तिनकी कृपा कटाक्ष पाय सहचरि अग चीन्हा॥
अप अपने अधिकार बल बसै तहाँ ते लोग।
अप्राकृत सब वस्तु को करै अखडित भोग॥८॥
वरसानें वृषभान राज कीरति पटरानी।
सुख सपात अति अवधि वेद महिमा नहि जानी॥
नदराय को वास नाम नदो सुर गावैं।
महरि जसोदा प्रेम नेम श्रुति पार न पावैं॥

गोवरधन गिरिराज साज निति हरि क्रीडा को।
श्रीराधा शुभ कुंड रूप को जानै ताकौ ॥९॥
रावल गोकुल ठान जुगल श्री जन्म सुहाए।
सिसु लीला वर खेल सनातन होहि अमाए॥
नदी सरोवर कूप रास मंडल वहु सोहैं।
वन उपवन चौबीस नित्य क्रीडा मन मोहैं॥
पुर पत्तन ब्रज ग्राम खेट खरवट औ वाटी।
कूट अपर रमनीय षोह सकीरन घाटी ॥१०॥
मान सरोवर मान प्रद नीर केलि के हेतु।
जो सब थल वरनन करौं वाढै ग्रंथ असेतु॥
नित्य बिहारी लाल की लीला सब दिन होय।
हरि महिमा तन हेरि बुध ससै करै न कोय॥
विरजा तट ते लीजिये श्रीवन वेदी तीर।
मध्य चतुर आवरन के वसैं भक्त मतिधीर ॥११॥
सप्तावरन वखानिये ब्रजमंडल गोलोक।
च्यारि कहे तीनों सुनो जानत होय विसोक॥
प्रथम कही जो वेदिका योजन पंच प्रमान।
वृंदावन सो जानियें ताहि सुनो दै कान॥
जथा कमल के वीच पीत छत्राकृति देखो।
तैसें ही श्री विपिन अपर दल लोक विशेखो ॥१२॥

दोहा—वृंदावन गोलोक के, मध्य कहैं सब कोय।
सो तीनो आवरन ए, सुनैं न ससै होय ॥१॥

छप्पय—जमुना परिखा कूल वहै सब रितु सुखदाई।
विकसित मनिमय कंज वरन वहु अलि धुनि छाई॥
विहरैं जल के जंतु सकल पंछी रव तानै।
प्रतीद्वंद की संक मानि जियवा दै ठानै॥
शब्द जहाँ तहाँ जो उठै राधा कृष्ण बखान।
जुगल रूप रस मत्त नित जिह्वे एक सो ज्ञान ॥१॥
हीरक मनि के घाट भूमि तट अरुण सुहाई।
रचना अमित प्रकार जात कापै सब गाई॥

कल्प वृछ की पाति लता वेली बहु जाती।
मनिमय जिन के अग फूल फल डारी पाती।
आग चन्ति कैं भीत एक मनि इद्र नील की।
सुघटित विविध गवाछ रीति प्राकार सील की ॥२॥
चहु दिसि चारयो द्वार बृहत वानिक अतिप्यारी।
विदिसि हु अधिक बनाव स्वल्प बहु ठौर दुवारी ॥
अभ्यतर की भूमि पीत मनि चित्रित सोहै।
तापै बने अनेक हर्म्य लखि बुद्धि विमोहै ॥
अमल अमोल अमाय रतन बहुधाम सुहावै।
वावी कूप तडाक वाक वन चित्त लुभावे ॥३॥
या मडल मैं मुख्य नीलमनि औ तालारैं।
मुक्तादाम वितान तने भीतर गलियारैं ॥
उच्च सिखरि बहु कलस प्रभा ससि भान लजावै।
गृह सपति कौ रूप कहै नहि पारै पावै ॥
नाम लेत उपजैं घने सुभ मगल कल्यान।
सोभा सहचरि वास की कहू कहाँ मम ज्ञान ॥४॥
मडल भेद अलेख लेख ताको नहि पावैं।
परिचारिका अनत कोटि कोटिन जहँ छावैं ॥
जो इनकी कछु रीति अग लै वरनन करिये।
मिलै न क्यौं हूँ अत जनम बहु विधि के धरिये ॥
अष्ट विवजित और सब तिनको इहा निवास।
सेवा बल अधिकार गुन प्रभुता अधिक विलास ॥५॥

दोहा—सुमिरे मडल षष्ट के कष्ट मिटै निरधार।
आनद उदधि अपार को किमि कहि पावै पार ॥६॥

छप्पै—सेवा कौ अधिकार मुख्य ललितादिक हाथैं।
अपर सहचरी वृद कहे ते इन के साथैं ॥
यह मडल जो सष्ट वास तिनको अभिरामा।
वेद न पावैं भेद रूप लछन गुन नामा ॥
अकथ अनूप अपार वस्तु मन बुद्धि न धीजै ॥
कीयें निरूपन तासु आसु जग हासी लीजै ॥६।

मन मोदक जो खाइ ताहि बुधिवत न जानो।
कहो आपनें चित्त लोक उपदेस न मानो॥
फलीभूत है भी व बात ऐसी चलि आई।
याते गत सदेह होय मै प्रीति बढाई॥
कीहे विविध विरोध श्याम के धाम हि पावै।
कीजै अचरज कौन लहैं जे नेह लगावैं॥७॥

या मडल मैं अष्ट अष्टदिसि कुज विराजैं।
एक एक कौ रूप कहत सब की मति लाजैं॥
दछिन है जो कुज तहाँ श्रीललिता रहई।
जैसे लागे रतन जतन तिनको अस कहँई॥
कीरति उज्जल होय ललित सोभा कहि गाई।
महिमा बृधि बखान नालिमा नभकी आई॥८॥

पीत जहाँ परतीत हरी नित चाह कहावें।
नाना विधि के रग ताहि अभिलाषा गावैं॥
इन धारी मनि देह अष्टकुजन के काजै।
तिनको भयो जराव षष्ट मडल अति भ्राजैं॥
मुख्य इहाँ मनि पीत प्रिया की अग लखावै।
और रग ता सग जहाँ जस शोभा पावै॥९॥

प्रथम भूमिका पीत लहरि तापै रग नाना।
पारिजात की पांति अगमनि चित्र बखाना॥
लता औषधी गुल्म रूप अतिसै तापाई।
भीति जाल और द्वार द्वारि पहलें जस गाई॥
अद्भुत इहाँ बनाव देखिबह मन ते जाई।
अधिक एक तें एक पेखि चित रहत लुभाई॥१०॥

अभ्यतर जो भूमि जरी चितामनि जामै।
कुज बृहत् विस्तार कही सो लागी तामै॥
बहुत पीत मनि काम और सग सोहै ताके।
खभा भीति लदाव चौक अनगनती जाके॥
झालरि मनि मय रग अमित बहु तने बिताना।
पच बेदिका हर्म्य सिखरि कलसा जस थाना॥११॥

तोरन बदनवार पताका ध्वज फहराई।
मगलमय सब दिव्य ठौर बहु धरी सोहाई॥
मध्य चौक मै एक वृक्ष वृदा को राजै।
चहूँ ओर जल तत्र रासमडल वर भ्राजै॥
बन उपवन आराम सर सुभग वापिका।
सौरभ कुसमित कज मजु अलि द्विज अलापिका॥१२॥

अष्टजाम सेवा सकल चित्रित हैं बहु ठौर।
नैन वैन श्रवननहि ये आनै कछू न और॥
सेवा कीजै सौं ज सखी मिलि ताहि सवारैं।
दम्पति पावै चैन ऐन सौं जतन बिचारै॥
जाकी जैसी रीति कही ललितादिक जैसैं।
नेम प्रेम दै चित्त करै ताही कौ तैसैं॥१३॥

चदन भाति अनेक घसें कोउ गूँथैं फूला।
भूषन विविधि प्रकार कोऊ पटरितु अनुकूला॥
कोऊ वीरी चारु नेह की पूरी साची।
लागीं सखी अपार पाक साला विधि राची॥
अपर नीर की रीति अपर अजन चित दीने।
कोऊ मुकुर सवार अतर के भेद प्रवीने॥१४॥
जे जे लीला ठाम सकल इन कुजन माँहीं।
वैभव अति विस्तार रूप कैसैं कहि जाँहीं॥
दपति सेवा सो ज कोश ए मदिर जानो।
नित्यविहारिनि कृपा अग ललितादिक मानो॥
जुगल माधुरी मत्त नित सेवा ही आधार।
भवनमान को कहि लहै चीटी सिधु अपार॥१५॥

सोरठा—सेवा अग अनेक अमित कोटि सहचरि लगीं।
जिनकें एक विवेक सेवा सार अपार सुख॥१॥
या मडल को रूप, लोमसतनु धरि धरि कहै।
तोऊ अमित अनूप, मति अनुसारै जो लहै॥२॥
दोहा—मडल सप्त बखानियें, श्रीनिवास कहि सोय।

लाज लगै बहु भाँति जिय कहै बिना नहिं तोम।
अपनी रुचि प्यारी सबै गनै न काहू दोस ॥२॥
अमित अड भई सुमति तिय, रोम न गिरा बसाय।
नित्य बिहारिनि धाम की, छटा न पावै गाय ॥३॥

कवित्त- बातैं तौ अलेख लेख कीन्हे अबिवेक होत,
गोन खात बुद्धि जे कहावैं जग मौलि हैं।
वेद विधि शभु शेष गिरा हूँ अशेष मुनि,
अत ना लहत क्यो हूँ सबै कवि औलि हैं।
महिमा विस्तार भार पारावार अनपार,
जोह द्वार ल्याय ताहि कैसे कौन तौलिहैं।
मानताई नेम आई गाई मनभाई तौऊ
तृष हि मिटाइ सिंधु परसि भलौलि हैं ॥१॥

कौन काज लाज ऐसी करै जो अकाज अहो,
बेर बेर नर देह कहो कहाँ पाइयै।
दुर्लभ समाज मिल्यौ सकल सिद्धात जानि,
लीला गुन नाम धाम रूप सेवा गाइयै।
बानी को सयानी सबै पानी मैं बहाय दीजै,
जानी सो न रीति जासो दपति रसाइयै।
जैसी जैसी गही जिन लही तैंसी नैननहुँ,
धन्य धन्य राधाकृष्ण ईशता गनाइयै ॥२॥

एहो मन मीत नीति कान दै सुनौ ऐसी,
मडल श्री सप्तसौनि कुञ्ज कहि गावैंहीं।
दपति विलास परम धाम ताहि जानो ऐसें,
भक्ति नौधा अग नवरत्न ए सुहावैंहीं।
सेवा भनै भक्ति रूप सेवा तन धारि करैं,
जेती कला सेवा तेती भक्ति की गनावहीं।
प्रथम प्रबध मनि श्रवन सुहाई भूमि,
लागे नग रग चित्र देखि सुख छावैं ही ॥३॥

ज्ञान ही कुदब बर गौर स्याम बृदा दोऊ,
तीन पाति चहू ओर मडल कै बनी हैं॥

लता वेली औषधी औ गुल्म जाति नाना भाँति,
फूल फल पान डारी सोभा सौं सनी है।
सकल जलामै साधु हृदै पुरि रहे नीर,
फूलै सदा कन व्यक्ति जात नहीं गनी हैं।
हंस मोर त्यौं चकोर पत्र वारे वृन्द भौर,
देहधारी भक्ति मानो साँची कीरतनी हैं ॥४॥

कहत प्राकार भीति जालहु गवाक्ष रंध्र,
द्वार उपद्वार क्रम पहिलै को जानिये।
कहिये बर ठान कहा भक्ति अंग सुमिरे जो,
बानी कान धर्म एक चितै परि मानिये।
अंतर की भूमि भक्ति पाद सेवा मनि लागी,
दंपति-पद कंज श्री पराग सन्मानिय।
अष्टजाम है विहार द्वादस सत कुञ्ज मै,
विभाग ताको सुनो सो ऐसे जिय आनिये ॥५॥

कुंज तौ अनन्त अन्त कहि कौन पावै तौऊ,
स्वल्पता की रीति कछु ऐसें चित्त दीजियै।
अष्टदिस अष्टमत भिन्न भिन्न मंडल है,
षटकोण जंत्र एक और परै लीजियै।
कोनें कोन मंडल सो कुञ्ज है पचास तामैं,
एक एक मंडल की गनती यौं कीजियै।
सेष रहीं सत कुंज ताको मध्य मंडल है,
परम निकुंज धाम जानि मन भीजियै ॥६॥

ताहु को विभाग सुनौ चारयौं दिसा चारि खंड,
पंच पंचविंशति के मंडल ए जानिये।
मध्य जो विमाल भूमि कहै रास मंडल सो,
जैसे याको रूप तैसौ आगे त्यौं बखानिये।
अब सुनो चारिन मे एक को निरूपै अङ्ग,
याही कैमी रीति भेद चित्त उन मानिये।
कौन पावै बुद्धि ऐसी जैसी विधि कहिवे है,
एक टूक सोने जथा मेरु पहिचानिये ॥७॥

एक एक मडल में चारि द्वार उपद्वार,
महा राजपथ वीथी चौहट विसेखिये।
भीतर को भाव ऐसो अष्टदिसा तीनि पाति,
गनिये चौबीस तथा एक मध्य लेखिये।
या को नाम सभा कुज आगन विस्तार कहैं,
ताके बीच वेदी एक विमल परेखिये।
पुहुँमि कछु छोड़ि छोडि लागी सोपान सप्त,
ऊपर समान भूमि चित्र मनि पेखिये ॥८॥

जहाँ जैसे रतन लागे सोभा गभीर पावै।
तहाँ तैसी रीति सौ जराव जगमगे हैं।
एक जाति हरी मनि खभ तो सहस्र चित्र,
उत्तर औ दछिन कौ भाग पाय लगे है।
पच्छिम द्वै प्राची दिसा आठ सै विचित्र वेश,
चारयौं ओर ऐसे ही लदाव मौलि जगे हैं।
भीतर सकोच लै लै दो ययाति और,
जानो उच्चताई नव खड पेखि मन पगे हैं ॥९॥
खड खड हू वितान चहूँ ओर छाय रहे,
मुक्तामनि दाम झूमें छरी मनि हरी हैं।
ठौर ठौर सिंघासन सेज नवरत्न मई,
कोमलाइ अवधि ते विछी देखि परी हैं।
वेदी के नीचे उतरि आँगन जो विपुल है,
तहाँ रासमडल सो सबै मनि जरी है।
आस पास फूलन की क्यारी न्यारी न्यारी लसै,
जलजत्र समैं पाय धार अनुसरी हैं ॥१०॥
कही तीनि पाति और एक एक कुजन मै,
सात सात चौक बद जरित जराव हैं।
चहुँ ओर खभन की रचना लदाव लदे,
सप्तखड उचे उदै कलम प्रभाव हैं।
सेज सिंहासन चौकी सबै साज चित्त मोहैं,
भूषन सुघारि पट फूल गध चाव हैं।

खान पान वस्तु पात्र धाम धाम बैठि रचै,
कोटि कोटि आली हिये प्रीति के भराव हैं ॥११॥
परम आमोद धूप धूपित विधूम उठे,
जालरध्र गति पाय नभ दिसा छावहीं।
पारावत शब्द गरै नृत्य मोर कल सोर,
सरो, सुका पछी और नाम जस गावहीं।
तने है वितान कुज भीतर औ गली माहि,
तैसे ही बिछौना भूमि रग बहुतावहीं।
आवरन सोभा द्वार मगलीक द्रव्य घट,
पूगी तरु केरि खभ मनि मै सुहावहीं ॥१२॥

बाधे है वदनवार तोरन पताक ध्वजा,
दीपमाला ठौर ठौर सोभित अपार है।
जहाँ जाको परै काम लच्छ होत ताही ठाम,
नीकी भाँति जानी इन सेवा ही सार है।
भक्ति महारानी जू के अङ्गन नव बखान कीये,
तेई तौ वनाव वने इछा अनुसार है।
कैसी विधि कहै कौन मोहन हू न सुख देत,
लेत जानि भावकु जे भाव यथाचार है ॥१३॥

अष्टदिसा अष्टवत आदि जे वखान करी,
तिनहूँ को भेद एक घेर बड़ी जानिये।
द्वार उपद्वारन की रीति ठौर ठौर कही,
भीतर के मडल ते गने दस मानिये।
दसहु के दोय खड पच पच कौ प्रमान,
चाप्यो चारि दिसा एक मध्य उन मानिये।
ताहु को विभाग अष्टदिसा अष्टकुज कहैं,
मध्य एक सभा एक अनौकास ठानिये ॥१४॥
षटकोण जत्र कह्यौ कोण गत मडल हू,
पचासत कुज एक मडल विलास है।
ता कौ भेद पच दिसा च्यारि एक मध्य लहैं,
वाहू मैं अष्टकुज अष्ट दिसा वास है।

बीच सभा कुंज पच शेष सो अनौंसर की,
द्वादस सत कुंज यौं गनती सुपास है।
स्वल्प अग ठाम कौन नाम क्यौं हूँ लय सकै,
कहै कौन भक्ति रूप नवधा प्रकास है॥१५॥
कुंज कुंज अधिष्ठाता एक एक सखी मुख्य,
और सग लीन्है जूथ वृंद हू अनेक है।
सेवा रूप रीति जानै सेवा ही सो प्रीति मानै,
सेवा ही अधार ज्ञान बुधि सेवा एक है।
सेवा हिये माहि धरै सेवा मन चाव भरै,
दंपति रिसाय मागैं सेवा लता सेक हैं।
सेवा सिंधु भार बूडे सेवा सौख्य रत्न ढूढै,
मीन कैसी चाह सेवा नीर जीव टेक हैं॥१६॥
परम निकुंज सत कुञ्ज च्यारि भाग भये,
मध्य जो विसाल भूमि आदि कहि आये है।
ताहू को सरूप सुनो महारास मडल लहै,
नित्य ही विहार जहाँ होत मन भाए हैं।
चहु ओर वलै भूत जमुना प्रवाह स्वल्प,
दोऊ कूल नाना मणि घाट बनि आए हैं।
सदा एक रस नीर कोर के प्रमान हैं
रग रग की तरग माल जाल छाये हैं॥१७॥
आनद के सिंधु माहि क्रीडा जल जतु करैं,
पंकज विकास नाना रग मनि अङ्ग है।
सीतल सुगधि लैकै मद गति वायु डोलै
लोलै पद्म खड बोलै कलनाद भृग है।
जल के निसवीगन पच्छिन के तीर सोहैं,
मोहैं करैं केलि फिरै दोय दोय सग है।
कछू भूमि छोडि गुल्म पाति मनि फूल पात
गात लपटानी लता वेली नवरग हैं॥१८॥
आगें चलौ फूलन की क्यारी न्यारी न्यारी जाति,
रग रग भिन्न भिन्न शोभा सरसात है।

बीच बीच औदुचन जलजन्त्र नीर भरे,
मडल आकार चहुँ ओर दरसात है।
धरा को विलास देखो जल माहि थल भान,
थल तहा पानी पेखि चित्त भरमात है।
रज को प्रसग नाना मनिमई बालू बिछी,
कौतुक अपार और गने ना सिरात है ॥१९॥

मध्य रासमडल की वेदी विमल विस्तार,
सप्त सोपान भूमि छोडि छोडि लागी हैं।
एक एक मुख्य रग सग और रत्न लागे,
सात अग न्यारी न्यारी रीति जगमागी है।
ऊपर जो वेनी ताहि कहै चद्र मडल सी,
कोटि कोटि सूर ससि पाति लाज पागी हैं।
भक्ति महारानी जू को हृदै जानौ आतमा सो,
दपति निवेदवे को चित्त अनुरागी हैं ॥२०॥

उज्जल अनूप हियो उत्तम कहावत जो,
सोई मनि स्वेत होय प्रगट करायो है।
वेदी के प्रमाण एक रूप सित सिला लगी,
रचना प्रभेद नव रत्न वर भायो है॥
मध्य मै सहस्र दल पद्म नगमई बन्यौ,
ताके बीच षोडस औ अष्ट पत्र छायो है।
छत्र के अकार पीत प्रीति की प्रतीति मानो,
जाके विना भये कियें अन्यथा गनायो है ॥२१॥

बिछे हैं बिछौना भाति भाति कहूँ फूलन के,
तैसो हि वितान चित्र नभ देस छाया है।
नवरग रत्न जरी छरि चहुँओर खरी,
झालरि जराव मोती झुमक झुमायो है॥
हिय मै अनन्य भाव ताहि सिघासन करि,
अष्टपत्र कमल के ऊपर धरायो है।
भाव की विभावना जे अस्तरन गेदुवा है,
उदै जो प्रभाव सोइ छत्र लै घुमायो है ॥२२॥

अष्ट दिसा अष्टपत्र अष्टसखी वास लहै,
षोडस पै षोडस त्यौं सहचरी विलास हैं।
दूने दूने भाव लेकै मडल अनेक ऐसे,
सत औ सहस्र अनगिनती प्रकास है॥
जेती सेवा सौज तेती लौ हे कर ठाढी सवै,
एक एक हस्त है कैं जात अष्टपास हैं।
डीठि सिंघासन ओर चद ज्यों चकोर दीन्हे
मन अभिलाष जानि सेवा को हुलास है॥२३॥

मडल के चहुँ ओर मगलीक द्रव्य धरी,
हाटक सुहाये घट पूरे करि नीर है।
नाना भॉति मणिन का रचना दिखात जामै,
पूगीतरु केरि खभ लसै तीर तीर हैं॥
फूलमनि माल जाल बीच बीच झूमि रहे,
तीन भाव लीन्हे तैसी डोलत समीर है।
परम आमोद धूप धूम दिसा छाय रहो,
कल गान पछी करैं मत्तअलि भीर है॥२४॥

आदि जो वखान कीन्हों जमुना प्रवाह श्रेय,
अभ्यतर मडल सो तीन रूप गायो हैं।
सखी समुदाय वृद जूथ है निवास एक,
दूजे अष्टकुज सेवा सौंज कोस भायो है॥
द्वादस सत कुज को निरूप कीजे तीजे त्यौं,
सवही के मध्य रासमडल सुहायो है।
दुर्लभ प्रवेश कीये ज्ञान जोग विना कृपा,
प्यारी अग नीलावर घटाटोप छायो है॥२५॥

अरिल्ल—मडल सप्त बखान किये मेरी मति जैसी।
भाखै कौ करि नेम बात निश्चै सो तैसी॥
पुरुषारथ सब हीन देखि महिमा हरि ओरी।
एहा लेस न पावैं गाय सदा सारद सत कोरी।१॥
चित्त न लहै प्रवेस ताहि कैसें को गावै।
ज्यों पिपीलिका वदन मेरु नहि कद समावे॥

तीन काल श्रुति सार नीति सर्वोपरि ठानी। हरि हा
कीजै मन को बोध सकल बुध की असवानी ॥२॥
अपने मन परतीति भये मव होहि सुखारे।
च्यारि - अष्टदस - षटक विमल वानी पठिहारे ॥
स्याँम करै सतकार नेक निज ओरी देखै। वर हा
साधु सराहैं ताहि जासु मति कृष्ण विशेखै ॥३॥
चलें राजपथ सबै राव औ रक मद गति।
पहुँचैं वे हठि जाय मजिलि की अवधि अहै जति ॥
विधि शकर श्रुति शेष व्यास मुनिवर सुर नर जे। एहो
जिन जिन गाये कृष्ण भये भाजन जस वरते ॥४॥
जुगलविहारी नित्य सुनी जे बात पुरानी।
कीजै अति अभिलाष जात सो कैसें जानी ॥
ललिता सदा विहार अग जा मुख्य प्रमानी। एहा
तिन पद रज धरि शीस कहैं कछु अग बखानी ॥५॥

छद—गौर श्याम सरूप सागर अमिय पूर अखडित।
तत्सीकराणु प्रमाण आनद अमित अड विमडित ॥
छवि अग अ ग तरग उमगत शब्द बोलनि नेह की।
अगजा अम्बुद हिये भरि करत वरषा मेह को ॥१॥
तिन द्वार पसरै जगत मैं जन रसिक उर सीपी परै।
नाम जीवन मुक्त याते सकल श्रुति निरनैं करै ॥
नर देह दुर्लभ जानि निश्चै सग तिनको कीजिये।
भक्ति प्रीति प्रतीति अपनी कृपा उन सो लीजिये ॥२॥
नेम प्रेम विवेक श्रद्धा जतन डोरैं गाथियै।
उर धारि सो मनि गारुड़ी ह्वै मोह उरगै नाथियै ॥
इह भाँति दपति सिधु निज मन मोन करि रस पीजियै।
सत सग वियोग पावत प्राण परि हरि दीजियै ॥३॥
जिते साधन विविध विधि के कष्ट धरि जिय साधियै।
ब्रह्म शकर देवपति पद असुर नर सुख लाधियै ॥
नहि मिटत गर्भ निवास त्रास विमोह फासी सों फसे।
रसिक जन की कृपा विनतिन लोक वसि पुनि पुनि खसे ॥४॥

अब सुनौ नित्य विहार रूपक जो जथा जेहि भाति है।
मन कहौं बार अपार तो सौ अन्यथा नहि शाति है॥
प्रिया प्रीतम अ ग एकै द्विधा काति बखानिये।
निज रूप ही ते प्र`म अतिसै लोकहुँ परिमानिये॥५॥
जुगल तन जो माधुरी सो ललित ललिता गावहीं।
रसिक जन करि पान श्रवनन अवधि सुख की पावहीं॥
सखिन के सरवस्व श्यामा श्याम जिय आधार जो।
प्रथम तिनको रूप वरनै पीय मुद वर सार सो॥६॥
थल कमल के पुष्प लै कछु एक ठौरी कीजिये।
हीरा कठोरा अ ग सुछम झपि तापै दीजिये॥
वा समै जो दुति उदै सो भरि देखि नैनन भीजिये।
श्रीकिशोरी देह सुखमा जानि उर धरि लीजिये॥७॥
कज लोचन, पद्म मुख कर, चरन कमल बतावहीं,
सुनत ही दुख होत अति चित मोह बस ते गावही॥
मडुक सेवित सर कुसर सो होय नामहु पकज।
कटकादिक दोस अलिगन निसि न सेवित सकज॥८॥
सब जगत जो आल्हादकारी शसि विमुख अति कूरहू।
नीर सोखि सुखाय नासत जानि सठ मत सूरहू॥
वदनादि प्रकरण वर्जित दोष कितने पाइये।
श्रीप्रिया चरणादि सम कहि कहौं कैसे गाइये॥९॥
आनद थल पर मोद सरवर नीर पूरित सुख सदा।
परिबीज रूप हुलास उपज्यौ पद्म पद्माकर मुदा॥
एहि रीति की उत्पत्ति जाकी ताहि सम जो कीजिये।
काच चिंतामनि बराबरि किये सो जस लीजिये॥१०॥
ए अग अनुपम सर्व सुखप्रद इन कृपा ते जानियें।
रसिक जन के सग मिलि कै रीति सो पहिचानियें॥
पूज्यता महिमा सुगरिमा वदनादिक को भनै।
कहैं जे सुख लहैं तेऊ हिय हीं समुझे बनै॥११॥
रोम प्रति ब्रह्माड कोटिन वसत जाके नित्त हैं।
ब्रह्माड प्रति जे ईस लोकप जासु त्रास चकित्त हैं॥

दुर्धर्ष दुरगम दुराराध्य परात्पर श्रीकृष्ण जो।
माननी के मान समये चरन वरत हेत सो ॥१२॥
इन चरन की रज चाह दिन दिन करत छिन छिन चित्त मैं।
पाय वो सो अतिहि दुर्लभ भ्रमत जगपति कित्तमैं ॥
शील करुणासिंधु आरतबधु दुखित सहाय हैं।
दृढ आस उरधरि कृष्नदास निवास लाडिलि पाय हैं ॥१३॥
श्रीलाडिली श्रीवाम पद तल चिह्न एते देखिये।
पवि चक्र नीरजपत्र अकुश ऊर्द्ध छत्र विलेखिये ॥
ध्वजा गोपद अष्टकोण त्रिकोण जव षटकोण जे।
कल्पतरु ते आदि तेरह चितकन अति सोभते ॥१४॥
चरन दच्छिन सुनहु लच्छन गदा सख पिनाक वर।
अमिय कलस अमीय तानौ ऊर्द्ध रेखा जवुफर ॥
मीन स्यामल बिंदु रच नव चिह्न दच्छिन पायकै।
सुमिरि तेई देहि निज पद तरै भव निधि गायकैं ॥१५॥
अरुन जावक रेख चहुँ दिसि अवधि सोभा की खची।
चित्र भेद विचित्र करि करि और रचना बहु रची ॥
अगुली दल चारु नख ससि छटा जड तम नासहीं।
सहचरी गण चित्त चातक पान करत हुलास हीं ॥१६॥
पादपृष्ठ अमोल गोल सुगुल्फ कहि कैसैं भनै।
वरन भिन्न सुगधि अष्टहु पत्र लेखत छवि तनै ॥
भक्तजन तन सहचरी मन रत्न भाष्यौ श्रुति तबै।
श्रीकिसोरी चरन भूषन होय कै सेवत सबै ॥१७॥
बिछुवा पदपूरण पायल शृंखला नूपुर लगे।
वेद शाखा रिचा मिश्रित ताल स्वर बोलत पगे ॥
ए चरन पद्म पराग सौरभ श्याम अलिमन भावहीं।
ध्यान मगल हेतु सुख को धन्य जिन्ह उर आवहीं ॥१८॥
दड पल परमाणु लव को लेसहू जे ध्यावहीं।
सहचरी तन धारि निश्चै जुगल सेवा पावहीं ॥
जुगल नित्य विहार सुख जो लेन कीजिय चाह है।
श्रीकिसोरी चरन रज बल एक यह निरवाह है ॥१९॥

प्रीति की जो रीति हिय सो प्रगट ऊपर देखिये।
परस्पर तन वर न अंबर सर्वथा रुचि लेखिये॥
पुष्प अतसी रंग को पट घाघरो कटि देस है।
बेलि बूटा विविध विधि के बनिक तासु विशेष हैं॥२०॥
धेनु रोचन चंदनादिक पूर मृगमद केसरम्।
सुगंध अमल अमोल औरौ सखीगण लीन्है करम्॥
श्रीकिसोरी हृदय पिय को नाम कृष्ण विलेखितम्।
अंग अंगन रंगदेवी अंगराग विलेपितम्॥२१॥
कंचुकी ता रंग ही सों अंग रच्छा रीति की।
काछनी कटि पर बंधी पचरंग धारी नीति की॥
अनन्य सहचरि भक्तजन मन रत्न जो निरनै किये।
रंग भेद अनेक तिनके प्रथक रुचि निज निज हिये॥२२॥
कटि किंकणी गति जाल की सबरंग मनि तामैं लगीं।
अपर भूषन स्वेत मनि मुक्ता अरुन कारैं जगीं॥
स्कंध दोऊ पहिरिये उपवीत जज्ञ जथा लहैं।
वध्यका चौतनी भूषन नाम ताको सब कहै॥२३॥
हृदय पीठि उभै दिसा ता मध्य चौकी सुठि बनी।
झूमका बहुरंग मनि तेहि बीच लटक्त छवि घनी॥
कंठ मनि सौभाग्य सूचक दोय लर तिलरी भनैं।
पंच सप्तक एक दस धुकधुकीलर लरहू गनैं॥२४॥
गुल्फ लौं ऐसें लसैं ते एक एक न तै बड़ी।
रंग रंग अनेक सोभित बीच बीच लटकै लडी॥
वनमाल परम रसाल अनुपम चरन परसत सुख भरी।
का कहुं सुखमा की अधिकता रूप सरिता गर परी॥२५॥
भुज लता जुग जन अभैप्रद भेद बाजू के घने।
दोय ओरी एक मध्यक बगल ताके द्वै बने॥
कोहनी ते उतरि कै इक पद्य कहावई।
और आगे हूँ पछेली रंग प्रथक जनावई॥२६॥
चारु चूरी नग विचित्रित वलय पहुँची जुगमता।
करपरण अंगुरीन मुद्रिका को भाव कहत असुगमता॥

मेहदी की बनिक ललिता हाथ रचि कीन्ही घनी ।
श्री प्रिया जू देखि हँसि कहि आजु तौ नीकी बनी ॥२७॥
भाल परम बिसाल पालक भाग्य सब जग की सही ।
सीस नेश सुवेस केश विशेष अनुपमता कही ॥
सोभा अधिक पुनि अधिकतर औ अधिकतम तीनौ गनी ।
त्रयभाग तेई गूथ कच रचि फूल मनि बेनी बनी ॥२८॥
सौंदर्यता जो वस्तु उद्घाटी उभै पाटी लसै ।
सो उमगि अलकन द्वार ह्वै द्वय रूप की सरिता खसै ॥
मध्य रेखा माग की सिदूर सो मन लाल है ।
तिलक रग अनेक रचना पीय अटकन जाल है ॥२९॥
सहचरिन के हीय मै जो छटा स्यामा की बसै ।
सब समिटि सो भई चन्द्रिका दीन्हैं सिरोपरि सो लसै ॥
बगल दोउ श्रवण ताई किरिण मडल पाति हैं ।
चपा कली आकार ताको ऊर्ध्व सोभित भाँति हैं ॥३०॥
अग्रभाव झुकाव लीन्हैं बदिबे ना नाम है ।
मध्य के जे केस तिन पर जाल मनिगन काम है ॥
कान आगे मकर कुडल किरण बदी जर लगे ।
करणफूलहु श्रवण विवरन दुहुन मै झूमक पगे ॥३१॥
झूमकन मैं लटक लोलक जटिल बहुविधि पेखिये ।
अलक आगे झलक तैसी कुडली गत लेखिये ।
सेनाधिपति वे नाम नौ शृगार भूप चमू खरी ।
चद्रिका हू मध्य जानों विजै ध्वज ठाढी करी ॥३२॥
सव्य साची भूप मोई विकट भृकुटी धनु लिये ।
नैन परम उदार दस रस रूप करि आगे किये ॥
झुकत झूमत अरत घूमत मत्त मथर गति लहैं ।
शृगार भूप अपार बल पूरन जुगल भट एक हैं ॥३३॥
सान मान गुमान जिय गुनि अपर धनु कुडल कियौ ।
बेसरि ढिगारै धरी नावक लटक लटकन सर दियौ ॥
नासिका पुट वाम सो नय दच्छ बेसरि त्यौं जगी ।
कहौ उपमा ढूँढ़ि कोऊ मो हिये ऐसी लगी ॥३४॥

मद हास्य कृपाण कैसी छटा छूटत छवि घनी।
चिबुक स्यामल बिंदु सौभग सिमिटि याही अग तनो ॥
विविधि भूषन सुमन नख सिख प्रभा देखत ही बनी।
माधुरी भर भार अनवधि सकल रस पूरी अनी ॥३५॥
उत्तरीयक फव्यो पाछैं नील अबर नाम है।
रूप सागर उमग पावन मानो वेला ठाम है ॥
क्रीडा कमल कर पद्म लीन्हें मुकुर सनमुख देखहीं।
सहचरी गण पुष्प बरषत सफल जन्म विलेखहीं ॥३६॥
या भाँति करि शृ गार स्यामा वर सिंघासन राज ही।
आपुही लखि रूप अपनो आपु ही जिय लाज ही ॥
सहचरिन के वृद बनि बनि आय मस्तक नाव हीं।
रागभेद प्रबध सुरलै प्रिया जस अस गावहीं ॥३७॥
रूप सागर छवि तरगै अग उगम अगाधुरी।
नैन भरि भरि देखि लीजै श्रीप्रिया तन माधुरी ॥
आज लाज बिसारि जो कहुँ लाल देखन पावहीं।
अपार बल शृ गार नृप को पेखि धीर गवावहीं ॥३८॥
यह बात श्री ललिता गुनी मन सुनो री आला सबै।
दोऊ सनमुख कीजियै सुख लीजियै अनवधि सबैं ॥
विचार ऐसो करो निज निज रूप द्वय द्वय धारियै।
एक लाड़िलि ढिग रहै तन एक पिय पैं सारियै ॥३९॥
द्वते तौ एकै सिंघासन मध्य अतर पद करै।
सहचरिन के सग बातन लगे सुनि कछु ना परे ॥
सब जूथ ललिता सग लीन्हैं आय पद वदन किये।
स्वामिनो छवि रग भीनी नैन बैनन सो हिये ॥४०॥
दसा तिनकी जानि जिय पिय आपुही पूछन लगे।
लाड़िली जो अग सोभा नित्य नूतन चित पगे ॥
ललिते ललितभाषिनि कहो का हीय मैं अति सुख भरौ।
मोहि तौ आधार सोई हस्त दै टेरौ खरौ ॥४१॥
धरि धीर अति कर जोरि ललिता विनै वानी चातुरी।
रूप कौ वृत्तात भाख्यौ सुनत पिय भइ आतुरी ॥

करौ वेगि उपाय ललिते ज्यौं लहैं सुख नैन ये।
तुम बिना नहि और कारन सत्य भाखौं वैन जे ॥४२॥
ललिता कहैं महराज सुनिये अवै वह सुख लीजिये।
सकल भाँति सिंगार अपनौ रीझि हित सब कीजियै॥
हस्त गहि मृदु बोल बोले अहो ललिते ज्ञाननी।
आजु तौ निज संग लै कै देहु झाँकी भामिनी ॥४३॥
सिंगार कीजे सौंज सहचरि सबै कर लीन्हे खरी।
इहै निज आधार जिनकैं सदा या आनंद भरी॥
शृंगार करिवे हेत ललिता सीस नय बैठी लगे।
प्रथम तो भरि नैन पीवत रूप नखसिख सौं पगे ॥४४॥
जो रूप ललिता हिये राख्यो भाखि कापैं जात है।
कृपा इनहीं की लहैं नहि और यामै बात है॥
सौंदर्य्य महिमा कहत हारे पार काहू ना लह्यौ।
चित्त अपने बोध कारन यथामति सब ही कह्यौ ॥४५॥
कहैं ललिता सुनौ आली स्याम तन श्री माधुरी।
जबै देखो नित्य नूतन रूप सिंधु अगाधुरी॥
जीह द्वारे कहन हित जा कीजियै उनमान है।
देखियै नहि वस्तु ऐसी स्याम अंग समान है ॥४६॥
कहैं बिन मन ना रहै तौ जुक्ति ऐसी कीजिये।
अतिसिका के पुष्प पर मनि स्वेत भाजन दीजिये॥
उदै जो वा समै सोभा नैन भरि सो लीजिये।
मूढताई कहत है पै चित्त माहि पतीजिये ॥४७॥
निज अंग उपमा दैन हित जिय माहि प्रभु इच्छा करी।
नैन मुख कर चरन ते सुचि कमल श्रेणी लखि परी॥
इच्छा जनित जे कंज तेऊ अंग देखत लाजई।
सकल समत है इहै ए अंग अनुपम राजई ॥४८॥
सकल सौभगता भरे जुग चरन सर्वाराध्य हैं।
अमित अडन भक्त जैते होहि भजि निरुपाध्य हैं॥
धन्य जय जय शब्द कहि श्रीचरन ललिता कर लिये।
पाद तल सुभ चिह्न देखे अधिक सुख उपज्यौ हिये ॥४९॥

पेखो सखी ए चिन्ह पिय के चरन अति नीके लगैं।
निहारि दृढ़ उर धारिये अनुराग प्रेमादिक जगैं॥
चरन दच्छिन सुभग लच्छन उर्द्ध रेखा पद्म है।
वज्र अकुश छत्र जय ध्वज चक्र मगल सद्म है॥५०॥
अष्टकोणक स्वस्ति चारयौ पच जबूफलधरम्।
चिन्ह द्वादश चित्त उनके काम पूरक निधि परम्॥
लाल के श्रीवाम पद मैं चिन्ह एतै देखिये।
सख अम्बर धनुष गोपद अर्धचद्र विलेखिये॥५१॥
त्रई कोणक तीन कूरम मीन बिंदु सुचारि है।
पाइहैं ते परम पद जे चरन चिह्न निहारिहै॥
अगुली दल चारु नख श्रेणी छटा ससि उर धरै।
या हेतु ते जन ताप तम हरि सीत करि अमृत करै॥५२॥
पाद पृष्ठ विलोकि आली लोक सुन्दरता लजैं।
अष्टगध सुगध सौरभ पत्र लेखित अति सजैं॥
अनन्य भक्तन के कहे मन रत्न पूरव गायकैं।
रग भेद अनेक तिन मैं पृथक रुचि जिय पायकैं॥५३॥
कृपा की यह अवधि जानो भक्त मन भूषन किये।
आपने दृढ मानि कै पुनि करि प्रसादी तिन दिये॥
धन्य तेई मन अहो जे जुगल तन लागे रहैं।
इन बिना जिय और धरि जमराज पुर पागे रहैं॥५४॥
अग अगन तेई भूषन लागि अति सुख पावहीं।
जो जहाँ भरि प्रेम ललिता सुनहु जिमि पहिरावहीं॥
कहैं चुटुकी नाम जिनको अगुरिन मै देखिये।
पद परण शृ खल पैंजनी औ नूपुरादि विशेखिये॥५५॥
गोल गुल्फ कपोल रति के देखि फीके मानिये।
जानु जघा ऊरु रभा खभ उलटे जानिये।।
गोलता औ सरलता हित कहत सब उनमानिकैं।
जे अग अनुपम दिय उपमा लाज छोत बखानिकैं॥५६॥
प्रिया तन दुति चरन अवर पीत पट कटि देखिये।
प्रीति की अति अवधि ऐसी देखतें सुख लेखिये॥

नाभि अति गभीर त्रिवली उदर डोलत स्वास तें।
वक्ष परम विसाल उमगत प्रिया नेह विलासते ॥५७॥
अगुली परिमान द्वादश पीत रेखा थान है।
वक्ष बाईं ओर कहि श्रीवत्स चिन्ह बखान है॥
तन फब्यौ चदन बेलि बूटा चित्र रग विनीति सौं।
तापैं धर्यौ पटपीत सूच्छम अगरखा रीति सौं ॥५८॥
काछनी पचरङ्ग तापै किकिनी मनि जाल है।
रङ्ग भेद अनेक मनि गन मुख्य हरित औ लाल है ॥
मुरलिका ता मध्य खोसी बाम ओरी प्रेम सों।
झूमका जामैं लगे सुभ हेठ ऊपर नेम सो ॥५९॥
वध्यका के मध्य चौकी बीच झूमक हाल हैं।
श्रीकठ मै कठा लसैं लर अपर विसद विसाल हैं ॥
धुकधुकी लर लर लगी मनि चित्र रङ्ग अनूप है।
पदिक भावित कौस्तुभ जेहि वेद गावत रूप है ॥६०॥
एक एकन ते बड़ी इमि गुल्फ लौं मनि दाम है।
कठ लै अगुष्ठ पद भरि वैजयती नाम है॥
उच्च कध विसाल भुज आजानु लबित जुगम है।
करिसुड के आकार जन प्रतिपाल हित अति सुगम है ॥६१॥
ब्रह्माड जे अनिगनित तिन मैं विनय अविनय कहत जो।
सौदर्य्यता वर माधुरी भुजदड सीवा लहत सो ॥
श्रीहस्त ललिता दाहिनौ लै धर्यो अपने काधहीं।
बाजू विजायठ अगदादिक मजु गति तें बाध हीं ॥६२॥
हस्त पृष्ठ कबलै पहुँची भेद इनके जे कहैं।
सकल भाँति विभूषि भुज जुग निरखि मन आनद लहै ॥
करपरण अगुरिन मुद्रिकन की पानि अति नीकी बनी।
नखन मेंहदी अरुणताई पेखि नैनन ही तनी ॥६३॥
सीस मडित चिकुर मेचक घूघरे अति लब है।
रूप सागर ज्यौं लसैं सैवाल जाल अलब हैं॥
अर्धचद्राकार सूते भाल पर बगलन तथा।
समेटि करि त्रय भाग गूथे फवित हैं मनिगन जथा ॥६४॥

सुखमा प्रभा सोभा मिली जनु तीनि की बेनी बनी।
पीठि माधौ लगि बिलौलै बात साची सो गनी॥
भाल सौभगता थली तापै तिलक रचना करी।
पत्र मकरी जुग कपोलन रूप निधि चाकी धरी॥६५॥
केसरी फेटा सज्यौ रुकि दाहिनी कछु ओर है।
मुकुट वर्हापीड ऊपर धर्यो सुषमा छोर है॥
टोपिका चहुँ ओर नीचें कोर ऐसी देखिये।
अरुण मनि मनिया सुराही दार पाती लेखिये॥६६॥
तुर्रा दुहूँ दिसि झूमही कलगी तथाविधि लटकती।
उतरि कछु सिर पेच कलँगी अपर मन की अटकती॥
भाल ढिग जो कोर फेटा तहाँ हूँ ऐसै सुनो।
हरित मनि मुक्ता लगे आकार वदी को गुनो॥६७॥
सिर पेंच झूमक तीरते दोऊ ओर कानन लौं बँधी।
तास हू के मध्य वेना छोर झूमक द्वै सधी॥
कान आगें मकर कुंडल बगल दोऊ जगमगे।
वदिका के छोर झूमक तासु के नीचे लगे॥६८॥
श्रवन छिद्रन मैं यथाविधि करणफूलहु जानियें।
दुँहुँन मैं झूमक लगे लोलक तहाँ परिमानिये।
कुंडली गति अलक लटकैं रूप सर झरना मनो।
कूल ताके दोउ ओरी वक्र भृकुटी सो गनो॥६९॥
मरालि गन सखि मोद हित जुग नैन पद्म बिलास है।
दीरघटरारे कोर वारे डोर अरुण विसाल है॥
बडे भारे भरे पानीय सील सागर ऐन हैं।
किंजल्क वरुनी रेख अंजन प्रिया रंजन सैन हैं॥७०॥
नासिका पुट दच्छ मंडल नत्थ आभा भौं रहै।
वाम बेसरि कुमुद विकसै बुलाक लटकन जो रहै॥
रूप सर प्रतिबिंब भावित अर्द्धचद्र तरंग है।
मदहास प्रकास सोई मधुर बोल उमंग है॥७१॥
चिबुक शोणित बिंदु उपमा लहत कौन समान है।
जलगर्भ मैं ज्यौं अरुण मनि अति विमलता तें भान है॥

कुसुम के आभरन बहु विधि अग प्रति सोभा लई।
सुमन सौरभ गूथि कलगी दच्छ हस्तें सो दई ॥७२॥
रूप नखसिख देखि ललिता अधिक उर आनद छयौ।
स्वच्छ पौंछि बनाय दरपन बिहसि सुख सनमुख दयौ ॥
बडी बारि निहारि कै निज रूप जिय ऐसी भई।
लाड़िली के रीझ कारन जतन तौ आछी सही ॥७३॥
प्रसन्नता अति जानि सहचरि सकल चरनन मैं परी।
धन्य जय जय सब्द कहि चहुँ ओर फूलन झरकरी ॥
हेरि ललिता ओर बोले विहसि मृदु बानी अमी।
कहो ललिते याद है वह बात सुनि कैसो हँसी ॥७४॥
आजु लाल अकोर जो कछु दीजिये हम हाथ है।
श्रीकिसोरी रूप ढिगहीं जानिये निजु साथ है ॥
श्रीहस्त तें गहि पानि ललिता कहा तुम न्हैं दीजिये।
सत्य भाखौं सवथा यह गात निज करि लीजिये ॥७५॥
बार बार बलाय लै कर जोरि चरनन मैं परी।
धन्य पिय के वचन सुनि अति सहचरी सब सुखभरी ॥
वदना पुनि चरन कीन्हे बिदा ह्वै तहवा चली।
कछु सहचरि रही पिय पै कछू तिन सगै रली ॥७६॥
आय सनमुख लाडिली के दडवत वदन कियो।
बहुरि उठि लखि माधुरी कर जोरि चरनन सिर दियो ॥
बार बार अपार छवि अति भार पेखि सकोचही।
लगै जिन कहुँ डीठि मोरी तोरि तिनुका मोचही ॥७७॥
वचन दै सनमान श्री मुख विहसि मृदु बानी कहीं।
अहो ललिता कहाँ हो तुम इहाँ तो देखी नही ॥
गहर की भय मानि कछु जिय जोरि कर नय बोलही।
तेज स्यामा को अधिक अति वरन कठ विलोल ही ॥७८॥
महारानी बीन के हित गई ही निज कुज मैं।
आवतें जो भई पति सो कहत लाजौं पुज मैं ॥
बीन कांधे धरे आवत हरे नाम उचारती।
श्री किसोरी प्रिये राधे प्रेम विवस पुकारती ॥७९॥

सुखमा प्रभा सोभा मिली जनु तीनि की बेनी बनी।
पीठि माधौ लगि बिलौलै बात साची सो गनी॥
भाल सौभगता थली तापै तिलक रचना करी।
पत्र मकरी जुग कपोलन रूप निधि चाकी धरी॥६५॥
केसरी फेटा सज्यौ रुकि दाहिनी कछु ओर है।
मुकुट बर्हापीड ऊपर धर्यो सुषमा छोर है॥
टोपिका चहुँ ओर नीचें कोर ऐसी देखिये।
अरुण मनि मनिया सुराही दार पाती लेखिये॥६६॥
तुर्रा दुहूँ दिसि झूमही कलगी तथाविधि लटकती।
उतरि कछु सिर पेच कलँगी अपर मन की अटकती॥
भाल ढिग जो कोर फेटा तहाँ हू ऐसै सुनो।
हरित मनि मुक्ता लगे आकार बदी को गुनो॥६७॥
सिर पेंच झूमक तीरतें दोऊ ओर कानन लौं बँधो।
तास हू के मध्य बेना छोर झूमक द्वै सधो॥
कान आगें मकर कुंडल बगन दोऊ जगमगे।
बदिका के छोर झूमक तासु के नीचे लगे॥६८॥
श्रवन छिद्रन मैं यथाविधि करणफूलहु जानियें।
दुहुँन मैं झूमक लगे लोलक तहाँ परिमानिये।
कुंडली गति अलक लटकैं रूप सर झरना मनो।
कूल ताके दोउ ओरी वक्र भृकुटी सो गनो॥६९॥
मरालि गन सखि मोद हित जुग नैन पद्म बिकास है।
दीरघटरारे कोर वारे डोर अरुण बिसाल है॥
बड़े भारे भरे पानीय सील सागर ऐन हैं।
किंजल्क बरुनी रेख अंजन प्रिया रंजन सैन है॥७०॥
नासिका पुट दच्छ मंडल नत्थ आभा भौं रहै।
वाम बेसरि कुमुद विकसै बुलाक लटकन जो रहै॥
रूप सर प्रतिबिंब भावित अर्द्धचंद्र तरंग है।
मंदहास प्रकास सोई मधुर बोल उमंग है॥७१॥
चिबुक शोणित बिंदु उपमा लहत कौन समान है।
जलगर्भ मैं ज्यौं अरुण मनि अति विमलता ते भान है॥

कुसुम के आभरन बहु विधि अग प्रति सोभा लई ।
सुमन सौरभ गूथि कलगी दच्छ हस्तें सो दई ॥७२॥
रूप नखसिख देखि ललिता अधिक उर आनद छयौ ।
स्वच्छ पौंछि बनाय दरपन विहसि सुख सनमुख दयौ ॥
बडी वारि निहारि कै निज रूप जिय ऐसी भई ।
लाड़िली के रीझ कारन जतन तौ आछी सही ॥७३॥
प्रसन्नता अति जानि सहचरि सकल चरनन मैं परी ।
धन्य जय जय सब्द कहि चहुँ ओर फूलन झरकरी ॥
हेरि ललिता ओर बोले विहसि मृदु बानी अमी ।
कहो ललिते याद है वह बान सुनि कैसो हँसी ॥७४॥
आजु लाल अकार जा कछु दीजिये हम हाथ है ।
श्रीकिसोरी रूप ढिगहीं जानिये निजु साथ है ॥
श्रीहस्त तें गहि पानि ललिता कहा तुम कहँ दीजिये ।
सत्य भाखौं सवथा यह गात निज करि लीजिये ॥७५॥
बार बार बलाय लै कर जोरि चरनन मैं परी ।
धन्य पिय के वचन सुनि अति सहचरी सब सुखभरी ॥
वदना पुनि चरन कीन्हे बिदा ह्वै तहवा चली ।
कछू सहचरि रही पिय पै कछू तिन सगै रली ॥७६॥
आय सनमुख लाडिली के दडवत वदन कियो ।
बहुरि उठि लखि माधुरी कर जोरि चरनन सिर दियो ॥
बार बार अपार छवि अति भार पेखि सकोचही ।
लगै जिन कहुँ डीठि मोरी तोरि तिनुका मोचही ॥७७॥
वचन दै सनमान श्री मुख विहसि मृदु वानी कहीं ।
अहो ललिता कहाँ हो तुम इहाँ तो देखी नही ॥
गहर की भय मानि कछु जिय जोरि कर नय बोलही ।
तेज स्यामा को अधिक अति वरन कठ विलोल ही ॥७८॥
महारानी बीन के हित गई ही निज कुज मैं ।
आवतें जो भई पति सो कहत लाजौं पुज मैं ॥
वीन काधे धरे आवत हरे नाम उचारती ।
श्री किसोरी प्रिये राधे प्रेम विवस पुकारती ॥७९॥

नाम की धुनि सुनी प्यारे लई मोहि बुलाय कै।
विनय बानी जो कही अति प्रीति रीति लखाय कै ॥
मै नही उत्तर दियो श्री रावरौ भय पाय कै।
कृपा अनुसासन लहौं तौ सो कहौं अब गाय कैं ॥८०॥

कियो रुख उन मान जिय मै चातुरी वर धाम हैं।
श्री प्रिया तन रूपसागर प्रथम वरन्यो वाम है॥
पीय तन की बनिक हू पुनि कही अनुपम रीति सौं।
रूप दोऊ ए परस्पर अधिक एकै प्रीति सौं ॥८१॥
विनय बानी कथन ऐसी लाडिली मन मै धरैं।
हेरि फेरि उपाय सोई करी ज्यौं कारज सरैं॥
और विनती एक सुनियें ढीठ ह्वै अति भाखही ;
निराबर नित जुगल झाकी दीजिये अभिलाखही ॥८२॥

सुनि प्रिया कछु नैन मूदे मद हसि बोली असी।
रैन दिन मन मै तुम्हारे इहै है री घर बसी॥
बार बार प्रणाम करि कर जोरि ललिता सुख भरी।
सहचरी भरि मोद अति हिय सकल मिलि पायन परी॥८३॥
मध्य को पट दूरि कीन्हौ भयो जय जयकार हैं।
दस दिसा तें कुसुम वरखा होत मगलचार है॥
प्रिया प्रीतम नेह पूरे अरसपरस निहारही।
रूपके दोउ सिधु उमगे लहरि भुजा पसारही ॥८४॥
कर पद्म दल अगुरी मिली जुग नैन पलकै ना परी।
सिथलता सब अग छाई बिगत सैन अलाप री॥
भये मुद्रित पद्मलोचन दुहूँ दिसि छवि ध्यावही।
ध्येयता को रूप छायो सुरति आनन पाँवही ॥८५॥
अष्ट ललिता आदि लै औ सहचरी समुदाय हैं।
ता समै की छवि उर धरी ते रही तहाँ समाय हैं॥
वा समै की जो रीति पूछै कहौ को किमि गाइ हैं।
जुगल चरन प्रसाद सुख जानै सोई जो पाइ है॥८६॥
कहें लोक प्रमाण या मैं बात सो उन मानि हैं।
लग्यौ है जिहि घाव ताकी पीर सोई जानि हैं॥

दृड एक प्रमान ऐसे काल कछु बीत्यौ सही।
भयो जो सुखसार को भर गिरा सो पावत नहीं।८७॥
लह्यौ ललिता चेत देखै ध्यान मै सब ही लगे।
उपाय तौ कछु कीजिये सुख नैनहू जान जगे॥
बहुत बार विचार कीन्हौ जुक्ति यह मन मै लही।
श्रीप्रिया को वर नाम राधा टेरि ऊचे सुर कही॥८८॥
नाम धुनि जबही सुनी सब सखिन तजी समाधि है।
जगै सोई नाम टेरै सब्द वृद्धि असाधि है॥
खुले दंपति नैन अबुज नाम लेहि परस्परैं।
लखे सब की ओर सहचरि वारि तन मन सुख भरं॥८९॥
निकट ललिता आय करि प्रनिपात जुग पद सिर दयो।
साधि नोकें मध्य मै मुसुकाय कैं दरपन कियो॥
देखि निज प्रतिबिंब दोऊ अधिक जिय सुख पावहीं।
भाव अगुरिन को बतावै प्रेम हिय उमगाँवहीं॥९०॥
नैन दरपन मैं मिले हसि मद डाठि न मोरहीं।
दोउ लेत बलाय कर धरि सहचरी तृण तोरही॥
भरि नीर सीर अमीय झारी सुखद लै आगें खरी।
पदकमल जुग कर कज मुख ससि धोय कैं अति सुख भरी॥९१॥
लै वसन अग अगुछाय सुभ दै धूप दीप अचावन।
मेवा अहै बहु जाति नाना सुष्क आले भावन॥
जे टूटि आये सद्य तिनके भेद षटरस के किये।
सुष्क ते घृतपक्क छप्पन करि प्रकार जुदे लिये॥९२॥
को पाइहै कहि अन्त इनको वस्तु बहु विधि गुनभरी।
द्वै थार सजि भरि भरि कटोरा लै जुगल आगे धरी॥
प्रेम विवस बताय सहचरि नाम रूप जुदे कहैं।
नेह तिन को जानि दंपति पेखि अति आनद लहैं॥९३॥
दूध विसद सुगधि जामैं स्वाद सब विधि के गनौ।
धार उष्ण अपार गुन छत्तीस विजनमय मनौ॥
सहचरिन की बीनती जिय आनि मन ऐसी धरी।
लगे दोऊ करन भोजन प्रीति पूरी लखि परी॥९४॥

खात जानै स्वाद जामै अधिकता देखी परै।
बार बहु तनि होरि हँसि मुख देत कर कपत भरै॥
दुग्ध पीवत मध्य मध्य विलास बहु क्रीडा करैं।
प्रिया पीतम अरत हठ धरि सहचरी लखि सुख भरै॥६५॥
कनक खरिका दीये भारी नीर लै अचवावहीं।
वदन ससि कर कमल वरनहुं धोय पुनि अगुछावहीं॥
मुखवास चित्त प्रमोद कारन प्रथम दै वारी दई।
तमोल रूपक सहचरिन की प्रीति गुनिये नित नई॥६६॥

लाड़िली मुख देत प्यारौ प्रिया दै मुख लाल के।
दृग जोरि भृकुटी तानि मद विलास हसि छवि जालके॥
चद्रावली ढिग आय खोल्यौ अतरदान सुहाय कै।
श्रीहस्त दोऊ कै दियो वरगध अति सुख पायकै॥६७॥
वसन भूषन देखि ललिता अस्त व्यस्त सवारहीं।
मुकुर सनमुख दिया लै पुनि विहसि जुगुल निहारहीं॥
पुष्प अजलि अष्ट दै मनिथार आरति बारहीं।
बार बार प्रनाम करि कर जोरि तन मन वारही॥६८॥

परिदच्छिना करि सहचरी जुग नाम लै जय धुनि धरैं।
हरखि निरखि अपार सुख भरि कुसुम चय बरखा करैं॥
सखी गण करि सग ललिता वीन कर आगे खरी।
वाद्य भेद अनेक विधि के एक सुर की गति भरी॥६९॥
जुगल नित्य विहार कौ जस गाय हिय उमगावहीं।
अभिलाष मन मैं अति बढो अब रास झाँकी पावहीं॥
रसिक राय प्रवीन प्यारौ जानि जिय सुख दैन को।
कही मृदु मुसुकाय वानी नैनहूं करि सैनको॥१००॥
इतै आओ नेक ललिता सुनो जो हम भाषहीं।
निकट आई जानिकै निज हस्त काँधें राखही॥
लै सहारौ भूमि उतरे सहचरी अग अग धर।
दै दाहिनी गति वर सिंघासन आय सनमुख भे खरे॥१०१॥
मुरलिका निज धारि अधरन सप्त सुर पूरे कहैं।
ग्राम तीनौ मूर्छना गति तान मान अलाप हैं॥

राग रागिनि अंग छंद प्रबंध भेद अलेख हैं।
सकल मूरतिवंत प्रगटे सहचरिन के भेख हैं ॥१०२॥
रासरीति विहार कीजै लाल जिय ऐसी धरी।
लाडिली जो देहि मन तौ होय अब सुख की घरी॥
राह पहिलै नृत्य की दरसाय सुख उपजाइये।
प्रान प्यारी हेत हित करि प्रगट प्रीति लखाइये ॥१०३॥

वाद्य एकै सुर बजे पग पटकि नूपुर धुनि करी।
मदन मोहन झटकि भुज लै लटक बाकी गति भरी॥
सीस पांडुर छत्र बगलन दोउ चामर घूमही।
नृत्य आगे करत प्यारौ दिये तन मन झूमहीं ॥१०४॥

सुहाग श्यामा को अटल लखि सहचरी मन फूलही।
भाग्य अपनो अति सराहत कहत को हम तूलही॥
गई ललिता लाड़िली पै जोरि कर विनती करैं।
बार बार निहोरि लै मन देखि रुख पायन परैं ॥१०५॥

आजु रास विलास कौ सुख दीजिये मन भीजिये।
सदा मोहि सनमान दीन्हौ राखि अबहूँ लीजिये॥
मंद हसि लखि ओर सखियन दई करुणा दृष्टि है।
धन्य है हम धन्य श्री जू करत फूलन वृष्टि हैं ॥१०६॥
ललिता विसाखा दोउ कांधे भुजा दै प्यारी रली।
सखी मंडल संग चहुदिसि सकल सुख सागर चली॥
प्रिया प्रीतम लखि परस्पर डीठि क्यौंहू ना मुरै।
अभिलाष पावक पाय घृत ज्यौं अधिक चित्त चाहैं फुरैं ॥१०७॥

लगी गावन तबै ललिता जुगल नित्य विहार को।
मिले कंठ लगाय हँसि हसि लहत कौन सँभार को॥
भुज परस्पर राखि कांधे फिरत मंडल पग धरै।
छूटि सनमुख होन ठाढे तान मानन गति भरै ॥१०८॥
पग पटक औ झटक भुजकी लटक झुकनि विलास की।
नैन अटकनि भृकुटि मटकनि पलक सिकुर सनासकी॥
ढुरनि डोलनि मुरनि हेरनि मंद बोलनि हास की।
हाव भाव निचाव चोपनि बिछुरि मिलनि हुलास की ॥१०९॥

लाल अधरन धरी मुरली प्रिया कर वर वीन हैं।
तान तरल तरग उपजत होत लीन प्रवीन हैं॥
हौ सहो उन दून खैंचत सुनत सहचरि मुद लहैं।
जोर अपनी ओर चाहत नाम लै जय जय कहैं॥११०॥

नृत्य भेद अलेख प्रगटत उघट जे सगीत की।
करत कौतुक विविध विधि नहि सक नीति अनीत की॥
हार ककन किकिनी मजोर धुनि रनकार है।
वाद्य भेद प्रबध बाजत गान सुर झनकार है॥१११॥

गिरत भूषन वसन छूटत माल टूटत अ ग ते।
दोउ नृत्यत नेह जत्रित प्रेम तत्र उमग ते॥
आनि कानि सयानि हानि विजानि सब बिलगानि हैं।
देह घूमत अ ग झूमत स्वेद कण झलकानि है॥११२॥

सिथिलिता सब अ ग छाई हिय उचग नवग है।
लखि परस्पर रूप सागर मिलत उभै अभग हैं॥
विविधि सिधु उमड़े रूप के मिलि छवि तरग प्रसार है।
भई वेला कूल चहचरि रुके हिय आगार है॥११३॥

नील पीत दुकूल लै लै बिंदु श्रम के पोछही।
मन्द चितवनि हसनि बोलनि धीर धन मन मोचही॥
वहत त्रिविध समीर सुदर परसि अति सुख पावही।
दिये गलबाही फिरै सग सहचरी गुन गावही॥११४॥

कहत प्यारौ लखौ प्यारी विपिन वृन्दा छवि घनी।
कुसुम फूले विविधि विधि के लता सोभित अति तनी॥
चलो वृन्दा विपिन मैं अब कीजिये वन केलि हैं।
रास को श्रम मिटै जातें सघन कुजन मेलिहैं॥११५॥

पावड़ेन की करी रचना सुनि सखी मन भावती।
अहो री अब पेखिहैं वन केलि चित्त सुहावती॥
लाड़िली भुज वाम ललिता कध अपने ले रही।
सो विसाखा कध ऊपर भुजा अपनी दे रही॥११६॥

लाल हू भुज दच्छ चन्द्रावली तैसे सेवही।
आपनी भुज दच्छ चम्पकलता काधे देवही॥

रंगदेवी आदि दै जौ च्यारि अष्टन मैं कहीं।
बाहु पंजर दै परस्पर सुघर पाछे हैं सही ॥११७॥
कोटि कोटिन जूथपालक सहचरी चहुं ओर हैं।
प्रान जीवन एक जिनकै सदा जुगलकिसोर हैं॥
रासमंडल उतरि सींढी पुष्प क्यारी देखतें।
आय पहुँचे सघन वन मैं हिये हरख विशेख तें ॥११८॥
सहचरी नय कुसुम गुच्छा तोरि दंपति देवहीं।
अहो सुन्दर पुष्प ये सनमान दै हँसि लेवहीं॥
सुनो वन जो भयो कौतुक अपर अति सुख रूप है।
जाहि सुमिरैं मिटत दुस्सह गर्भ दुख दृढ कूप है ॥११९॥
सुख देत लेत विहार करते सघन वन तमचय जहाँ।
प्यारी कही पिय ढूढिये हम लुक्त हैं मन रुचि तहाँ॥
छिन एक मैं निज संग देखै लाल तौ स्यामा नहीं।
विरह दुस्सह भयो अति अब कीजिये कैसी कही ॥१२०॥
लगे खोजन कुंज कुंजन चटपटी अटपट भई।
छिन छिन नहीं क्यौं मिलत प्यारी तन दसा लटपट छई॥
भुज दोउ उन्नत करि पुकारैं कंठ गद्गद दृग भरै।
कहा राधे प्रानजीवन सब्द ऊँचे सुर करै ॥१२१॥
प्रान जीय आधार मेरी तुम बिना वन कुञ्ज ए।
लता वेली पुष्प गंध समीर दुख तम पुंज ए॥
द्विज भ्रमर बानी करन पीडक सखी सिखि माला ठनैं।
विरह व्याकुलता प्रिये अब सहत कहतें ना बनैं ॥१२२॥
ललिता विसाखा आदि दै सब सखी सुनि अति धावहीं।
अहो री यह गिरा कैसी दौरि पिय पै आवहीं॥
कुसुम पल्लव तोरि रचि वर सेज तहाँ सुहावही।
प्रानप्रीतम किंकरी हम कहो सो करि आवही ॥१२३॥
चितै ललिता ओर बोले कहाँ प्यारी सो कहो।
हाथ तुमरे है सबै सम दुख तम हूं तो लहो॥
उन बिना नहि प्रान धारन करि सकौं ललिता भनौं।
आनियें जस लीजिये तुम विरह निधि नौका बनौ ॥१२४॥

पीय की यह दसा देखी सुने सम उर दुख भर्यो।
कछू बार अचेत ह्वै पुनि समुझि मन धीरज धर्यो॥
ललित कहैं हे प्रिया नाथ प्रवीन प्यारी प्रान हौ।
कुज अन्तर पर्यौ वै तौ हैं निकट अति जान हौ॥१२५॥
स्वामिनी मेरी परम निज दयासील बखानियें।
जात हौं लै आय अबही मेलि हौं परमानिये॥
ललिता चली अति विकल ह्वैकैं जुगल सुख जल मीन हैं।
खोजती वन कुज उपवन लता गह्वर दीन हैं॥१२६॥
सक्य भरि सब खोजि थाकी चिन्ह हूँ नहि पावही।
लाल चिता ते विकल अब लाज अतिसै भावही॥
कहो री करिये कहा नहि भई कौनौ ओर की।
मिलिहैं जबै इच्छा करै सुधि लेहु स्यामकिसोर का॥१२७॥
आय प्रीतम के निकट भर दुख कहि सब गावही।
पात पात बनाय ढूढ्यो प्रिया तौ नहि पावही॥
का जानियें छिपि कहाँ बैठी आप जतन विचारिये।
सहचरिन की सुनी बानी कहै यह उर धारिये॥१२८॥
एक ओरी जात हैं हम खोजिवै लैं सहचरी।
तथा तुमहूँ दिसा औरौ ढूढिये बहु गन करी॥
लालहू अति खोजि थाके किये एक विचार है।
रास को आरभ करिये मिलै यह उपचार है॥१२९॥
रास हू बहु भाँति कीन्हौ भयो नहिं आगमन है।
हर्ष मन को गयो सबको दुख वृद्धि न समन है॥
विरह वस अस कहन लागे मोहि सब दुख हेत है।
त्यागि हू ललिता गई कहुँ करत नाहो चेत है॥१३०॥
विरह बानी सुनी ललिता दूरि तें मन दुख भियौ।
बिना देखें जात तौं आय कै मै का कियौ॥
पद्म आसन बैठि कीन्हौं ध्यान प्यारी को हिए।
सुनी बानी नैन खोले निकट ही दरसन दिए॥१३१॥
देखि अति आनद पायो किये दृडप्रनाम है।
जोरि कर अस्तुति करी मुख लिये मगल नाम हैं॥

स्वामिनी विसलेष तें पिय विरह सागर मैं परे।
सकल सुख को साज तुमरौ देखि छिनछिन दुख भरे ॥१३२॥
वृन्दाविपिन औ सखी सगरौ भ्रमर पछी गन सबै '
विना प्यारी चरन पकज दुखद हैं ए अति अबै ॥
ललिता कही सो सुनी वानी मान प्रिय पियवल्लभा।
कह श्रीमुख सनो ललिते बात तौ अब दुर्लभा ॥१३३॥
प्रानपीतम सौं कहो तुम जाय जो मैं भाषऊँ।
विरह सागर मे परी पिय दरस जिय अभिलाषऊँ॥
दसा जो तुम कही उनकी इतै तासों चौगुनी।
जान राय सुजान प्यारो बात बातन मौ गुनी ॥१३४॥
आय ललिता लाल पै वृत्तान तैसे सब कह्यौ।
सुनत प्यारी को विरह पिय चित्त दूनो दुख लह्यौ॥
एक चिंता प्रथम ही मुहि दुसरी अब यह भई।
ललिते विचारौ चित्त अपन चेतना तनतैं गई ॥१३५॥
जौ नही सुधि लेत हैं तौ कहा बस मेरौ अबै।
देखिये जो नैन तैसी जायकें कहिये सबै॥
गई ललिता लाडिली पै चातुरी वरधाम हैं।
कही अति समुझाय जैसें होत दीसै काम है ॥१३६॥
चितै ललिता ओर प्यारी कही सब साची अहो।
चेतना मोहि होय प्यारो लखें तुम ऐसी कहो॥
आय पीतम सौं कही अब आपही साहस करौ।
जुगल रूप उपासकन कैं ध्यान यह मन मैं धरौ ॥१३७॥
कही प्यारे अहो ललिता बनै तुमते बात है।
लखैं प्यारी नैन ए तब चेतना वस गात है॥
गई ललिता जहाँ प्यारी तहाँ कछु देख्यो नहीं।
हा कष्ट डर ना उन कियौ अब दई यह कैसी कही ॥१३८॥
दुख सागर मगन ह्वै के लाल के ढिग आवही।
आय देखै ठौर याहू पीय चिह्न न पावही॥
भयो दोऊ और को दुख सकी नाहि सभारिकै।
हा प्रिये हा प्रानप्रीतम ऊठो रोय पुकारिकैं ॥१३९॥

लगी खोजन कुज कुजन दुख पुज अपार हैं।
जाय पाये सखी गन मे जुगल प्रान अधार है॥
करैं केलि अनेक विधि की परस्पर आनद भरे।
देखि ललिता ठगोसी ह्वै खरी अचरज बहु करे ॥१४०॥
मोहि भ्रम कै खेल इनको समुझि नाहि न सो परै।
करौं दृडप्रनाम अब तौ सकल स्यामा के करै॥
कियौ जिय उन मान प्यारी चित्त ललिता कौ भ्रमै।
कीजिये अब बोध इनकौ खेद जामै सब समै॥१४१॥
दई करुना दृष्टि जबही गही ललिता भूमि है।
कियो दृडप्रनाम उठि पुनि परी चरनन भूमि है॥
लियो कर गहि विहसि स्यामा लह्यौ ललिता खेद है।
कहैंगे हम और समये खेल को जो भेद है ।१४२॥
अब चलौ नीरविहार करिये बहुत श्रम सबही लह्यौ।
लाल प्यारी सकल सुख निज जनन देवै अस कह्यौ॥
मनि जटित रम्य विमान तबही आय दृग आगे भयो।
चढे अति सुख पाय तापै चित्तकी गतिसो गयो ॥१४३।
रासमडल चहूँ ओर प्रवाह जमुना जो कह्यौ।
से उतरि ताके तीर लाग्यौ देखि सुख सबही लह्यौ॥
जलजान प्रगट्यो अपर रचना फूल की बहु भाँति हैं।
आरूढ तापै भये दोऊ सहचरी गन पाति है॥१४४॥
लगे करन विहार जल को जुगल सजि सनमुख भए।
होवू खेल सभारि कदुक मारि कौतुक ए ठए॥
नैन सैन कपोल उर तकि धरि कदुक फेकही।
दोउ नेह नवीन उमगे कूदि करवर छेकही॥१४५॥
कर पेचिका अङ्ग ताकि मृदु मुसुकाय मुरि झुकि मेलहीं।
सहचरी सुखसार दोउ दिसि बीच कर दै झेलही॥
नीरमध्य निमग्न ह्वै तट निकसि बहु क्रीडा करैं।
धन्य भाग्य सराहि सहचरि कुसुमचय बरखा करैं॥१४६॥
प्रिया प्रीतम श्रमित देखे सखिन मिल विनती करी।
महाप्रसाद अपार सुख हम लियो सुनि मन मैं धरी॥

जलकेलि अनवधि सुख भटूरी देख तेई सो बनै।
नैन जीह न जीह कै दृग कहौ कैसे को भनै ॥१४७॥
जो सक मन मै करै कोऊ कामकेलि प्रसग है।
सो घोर नर्क निवास पावै अामत कल्प अभग है ॥
श्रीराधिका तन कृष्न औ श्रीकृष्न राधा रूप हैं।
विहार लीला दोय भासैं प्रभु एक सरूप है ॥१४८॥
दूध मैं ज्यौं स्वेतमा औ गध धरनी की यथा।
चद्रिका ससि तें प्रथक नहि प्रभा सूरज की तथा ॥
गौर तेज बिसारि कैं जे स्याम तेज प्रपूजही।
जपैं ध्याव एक तन ते महापातक भूजही ॥१४९॥
जगत हू मै देखिये निज देह ते जो प्रीति हैं।
और ठौरन होय तैसी समझिवैं यह नीति हैं॥
काम क्रोध विकार माया रचित नहि जिहि लोक मैं।
करैं ऐसो सक तेई परैं रौरव ओक मैं ॥१५०॥
मन सुनौ आगे की कथा ज्यौ होत सब विधि साति है।
जीव माया वस परे गति लहै नाना भाति है ॥
मनिघटित द्वादश द्वार के द्वै ठाम जमुना तीर हैं।
विलग ह्वै तहाँ आय बैठे त्यागि खेल सुनीर हैं ॥१५१॥
सहचरी सब अङ्ग स्यामा पोछि वर साटी दई।
अङ्ग वरन अनूप केवल धारि सोई अग लई ॥
केस सूति बनाय बेनी कुसुम गूथे भायकै।
अङ्गराग सुगधि नाना तिलक रचे सुहाय कै ॥१५२॥
सुमन भूषन भूषि नखसिख मुकर लै सनमुख दियो।
निरखि निज छवि विहसि स्यामा कही री आछें कियो ॥
सनमान श्रीमुख ते लहैं सुख पाय अति फूलत हियो।
धन्य भाग्य मनाय कै श्रीचरन सबही सिर दियो ॥१५३॥
इहाँ सहचरि लाल को श्री अङ्ग पोछत सुख भरी।
अरुणता कछु झलक सो लै धौत कटि धारन करी।
केस यूथि बनाय कुसुमन रची वेनी चाव सौं॥
वरन भेद सुगधि को भर तिलक रचि हिय भाव सौं ॥१५४॥

कुसुम के आभरन चित्रित सकल अङ्ग धारन किये।
उत्तरी एक सीस ओढ्यौ लगे पीतम ज्यौ तिये॥
विलोकि मृदु मुसकाय सहचरि परस्पर दरपन दियौ।
रसिक राय सुजान प्यारो देखि सब दिसि हँसि दियौ॥१५५॥
रत्ननिर्मित कुसुम रचना विमल वरन विमान है।
मध्य दोऊ ठाम कैं लगि उतरि प्रगट लखान है॥
इतै प्यारी इतै प्रीतम चले मडल मध्य ह्वै॥
लखि परस्पर नैन अरझैं सभरि पुनि डग धरै द्वै॥१५६॥
उमगि हिय अनुराग दोऊ सकल सुख सागर मिले।
सहचरी चहु ओर वेला कूल उर लहि कै झिले॥
श्रीलाडिली कर लाल अपने हस्त लै धारन कियौ।
आय बैठे वर सिघासन सब्द जय जय दिसि दियौ॥१५७॥
सखी हरखै कुसुम वरषै नृत्य गान करै हरै।
प्रिया पीतम हेरि इन तन विपिन छवि लखि सुख भरै॥
प्रथम जो वरनन करी सतकुज मडल भेद ते।
मध्य ताके नाम कहिये सभा कुज अखेद ते॥१५८॥
नग्यौ आय विमान ताके द्वार निकसी सहचरी।
पाँवडे वर भाव मुद भरि फूल हँसि वरखा करी॥
कर जोरि अति विनती करै लखि सहचरिन के हेत हैं।
प्रिया पीतम उतरि मिलि दोउ चले कु ज निकेत हैं॥१५९॥
पाकसाला वर सिंघासन रच्यौ सखिन सुहाय कै।
आय बैठे विहसि तापै जुगल मोद बढाय कै॥
सहचरी पद वदना करि सुमन अग आभरन जे।
अग परसै हिये सरसै जुदे लागी करन ते॥१६०॥
रत्न झारी नीर लै पद कर कमल मुख धोवहीं।
झीन भीन सुधारि पट अग पोछि हसि हसि जोवही॥
दै धूप दीप कराय अचवन थार द्वै सजिकै धरे।
विविधि भाति अनेक विंजन बहु कटोरा ते भरे॥१६१॥
प्रकार छप्पन के बने छत्तीस विंजन रीति सो।
जे कहे खटरस पच हु वर ते पदारथ प्रीति सो॥

जो भेद इनको कहै तौ नहि अन्त पावै गाय कैं।
प्रेम प्रीति सुनेह चौंपन रचे सखियन भाय कें ॥१६२॥
वस्तु एक अनेक तामै रस अपूरवता लहै।
वरन देखत रुचि बढ़ावत सुचि सुगध विलास है ॥
ललिता विसाखा दोउ ओरी जोरि कर विनती करैं।
प्रिया पीतम नेह वस ह्वै ग्रास लै मुख मै धरै ॥१६३॥
नाम विंजन के जुदे कहि स्वाद रूपक भाखहीं।
कहै सहचरि प्रथम यह कर लीजियै लै चाखहीं ॥
स्वाद वर रस रीति जा मैं अधिक पिय जिय जानहीं।
सो देत लै कर प्रिया मुख हसि जुगल भलो बखानहीं ॥१६४॥
सहचरी सुनि मोद पावत और देहि मनाय कै।
अबै तौमै सब ल्याई परम स्वाद बनायकैं ॥
अरस परस जिवाय जवत लेत सुख मन भावते।
हसनि बोलनि अल्प हेरनि हरखि हिय हुलसावते ॥१६५॥

सुगधि वासित विमल सीतल नीर बिच बिच पीवहीं।
करत भोजन भरन अति सुख सहचरी लखि जीवहीं ॥
ललिता विसाखा निरखि रुख रुचि हठी भोजन ओरतें।
कर जोरि चितई जुगल मुख गति लही लोचन कोरतें ॥१६६॥
दौरि सहचरि गन सकल सब लई वस्तु उठाय कै।
धरयौ अचवन हेत भाजन नीर खरिका ल्याय कै ॥
कोऊ लियें झारी नीर गेरत देत खरिका अपर हैं।
सुगध द्रव्य विशुद्धता हित और आली सुघर हैं ॥१६७॥
अचवाय मजुल पट दिये वर अग पोछैं नीति सौं।
मुखवास चित्त हुलास कारन लिये परम विनीत सौं ॥
कोऊ सखियाँ करैं रचना सेज प्रीति लगाय कैं।
परिजक मनिमय बनो जैसी कहैं किमि तेहि गायकैं ॥१६८॥
दूध फेनहुँ तें अधिक अति मृदु बिछौना सुच्छ हैं।
चहुँ कोरन बधी डोरी लटक बहु मनि गुच्छ हैं ॥
गेंदुवा बहु भाति राखे जो जथा जेहि ठौर हैं।
खान पान सुवास भाजन धरे भरि ए और हैं ॥१६९॥

कुसुम चित्र विचित्र माला तनी अति छवि देत हैं।
अतर भाजन खुले परसि समीर सौरभ हेत हैं॥
कोऊ सखियाँ पावड़े वर रचत चित्र बनाय कैं।
आय ललिता के निकट सब कहत कान सुनाय कैं॥१७०॥
ललिता विसाखा मतौ करि कर जोरि विनती नै करैं।
सैन कुंज पधारिवे की सकल अभिलाषा भरैं॥
श्री अङ्गहू मैं सिथलता कछु भई आलस हेत है।
प्रिया पीतम उठे सहचरि चहूँ दिसि कर देत है॥१७१॥
सखी मंडल मध्य दोऊ चलत अति छवि देत है।
हरखि बरखैं सुमन सहचरि चाहि दृगभरि लेत हैं॥
कुंज देहरि नाचते जे भए कौतुक रीझहू।
सहचरिन की को चलावै दोउ आपुस मै लट्टू॥१७२॥
सेज पग धारे सभारे अङ्ग मिलि बैठे दोऊ।
चहूँ ओरी धरे तकिया सखी कर दीन्हे कोऊ॥
भई आज्ञा अष्ट सहचरि सीस धरि बैठी हसैं।
द्वय पांति करि सनमुख विराजी अपर ठाढी सब लसैं॥१७३॥
कोउ छत्र कर चामर ढुरावै विजन वर लीन्हे खरी।
और सौंज अपार हस्त न धरे सोहत हित भरी॥
ललिता विसाखा निकट बैठी जानि दै मुखवास हैं।
दोऊ ओरी देत बीरी लेत होत विलास हैं॥१७४॥
प्रिया पीतम मुख परस्पर देत लेत निहारहीं।
कुकुर सहचरि करत सनमुख विहसि बलि तृण तोरही॥
प्रिया दिसि ललिता विसाखा लाल ओरी त्यौं भई।
खेल पासा सारि खेलत होत छिन छिन रुचि नई॥१७५॥
नींद नैनन मैं लखी झुकि परत पलकें सोहनी।
प्रिया पीतम सहचरी अङ्ग थाँवि सोवत मोहनी॥
अधखुले लखि नैन पीतम हिये प्यारी छवि फसी।
सहचरिन के जानि सूते भई दसा समाधसी॥१७६॥
सखीगन सब अङ्ग लागी करैं सेवा नेम सौं।
श्री लाड़िली श्रीहस्त ललिता लियें निज कर प्रेम सौं॥

त्यौं विसाखा पीय निमि की तथा विधि सेवा लहैं।
कहा कहिये अवधि सुख की इन्हैं सम एई अहैं ॥१७७॥
हस्त सेवा करै ललिता आगुरी चटकावही।
हिये सुख को सिंधु उमग्यो धन्य भाग्य मनावही॥
उपज मन मैं भई ऐसी जीव माया बस परे।
कहूँ नाही सर्म तिनकौ नित्य नूतन दुख भरे॥१७८॥
उपाय ऐसी होय जासो लहै ते सुख सर्वदा।
कृपा इनकी बिना औरन जतन कोऊ नर्मदा॥
कहत नाही सकै मानत पूछिवे जिय चाह है।
लई करवट लाडिली निज ओर देखि उछाह है॥१७९॥
दृग अल्प उघरे देखि ललिता सीस नायो जय कही।
सब्द श्रीमुख भयो ललिते कहा मन करुणा गही।
बार बार नवाय मस्तक सर्व हित जिय धारिकै॥
भक्ति महिमा जस विसूचक कह्यौ वचन सभारि कै॥१८०॥
महाराज अपार माया आपकी अति चंड है।
अर्ध ऊर्ध कटुक से घुमावै अमित सो ब्रह्मण्ड है॥
तिहि माहि जीव अनेक विधि के परे अति दुख पावही।
दसा उनकी देखि मन मैं खेद अतिसै आवही॥१८१॥
कृपा ऐसी कीजिये ते बसै सब इत आय कै।
रावरी पद कंज सेवा करै अति सुख पाय कै॥
कहै प्यारी सुनो ललिते बात ए टेढी अहैं।
सदा जो हम खेल सो अति सुखद माया क्यों जहैं॥१८२॥
महारानी सर्व दुखप्रद सुखद सो कैसे भई।
सकल जीव निकाय श्रीपद विमुख करि आपति दई॥
सुनो ललिते भेद ऐसो नटी याकौ नाम है।
करत कौतुक विविधि विधि कछु होत हमरौ काम है॥१८३॥
महाराज अनीह पूरनकाम सब विधि आप है।
कहा तुच्छ वराकि मायारूप ही सताप है॥
जीव नित्यानन्द के प्रतिबिंब से सबही कहैं।
संग या को करत ही सब काल कष्टित ते रहैं॥१८४॥

सुनो ललिते सग याके कष्ट तौ सब मानही।
कृपा हमरि ते प्रथक जब रूप को जानही॥
जीव चेतन जड सुमाया कष्ट सो अविवेक है।
जात काल अनेक तौऊ होत नाहि विवेक है॥१८५॥

तीन गुण को रूप याको सत्व रज तम एक हैं।
सृष्टि तीन प्रकार की ब्रह्माड सम पूरित रहैं॥
गुणाधीन सुभाव सबके कर्म होत सुभाव ते।
कर्म अकुर वृच्छ बाढै भोग फल अनुभाव ते॥१८६॥
काल अणु लव घटी ते लै ब्रह्म आयु प्रमाण है।
कर्मफल सब जीव भोगै जोनि कर्म समान है॥
कबहुं ब्रह्मा कीट कबहूं कोटि विधि पदवी धरै।
प्रलैहू मैं लीन ह्वै पुनि कर्म वस तनु अनुसरै॥१८७॥
जीव माया सग मिलि बहु करत कर्म लुभाय कै।
चाह नूतन हो रहै सब काल हिय सुख छाय कै॥
सत्व प्रकृती देव ध्यावै जच्छ किन्नर राजसी।
तामसीगण भूत सेवै लहैं फल सेवा जसी॥१८८॥

काकताली न्याय जैसे सकल जीव निकाय मैं।
कोऊ हमरी ओर लागत देत चित्त उपाय मै॥
उपाय सो दिन पाय कै वह होत अच्छै अग है।
परिपाकता परिणामता कै देत हमैं अभग है॥१८९॥
सुनों ललिते गुन अपूरब एक माया मे लहैं।
ता ओर चित्त लुभाय कै हम दोष बहुविधि कै सहैं॥
सर्वथा सिद्धात यह प्रत्यच्छहु परिमानिये।
जीव नित्य अनित्य माया नास ते उनमानिये॥१९०॥
अनित्य माया सग मिलि जे होत कर्म अनेक हैं।
सर्वथा नहिं जात क्यो हुं देत भोग निसेक हैं॥
नित्य मोच्छ विलास दानी सदा एक अनूप हैं।
उपाय हमरी ओर को क्यों होत आन सरूप हैं॥१९१॥

या हेतु ते अति सुखद माया मिलत यामैं भक्त हैं।
भक्त की परिपाकता हित होत पुनि पुनि जक्त हैं॥

सुनि सक ललिता भयो मन मो कहत हैं अब गाय कैं।
महाराना वीनती कछु करै पन सिर नाय कैं ॥१६२॥
कृपा कीजै भेद याकौ सकल श्रीमुख तैं सुनैं।
सर्वथा सुख दीजिये हम चित्त सो निश्चै गुनैं॥
उपाय आप बखान कीन्ही जीव के निस्तार की।
सो एक भेद अनेक कैधौ भाखिये निरधार की ॥१६३॥
कहैं स्यामा सुनो ललिते बात यह पूछी भलै।
सरित विविध प्रवाह धरनी सकल सागर ह्वीर लै॥
भजन सब्द सरूप निरन कहै सेवा गाय कैं।
भक्ति ताको नाम जानो अग बहुविधि पाय कैं॥१६४॥
भक्ति एक अनेक ताके अग भेद प्रमानिये।
विस्तार तौ नहि अत क्यौ हू स्वल्पता मैं जानिये॥
प्रथम तौ द्वै रूप याके सगुन निर्गुन ते गुनौ।
सगुन पाछे कहैंगे अब अङ्ग निर्गुन को सुनौ ॥१६५।
भक्ति जो परिपाक रूपा भई सिद्ध स्वरूप है।
एक रस अनुराग ताको अधिक अधिक अनूप है॥
हानि लाभ न दुख सुख न विधि अविधि कछु भान है।
लोक वेद न भेद गुण के प्रेम सिंधु समान हैं॥१६६॥
अविच्छिन्न प्रवाह ज्यौ वर सरित सिंधु मिली रहै।
अग निर्गुन भक्ति को मति नाम रूप झिली रहै॥
सगुन रूपा भक्तिहु के सुनौ अङ्ग अनूप हैं।
सुगम सब काहू सुखद भवसिंधु सेतु सरूप हैं॥१६७॥
श्रवन, कीर्तन, नाम सुमिरन पाद सेवन अरचनं।
चरन वदन दास्यता सुख सख्य आत्म-समर्पन॥
कहे जो नव अ ग ए गुण भेद लै बहु जानिये।
तीन गुनमय प्रकृति सबकी प्रकृति हेतु प्रमानिये॥१६८॥
एक गुन के भेद औरो तीन तीन बखानिये।
कहैं ऊत्तम बहुरि मध्यम त्यो कनिष्ट विजानिये॥
गुन विमिश्रित मानि कैं त्यौ भक्ति अ ग अनेक है।
जो मिलत है इनके किये सो सुनो सहित विवेक है॥१६९॥

देपतापति विष्नु मानै एक निश्चै हिय धरै ।
अग अगी भेद लैकै पचायन पूजा करै ॥
विष्नुपुरी निवास तिनको भोग नाना विधि लहैं ।
अत उनके सग ह्वै कै जथाविधि ते गति लहैं ॥२००॥
वैर बुद्धि बढाय हरि सों प्रान सनमुख देवहीं ।
स्वेत द्वीप विलास करि तिन सग ह्वै गति लेवही ॥
भक्ति अग अनेक विधि जहाँ जाको मन लगै ।
विश्वास, दृढ, प्रतीति, श्रद्धा माधु, सगति जो पगै ॥२०१॥
ज्ञान जोग विराग जुत ह्वै भक्ति जे साची करै ।
मुक्ति चारि प्रकार की वैकुण्ठ बसि लै सुख भरै ॥
मन मनोरथ सकल पूरन सदा नारायन करै ।
परिनाम तिनके सग मिलि कै परम पदवी ते धरै ॥२०२॥
पुन्य पाप अनेक विधि के कर्म करते जे मरै ।
स्वर्ग नर्क निवास भुक्तै बहुरि उदर दरी परै ॥
मुख्य कारन भाव भव मैं एक ललिता मानिये ।
सुनो भाव सरूप तुम ते कहैं सो पहिचानियें ॥२०३॥
विषै वनमृग भई इन्द्री फिरत स्वेच्छाचार है ।
तिन सग ह्वै कैं मन प्रधावत होत बुद्धि प्रहार है ॥
प्रथम इन्द्री विजै करिकैं विषै मन विलगावही ।
वासना निरमूल कीन्हे जुक्त पदवी पावही ॥२०४॥
जुक्त ही की बुद्धि सुधरै बुद्धि सुधरे भावना ।
भावना ते शाति उपजै शाति सुखद रमावना ॥
सुख हमारो रूप सागर वेद यह निश्चै करै ।
कन लेस परमानन्द ही को सकल जग मै लखि परै ॥२०५॥
भाव यासों कहत हैं बिन भाव नास्तिकता लहै ।
भावहीं की भक्ति साची भाव निश्चै ता गहै ॥
भक्ति एक सरूप ते वर भाव ताके पञ्च हैं ।
बसत हमरे लोक जेते करत इनका सच हैं ॥२०६॥
दास्य शान्ति सुसख्य औ वात्सल्य तिनके नाम हैं ।
शृंगार पञ्चम नृपति ललिते सिद्धि ताकी बाम है ॥

रहत तुम ते आदि सहचरि जथा सुखसागर रली ।
श्रृङ्गार मनि सखि होय से इत आयवे की यह गली ॥२०७॥
च्यारि भाव विभावना जे करत प्रेम अनन्यता ।
इहलोक नित्य निवास पावैं सदा सौख्य समन्विता ॥
च्यारि मडल वास तिनको दरस परस विधान सौं ।
भावना फल सिद्ध सोऊ होत है परिमान सौं ॥२०८॥
तीन मडल सहचरी गति गोप्य केलि निकुज की ।
श्रृङ्गार फल को सिद्धि यह दृढ अवधिहै सुख पुज की ॥
श्रृङ्गार है अति कठिन ललिते सहचरी मन भाव सो ।
मना हमरे चरन की गति एक हठि जेहि पाव सो ॥२०९॥
परमगोप्य निकुज लीला विपिन वृन्दा हम करं ।
श्रृङ्गार फल पदवी तुह्मारी चाहि कै जन उर धरै ॥
परिनाम निजु तन सहचरी को पाय यह पदवी लहैं ।
नित्य सेवा मै रहै ते सत्य ललिते हम कहै ॥२१०॥
करैं लीला विविधि विधि हम सवा पुरन काम हैं ।
भक्त अति वल्लभ हमारै लहैं ते विश्राम हैं ॥
प्रथम तुम करुना करी मन जीव सबहि तपायकै ।
अल्प रीति उपाय ताकी कही हम सब गायकै ॥२११॥
कहैं ललिते महारानी सक मन सौं पोत है ।
परम गोप्य निकुज लीला जानि को किमि होत है ॥
जीव माया फद परि निज रूप हू बिसरावही ।
त्रिगुनता अति परे सो यह बात वै कहाँ पावहीं ॥२१२॥
रावरी अति कृपा जन परजानि हम को यह परी ।
सुगम रीति उपाय करिये जीव हित मनमैं धरी ॥
सुनी वानी दयासानी ललित ललिता वदन की ।
लाडिली मन भई जीवन देइवे निज सदन की ॥२१३॥
फल एक निज कर प्रगट कीन्ह्यौ कही बानी दयाकी ।
जो कहैं अब सोई करौ ललिते होय सब हम मयाकी ॥
लेहु फल यह प्रथम याके भाग द्वैकरि लीजिये ।
जाय ह्वाते मानसर के नीर मैं धरि दीजिये ॥२१४॥

जुगम प्रगटित होय गो वरपुरुष औ तिय एक हैं।
पुरुष ताको बहुरि लै मम कुण्ड करु अभिषेक हैं॥
सहचरी तन लहै तब तेहि नाम गोपेश्वर धरौ।
गोप लीला सकल जे उपदेस तासौं तुम करौ॥२१५॥
भक्ति के जे अग भाषे विविध ताके भेद है।
भाव पच प्रकाश करि शृगार मेटत खेद है॥
जथा सब सेवा हमारी करत हौ तुम प्रेम सौं।
सकल तासौं भाषियै सो करै हिय धरि नेम सो॥२१६॥
और सुनिये चतुरमुख ब्रह्मा जलज सौं जो भयो।
सभा अपनी बैठि कै तिन जज्ञ मूलक श्रुति कह्यौ॥
वेद अति लहि खेद विधि सौं कही तब यह बात है।
वृथा ही आलाप करि करि करो जीव निपात हैं।२१७॥
जुगल सर्वाराध्य स्वामी वेद हम तन मूल है।
बात सो नहिं जानि निरनय करौ सुनि अति शूल हैं॥
प्रश्न ब्रह्मा कियो उनते कहीं तिन समुझाय कै।
उठि सभा ही के मध्य विधि प्रन कियो भुजा उठाय कै॥२१८॥
श्रीराधिका पति कृष्न स्वामी दोउ निज गोदी धरौं।
वात्सल्य अपनौ भाव उनते सत्य जौ विधि तौ करौं॥
दिन सात अपने कल्प भरि विधि कियो अति तप घोर है।
वर दियो तब हम जाय के जग भयो जय जय सोर है॥२१९॥
दिन कछु बीतें सुनो विधि वृषभान तन कीरति लहैं।
अभिलाष सब पूरन तुह्मरौ करैगै साची कहै॥
और सुनिये अष्टवसु द्रोण नामा जो अहैं।
धरा अरधागी लियें सग तथा तप तिनको कहै॥२२०॥
लियो उन वर हौंहि गे जग नद जसुदा जस भरै।
कछु दिन बीतें जुगल हम होव सिसु दोऊ धरै॥
तुम आदि ललिता लोक वृन्दा विपिन सब तहँ जायगो।
रासलीला सकल ऐसी होहिगी सुख छायगो॥२२१॥
ब्रह्माड प्रति ऐसें हमारी होत लीला नित्त हैं।
गाय ध्याय सुनाय सुनि पद लहत जीव सुचित्त है॥

धाम सेवा रीति कहि परिवीन अब तेहि कीजिये।
चीर अपने अङ्ग को आभरन सब विधि दीजिये।२२२।
जाय मथुरा निकट सो निज वास हित आश्रम करै।
शिव रूप जग मै प्रगट ह्वै हिय भाव सहचरि को भरै॥
सग ताके वाम सोऊ सिवा नाम बखानिये।
प्रेम भक्ति प्रवीन तैसी अङ्ग आधो जानियें॥२२३॥
दोउ मिलि दृढ नेम सौ जो कहौ तुम सो विधि करै।
दृहि लेहि अपार सुख जग रूर हमरौ उर धरै॥
हम समत जानि कै सनकादि द्वारा सुख भरै।
अधिकार जाको जथाविधि लखि भक्ति भाव उदै करै॥२२४॥
यह रीति जिन जीवन हिये पल निमिष लव थिरता गहै।
सत्य भाखै सुनो ललिते धाम सो मेरी लहै॥
वृत्तात वासौं सकल कहि अब विदा ताकी कीजिये।
तुम करो सो सब होय दृढ हम कहैं साची धीजिये॥२२५॥

—नैन कमल सुख नीद वस, पलकै लागी देखि।
मौन धार सिर नाय उठि, चली मुरकि पद पेखि॥१॥
निकसि कुज के द्वार पर, ठाढी उर सुख पूर।
अपनो भाग्य सराहि अति, क्रिया किसोरी मूर॥२॥

जा विधि को आज्ञा भई, कियौ तथा सब काजु।
गोपेश्वर धरि नाम करि, सहचरि तन सुख साजु॥३॥
लै आई बैठी जहाँ, सखी वृन्द सुखपुज।
मद वाद्य सुर भीनते, सवै सब श्रीकुञ्ज॥४॥
उठि आदर सबही कियो, अभिवादन सिर नाय।
बैठी ललिता सुमरि पद, राधा वर सुख गाय॥५॥
नई सहचरी सग लखि, कहै विसाखा बैन।
यह मूरति प्रगटी कहाँ, श्रीललिते सुख दैन॥६॥
सक होत मन मै अधिक, जो सुनिवे सुख होय।
कहिये करुणा चित्त धरि, उत्कठित सब कोय॥७॥
अरी सुनो जब कुज ते, पग बाहिर तुम दीन।
ए बात सब तब भई, प्रिया किसोरी कीन॥८॥

जुगम प्रगटित होय गो वरपुरुष औ तिय एक हैं।
पुरुष ताको बहुरि लै मम कुण्ड करु अभिषेक हैं॥
सहचरी तन लहै तब तेहि नाम गोपेश्वर धरौ।
गोप लीला सकल जे उपदेस तासौं तुम करौ॥२१५॥
भक्ति के जे अग भाषे विविध ताके भेद है।
भाव पच प्रकाश करि शृंगार मेटत खेद हैं॥
जथा सब सेवा हमारी करत हौ तुम प्रेम सों।
सकल तासौं भाषियै सो करैं हिय धरि नेम सो॥२१६॥
और सुनिये चतुरमुख ब्रह्मा जलज सौं जो भयो।
सभा अपनी बैठि कै तिन जज्ञ मूलक श्रुति कह्यौ॥
वेद अति लहि खेद विधि सौं कही तब यह बात है।
वृथा ही आलाप करि करि करो जीव निपात हैं॥२१७॥

जुगल सर्वाराध्य स्वामी वेद हम तन मूल है।
बात सो नहि जानि निरनय करौ सुनि अति शूल हैं॥
प्रश्न ब्रह्मा कियो उनते कहीं तिन समुझाय कै।
उठि सभा ही के मध्य विधि प्रन कियो भुजा उठाय कै॥२१८॥
श्रीराधिका पति कृष्न स्वामी दोउ निज गोदी धरौं।
वात्सल्य अपनौ भाव उनते सत्य जौ विधि तौ करौं॥
दिन सात अपने कल्प भरि विधि कियो अति तप घोर है।
वर दियो तब हम जाय के जग भयो जय जय सोर है॥२१९॥

दिन कछु बीतें सुनो विधि वृषभान तन कीरति लहै।
अभिलाष सब पूरन तुह्मरौ करैगै साची कहै॥
और सुनिये अष्टवसु द्रोण नामा जो अहै।
धरा अरधागी लियें सग तथा तप तिनको कहै॥२२०॥
लियो उन वर हौंहि गे जग नद जसुदा जस भरै।
कछू दिन बीतें जुगल हम होव सिसु दोऊ धरै॥
तुम आदि ललिता लोक वृन्दा विपिन सब तहँ जायगो।
रासलीला सकल ऐसी होहिगी सुख छायगो॥२२१॥
ब्रह्माड प्रति ऐसें हमारी होत लीला नित्त हैं।
गाय ध्याय सुनाय सुनि पद लहत जीव सुचित्त हैं॥

धाम सेवा रीति कहि परिवीन अब तेहि कीजिये।
चीर अपने अङ्ग को आभरन सब विधि दीजिये ॥२२२।
जाय मथुरा निकट सा निज वास हित आश्रम करै।
शिव रूप जग मै प्रगट ह्वै हिय भाव सहचरि को भरै॥
सग ताके वाम सोऊ सिवा नाम बखानियें।
प्रेम भक्ति प्रवीन तैसी अङ्ग आधो जानिय ॥२२३॥
दोउ मिलि दृढ नेम सौं जो कहौं तुम सो विधि करै।
देंहि लहि अपार सुख जग रूप हमरौ उर धरै॥
हस समन जानि कै सनकादि द्वारा सुख भरै।
अधिकार जाको जथाविधि लखि भक्ति भाव उदै करै ॥२२४॥
यह रीति जिन जीवन हिये पल निमिष लव थिरता गहै।
सत्य भाखै सुना ललिते धाम सो मेरी लहै॥
वृत्तात वासौं सकल कहि अब बिदा ताकी कीजिये।
तुम करो सो सब होय दृढ हम कहैं साची धीजिये ॥२२५॥

—नैन कमल सुख नीद वस, पलकै लागी देखि।
मौन धार सिर नाय उठि, चली मुरकि पद पेखि ॥१॥
निकसि कुज के द्वार पर, ठाढी उर सुख पूर।
अपनो भाग्य सराहि अति, क्रिया किसोरी मूर ॥२॥
जा विधि की आज्ञा भई, कियौ तथा सब काजु।
गोपेश्वर धरि नाम करि, सहचरि तन सुख साजु ॥३॥
लै आई बैठी जहाँ, सखी वृन्द सुखपुज।
मद वाद्य सुर झीनते, सेवै सब श्रीकुज ॥४॥
उठि आदर सबही कियो, अभिवादन सिर नाय।
बैठी ललिता सुमरि पद, राधा वर सुख गाय ॥५॥
नई सहचरी सग लखि, कहैं विसाखा बैन।
यह मूरति प्रगटी कहाँ, श्रीललिते सुख दैन ॥६॥
सक होत मन मै अधिक, जो सुनिवे सुख होय।
कहिये करुणा चित्त धरि, उत्कठित सब कोय ॥७॥
अरी सुनो जब कुज ते, पग बाहिर तुम दीन।
ए बातें सब तब भई, प्रिया किसोरी कीन ॥८॥

अब इनतें सब ही सुनौ, सेवा की जो रीति।
उधरै जग के जीव ज्यौं, कहिवै है करि प्रीति ॥६॥
सेवा के हित सकल हम, प्रगटी सत्य प्रमान।
सेवा दंपति सुखद अति, सेवा सार निदान॥ ॥
सुनि गोपेश्वर के हिये, उपजी सक तरग।
को हम को ए सेव्य को, का सेवा को अग ॥११॥
लखि सका के चिह्न तन, श्री ललिता मुसुकानि।
उपजी जो मन सक सो, कहिये सकुचे हानि ॥१२॥
सुनत वचन सिर नाय निज, लखि सबहिन की ओर।
बोले वचन विनीत अति, गोपेश्वर तेहि ठौर ॥१३॥
सक होत अविवेक तें, गुरु विनु मिटे न सोय।
सरनागत हौं रावरी, कहिये ज्यो हित होय ॥१४॥
कारन विनु कारज नही, कारज विनु नहिं नेम।
प्रेम न उपजत नेम विनु, ता विनु होय न छेम ॥१५॥
सेव्य विना सेवा नही, सेवा विनु नहि चैन।
सेवक सेवा सेव्य को, रूप कहौ सुख दैन ॥१६॥
सेवा कौ फल है कहा, को साधक या माहि।
जे बाधक ते कृपा करि, कहिये का विधि जाहिं ॥१७॥
पूछत बन्या न होय जो प्रश्न न कीन्हौ होय।
अन्तरजामी सकलविद, आपु कहै जन जोय ॥१८॥
सुनत वचन हिय हरखि अति, जान्या प्रिया प्रभाव।
बोली ललिता मद्द हसि, करुणासील सुभाव ॥१९॥

सोरठा—एरी परम प्रवीन, सुधासार मय प्रश्न तव।
कृपा किसोरी कीन, सकल जगत हित होयगो ॥ १ ॥
ऐसे कहि छिन एक, ललिता जुगल सरूप सर।
कीन्ह्यौ मन अभिषेक, बहुरि कहन हित चित दियो ॥ २ ॥
सुनो सकल वृत्तात, जो पूछौं तुम बुद्धिवर।
सबको यह सिद्धात, को कारन तेहि जानियें ॥ ३ ॥
यामै जो इतिहास, जाहि सुने ससै मिटै।
कीजै दृढ़ विश्वास, सो कारज साधक सकल ॥ ४ ॥

स्वामी श्रीअनिरुद्ध, भक्त सिरोमनि देवऋषि।
सो सवाद विसुद्ध, सुनिये दोउन ते भयो ।५
कीजै सोइ उपाय जा विधि वस्तु पिछानिये ।
काल भेद मन ल्याय, तर्क वितर्क न आनिये ।।६।।
क्षुधा निवृत्ति न होय भोजन विन यह नेम दृढ ।
धारन करिये सोय, जामैं निज हित देखिये ।।७।

नारद साधु सरूप भक्ति की महिमा जानै।
तेज तपस्या धाम सदा सतसग प्रमानै ।।
स्वर्ग मृत्यु पाताल लोक लोकन मैं जावैं।
जहाँ लहैं हरि हेतु तहाँ अतिसै सुख पावैं ।
दीन देखि करुना भरै दया हिये दिये रैन ।
सुनें सुनावैं कृष्न गुन ताप हरै कहि वैन ।।१।।
कृष्नदत्त जो वीणा धरें निज कध सुहाई।
राग रागिनी भेद सप्त स्वर गति नित छाई ।।
लोक जात्रा करत लेन सुख देत अलेखन ।
मन मैं इच्छा भई चलै प्रभु के पद देखन ।।
स्वेत दीप वैकुण्ठ कहत शोभा कवि लाजै ।
वेदमई श्रीमूर्ति जहाँ अनिरुद्ध विराजै ।।२।
बसै भक्त बहु वृन्द सकल जिनकैं हरि प्यारे।
जद्यपि सुख वैकुठ भोग नहिं चित्त निहारे ।।
छिन छिन आसा दरस प्रभू पद जीवन प्राना।
नैन बैन हिय एक रहै तिनही को ध्याना ।।
भरतखड वसि हरि भजै वैर बुद्धि उर धारि।
तिन पायो वरवास तह सदा भक्ति बढवारि ।।३।।
सभा अलौकिक जहाँ प्रभू बैठे सिहासन।
सहसानन सहसाक्ष सहस कर पाद सुभासन ।।
जय जय बोलै भक्त कुसुम वरषैं हिय हरषैं।
आनन्द विविध अपार सकल भाँतिन के सरसै ।।
नारद पहुँचे जाय दूर ते वीर धरयौ धर ।
कीन्हें दडप्रनाम विमल गुन गाय जोरि कर ।।४।।

अब इनतें सब ही सुनौ, सेवा की जो रीति।
उधरै जग के जीव ज्यौ, कहिवै है करि प्रीति ॥६॥
सेवा के हित सकल हम, प्रगटी सत्य प्रमान।
सेवा दंपति सुखद अति, सेवा सार निदान ॥ ॥
सुनि गोपेश्वर के हिये, उपजी सक तरंग।
को हम को ए सेव्य को, का सेवा को अंग ॥११॥
लखि सका के चिह्न तन, श्री ललिता मुसुकानि।
उपजी जो मन सक सो, कहिये सकुचे हानि ॥१२॥
सुनत वचन सिर नाय निज, लखि सबहिन की ओर।
बोले वचन विनीत अति, गोपेश्वर तेहि ठौर ॥१३॥
सक होत अविवेक तें, गुरु विनु मिटै न सोय।
सरनागत हौ रावरी, कहिये ज्यो हित होय ॥१४॥
कारन विनु कारज नही, कारज विनु नहिं नेम।
प्रेम न उपजत नेम विनु, ता विनु होय न छेम ॥१५॥
सेव्य विना सेवा नही, सेवा विनु नहि चैन।
सेवक सेवा सेव्य को, रूप कहौ सुख दैन ॥१६॥
सेवा कौ फल है कहा, को साधक या माहि।
जे बाधक ते कृपा करि, कहिये का विधि जाहि ॥१७॥
पूछत बन्या न होय जो प्रश्न न कीन्हौ होय।
अन्तरजामी सकलविद, आपु कहै जन जोय ॥१८॥
सुनत वचन हिय हरखि अति, जान्या प्रिया प्रभाव।
बोली ललिता मद्द हसि, करुणासील सुभाव ॥१६॥

सोरठा—एरी परम प्रवीन, सुधासार मय प्रश्न तव।
कृपा किसोरी कीन, सकल जगत हित होयगो ॥ १ ॥
ऐसे कहि छिन एक, ललिता जुगल सरूप सर।
कीह्यौ मन अभिषेक, बहुरि कहन हित चित दियो ॥ २ ॥
सुनो सकल वृत्तात, जो पूछौं तुम बुद्धिवर।
सबको यह सिद्धात, का कारन तेहि जानिये ॥ ३ ॥
यामै जो इतिहास, जाहि सुने ससै मिटै।
कीजै दृढ़ विश्वास, सो कारज साधक सकल ॥ ४ ॥

ामी श्रीअनिरुद्ध, भक्त सिरोमनि देवऋषि।
ा सवाद विसुद्ध, सुनिये दोउन ते भयो ।५
ीजै सोइ उपाय, जा विधि वस्तु पिछानिये ।
ाल भेद मन ल्याय, तर्क वितर्क न आनिये ।।६।
ुधा निवत्ति न होय भोजन विन यह नेम दृढ ।
ारन करिये सोय, जामै निज हित देखिये ।।७।

ारद साधु सरूप भक्ति की महिमा जानै।
ज तपस्या धाम सदा सतसग प्रमानै ॥
र्ग मृत्यु पाताल लोक लोकन मैं जावैं।
हाँ लहै हरि हेतु तहाँ अतिसै सुख पावैं।
ान देखि करुना भरै दया हिये दिये रैन।
ने सुनावैं कृष्न गुन ताप हरै कहि बैन ॥१॥
ष्नदत्त जो वीणा धरै निज कध सुहाई।
ाग रागिनी भेद सप्त स्वर गति नित छाई॥
ोक जात्रा करत लेन सुख देत अलेखन।
ान मैं इच्छा भई चलै प्रभु के पद देखन॥
ेत दीप वैकुण्ठ कहत शोभा कवि लाजै।
दमई श्रीमूति जहाँ अनिरुद्ध विराजै ।।२।
सै भक्त बहु वृन्द सकल जिनकै हरि प्यारे।
ाद्यपि सुख वैकुठ भोग नहि चित्त निहारे॥
न छिन आसा दरस प्रभू पद जीवन प्राना।
न बैन हिय एक रहै तिनही को ध्याना।
ारतखड बसि हरि भजै वैर बुद्धि उर धारि।
न पायो वरवास तह सदा भक्ति बढवारि ॥३॥
ोभा अलौकिक जहाँ प्रभू बैठे सिहासन।
हसानन सहसाक्ष सहस कर पाद सुभासन॥
ाय जय बोलै भक्त कुसुम वरषैं हिय हरषैं।
ानन्द विविध अपार सकल भाँतिन के सरसै॥
ारद पहुँचे जाय दूर ते वीर धरयौ धर।
ीन्हें दडप्रनाम विमल गुन गाय जोरि कर ॥४॥

भक्त पियारे देखि प्रभू दृगजल भरे जल।
प्रेम हिये उद्गार कंठ रुकि पेखि रहे पल॥
बोले वचन रसाल सुनत आनद उर छावै।
बाढै नेह अपार भक्ति तरु सींचि बढावै॥
एहो नारद प्रानप्रिय सुख आगमन तुम्हार।
आवौ परसौ अंग तुल ज्यौं पावौं सुखसार।५॥

सबको है व्यवहार अधिक निज देह पियारी।
मेरे सो नहि रीति कहौ दृढ नेम उचारी॥
जौ भक्तन अनकूल सदा मम तन नहि रहई।
तौ राखौ नहिं राह बात औरन को कहई॥
सत्य हृदय मम साधु साधु उर मोहि बसावै।
मो बिन लखै न और तथा ते मोहि सुहावै॥६॥
श्रीपति के ए वचन सुनत सब जन हरखाने।
लागे करन प्रणाम देवऋषि मन विकसाने॥
विनय भार सिर नाय जोरिकर पद सिर दीन्हौ।
अभय हस्त श्रीकंत सीस तिनकै निज कीन्हौ॥
देखि परस्पर सुख भरे स्वामी सेवक दोय।
ऐसे प्रभू न सेवई धिग जीवन सो होय॥७॥

दै आदर निज निकट कही बैठो मम प्राना।
प्रभु आज्ञा धरि सीस देवऋषि करी प्रनामा॥
बोले हरि मुसुकाय अहो नारद सुखरासी।
फिरौ लोक सब ठौर चित्त मेरे पदवासी॥
गुन गावौ भरि प्रेम नेम एकै मनमाही।
कृष्न हेतु तै प्रीति अपर कछु सपने नाही॥८॥
विषै गर्त्त दृढ नर्क परे जे जीव अपारा।
जगत वासना पास बधे नहि है छुटकारा॥
मिथ्या सत्य प्रतीति सत्य को अंग न जानै।
जिन कर्मन्न ते गर्भ नर्क रुचि तेई ठानै॥
निसिदिन बाढै मोह क्लेश छिन छिन अधिकाई।
चिंतागिन के [illegible] होत सुख आयु [illegible]॥[illegible]

तिनको हित उर आनि लोक परिजटन तुम्हारौ।
दरसन परसन प्रश्न वचन कहि दीन उधारौ॥
कहाँ फिरे सुखकन्द कहाँ ते अब आये हौ।
कहौ लोक वृत्तान्त कहा मन धरि ल्याये हौ॥
कहा अलौकिक लखि परयौ कहा नीति अविनीति।
मुहि सब दिन चिंता रहै भक्त न पावैं भीति॥१०॥
बोले नारद सीस नाय लखि पद कर जोरैं।
कृपा रावरी एक सदा सब विधि बल मोरैं॥
महाराज को नाम पोत दृढ़ भवनिधि माहीं।
तेहि आश्रित ह्वै जीव पार अनयासै जाहीं॥
जीवन के हित आप करी लीला बहुतेरी।
सुने सुनाय गहै चित्त की मिटै अंधेरी॥११॥
करुणासील सुभाव आपके मन यह रहई।
जीव मिलै मुहि आय क्लेश माया सग लहई॥
पूरन दया निहारि देह मानुष की दीन्हीं।
भरतखंड थल पाय प्रीति श्रीपद नहि कीन्हीं॥
अति ऊचौ उपकार मोह बस मूढ़ भुलावै।
कृतनिंदक अपराध ताहि कहि आगम गावै॥१२॥
ऐसे हू जे जीव भक्त सगति पाहीं।
कृपा रावरी जानि सफल मानुष तन करहीं॥
भक्त एक जिहि देस बसै तिहि वेद कहै सुचि।
ताके सग अनेक जीव सुधरैं माया मुचि॥
दास बसैं बहु ठौर कृपा तिनकी अति प्यारी।
मोहि देखिबे चाव फिरौं सुख अधिक निहारी॥१३॥
भरतखंड की रीति द्वीप खंडन ते न्यारी।
किये एक गुन कर्म होय कोटिन बढ़वारी॥
कर्म क्षेत्र सो भूमि पाय श्रीपद मन लावैं।
तिनही को बरभाग्य सत श्रुति हरषित गावैं॥
याही ते आसक्ति तहाँ मेरो मन पावै।
भक्तन की सुचि लागि देखि अति चित्त लुभावै॥१४॥

आज्ञा श्रीमुख भई कहाँ ते अब आवत हौ।
अंतरजामी तौ दास मुख सुख पावत हौ॥
भरतखड मै गयो नाथ गुन गावत जीहा।
देखत फिरौं अलक्ष लक्ष ह्वै सबकी ईहा।
कौतुक पेख्यौ एक महा विसमय मन छायो॥
क्यो बहुत विचार सार निरधार न पायो॥१५॥

एक दिना की बात विधिगिरि तीर गयो मैं।
तहाँ सरोवर दिव्य देखि मन मोद भयो मै॥
लता औषधी गुल्म वृक्ष बेली सुख छाई।
नीर परम गभीर स्वच्छ सब ऋतु सुखदाई॥
फूले कज अनेक जीव सब अति सुख पावै।
कीजै कहा बखान मनुज सुरवधू लुभावै॥१६॥
अपर सुनो वृत्तात तीर ताके दस मुनिवर।
इन्द्री वृत्ति समेटि चित्त कीन्हें एकागर॥
ध्यावै हिय हरि रूप अगुन गुन उदै जहाँ ते।
लागा सुद्ध समाधि बुद्धि नहि चलत तहाँ ते॥
बाहिर को व्यवहार भान कछु होय न जिनकै।
भये धेयपद लीन कृपा देखी अस तिनकै॥१७॥

मोरे मन अस भई रहौं कछु काल अबै इत।
सभाषन सुख तहौं समाधि की भये सुचिर मित॥
रह्यौं तहाँ बहुकाल दसा तिनकी तैसी ही।
ज्यौं प्रतिमा पाषान देखि सब दिन जैसी ही॥
बहुत अस्थि सघात देह पजर तहँ पेखे।
गनती करी न जाय कूट इव परे अलेखे॥१८।
तब ससै मन भयो कहा सौ जानि न जाई।
त्यागि चल्यौ वह ठौर सुमिरि हरि बीन बजाई॥
उर बाढ्यौ अभिलाष बात निरधार होय यह।
निश्चै कीन्ह्यौ चित्त प्रभू बिन अपर कवन यह॥
देखे श्रीपद आय भाग्य पूरे निज लेखे।
जीवन जहै विश्राम नाम करुणा दृग पेखे॥१९॥

लज्जा होत अपार करत विनती प्रभु पाँही ।
ससै होय न नास सकुचि कारज विनसाँही ॥
ज्यौ पावै मन बोध तोष ताको सब कीजै ।
श्रीमुख ते विन सुने चित क्यो हूँ न पतीजै ॥
नारद के ए वचन सुनत हरि हिय हरषाने ।
बोले करुणासिंधु भक्त अति वल्लभ जाने ॥२०॥
अहो देवरिषि नैन लख्यौ सो गोप्य महा है ।
काहूते सो हेतु आजु लौं मै न कहा है ॥
तोऊ तुम पर नेह अधिक मोरे मन माँही ।
याते कहौं बखानि सुने ससै सब जाँही ॥
ब्रह्मा के ते पुत्र दमौ जानौ प्राचीना ।
विधि अज्ञा सिर धारि सृष्टि हित तप मन दीना ॥२१॥
विधि निकट सर सुभग नाम अघमर्षन गावैं ।
दक्ष प्रथम हरि तोषि तहाँ वर लब्ध बताव ॥
ता तीरथ मै आय दसौ मन धरि विश्वासा ।
लागे करन अपार कठिन तप हरि की आसा ॥
तिनको अति तप तेज बढ्यौ सुर साति न पाँव ।
जाय चतुर्मुख निकट विथा अपनी सब गाव ॥२२॥
एक समय वैकुठ नाथ नारायन जानी ।
आये तिनके निकट दैन वर तप सुख मानी ॥
देखि रमापति रूप दसौ मन आनद छाये ।
परे दड इव भूमि प्रभू निज हाथ उठाये ॥
अति आरति उर माहि रही भरि बहु कालीना ।
सब इद्रिन की वृत्ति भई हरि तन छवि लीना ॥२३॥
बहुरि धरयौ मन धीर सकल विधि आदर कीन्हा ।
अरघ पाद्य सनमानि वचन वर आसन दीन्हा ॥
सेवा मन अभिलाष जथाविधि सब ही कीन्ही ।
प्रभु पायो अति तोष प्रीति सुचि तिन की चीन्ही ॥
अतिसै होय प्रसन्न कही मन जो वर होई ।
मागि लेहु सब देउ सक जिन मानौ कोई ॥२४॥

मम दरसन जग जीव हेतु सब अवधि श्रेय की।
तृषावत सुख लहै नीति ज्यौं अमिय पेय की॥
तब तिन कियो विचार कष्ट हम अतिसै कीन्ह्यौ।
एई परम निदान अपर कैसो नहि चीन्ह्यौ॥
कीजे याते प्रश्न सक ज्यौं मन की जाई।
बार बार तप करै भले कै अबही भाई॥२५॥
दस मै मुख्य प्रधान एक सब को मन लैकै।
कीन्ह्यौ प्रश्न विचारि जोरि कर बहु विधि नैकै॥
महाराज कछु सक एक उपजी मन आई।
दुरगम रूप तुम्हार जानि सो कापै जाई॥
तुच्छ अल्प अति अज्ञ जीव हम माया घेरे।
निश्चै का विधि होय ईस जगमै बहुतेरे॥२६॥
सबको परम निदान एक जापर नहि कोई।
सोई है यह रूप अपर कै दूजो होई॥
परम धाम को लोक सदा अव्यय थिर रहई।
जहाँ गये ते जीव बहुरि ससृति नहि गहई॥
कौन तहाँ की रीति मिलै का विधि के कीन्हे।
कहियै सब निरधारि परै ज्यौं हम कौ चीन्हे॥२७॥
श्रवण जोग्य अधिकार हमारौ जो कछु देखौ।
कृपा रावरी मुख्य सकल कारन जिय लेखौ॥
करुना करि वैकुठनाथ नारायन बोले।
सर्वाराध्य सरूप भाषि ससै सब खोले॥
अहै हमारो रूप अपर सब को जो हेतू।
अस कला अवतार होहि जाते सो सेतू॥२८॥
नित्य विहारी जुगल तासु लीला सब लेखो।
बिगरे बनै अनत अड पल अग विसेखो॥
जिनको नित्य विहार एक रस भग न होई।
कला अस जग हेतु सकल हम हैं सब कोई॥
इच्छा के आधीन रहैं पुनि तहां समावें।
अमित कोटि ब्रह्माड ईस गुन फिरि उपजावैं॥२९॥

कारन परम निदान तासु परम और न कोई।
कीयें नेति निषेध अवधि जानौ दृढ सोई॥
परम धाम गोलोक मध्य वृन्दावन गावे।
बस तहा बहु भक्त अगजा सखी सुहावैं॥
राधाकृष्न सरूप एक विधि निज इच्छातें।
गौर स्याम अभिराम अग आनद जग जातें॥२०॥
विहरैं नित्य विहार सदा भक्तन सुखदाता।
जानौ दृढ निरधार सकल के तेई त्राता॥
तिनकी कृपा कटाक्ष पाय माया भ्रम छूटै।
कम रज्जु जो पास त्रास तौ लौं नहि टूटै॥
दीन्हौ उत्तर एह प्रश्न जो कीन्हौ ताको।
कहो चित्त अभिलाष जतन अब कीजै वाको॥३१॥
तब तिन हियें विचारि कह्यौ नारायन पाहीं।
दीजै सो वर प्रभू जथा हम ता पद जाहीं॥
श्रीपति बोले मद विहसि एहो तपधामा।
सुगम न जानो बात कठिन अति जैसो कामा॥
जैसे तपते ताष हमै कीन्हौ वर भाइ।
ऐसें जन्म सहस्र कोटि बीतै हठ लाई॥३२।
दुर्लभ तहाँ प्रवेस ज्ञान तप जोग उपाये।
रीति कछू वह और बिना सो हिय मैं आये॥
अपर न देखी आस ईस वैकुठ रमापति।
तबही अतर्धान भए तिनहूँ कीन्ही नति॥
रमाकात निज लोक गए तब ते मुनिवर अरि।
अतिसै चित्त लगाय चतुर्भुज रूप हिये करि॥३३॥
धरी अखड समाधि काल बहु बीत्यौ ऐसें।
जैसो कठिन कठार करै तप कहियै कैसें॥
विश्व काल आधीन विपर्जय सब की होई।
एक दिना ब्रह्माड अवधि बस रहै न सोई॥
देह काल परिणाम पाय अति होय पुरानी।
करैं तासु कौ त्याग न इते धारै ज्ञानी॥३४।

मम दरसन जग जीव हेतु सब अवधि श्रेय की।
तृषावत सुख लहै नीति ज्यौं अमिय पेय की॥
तब तिन कियो विचार कष्ट हम अतिसै कीन्ह्यौ।
एई परम निदान अपर कैसो नहि चीन्ह्यौ॥
कीजें याते प्रश्न सक ज्यौं मन की जाई।
बार बार तप करैं भले कै अबही भाई॥२५॥
दस मै मुख्य प्रधान एक सब को मन लैकै।
कीन्ह्यौ प्रश्न विचारि जोरि कर बहु विधि नैकै॥
महाराज कछु सक एक उपजी मन आई।
दुरगम रूप तुम्हार जानि सो कापै जाई॥
तुच्छ अल्प अति अज्ञ जीव हम माया घेरे।
निश्चै का विधि होय ईस जगमै बहुतेरे॥२६॥
सबको परम निदान एक जापर नहि कोई।
सोई है यह रूप अपर कै दूजो होई॥
परम धाम को लोक सदा अव्यय थिर रहई।
जहाँ गये ते जीव बहुरि संसृति नहि गहई॥
कौन तहाँ की रीति मिलै का विधि के कीन्हे।
कहियै सब निरधारि परै ज्यौ हम कौ चीन्हे॥२७॥
श्रवण जोग्य अधिकार हमारौ जो कछु देखौ।
कृपा रावरी मुख्य सकल कारन जिय लेखौ॥
करुना करि वैकुंठनाथ नारायन बोले।
सर्वाराध्य सरूप भाषि ससै सब खोले॥
अहै हमारो रूप अपर सब को जो हेतू।
अंस कला अवतार होहि जाते सो सेतू॥२८॥
नित्य विहारी जुगल तासु लीला सब लेखो।
बिगरे बनै अनत अड पल अग विसेखो॥
जिनको नित्य विहार एक रस भग न होई।
कला अंस जग हेतु सकल हम हैं सब कोई॥
इच्छा के आधीन रहैं पुनि तहां समावै।
अमित कोटि ब्रह्मांड ईस गुन फिरि उपजावै॥२९॥

कारन परम निदान तासु परम और न कोई।
कीयें नेति निषेध अवधि जानौ दृढ सोइ॥
परम धाम गोलोक मध्य वृन्दावन गावे।
बस तहा बहु भक्त अगजा सखी सुहावैं॥
राधाकृष्न सरूप एक विधि निज इन्छाते।
गौर स्याम अभिराम अग आनद जग जाते॥२०॥
विहरैं नित्य विहार सदा भक्तन सुखदाता।
जानौ दृढ निरधार सकल के तेई त्राता॥
तिनकी कृपा कटाक्ष पाय माया भ्रम छूटै।
कम रज्जु जो पास त्रास तौ लौं नहि टूटै॥
दीन्ह्यौ उत्तर एह प्रश्न जो कीन्ह्यौ ताको।
कहो चित्त अभिलाष जतन अब कीजै वाको॥३१॥
तब तिन हियें विचारि कह्यौ नारायन पाहीं।
दीजै सो वर प्रभू जथा हम ता पद जाहीं॥
श्रीपति बोले मद विहसि एहो तपधामा।
सुगम न जानो बात कठिन अति जैसो कामा॥
जैसे तपते ताष हमै कीन्हौ वर भाई।
ऐसें जन्म सहस्र कोटि बीतै हठ लाई॥३२।
दुर्लभ तहाँ प्रवेस ज्ञान तप जोग उपाये।
रीति कछू वह और बिना सो हिय मैं आये॥
अपर न देखी आस ईस वैकुठ रमापति।
तबही अतर्धान भए तिनहूँ कीन्ही नति॥
रमाकात निज लोक गए तब ते मुनिवर अरि।
अतिसै चित्त लगाय चतुर्भुज रूप हिये करि॥३३॥
धरी अखड समाधि काल बहु बीत्यौ ऐसे।
जैसो कठिन कठोर करैं तप कहियै कैसे॥
विश्व काल आधीन विपर्जय सब की होई।
एक दिना ब्रह्माड अवधि बस रहै न सोई॥
देह काल परिणाम पाय अति होय पुरानी।
करैं तासु कौ त्याग न इते धारै ज्ञानी॥३४।

तप सचित वर देह आय कै प्रापति होई।
परकाया परवेस करै ज्यौ जोगी कोई॥
तैसे समह त्याग देह छोड़े औ धारै।
धृत्य एक रस रहै नेम सो पल न बिसारै॥
बीत्यो जितनो काल उर्धरेता तिनको तब।
सुनिये चित्त लगाय कहै हमसो नारद अब॥३५॥
प्रथम सृष्टि उत्पन्न चतुर्मुख जबही कीन्ही।
तब धारी तिन देह रीति दृढ तपकी लीन्ही॥
बीते विधि के वर्ष अबै लौ त्रिसित जानौ।
जेहि जुग जो वयमान अवधि तन पलट्यौ मानौ॥
कोटिन कोटि सरीर तजे पुनि धारन कीन्हे।
अबहू देखि रीति नेम तैसो दृढ लीन्हे॥३६॥
नित्य विहारी जुगल चरन पकज रज आसा।
वृदावन परधाम तहा पावैं सुख वासा॥
करुनासिधु सुभाव जुगल निज जन हितकारी।
कृपा दृष्टि की कोर जबै इन ओर निहारी॥
तब उपजै गौ प्रम कहै सब नेमन को फल।
सुद्ध एक अनुराग भाव भावित हिय निरमल॥३७॥
ता उर मै सब प्रकट आय कै होहि जुगल वर।
सहचरि सग अनेक रहै जे सवा तत्पर॥
परम धाम गोलोक अमल अति जो वृन्दावन।
सकल उदय हिय होय धरे जानो याही तन॥
पावैंगे विश्राम कष्ट उपराम लहैंगे।
तब अधिकारी होय परमपद ताहि गहैंगे॥३८॥
धन्य आजु को दिवस देवऋषि धन्य बुद्धि तव।
प्रश्न किया सखसार परमपद देइ गुने लव॥
जुगलविहारी नित्य नित्य वृन्दावन धामा।
नित्य विहार अखण्ड नित्य लीला गुन नामा।
कारन परम निदान सर्व पर जानो सोई।
जिहि जाने बिन मीत जोव सुख लहै न कोई॥३९॥

कह्यौ स्वल्प हम गाय प्रश्न को उत्तर जैसो।
को पावै निरवार रूप महिमा थल तैसो॥
नारद पायो बोध चित्त मैं निश्चै आई।
ज्यौं पावौ पद एह करो मो बेगि उपाई॥
इनते वक्ता अधिक अवर को है जग माहीं।
काजै प्रश्न बहोरि त्यागि सका प्रभु पाहीं॥४०॥
कीन्ह्यौ विनय प्रनाम दास की रीति लखाई।
बोले जुग कर जोरि हरषि नारद सकुचाई॥
महाराज को हेत सदा जन पर अधिकाई।
जो कीजै व्यवहार एक सो भक्त न लाई॥
करुनासिंधु सुभाव आपको सब दिन देखै।
श्रीमुख के ए वचन सुनत नहि तृप्ति बिलेखै॥४१॥
मोमैं दोष अनेक एक तिनमैं अति भारौ।
थिरता गहै न चित्त फिरौ निसदिन जग सारौ।
उर बाढ़ी सुनि चाह परम पद श्रीमुख गायो।
श्रम को होय न लेस देस चाहत सो पायो॥
तिनकौ कष्ट निहारि हारि मन टूटत आसा।
कृपा रावरी ओर पेखि उपजत विश्वासा॥४२॥
नाथ हाथ सब अहै कहैं श्रुति संत सदाहीं।
दुर्लभ सो वह बात कवन जो श्रीकर नाहीं॥
अनहोनी प्रभु करौ मेटि करमन को रेखा।
जानत है सब कोय बहुत नैननहुँ देखा॥
अज्ञ मंद मतिहीन दीन जगजीव दुखारे।
पुरुषारथ अति हीन मरै लव विषै विसारे॥४३॥
निसदिन चिंता एक उदर भरि तिय अभिलाषै।
हरि चरचा रस जन्म कोटि बीतै नहि चाखै॥
ऐसी जिनकी रीति परमपद ते किमि पावै।
आरतबंधु बखानि आपको जस श्रुति गावै॥
प्रभू कह्यौ समझाय मुनिन को तप अति भारी।
चित्त न सनमुख होत चाह मन भई अपारी॥४४॥

कीजै करुना सोय होय सुनते सुख जाके।
छिन छिन बाढै मोद भये अधिकारी ताके॥
पावे गत सदेह धाम वृन्दावन सोई।
जुगलविहारी नित्य निरखि नैनन सुख होई॥
नारद के ए वचन सुने अनिरुद्ध गुसाई।
लागे करन विचार वार कछु बोले नाहीं॥४५॥
कीन्ह्यौ मनमै ध्यान जुगल वपु हियरे आयो।
जो उत्तर अग रूप ताको अस पायो॥
बोले मृदु मसुकाय अहो नारद मुनि ज्ञानी।
साधु सग सुख होय कहै को ताहि बखानी॥
उपकारी जग दोय ईस जन ताके साचै।
दीन दुखी सुख हेत नाच कितने नित नाचै॥४६॥
अब सुनिये निरधार प्रश्न को उत्तर जो है।
मति सम कहौ बखानि बात अति दुर्लभ सोहै॥
गहै एक विश्वास कल्पना त्यागै नीकै।
मिटै मोह सब अग प्रीति जुत समुझै जीकै॥
अवतारी जो एक अवधि जापर कोउ नाही।
इच्छा सक्ति उदोत भई ताके मन माही॥४७॥
इच्छा के आधीन प्रगट माया दरसानी।
नैन कोर की ओर लखै जोरे जुग पानी॥
नित्यविहारी स्याम अल्प दृग देखो जबही।
अमिति कोटि ब्रह्माड रचे बहुविधि ते तबही॥
तिनमैं जीव अनेक विषै परि और न जानै।
अपनौ रूप बिसारि सत्य माया तन मानै॥४८॥
देह सौख्य के हेत क्रिया लघु दीरघ ठानै।
बीतैं कल्प अनेक विषैं ते तृप्ति न मानै॥
सुक्र अस्थि औ मेद मांस मज्जा लोहू त्वच।
विष्ठा मूत्र विकार लार नख लोम भरे कच॥
नव इन्द्री है द्वार वहै नरकन की सामा।
असुचि स्त्रवै दुरगधि सदा केवल मल धामा॥४९॥

या प्रकार की देह ताहि सर्वोपर मानी।
छिन छिन भोग विलास देइ सेवैं सठ प्रानी॥
परम इष्ट जेहि जानि प्रेम सौं सेवन करियै।
मिलै सोइ परिनाम बात साँची मन धरियै॥
निश्चै दृढ़ अनुराग नक तन सेवैं जेई।
कोटिन ब्रह्मा जाहि नर्क हठि पावैं तेई॥५०॥
माया वस परिजीव रूप अपनो भूलै जो।
ईस रूप दुर्ज्ञेय ताहि भूलै अचरज को॥
नित्यविहारी प्रबल सक्ति माया निज जानी।
जीवन की यह दसा देखि करुना मन आनी॥
जो कोउ रचै बनाय सदन ताकी अस रीती।
राखै वामै द्वार दाय सो नीति पुनीती॥५१॥
भीर परै अवकाश लहै जो वामैं रहई।
मेरो घर ब्रह्मांड अमित श्रुति सब दिन कहई॥
यामैं करियै द्वार उभै ग्रहदोष न होई
परमारथ वर नाम कहै स्वारथ सब कोई॥
स्वारथ को यह रूप करै सो निज सुख लागी।
परमारथ सहि कष्ट दीन सुख देहि सुभागी॥५२॥
जितनौ जग बेवहार सकल स्वारथमय जानौ।
कृष्न विषै अनुराग मूल परमारथ मानो॥
स्वारथ को उपदेस जीव कह माया करई।
परमारथ उपदेश होय सोय तब उर वरई॥
जग यह सदा प्रवाह कर्म वस सब दिन ऐसै।
उधरनहूँ की रीति काल त्रय थापौं तैसें॥५३॥
दयासिंधु हिय माहि जतन ऐसी वर भावैं।
श्रम को होय न लेस जीव मेरौ पद पावैं॥
जग मैं जतन अनेक दोष सबही के माहीं।
साध अति करि कष्ट नष्ट फल अवधि लहाहीं॥
माया दृढ़ बलवान जतन एकौ नहि मानै।
मोरे है आधीन जीव सो मोहि न जानै॥५४॥

जाने बिन उरबार होय नहिं कोटि उपाई।
दुरगम मेरौ रूप जानि सो कैसे जाई॥
मै ई अपनो रूप जतन करि आप जनावौं।
जीव लहै विश्राम जगत गुरु पदवी पावौं॥
सम्प्रदाय यह चलै शिष्य गुरु नातौ मेरौ।
माया बधन कटै होय सब भाति निबेरौ॥५५॥

ऐसी मन मै धारि बहुरि कछु कियो विचारा।
मेरौ नित्य विहार रहै सब दिन इक सारा॥
माया लहै न सक मोहि बिनु करियै कैसी।
गुरु पदवी अति भार वस्तुहू सोहै तैसी॥
जौ राखौं उपदेस रूप को याके माहीं।
जीव विषै आधीन चित्त की थिरता नाहीं॥५६॥

कीन्ह्यौ यह सिद्धात नाम औ वस्तु कहैं द्वै।
कीजै ताकौ भिन्न सकै नहि सो क्यो हू है॥
बोध वस्तु को होय जबै लहियै कछु नामा।
नाम उदै किमि होय वस्तु पावैं बिनु ठामा॥
जो ध्यावैं मम रूप जोग अष्टाग सुसाधी।
सुद्ध सबै अग होहिं चित्त अतिसै निरुपाधी॥५७॥

अन्य वासना स्वल्प फुरै तौ देह धरै पुनि।
साधै जन्म अनेक सिद्ध पावै कोऊ मुनि॥
नाम क्रिया नहि और जीह जौ सुमिरन करई।
तौ पावै मम रूप बात ऐसी लखि परई॥
है यह सुगम उपाय जीव पावैं मेरौ पद।
गुरु पदवी सो भार लहै जुग जुग महिमा हद॥५८॥

जो होती कछु जतन और कल्यान हेतु है।
सर्वोपरि अति उच्च गुरु पद धर्म सेतु है॥
यामैं धर ते सोइ चित्त नारद उन मानौ।
हरि श्रुति सत महत सिद्ध समत यह जानौ॥
गुरु शिष्य व्यवहार एक हरि मिलिवे कारन।
अपर न दीसै हेतु किये बहु भाँति विचारन॥५९॥

तुमहू तो गुरु कियो नेक हरिसौ पय भाषी।
प्रभू कह्यौ अपराध बडौ भुगतौ चौरासी॥
गुरु महिमा निज नेम अहो नारद तुम देखी।
कष्ट मेटि छिन माहि परम सुख दियो विसेखी॥
हरि अपनी मरजाद आप थापी गुरु होई।
कियो नाम सचार मन्त्र उपदेस्यो सोई॥६०॥

अपर एक वृत्तात सुने अति आनद होई।
उपजै दृढ विश्वास लहै नहि ससै कोई॥
हरि मन मै यह गुनी जीव माया आधीना।
तर्क वितर्क अनेक लहै अति बुद्धि मलीना॥
प्रथम नाम उपदेश बहुरि करि वेद दृढायो।
तौऊ भई न प्रीति अत जब तन को आयो॥६१॥

पर्‍यो मोह के सिंधु जीव सब चेत गवायो।
थापी नीति पुनीति पचमुख सोइ सुनायो॥
नारद सकल उपाय सिद्धि याही तें होवैं।
यामैं करि सदेह मूढ ते सरवस खोवै॥
पतित उधारन नाम सदा श्रुति टेरि सुनावै।
नाम दान के किये गुरू अति उच्च कहावैं॥६२॥
आगम निगम पुरान समुझि नीकैं उर धरई।
जोग जज्ञ तप दान नेम व्रत सजम करई॥
सुने गुने मन माहि अपर साधन बहु भाती।
एक एक जौ करै कोटि कोटिन विधि पाती॥
श्रीगुरु मुखतें नाम सुनै नहि इन बल मानी।
व्यर्थ क्रिया सब होहि परै रौरव अभिमानी॥६३॥
राधा कृष्न सरूप जुगल श्रीनित्यविहारी।
परमधाम गोलोक सुखद वृन्दावनचारी॥
जुगल नाम उर धारि प्रेम भरि सुमिरन कीजै।
अनायास परधाम कृपा तिनकी सौं लजै॥
नारद सुगम उपाय कही परधाम लहन की।
महिमा नाम सरूप समुझियै गति न कहन की॥६४॥

गोपेश्वर सनकादि समागम अति सुख दाई।
अब बीतै कछु काल होयगो जानौ भाई॥
इन बातन की रीति सकल विधि तहा सुनौगे।
नित्य विहारी धाम मिलै पल हियें गुनौगे॥
यह सब भयो प्रसग देवऋषि तुमरे आये।
कहिये कहा बखानि जथा सुख साधु सुपायें॥६५॥

तब नारद कर जोरि दडवत किये प्रनामा।
उर बाढ्यो उतसाह अधिक पायो विश्रामा॥
महाराज की प्रीति सदा भक्तन पर ऐसी।
किमि कहियै सो रीति हिये उपजत है कैसी॥
नाथ कृपा अस करौ चरन सरवस्व तुमारे।
हिय त टरै न रूप जीह नित नाम उचारे॥६६॥

करन सुनै गुन गान नैन तव रूप निहारै।
श्री प्रसाद धरि सीस नासिका गध सुधारै॥
करै प्रनाम सुअग चरन रज परसि सुहावैं।
कर परिचरजा लहै चरन परदच्छिन लावैं॥
साधु सग दिन रैन मिलै अतिसै रुचि होई।
सकल ठौर गुन सार गहै मन दोष न कोई॥६७॥

करि प्रनाम कर जोरि देवऋषि अस्तुति कीन्ही।
विदा हेतु हिय जानि वृत्ति प्रभु आयसु दीन्ही॥
प्रभु आसिष धरि सीस देवऋषि चल सुखारे।
जुगल नाम सौ प्रीति करी अति चित्त सभारे॥
जहाँ जहाँ मन लगें भजन निरूपाधिक होई।
तहाँ करै निरवाह काल आसा मन सोई॥६८॥

श्री ललिता मुसुकाय कही गोपेश्वर जानौ।
जुगलविहारी नित्य सेव्य कारन ए मानौ॥
नाम रूप की रीति जानि ऐसी जिय धारौ।
इन तें जब अनुराग होय श्रीकृपा निहारौ॥
नाम रूपतें प्रीति रीति परधाम लेन की।
अति ही सुगम उपाय करी प्रभु स्वपद देन की॥६९॥

जे बाधक इन माहि सुनो नीके मन लाई।
त्यागे तिनको सग नीति ऐसी सुखदाई ॥
जे त्यागत है नाहि छेम पूरौ सुख चाहैं।
सर्प रहै वरमाहि सक औ हानि सदा है॥
औषधि चाहै पथ्य अन्यथा रोग बढ़ावें।
तजि कुसग हरि भजै साधु समत श्रुति गावै ॥७०॥

प्रथम वासना मूल रूप ताके द्वय गावें।
परम सुद्ध है एक अपर अति असुचि बतावे॥
साधु सग मिलि होय चाह हरि कैसे पावे।
परम सुद्ध सो जान सत मन ताहि मनावैं॥
कामी कुटिल मलीन विष आधीन सदा जे।
उपजैं तिनके सग चाह हठि नर्क प्रदाते ॥७१॥

गुरु तें लै उपदेस सकल विधि निश्चै कीजै।
हानि लाभ उर आनि चित्त विपरीति न भीजै॥
असद् वासना हेत अपर देवहि नहि ध्यावै।
निज कुटुब त प्रीति सत्य दृढता नहि ल्यावै॥
धन अभिलाष निवारि देह अभिमान गँवावै।
जरती आगि विचारि नारि के निकट न जावै ॥७२॥

नर तन पाय विचार सार ऐसो सर्वोपरि।
भजिये सब तजि कृष्न चित्त निष्ठा दृढतर करि॥
सबको समत जानि आपु जिय माहि विचारै।
सत्य असत्य निहारि वस्तु नीकी उर धारै॥
मन इन्द्री गति हेतु देह व्यापार जहाँ लौं।
निश्चै कीजै जाहि बाधिये नेह तहालौ। ७३॥

माया जनित निकाय विश्व तामै सुख मानै।
होय अन्यथा रूप छिन छिन ताहि न जानै॥
इन्द्री सुख लव हेत अपर देवन हठि ध्यावै।
करै न मूढ विचार गर्भ नर्कं पुनि जावै॥
स्वान पूछ गहि पार कहा अबुधि को जाई।
जे नर आसा करै देव सुख तहाँ न भाई ॥७४॥

जे बाधक इन माहिं सुनौ नीक मन लाई।
त्यागै तिनको संग नीति ऐसी सुखदाई॥
जे त्यागत है नाहिं छेम पूरौ सुख चाहै।
सर्प रहै बरमाहिं सक औ हानि सदा है॥
औषधि चाहै पथ्य अन्यथा रोग बढ़ावैं।
तजि कुसंग हरि भजै साधु समत श्रुति गावैं॥७०॥

प्रथम वासना मूल रूप ताके द्वय गाव।
परम सुद्ध है एक अपर अति असुचि बताव॥
साधु संग मिलि हाय चाह हरि कैसे पाव।
परम सुद्ध सो जान संत मन ताहि मनावै॥
कामी कुटिल मलीन विष आधीन सदा जे।
उपजैं तिनके संग चाह हठि नर्क प्रदाते॥७१॥

गुरु तैलै उपदेस सकल विधि निश्चै कीजै।
हानि लाभ उरआनि चित्त विपरीति न भीजै॥
असद् वासना हेत अपर देवहि नहि ध्यावै।
निज कुटुंब तें प्रीति सत्य दृढता नहि ल्यावै॥
धन अभिलाष निवारि देह अभिमान गँवावै।
जरता आगि विचारि नारि के निकट न जावै॥७२॥

नर तन पाय विचार सार ऐसो सर्वोपरि।
भजिये सब तजि कृष्न चित्त निष्ठा दृढतर करि॥
सबको समत जानि आपु जिय माहि विचारै।
सत्य असत्य निहारि वस्तु नीकी उर धारै॥
मन इन्द्री गति हेतु देह व्यापार जहाँ लौं।
निश्चै कीजै जाहि बाधिये नेह तहालौं।७३॥

माया जनित निकाय विश्व तामै सुख मानै।
होय अन्यथा रूप छिन छिन ताहि न जानै॥
इन्द्री सुख लव हेत अपर देवन हठि ध्यावै।
करै न मूढ विचार गर्भ नर्क पुनि जावै॥
स्वान पूछ गहि पार कहा अबुधि को जाई।
जे नर आसा करै देव सुख तहाँ न भाइ॥७४॥

गोपेश्वर सनकादि समागम अति सुख दाई।
अब बातै कछु काल होयगो जानौ भाई॥
इन बातन की रीति सकल विधि तहा सुनौगे।
नित्य विहारी धाम मिलै पल हियें गुनौगे॥
यह सब भया प्रसग देवऋषि तुमरे आये।
कहिये कहा बखानि जथा सुख साधु सुपाये॥६५॥

तब नारद कर जोरि दृडवत किये प्रनामा।
उर बाढ्यो उतसाह अधिक पायो विश्रामा॥
महाराज की प्रीति सदा भक्तन पर ऐसी।
किमि कहियै सो रीति हिये उपजत है कैसी॥
नाथ कृपा अस करौ चरन सरवस्व तुमारे।
हिय त टरै न रूप जीह नित नाम उचारे॥६६॥

करन सुनै गुन गान नैन तव रूप निहारै।
श्री प्रसाद धरि सीस नासिका गध सुधारै॥
करै प्रनाम सुअग चरन रज परसि सुहावैं।
कर परिचरजा लहैं चरन परदच्छिन लावै॥
साधु सग दिन रैन मिलै अतिसै रुचि हाई।
सकल ठौर गुन सार गहै मन दोष न कोई॥६७॥

करि प्रनाम कर जोरि देवऋषि अस्तुति कीन्ही।
विदा हेतु हिय जानि वृत्ति प्रभु आयसु दीन्ही॥
प्रभु आसिष धरि सीस देवऋषि चल सुखारे।
जुगल नाम सौ प्रीति करी अति चित्त सभारे॥
जहाँ जहाँ मन लग भजन निरूपाधिक होई।
तहाँ करे निरवाह काल आसा मन सोई॥६८॥

श्री ललिता मुसुकाय कही गोपेश्वर जानौ।
जुगलविहारी नित्य सेव्य कारन ए मानौ॥
नाम रूप की रीति जानि ऐसी जिय धारौ।
इन तें जब अनुराग होय श्रीकृपा निहारौ॥
नाम रूपते प्रीति रीति परधाम लेन की।
अति ही सुगम उपाय करी प्रभु स्वपद देन की॥६९॥

जे बाधक इन माहि सुनौ नीके मन लाई।
त्यागै तिनको संग नीति ऐसी सुखदाई॥
जे त्यागत है नाहि छेम पूरौ सुख चाहै।
सर्प रहै घरमाहि संक औ हानि सदा है॥
औषधि चाहै पथ्य अन्यथा रोग बढ़ावें।
तजि कुसंग हरि भजै साधु संमत श्रुति गावै॥७०॥

प्रथम वासना मूल रूप ताके द्वय गावें।
परम सुद्ध है एक अपर अति असुचि बताव॥
साधु संग मिलि होय चाह हरि कैसे पाव।
परम सुद्ध सो जान संत मन ताहि मनावैं॥
कामी कुटिल मलीन विष आधीन सदा जे।
उपजैं तिनके संग चाह हठि नर्क प्रदाते।७१॥

गुरु तेलै उपदेस सकल विधि निश्चै कीजै।
हानि लाभ उरआनि चित्त विपरीति न भीजै॥
असद वासना हेत अपर देवहि नहि ध्यावै।
निज कुटुंब तैं प्रीति सत्य दृढता नहि ल्यावै।
धन अभिलाष निवारि देह अभिमान गँवावै।
जरती आगि विचारि नारि के निकट न जावै॥७२॥

नर तन पाय विचार सार ऐसो सर्वोपरि।
भजिये सब तजि कृष्न चित्त निष्ठा दृढतर करि॥
सबको संमत जानि आयु जिय माहि विचारै।
सत्य असत्य निहारि वस्तु नीकी उर धारै॥
मन इन्द्री गति हेतु देह व्यापार जहाँ लौं।
निश्चै कीजै जाहि बाधिये नेह तहालौं।७३॥

माया जनित निकाय विश्व तामै सुख मानै।
होय अन्यथा रूप छिन छिन ताहि न जानै॥
इन्द्री सुख लव हेत अपर देवन हठि ध्यावै।
करै न मूढ विचार गर्भ नर्कं पुनि जावै॥
स्वान पूछ गहि पार कहो अबुधि को जाई।
जे नर आसा करै देव सुख तहाँ न भाइ॥७४॥

सब को यह सिद्धात कृष्न इच्छा जग होई।
कारण सो परिणाम तासु पर ईस न कोई॥
जगतनाथ प्रभु नाम कहै निसि वासर प्रानी।
अन्य देव की सेव करैं पावर अज्ञानी॥
ज्यो निज पति हित त्यागि नारि पर पुरुष लुभावैं।
जग निंदा तिहि होय नर्क बसि चैन न पावै॥७५।

देव कर्म के मीत नित्य अपनौ सुख भावैं।
अल्प विघ्न जौ लहैं देह धन वेगि नसावै॥
अतिसै करि विश्वास भाव श्रद्धा दृढ सेवे।
जो पावै तिन लोक अत गर्भ पुनि लेवै॥
सदा सूर्य कहँ सेव अरुन बिन पादहि देखो।
सभु अराधे नाम वृकासुर तथा विलेखो॥७६॥
हर वल्लभ अति बान तासु भुज कृष्न विदारे।
विश्व रूप सुरराज तोषि तन प्रान बिसारे॥
भज तई जौ विघ्न होय तौ नास देखियै।
करै कोउ अपमान क्रोध पुनि कहा लेखियै॥
तोऊ तिनते प्रीति करै मतिमदमहा नर।
भजे विरोधे मुक्ति देहि निज विमुख होहि खर।७७।

काम क्रोध भय लोभ द्वेष सबध नेह जो।
जिहि तिहि भाँति लगाय चित्त श्रीकृष्न गेह सो॥
ऐसे प्रभु कहँ छाड़ि अनत जे मन भटकावै।
भ्रमण करै ससार कालत्रय शर्म न पावै॥
निसि दिन माया फद परि विमुख लहै दुख भार।
धन्य प्रभू श्रीकृष्न है तऊ लगाव पार॥७८॥

सुनौ सुहाती बात कहैं हम या प्रसग मै।
जैसी जन पर कृपा बसै श्री जुगल अङ्ग मै॥
एक समय विधि सभा भरी सब ही तहँ आये।
करै उर्वसी नृत्य गान गधर्व सुहाये॥
गधर्वन मैं मुख्य, चित्ररथ भूप कहावै।
उपवरहण अस नाम तासु सुत रूप सुहावै॥७९॥

कृष्न कथा सौ प्रीति कृष्न गुन नीकै गावै।
जितनी कृष्न रहस्य भेद तिनके प्रगटावै॥
कृष्न भक्त वर छाय जुगल सुख नाम उचारै।
जुगलमाधुरी छटा हिये सुखसागर धारै॥
ब्रह्मा कही पुकारि रासमडल की लीला।
उपवरहन कहु गाय सुनै सबही सुचि लीला॥८०॥

तब तिन कियो प्रनाम जोरि कर सीस नवायो।
महाराज मै धन्य आजु अतिसै सुख पायो॥
महिमा कृष्न बखान अपर को जानै जग मै।
सबको हित कल्यान कीजियै थापि सुगम मै॥
बड़े करै जो रीति लोक उपदेश हेत है।
महाराज सरवज्ञ सकल हिय करिय चेत है॥८१॥

सुनिये करौ बखान कृष्न क्रीडा सुखदाई।
महारास की रीति छन्द बहु मुनि जस गाई॥
कीन्ह्यौ गान प्रबन्ध रास को रूपक छायो।
परमानन्द समुद्र सभा विधि सहित समायो॥
उपवरहन के हिये जुगल छवि छटा लखानी।
भयो प्रेम के वस्य नेमतन दसा भुलानी॥८२॥

अश्रु पुलक रोमाच कठ गद्गद उर भीज्यौ।
गान प्रबन्ध अनीति जानि सबको मन खीज्यौ॥
विधि मान्यौ अपमान आपनौ सभा तथाही।
बोले अधिक रिसाय चतुर्मुख अपर जथाही॥
महाक्रूर दुरवृत्ता मत्त उपवरहन एरे।
होय यथाविधि दृड तबै नासै मद तेरे॥८३॥
इनहूँ पायो चेत देखि तब सभा अनैसी।
कोपागिन ते जरै सकल मुख बानी तैसी॥
उपवहरन जिय माहि गुनी तन प्रान गयें अब।
अन्तरमुख करि वृत्ति कृष्न पदशरन भये तब॥
अहो नाथ जनपाल जुगल मेरे हितकारी।
देव अगिन ते जरौं वेगि सुधि लेहु विहारी॥८४॥

जैसी आरति भई ताहि को कैसे गावै।
आरति बधु दयालु स्याम हिय छोभ जनावै॥
भक्त कहावैं वत्स भक्तवत्सल हरि बानौ।
यामै बहुत प्रमान रीति यह सब दिन मानौ॥
प्रगट्यौ तबै विमान सभा के निकट सुहायो।
मुरलीनाद सुनाय ताहि आगमन बतायो॥८५॥

अतिसै उदै प्रकास सभा विधि चकित निहारैं।
अरे अनेक प्रनाम तेज देखत नहि पारैं॥
सबके पाछे खडौ भक्त उपवरहन नामा।
जुगल रूप सो लखै तेज भीतर सुखधामा॥
कीन्हे दृडप्रनाम जोरि कर अस्तुति ठानी।
राधाकृष्न सरूप विमल वरने वर वानी॥८६॥

श्रीमुख गिरा उदोत भई सब कान परी जो।
रूप न देखे कोऊ श्रवन सुनि चित्त धरी सो॥
उपवरहन मम प्रान भक्त यह निश्चै जानौ।
जिन्है एक गति मोरि मोहि तेई गति मानौ॥
ब्रह्मा भक्त न होय परै चौरासी जाई।
भक्त कोऊ तन होय मोहि सोई सुखदाई॥८७॥

जे तन लौं अभिमान त्यागि मेरे पद गहहीं।
निसि वासर हिय माहि रूप मेरौ ते लहहीं॥
तिनही के मैं निकट रहौ ऐसी मम बानी।
दुर्लभ है यह रीति जात नहि क्यौहूँ जानी॥
विविध वस्तु अभिमान मानि जग मोह बढ़ावै।
ते मतिमन्द विमूढ मोहि सपने नहि पावै॥८८॥

अंतरध्यान विमान भयो ऐसे कहि बानी।
ब्रह्मा सभा समेत लाज बूडे बहु पानी॥
अहो भक्त कौ रूप धन्य श्रीवदन बखान्यौ।
निज पदवी अभिमान मानि हम सो नहिं जान्यौ॥
उपवरहन बैठाय निकट विधि मान बढ़ायो।
प्रभू कृपा को पात्र सोई सर्वोपरि गायो॥८९॥

तब विधि कियो विचार क्रोध सबके तन जोई।
देवन की यह रीति क्रिया कोउ व्यर्थ न होई॥
सो समेटि तिन नारि रची व्यभिचार सरूपा।
सबही तें पति भाव हिये तन छद्म अनूपा॥
विकसित ज्यौ वर कंज वदन तैसौ दरसावै।
श्रवन अमिय के तूल वचन रचना रसनावै॥९०॥

निज स्वारथ के हेत प्रीति सब अंग जनावै।
उरग नम्र ह्वै डसै उलटि विष देह चढावै॥
तैसे सो करि प्रीति लोक परलोक नसावै।
ज्यौ विषलता विचित्र किये संग्रह दुख पावै॥
निंदा वेद पुरान करै ताकी अधिकाई।
विषै बहुत जग माहि नारि सर्वोपरि गाई॥९१॥

सुनिये ताको हेतु अधिक बंधन ज्यौं नारी।
जितनी जगत उपाधि प्रगट याही ते सारी॥
शब्दादिक ए पंच विषै जग प्रबल कहावैं।
एक एक ते नेह लाय सर्वस्व गवावैं॥
ते पाँचौं इक ठौर नारि के अंग बसैं निति।
पंचभूत के फंद परै पुनि को पावत मिति॥९२॥

वचन काम के मंत्र सुने ताके बस होई।
रूप तिया को देखि कीट दीपक गति सोई॥
रस की कहियै कहा अधर अमृत थल गावैं।
गंध पाय नर मत्त भये मरजाद गवावैं॥
छाह परस जौ होय सफल जीवन निज लेखैं।
याते बंधन अधिक जगत दृढ़ अपर न देखैं॥९३॥

जे नर इनको संग करै ते तिनते भारी।
निरधन तन बल छीन भये त्यागै बरु नारी॥
कामी वचन रचाय विषै को रूप नवीनौ।
श्रद्धा अधिक बढाय हिये राखैं तिहि पीनौ॥
विष्ठा मै ज्यौं जीव परै जैसो सुख मानै।
कुटिल विषै आधार ताहि सर्वस्व बखानै॥९४॥

ऐसौ तियको धर्म सुगम अतिसै सुखकारी।
भोगै विविध विलास विषै पावै गति भारी॥
नीच ऊँच दुरवृत्त क्रूर कोढी कुविचारी।
मिथ्या असुचि विनासशील निश्चै निरधारी॥
ऐसेहू तन मध्य भाव ईश्वर पति सेवै।
इहाँ विषै नित भोग करै हठि सुगतिहु लेवै॥६५॥

साधन अमित प्रकार करैं मुनि वृन्द अनेका।
निरवासित हिय वृत्ति धारना सब दिन एका॥
ससै तौ न जाय सोइ बाधक अति होई।
पतिसेवा को धर्म सती जरि सक विगोई॥
याको करो विचार चित्त गोपेश्वर नीके।
ललिता मृदु मुसुकाय कह्यो समुझै सुख जीके॥६६॥

महाराज सरवज्ञ आप निरधारि दीजियै।
सक न उपजै स्वल्प चित्त सो जतन कीजियै॥
कौन तिया को नाह धर्म सेवा पति को है।
सरनागत मोहि जानि भनौ रूपक सब जो है॥
ललिता जू तब कह्यो सुनौ गोपेश्वर बानी।
यामैं सदा प्रमान वचन श्रीमुख परमानी॥६७॥

जुगलविहारी नित्य चरन पकज हित सेवै।
अनवधि सक्ति अपार पार कौ तिनकहिं लेवै॥
तिनमैं जानो सक्ति एक माया जिहि नामा।
मूल प्रकृति तिहि कहै अ ड कोटिन की सामा॥
ताके उभय स्वरूप ईस इच्छा ते होवैं।
अपरा कहियै एक परा त्यौं दूसर जोवै॥६८॥

अपरा को जो रूप ताहि ऐसे मन आनौ।
भूमि आप औ अनल वायु नभ पच पिछानौ॥
अहकार मन बुद्धि मिले ये अष्ट कहावै।
अपरा याकौ नाम प्रकृति कहि वेद बतावैं॥
चेतन जाकौ अ ग जीव कहि जाहि बखानै।
परा प्रकृति सो होय उभय मिलि कारज ठानै॥६९॥

जाल झरोखा माहि किरनि सूरज की आये।
तामै देखे परे उडत रज कन बहुताय॥
ऐसे ही श्री अग रोम के छिद्रन माहीं।
अमित कोटि ब्रह्माड भ्रमै ते गिनि किमि जाहीं॥
स्वामी इच्छा पाय सक्ति जो गाय बखानी
रचना अण्ड अनेक करै निज प्रभु सुखदानो॥१००॥

दोहा—उभय प्रकृति के अग ए, जितने विश्व लखाहि
नित्यबिहारी एक पति, अपर तिया गति जाहि॥१॥
जो अपनो पति त्यागि कै, नारि भजै तनु और।
उभय लोक तें भ्रष्ट सो, कहूँ न पावै ठौर॥२॥
जे अपनो पति सबहीं, लिये पतिव्रत धर्म।
उभय लोक ते जस लहैं, भर अखडित सर्म॥३॥
अपर धर्म सब त्यागि हठि, गहै नाथ पद एक।
सो अनन्यता जानियैं, पूरन बढै विवेक॥४॥
सेवक सोई सराहिये, नाथ हाथ गति होय।
सेवा सुख ते सुख भरै, अपर वृत्ति नहि कोय॥५॥
जिनकी सगति मै परे, अपनो धर्म घटाय।
ते बाधक दृढ जनिये, उनके निकट न जाय॥६॥
जौ व्यभिचारिन नारि के, सग सनी मन देइ।
अजस लहै या जगत मै, नर्क बास हठि लेइ॥७॥
जो निज धर्म बढायवें, चाह उठै मन माहि।
सगति करै विचारि कैं, निसदिन सुख सरसाहिं॥८॥
जे पाछे बरनन किये, जोवन मुक्ति बखानि।
लागि देखि अनुराग दृढ, तिनतें करै पिछानि॥९॥
ते साधक या धर्म के, जे अनुरागी लोग।
स्वामी सेवा ते लहैं, सकल भाँति सुख भोग॥१०॥
स्वर्ग भोग सुख धरा को, एक छत्रपात होय।
ब्रह्मासन पाताल सब, लाभ लहै जो कोय॥११॥
जोग सिद्धि बहु भाँति की, मुक्ति मिलै सब आय।
जे जे सुख श्रवनन सुने, कहे पुरानन गाय॥१२॥

जुगल चरन अनुराग बिनु ए सबही दुख मूल ।
विधवा ज्यौं शृंगार निन, लखि पावत हिय शूल ॥१३॥
जुगल माधुरी सिंधु रस, जिन कीन्हे मन मीन ।
पचामृत रसहू परै, तजै प्रान ह्वै दीन ॥१४॥
अबुद झरि लागी रहै, भरै नीर बहु ठौर ।
चातक स्वाती बूंद तजि, तृप्ति गहै नहिं और ॥१५॥
ऐसे रसिक सुजान जे, कीजै तिनतै प्रीति ।
सेवक सेवा सेव्य सुख, जानै नीति पुनीति ॥१६॥
ससै निज निरवारि सब, लक्ष करै दृढ इष्ट ।
देखै हिये विचारि कै, त्यागै भाव अनिष्ट ॥१७॥
जहाँ जहाँ मन की अटक, तहाँ तहाँ ते खैंचि ।
मिथ्या तन व्यवहार जग, तासो राखे ऐंचि ॥१८॥
अन्य वासना चित्त तें, ज्यो ज्यो होय विदूर ।
परिचै इष्ट स्वरूप सों, त्यौं त्यौं बाढे भूरि ॥१९॥
अति विसुद्धता बुद्धि की, धीरज निश्चल होय ।
सब्दादिक ते ाग पुनि, देखि परै नहि कोय ॥२०॥
बैठे थल एकांत मैं, काय वचन मन धीर ।
इष्ट सेयबे जोग्य जो, भावैं भाव सरीर ॥२१॥
सेवै चित्त लगाय कैं, सेवा विधि मन ल्याय ।
अनवधि सुख पावै सही, नित नूतन अधिकाय ॥२२॥
गोपेश्वर अवकास लहि, बोले वचन बहोरि ।
महाराज कछु वीनती, मै भाखौं कर जोरि ॥२३॥
सुन्यौ सेव्य को रूप हम, साधक बाधक जेउ ।
सेवक सेवा अग अब, कहियै मोसौं तेउ ॥२४॥
सेवक तन सुचि जो कहैं, सेवा विधि जस होय ।
करुना करि भाखौ सकल, ससै रहै न कोय ॥२५॥

छप्पै—गोपेश्वर के वचन सुने अतिसै सुखदाई ।
श्रीललिता दृग कोर सखिन की ओर जनाई ॥
समत सब को जानि हियें निज कियो विचारा ।
जुगल चरन उर आनि वदन वर नाम उचारा ॥

प्रभु इच्छा जो होय किये सोई सुख होइ।
जीव लहै कल्यान जतन कीजै अब सोई ॥१॥
श्रीललिता हँसि चितय दया करुना बस सानी।
अमिय किरिनि सी भई बदन मंडल ससि बानी॥
गोप शब्द को अर्थ कहै रच्छा सब गाइ।
सो रच्छा प्रभु कृपा करै बहु जगत सुहाई॥
तिन प्रभु के श्री अंग हस्त फल जन्म तुम्हारौ
ऐसे मुख के वचन सुनत सुख उपजत भारौ ।।२॥
आली री सब सुनौ बात जो मो मन आइ।
अंगी अंग सुरीति चित्त समुझ सुखदाई॥
अंग व्यक्ति को नाम व्यक्ति जाको सो अंगी।
अंगन ते उतपत्ति अंगजा सखी सुरंगी॥
अंगन को जो धर्म ताहि मन माहिं बिचारो।
नैनहु तन रीति देखि कीजै निरधारो ॥३॥
कर चरनादिक अंग सकल अंगी तन सवै।
गुन लक्षन ते नाम प्रगट सेवक अस लवै॥
या ते मुख्य प्रमान अंग सेवक सब गावै।
निज अंगन ते प्रीति अधिक सो हेतु लखावै॥
जे जे अपर बखानि पदारथ बहु बिधि गाये।
ताते भाँति अनेक निकट अतिसे जो पाये।।४॥
सम्रह सबको होय हेतु ताकौ यह जानो।
निज अंगन सुख चाहि गहै अंगी लखि मानो॥
जौ अपने अनुकूल होय तौ सम्रह होई।
जानि परै प्रतिकूल त्यागि देवै सब कोइ॥
वक्र अंग जो होय कहो ताकौ का कीजै।
जतन किये सुख मिलै आन विधि का जन सझै ५॥
सेवक जीव सुजान रूप अपनौ यह जानै।
असी अस लखाय सोइ श्रीवदन बखानै॥
अपनो धर्म बिसारि शर्म कोऊ नहिं पावै।
श्रुति संमत सद्ग्रंथ संत अस नीति दृढ़ावै॥

यामै बहुत प्रमाण कहै इहि दृढता लागो।
समुझै तौ सुख लहै अन्यथा नर्क विभागी ॥६॥
सेवक को यह रूप सुनौ अब लच्छन ताके।
ए लच्छन परिपाक भए अधिकारी जाके॥
इद्री विषय वियोग प्रथम दम साधन करई।
मन बुद्धि चित्त अहकार असत की ओर न धरई॥
शीत उष्ण तन धम सुख दुख जो कछु आवै।
दु ख कष्ट जिय जानि सुख सौ प्रीति न लावै ॥७॥
छिन छिन नासै नेह जगत सो साँच न मानै।
दु ख हेतु परिणाम कर्म हरि विलग विजानै॥
भरतखड नर देह साज दुर्लभ बनि आयो।
हरि गुरु कृपा निहारि द्वार अपवर्ग सुपायो।
चितामनि लै हस्त जथा सठ स्वान विडारै।
हरि मिलवे की सौन पाय तन विषै सँभारै ॥८॥
ताको कष्ट अपार बार बहु चित्त विचारै।
कृमि विट भस्म सरूप तऊ बड काज सुधारै॥
जौ लौं देह समर्थ रहै तौ लौं मन चेतै।
काल व्याल के वदन पर्यौ का रायै खेतै॥
त्यागै तन अभिमान मान हिंसा परपीड़ा।
निद्य करम लखि डरै गहै तातै अति ब्रीड़ा ॥९॥
भूत द्रोह नहिं करै भरै करुणा मन माही।
सकल भाँति सतोष खेद पावै कोउ नाहीं॥
हर्ष अमर्ष विमुक्त वासना उभय निवारै।
अति पवित्र है दत्त नह आरभ विसारै॥
सत्रु मित्र को भाव भाव सुभ असुभ जहा लौं।
कारन सबकी देह अहै गुन दोष तहाँलौं ॥१०॥
ऐसो जिय उन मान आनि श्रद्धा रुचि होई।
हरि मिलिवे की चाह भई अधिकारी सोई॥
अधिकारी उपदेस जोग्य सब समत ऐसो।
कीजै यथा प्रकास तथा तहँ उपजै तैसो॥

विनि अधिकारी भये वस्तु सुख देइ न पूरौ।
ऊषर मै ज्यो बीज परै उपजै नहि मूरौ॥११॥
साधु सक हठि करै गहै अधिकार मलोनौ।
नाम लेत सुचि होय सत हरि नेह नवीनौ॥
जहाँ जहाँ मन बोध होय सकोच न ल्यावै।
ससै सब निर्मूल करै ज्यो थिरता पावै॥
थिरोभूत ह्वै चित्त जतन जो कीजै भाई।
होय वस्तु की सिद्धि अन्यथा कष्ट लखाई॥१२॥
यह सेवक कौ रूप सिद्ध साधन करि चाहै।
सेवा पिय अधिकार भये अनवधि सुख लाहै॥
गोपेश्वर सुनि बैन चैन अतिसै जिय पायो।
स्वामी सेवक रूप जथाविधि सो मन आयो॥
साधक बाधक सुने सकल ससै हिय टारी।
कारन परम निदान जानि समुझौ निरधारी॥१३॥
अब सेवा अभिलाष चित्त अति भारी।
करि प्रनाम करजोरि सीस नय गिरा उचारी॥
अहो नाथ जस कृपा आपकी जन पर देखै।
उपमा दीजै जाहि अपर नहि कोउ विलेखै॥
अपने दुख ते दुखी होहि सबकी यह रीती।
दीनबन्धु जो होय करै आरत सौं प्रीती॥१४॥
बिना आप जन ताप समन दूजौ को करई।
वदन चद्र ते किरिन सदा वचनामृत सरई॥
वस्तु जोग्य अधिकार आपनौ मैं नहि देखौ।
कृपा रावरी प्रौढ एक सब भाति विलेखौं॥
वह्नि निकट जो रहै शीत तम भीति न होई।
करुनामय श्री डीठि सकल साधन फल सोई॥१५॥
सो भरोस उर आनि करौं विनती प्रभु पाहीं।
अपनी ओर निहारि लाज उपजत मन माहीं॥
लाज नेह को सग रहै नहि कोटि उपाये।
कारज लखि हानि बनै हठि ताहि बहाये॥

उर बाढ्यौ अभिलाष कहो मो सकुच बिसारी।
करुनामाल स्वभाव आपको नित्य निहारी ॥१६॥
सेवक कौ दृढ धम आप सेवा कह भाषो।
सो सेवा कौ रूप सुनौ मै मन अभिलाखा॥
जथा बोध मम होय जतन तैसी अब कीजै।
अपने धन मै दान कछू दीनन को दीजै॥
दान किये धन वृद्धि होत ऐसी श्रुति सुनिये।
धनी बिना को दान करै हिय मे अस गुनिय ॥१७॥
श्रीललिता हसि मद चितै मन मोद बढायो।
गोपेश्वर के वचन श्रवन सुनि अति सुख पायो॥
नित्य विहारनि कृपा सकल विधि कारज साधै।
को दुर्लभ अस वस्तु जाहि सुमिरे नहि लाधै॥
धन्य भाग्य सो होय हिय जाके यह आवै।
नित्य विहारी जुगल चरन पकज रस पावै ॥१८॥
यह विचारि मन माहि कहन को इच्छा धारी।
गौर स्याम अभिराम सुमिरि उर नित्य विहारी॥
आनद सिंधु अगाध हियो वर वचन तरगा।
सुनत लहै जन अचल जुगल पद प्रीति अभङ्गा॥
खुले जुगल पद ओष्ठ दत छबि छटा लखानी।
सहचरि वृन्द अलेख कुमोदनि सी विकसानी ॥१९॥
वचनामृत धुनि धार श्रवन भाजन निज कीन्है।
तृषावन्त के प्राण अमिय पाये ज्यौ पीनै॥
जन्म दरिद्री रक परम निधि जैसे लूटे।
वर्ण वृत्तिवर अग स्वल्प तैसे नहि छूटै॥
मानौ धरैं समाधि सबै तन मन तहँ लाये।
जथा वासना जन्म अमित बीते हिय पाये ॥२०॥

सोरठा—श्री ललिता निज हाथ, ताहि समैं ऊँचौ कियो।
नायो सबही माथ, वचन प्रगट मगल भयो ॥१॥
राधा राधा नाम, दृढ एक सुमिरन कियो।
अवि पायो विश्राम, उत्तर लागो कहन ॥२॥

उर बाढ्यौ अभिलाष कहो सो सकुच बिसारी।
करुनामाल स्वभाव आपको नित्य बिहारी ॥१६॥
सेवक कौ दृढ धम आप सेवा कह भाषो।
सो सेवा कौ रूप सुनौ मै मन अभिलाखो ॥
जथा बोध मम हाय जतन तैसी अब कीजै।
अपने धन मै दान कछू दीनन को दीजै ॥
दान किये धन वृद्धि हात ऐसी श्रुति सुनिये।
धनी बिना को दान करै हिय मे अस गुनिय ॥१७॥
श्रीललिता हसि मद चितै मन मोद बढायो।
गोपेश्वर के वचन श्रवन सुनि अति सुख पायो ॥
नित्य विहारनि कृपा सकल विधि कारज साधै।
को दुर्लभ अस वस्तु जाहि सुमिरे नहि लाधै ॥
धन्य भाग्य सो होय हियै जाके यह आवै।
नित्य बिहारी जुगल चरन पकज रस पावै ॥१८॥
यह विचारि मन माहि कहन को इच्छा धारी।
गौर स्याम अभिराम सुमिरि उर नित्य विहारी ॥
आनद सिंधु अगाध हियो वर वचन तरगा।
सुनत लहै जन अचल जुगल पद प्रीति अभङ्गा ॥
खुले जुगल पद ओष्ठ दत छबि छटा लखानी।
सहचरि वृन्द अलेख कुमोदनि सी विकसानी ॥१९॥
वचनामृत धुनि धार श्रवन भाजन निज कीन्है।
तृषावन्त के प्राण अमिय पाये ज्यौ पीनै ॥
जन्म दरिद्री रक परम निधि जैसे लूटे।
वर्ण वृत्तिवर अग स्वल्प तैसे नहि छूटै ॥
मानौ धरैं समाधि सबै तन मन तहँ लाये।
जथा वासना जन्म अमित बीते हिय पाये ॥२०॥

सोरठा—श्री ललिता निज हाथ, ताहि समै ऊँचौ कियो।
नायो सबही माथ, वचन प्रगट मगल भयो ॥१॥
राधा राधा नाम, दुड एक सुमिरन कियो।
अति पायो बिश्राम, उत्तर लागो कहन ॥२॥

सेवा को जो रूप, सुनो सहेली परम प्रिय।
दंपति सुखद अनूप, जुगल माधुरीप्रद सोई।३॥

छप्पै—प्रथम भई इम प्रगट रीति ताकी अस जानौ।
जुगल विहारी नित्य प्रिया इच्छा वस मानौ॥
*श्रीस्यामा निज कंठ माल सो धरी उतारी।
करुना रस परिपूर कोर दृग नेक निहारी॥
तो माला तै आदि ललित मेरौ तन प्रगट्यौ।
या ते ललिता नाम भयो श्रीमुख तैं उघट्यो॥२१॥

देखे जुगल सरूप परम सिंघासन राजै।
कीन्ह्यो मन उन मान भई मै काके काज॥
तब श्रीस्यामा मंद विहसि मेरी दिसि हेरी।
जानि पर्‌यो सब भाव मोहि हिय मिटी अंधेरी॥
कीन्हे दृडप्रनाम बहुरि पद वंदे जाई।
जुगल चरन वर रेनु हिये दृग मस्तक लाई॥२२॥
मै भाख्यौ कर जोरि नाथ सेवा के हेतू।
प्रगट भयो मम रूप चित्त उपज्यौ अस चेतू॥
सेवा भांति अनेक एक मै सो किमि होई।
श्री आज्ञा जो होय सीस धरि करिवें सोई॥
श्री मुख तें वर वचन भया माला यह जोहै।
याही टें तुम भई अपर चाहौ सब सोहै॥२३॥

श्रीराधा मै नाम सप्तधा जीहा गायो।
सात सखी ए प्रगट भई अतिसै सुख पायो॥
जैसौ मेरौ रूप सप्त ए तैसी जानौ।
अहै अंगजा सकल नाम दूजौ श्रुति आनौ॥
एक एक ते भई अष्ट जूथापति जूथप।
गुन लच्छन सुनु नाम सबे सेवा की सूथप॥२४॥
ललिता मेरौ नाम वरन अंग गौरोचन सो।
प्रिया प्रसादी लहौं धरौं पट भूषन तन सो॥
सेवौं जुगल सरूप सदा तिनकौ सुख चाहौं।
बीरी रुचिर खवाय मुख्य सेवा सब लाहौं॥

अष्टसखी उत्पन्न भई ए तन मेरे तैं।
सेवा को अधिकार लहैं नित मम नेरे तैं ॥२५॥
सुनिये तिनके नाम सुखद श्रीमुख के भाखे।
श्रवन किये फल देहि जुगल पद मन अभिलाखे ॥
रत्नप्रभा रति कला सुभा कलहंसी नामा।
कहै कलापिनि तथा सौभगा सब गुनधामा ॥
मन्मथ मोदा सातवी सुमुखी अष्ट प्रमान।
पट भूषन सो धारहीं मम प्रसाद गहि मान ॥२६॥
ए मेरे जो दच्छ भाग अति सुन्दरि राजै।
नाम विसाखा कहै देहदुति दामिनि लाजै ॥
भूषन वसन सुहात अंग श्रीतन के पहिरे।
सेवैं दंपति नेम प्रेम हिय अतिसै गहिरे ॥
वसन रंग रुचि लखि जुगल चुनि पहिरावैं भाय।
सेवा इनकी मुख्य यह करै सकल सुख पाय ॥२७॥
अष्ट सहचरी प्रगट भई इनके अंगन ते।
माधवि मालति कुंजरी हरिनी जानौ ते ॥
गंधरेखा सुभानना सौरभि चपला कहियै।
दंपति चरन सरोज प्रीति दृढ इन हिय लहियै ॥
लहै विसाखा अंग के भूषन वसन प्रसाद।
सेवा तिनके संग मिलि करै भरै अह्लाद ॥२८॥
लखौ विसाखा दच्छ भाग तीजी सुखरूपा।
चंपकलता सुनाम देहदुति तथा अनूपा ॥
भूषन वसन प्रसाद लाडिली तनके धारें।
जुगल माधुरी छटा नित्य जीवन आधारे ॥
भोजन सकल प्रकार विधि रचै जानि रुचि हेत।
सेवा इनकी मुख्य यह करै सबै दै चेत ॥२९॥
अष्ट अंगजा भई अंग इनके ते जानौ।
मृगनैनी मनिकुंडला चंद्रकला सुचि मानौ ॥
अपर सुचरिता मंडनी चंद्रलता रसालिका।
मिली समंदिरा अष्ट सब गन रूप मालिका ॥

चपकलता प्रसाद सदा पट भूषन सेवैं।
तिनही के मिलि सग सकल सेवा सुख लेवैं ॥३०॥
चपकलता विभाग दाहिने जो ए देखौ।
गुन विचित्र वर धाम नाम चित्रा अस लेखौ॥
कुकुम कैसी काति अङ्ग पट भूषन राजै।
प्रिया प्रसादी लहै गहै तेई तन साजे॥
नीरपान तें आदि रस तिनमैं अधिक प्रवीन।
सेवा इनकी मुख्य यह रहैं सवन लवलीन ॥३१॥
अष्ट सहचरी भई अङ्ग इनके ते जो हैं।
सुनिये तिनके नाम सुखद अतिसै श्रुति सो है॥
प्रथम रसालिका तिलकनो सुगधिका नामा।
शौरसेना मेना नागरी ए मल्लिका अभिरामा॥
नागवैनिका तथा अष्ट ए अति सुखदाई।
चित्रा अङ्ग प्रसाद वस्त्र भूषन तन लाई ॥३२॥
सेवैं जुगल सरूप सग चित्रा के नीकैं।
सेवा ही आधार सार जानै जीकैं॥
चित्रा दाहिनी ओर लखो गोरोचन तन छवि।
तुगविद्या वर नाम अहै सब विद्या की कवि॥
भूषन वसन प्रसाद लाडिली देहि सुधरई।
राग रागिनी गान मुख्य सेवा सब करई ॥३३॥
अष्ट सहचरी भई अग इनके ते जेऊ।
एहैं तिनके नाम सुनौ सुखदाई तेऊ॥
मजु मेधा सुमेधिका तनुमध्या गुनचूडा।
वरागदा मधुरा मधुस्यदा मधुरेक्षना रूड़ा॥
भूषन वसन प्रसाद तुगविद्या के दीने।
धरि सेवैं तिन सग जुगल सेवा मन भीने। २४॥
ए मेरे दिसि वाम सकल शोभा की खानी।
इदुलेखा शुभ नाम कोक मूरति प्रगटानी॥
अग वरन हरताल रग पट भूषन जोहै।
प्रिया प्रसादी लहैं सुखद धारे तन सोहै॥

अष्टसखी उत्पन्न भई ए तन मेरे तैं।
सेवा को अधिकार लहै नित मम नेरे तैं ॥२५॥
सुनिये तिनके नाम सुखद श्रीमुख के भाखे।
श्रवन किये फल देहि जुगल पद मन अभिलाखे॥
रत्नप्रभा रति कला सुभा कलहसी नामा।
कहै कलापिनि तथा सौभगा सब गुनधामा॥
मन्मथ मोदा सॉतवी सुमुखी अष्ट प्रमान।
पट भूषन सो धारहीं मम प्रसाद गहि मान ॥२६॥

ए मेरे जो दच्छ भाग अति सुन्दरि राजैं।
नाम विसाखा कहैं देहदुति दामिनि लाजै॥
भूषन वसन सुहात अग श्रीतन के पहिरे।
सेवैं दपति नेम प्रेम हिय अतिसै गहिरे॥
वसन रग रुचि लखि जुगल चुनि पहिरावैं भाय।
सेवा इनकी मुख्य यह करै सकल सुख पाय ॥२७॥

अष्ट सहचरी प्रगट भई इनके अगन ते।
माधवि मालति कूजरी हरिनी जानौ ते॥
गधरेखा सुभानना सौरभि चपला कहियै।
दपति चरन सरोज प्रीति दृढ इन हिय लहियै॥
लहै विसाखा अग के भूषन वसन प्रसाद।
सेवा तिनके सग मिलि करै भरै अहलाद ॥२८॥
लखौ विसाखा दच्छ भाग तीजी सुखरूपा।
चपकलता सुनाम देहदुति तथा अनूपा॥
भूषन वसन प्रसाद लाड़िली तनके धारें।
जुगल माधुरी छटा नित्य जीवन आधारे॥
भोजन सकल प्रकार विधि रचै जानि रुचि हेत।
सेवा इनकी मुख्य यह करै सबै दै चेत ॥२९॥
अष्ट अगजा भई अग इनके ते जानौ।
मृगनैनी मनिकुडला चद्रकला सुचि मानौ॥
अपर सुचरिता मडनी चद्रलता रसालिका।
मिली समदिरा अष्ट सब गुन रूप मालिका॥

चपकलता प्रसाद सदा पट भूषन सेवैं।
तिनही के मिलि संग सकल सेवा सुख लेवैं ॥३०॥
चपकलता विभाग दाहिने जो ए देखौ।
गुन विचित्र वर धाम नाम चित्रा अस लेखौ ॥
कुंकुम कैसी कांति अङ्ग पट भूषन राजै।
प्रिया प्रसादी लहै गहै तेई तन साज ॥
नीरपान तें आदि रस तिनमें अधिक प्रवीन।
सेवा इनकी मुख्य यह रहैं सबन लवलीन ॥३१॥
अष्ट सहचरी भई अङ्ग इनके ते जो हैं।
सुनिये तिनके नाम सुखद अतिसै श्रुति सो है ॥
प्रथम रसालिका तिलकनी सुगंधिका नामा।
शौरसेना मेना नागरी ए मलिका अभिरामा ॥
नागवैनिका तथा अष्ट ए अति सुखदाई।
चित्रा अङ्ग प्रसाद वस्त्र भूषन तन लाई ॥३२॥
सेवैं जुगल सरूप संग चित्रा के नीकैं।
सेवा ही आधार सार जानै जीकैं ॥
चित्रा दाहिनी ओर लखो गोरोचन तन छवि।
तुंगविद्या वर नाम अहै सब विद्या की कवि ॥
भूषन वसन प्रसाद लाडिली देहि सुघरई।
राग रागिनी गान मुख्य सेवा सब करई ॥३३॥
अष्ट सहचरी भई अंग इनके ते जेऊ।
एहैं तिनके नाम सुनौ सुखदाई तेऊ ॥
मंजु मेधा सुमेधिका तनुमध्या गुनचूडा।
वरांगदा मधुरा मधुस्यंदा मधुरेक्षना रूढ़ा ॥
भूषन वसन प्रसाद तुंगविद्या के दीने।
धरि सेवैं तिन संग जुगल सेवा मन भीने। ३४॥
ए मेरे दिसि वाम सकल शोभा की खानी।
इंदुलेखा शुभ नाम कोक मूरति प्रगटानी ॥
अंग वरन हरताल रंग पट भूषन जोहै।
प्रिया प्रसादी लहैं सुखद धारे तन सोहै ॥

कोक कला की रीति जुगल मन मोद बढावै।
इन सेवा यह मुख्य कोस अधिकारिनि गावैं ॥३५॥
अष्टसखी ए भई अग इनके ते रूरी।
समुझै तिनके नाम प्रीति उपजै उर पूरी॥
चित्रलेखा मोदनी मदालसा भद्रतुगा।
रसतुगा गानकला सुमगला चित्र अगा॥
पटभूषन तन तें धरै इदुलेखा जे दीन।
सेवैं तिनके सग मिलि दपति सेवा लीन ॥३६॥
इदुलेखा दिसि वाम रगदेवी १ए जानौ।
कमल केसरी रग अग की काति पिछानौ॥
धरै प्रसादी सदा लाड़िली भूषन वासा।
चित्र लिखन की सक्ति अलौकिक करै प्रकासा॥
भूषन मनिमय कुसुम के रचि दपति पहिराय।
सवा मुख्य प्रकार द्वै करै सकल मन लाय ॥३७॥
अष्ट सहचरी प्रगट अग इनके ते जोहैं।
सुनियें तिनके नाम चित्त मोदक सब सोहैं॥
कलकठी ससिकला कमला मधुबिदा सुदरि।
कदर्पा प्रेममजरी कजलता गुनमदरि॥
पटभूषन तेई धरै रगदेवी जे देहि।
सेवे तिनके सग मिलि जुगल सेई सुख लेहि ॥३८॥
रगदेवी के वाम ओर सो नाम सुदेवी।
नित्य किसोरी दत्त वस्त्र भूषण हित सेवी॥
कच गूथन की रीति सुघर स्रृगार बनावै।
सारो सुवा पढाय चित्त अति मोद बढावै॥
जुगल अग श्रीमाधुरी सेवैं प्रेम समेत।
सेवा इनकी मुख्य द्वै करै सबै भरि हेत ॥३९॥
प्रगट अष्ट जे भई अग इनके ते सहचरि।
जेहै तिनके नाम श्रवन सुनि चित्त लीजै धरि॥
कावेरी मनोहरा चारु कवरि अभिरामा।
मजुकेसि केसिका हार हीरा वरनामा॥

महाहीरा मिलि अष्ट ए दत्त सुसेवि प्रसाद।
सो धरि तिन सग सेवहीं जुगल भरी अहलाद ॥४०॥
एक एक के सग अष्ट ए तत्सम मानौ।
तिनहूँ मै सग एक कोटि त्रय जूथप जानौ।
द्वादश कोटि समेटि ताहि कहि वृन्द बखानै।
सप्त कोटि जे वृन्द तिन्हैं बुध जूथ प्रमानै॥
ऐसे जूथ अनेक रहैं जाके आधीना।
जूथप सज्ञा तासु भनै श्रुति सत प्रवीना॥४१॥
इमै विसाखा आदि अष्ट ए मुख्य बखानी।
इक एक के सग अष्ट सहचरि परिमानो॥
तिन अष्टन मे एक एक सग ऐसे कहई।
जूथापति जे सखी कोटित्रय आज्ञा बहई॥
एक अग परिमान करै जा विधि मन लाइ।
सहचरि अमल अपार आयु बीत न गनाई॥४२॥
जौ जलनिधि की लहरि गने कोउ अत बतावै।
तौ सहचरि परिमान अवधि बानी गति पावै।
सेवा जिनकै नेम प्रेम सेवा सुख जानै।
सेवै जुगल सरूप करै सेवा रस पानै॥
दपति लाड लड़ाय हिय हरखै सुख सरस।
आनदसिधु अगाध मग्न ए ऐसा दरसै॥४३॥
जुगलविहारा नित्य परम महिमा जिन जानी।
तिनकै हिये न होय सक भटकै सब प्रानी॥
कोटि कोटि ब्रह्माड उदै थिर ह्वै विनसाहीं।
भृकुटो कोर विलास जासु समुझौ मनमाहीं॥
अस विचारि चित धारिय सेवा जुगल सरूप।
सब साधन की सिद्धि यह दृढ सिद्धात अनूप॥४४॥
गोपेश्वर ह्वै मुदित चित्त अतिसै सुख पाय।
बोना विनय जनाय जोरि कर मस्तक नायो॥
बोले वचन विचारि सकल हिय परम सुहातौ।
सेवा सब निरधारि सुने अस मन अकुलातौ॥

महाराज मम बुद्धि स्वल्प ये बात दुरूहा।
जानि परयौ कछु अंग रावरी कृपा समूहा ॥४५॥
बिनु जानै नहिं सक होत अस नीति बखानै।
सो सखै जो मेट परम गुरु ताहि प्रमानै॥
जो सखै ह भई करौं सो प्रकट निवेदन।
श्रीमुख सुधा प्रमान वचन सुनि मेटौ वेदन॥
सेवा समै सुहावती समै काल को अंग।
काल प्रकृति के संग है सो इतनांहि प्रसंग ॥४६॥
कला काष्ठा पलहु दंड मिलि जाम कहावै।
अष्टजाम कौ भाव दिवस रजनी कहि गावैं॥
पक्ष, मास, ऋतु, वर्ष, काल के अंग बखाने।
कृपा सकल निर्वाह होत इनहीं के जाने॥
त्रिगुण सृष्टि वस काल के विधि ब्रह्मांड अलेह।
काल प्रकृति गुन पर सदा आयु कहैं थल एह ॥४७॥
जैसे आज्ञा होय परम सेवा सुखदाई।
कहियै ताकी रीति करै त्यौं चित्त लगाई॥
सखै जो हम कियो बुद्धि अपनी अनुसारैं।
जोग्य अयोग्य प्रमाण वचन राउर निर्द्धारैं॥
सकल अंग पूरी अमल दंपति अति सुखदेइ।
सेवा सोइ बखानिये सेवक मुदप्रद सेइ ॥४८॥
गोपेश्वर के वचन सुने श्री ललिता हरषीं।
जानि परयौ हिय भाव अधिक सेवा रुचि सरसीं॥
दै आदर सनमान विहसि बानी मृदु बोलीं।
सखै कीजे गोस मुदित ह्वै ते सब खोलीं॥
गोपेश्वर सखै सोई परमानंद स्वरूप।
निर्विकल्प निज चित्त करि सेवै जुगल सरूप ॥४९॥
लख्यौ लाडिली कृपा भाव ऐसो तुम पायो।
सुनियै समै सरूप जथाविधि इहाँ सुहायो॥
ससि सूरज नक्षत्र मास ऋतु वर्ष पक्ष ह्वै।
लवनिमेष परमानु दिवस निसि घटी जाम है॥

वर्तमान जिमि रहैं करै सेवा एहि ठोरी।
तिनको सुनौ स्वरूप जुगल महिमा लखि भारी।५०॥
ऐसे ससै करी प्रथम जब हम प्रगटानी।
तबही भई उपाय परम सेवा सुखदानी॥
कृपादृष्टि की कोर जबै श्री जू हँसि हेरी।
हमरे हिये अपार कला प्रगटी बहुतेरी॥
जैसे कियौ प्रबध हम काल अग निर्माय।
समै समै सेवा जुगल होय अधिक सुख छाय।५१॥
सहचरि अमित अपार प्रगट सेवा के काज
सेवै ते सब भाति सकल सेवा सुख साज।
इंदुलेखा तन अपर धरे ससि को नित सेवैं।
जा छिन जो रुचि लखैं तथा मुदु दै सुख लेवे॥
निशि शोभा के चिह्न जे उडगन आदि अनेक।
इनकी सहचरि तथा है सेवैं सहित विवेक।५२।
तुगविद्या उत्तुग तेज तन दूसर कीन्हे।
सेबैं जुगल सरूप देखि रुचि रवि गति लीन्हे॥
जूथापति जे कही सहचरी इनके सगा।
दिन सुखमा ज्यौं लहै भई सेवैं तस अगा॥
अनु प्रमाण ते आदि जे काल अग जुगमत।
चित्रा की जे सहचरी सेवैं तथा समन॥५३॥
गोपेश्वर निर्द्धार बात समुझौ मन ऐसी।
नित्यविहारी जुगल करैं इच्छा जब जैसी॥
तैसो होय सरूप सखी सब सेवा करही।
दपति मोद बढ़ाय आप ताही सुख भरही॥
हिय को भाव विचार जिय तैसौ प्रकट दिखाय।
समै समै सेवैं सबै आनद सिधु समाय॥५४॥
गोपेश्वर सुनि प्रश्न कियो निज मस्तक नाई।
अपनो भाग्य सराहि कृपा श्रीगुरु उर आई॥
अष्टजाम की रीति जथा सेवा सुखदाई।
दया कोर जन ओर हेरि कहिये सब गाई॥

जैसें बुद्धि प्रवेश मम लहै गहै मन सोय ।
दृढ समत जो आपको सकल अग सिधि होय ॥५५॥

अरिल्ल—सुनि गोपेश्वर बैन चैन श्रीललिता पायो ।
धन्य किशोरी कृपा समुझि मन ही सिर नायो ॥
जुगल चरन छवि छटा सुमिरि सब भांति जुडानी ॥श्रीराधे॥
अमिय धार सुखसार कही जी हौं असवानी ॥१॥
साधु मिलन जब होय सफल सोई छिन जानो ।
गोपेश्वर आनद अधिक दोऊ दिसि मानो ॥
रसिक सत को प्रश्न वस्तु जाइ प्रगटावै ॥श्रीराधे॥
उत्तर दृढ सिद्धात भये अनवधि सुख छावै ।२॥

अहो परम सुख दैन प्रश्न सेवा को कीन्ह्यौ ।
विनु सेवा निज नाथ रूप काहू नहि चीन्ह्यौ ॥
सुनिये सेवा मूल प्रभु सेवक मुददाई ॥श्रीराधे॥
नित्य विहारी जुगल कृपा जैस हम पाई ॥३॥
परमधाम गोलोक सप्त मडल अनमाये ।
बसे भक्त सब ठौर प्रभू सेवै चित लाये ॥
कारन एकै भक्ति पच कहि भाव बखानै ॥श्रीराधे॥
च्यारि भाव की रीति चतुर मडल परिमानै ॥४॥
वलय तानि जे कहैं तहा सहचरि परिचारा ।
गोप्य रहस्य निकुज केलि सुखसिधु अपारा ॥
वृदावन ता मध्य जहाँ विहरत पिय प्यारी ॥श्रीराधे॥
सेवैं सखियाँ नित्य भाव शृगार सुधारी ॥५॥

अष्टजाम की रीति जथाविधि सो अब सुनिये ।
नीके मनमै धारि ताहि पाछे हिय गुनिये ॥
सेवा को अधिकार मुख्य हम अष्टन हाथैं ॥श्रीराधे॥
अपर सहचरी अष्ट अष्ट सब ही साथे ॥६॥
तिनके सग अनेक जूथ पालक बहु वृदा ।
दपति लाड़ लड़ाय लहैं सगरी सुख कदा ॥
इनमै जिनतें प्रीति बढै अपने मनमाहीं ॥श्रीराधे॥
रहियै तिनके लाड़ नेम सेवा सुख ताही ॥७॥

अपर सुनौ वृत्तात अष्ट जे हमते आदी।
सप्रदाय जो लहै भाव सहचरि प्रतिपादी॥
तौ निज गुरु के सग होय आचारज सेवै ॥श्रीराधे॥
सेवा रुचि अभिलाष मागि तिन ही ते लेवै॥८॥

आचारज ते अपर सप्त हम अष्टन माहीं।
जिनते प्रीति प्रतीति हिये श्रद्धा अधिकाहीं॥
प्रथमाचारज सेय प्रसन्नता तिनकी लेवै॥श्रीराधे॥
निज मनको दृढभाव प्रगट उनसो कहि देवै॥९॥

आज्ञा तिनकी पाय अधिक जाते मन लागै।
तब ताके मिलि सग लहै सेवा सुख पागै॥
अपने करि द्वै रूप भाव ऐसो उन मानै॥श्रीराधे॥
आदि अचारज निकट ब्रह्म वेलामन मानै॥१०॥

बहुरि निसीथे सैन समै पद वदै तिनके।
सेस काल नित रहै सग सौंपें गुरु जिनके॥
गुरुता पूज्य प्रभाव अष्ट एकै सम जानै॥श्रीराधे॥
मनकी अटक विचारि अचारज हू सुख मानै॥११॥

मम पाछे यह लखौ चवर जाके कर सोहै।
अपर हस्त वर पानदान मेरी गति जोहै॥
स्यामानुगा सुनाम रगदेवी की आली॥श्रीराधे॥
इन कीन्ही अस रीति प्रीति मो पद दृढपाली॥१२॥

सप्रदाय नहि लहै भाव सहचरि प्राचीना।
दृढ उपजै मन प्रीति होइवै एहि पद लीना॥
जिनके मुखतै गहैं जुगल सेवा सुभकारी॥श्रीराधे॥
तिनहीतें गुरभाव सिद्धि कीन्हे अधिकारी॥१३॥

अनायास जौ हियै उपज आपैते होई।
सस्कार प्राचीन जानियें दृढतर सोई॥
कैसेंहू मन दियै जुगल पद सेवा माहीं॥श्रीराधे॥
पावै नित्य विहार अचल ससै कछु नाहीं॥१४॥

या विधि दृढ सिद्धात समुझि मन निश्चै कीजै।
जो सेवा की रीति तहाँ ऐसें चित दीजै॥

जैसे बुद्धि प्रवेश मम लहै गहै मन सोय ।
दृढ समत जो आपको सकल अग सिधि हाय ॥५५॥

अरिल्ल—सुनि गोपेश्वर बैन चैन श्रीललिता पायो ।
धन्य किशोरी कृपा समुझि मन ही सिर नायो ॥
जुगल चरन छवि छटा सुमिरि सब भाँति जुड़ानी ॥श्रीराधे॥
अमिय धार सुखसार कही जी हाँ असवानी ॥१॥
साधु मिलन जब होय सफल सोई छिन जानो ।
गोपेश्वर आनद अधिक दोऊ दिसि मानो ॥
रसिक सत को प्रश्न वस्तु जाई प्रगटावै ॥श्रीराधे॥
उत्तर दृढ सिद्धात भये अनवधि सुख छावै । २॥

अहो परम सुख दैन प्रश्न सेवा को कीन्ह्यौ ।
बिनु सेवा निज नाथ रूप काहू नहि चीन्ह्यौं ॥
सुनिये सेवा मूल प्रभु सेवक सुददाई ॥श्रीराधे॥
नित्य विहारी जुगल कृपा जैस हम पाई ॥३॥
परमधाम गोलोक सप्त मडल अनमाये ।
बसे भक्त सब ठौर प्रभू सेवै चित लाये ॥
कारन एकै भक्ति पच कहि भाव बखानै ॥श्रीराधे॥
च्यारि भाव की रीति चतुर मडल परिमानै ॥४॥
वलय तानि जे कहैं तहा सहचरि परिचारा ।
गोप्य रहस्य निकुज केलि सुखसिधु अपारा ॥
वृदावन ता मध्य जहाँ विहरत पिय प्यारी ॥श्रीराधे॥
सेवैं सखियाँ नित्य भाव शृगार सुधारी ॥५॥

अष्टजाम की रीति जथाविधि सो अब सुनिये ।
नीके मनमै धारि ताहि पाछ हिय गुनिये ॥
सेवा को अधिकार मुख्य हम अष्टन हाथें ॥श्रीराधे॥
अपर सहचरी अष्ट अष्ट सब ही साथें ॥६॥
तिनके सग अनेक जूथ पालक बहु वृदा ।
दपति लाड लड़ाय लहै सगरी सुख कदा ॥
इनमै जिनतें प्रीति बढै अपने मनमाहीं ॥श्रीराधे॥
रहियै तिनके लाड़ नेम सेवा सुख ताही ॥७॥

अपर सुनौ वृत्तांत अष्ट जे हमते आगे।
सम्प्रदाय जो लहै भाव सहचरि प्रतिपागे॥
तौ निज गुरु के संग होय आचारज सेवै।श्रीराधे।
सेवा रुचि अभिलाष मांगि तिनही ते लेवै।८॥
आचारज तें अपर सप्त हम अष्टन माहीं।
जिनते प्रीति प्रतीति हिये श्रद्धा अधिकाहीं।
प्रथमाचारज सेय प्रसन्नता तिनकी लेवै।श्रीराधे।
निज मनको दृढभाव प्रगट उनसो करि देवै॥९॥

आज्ञा तिनकी पाय अधिक जाते मन लागै।
तब ताके मिलि संग लहै सेवा सुख पागै॥
अपने करि द्वै रूप भाव ऐसो उर मानै॥श्रीराधे॥
आदि अचारज निकट ब्रह्म वेलामन मानै॥१०॥

बहुरि निसीथे सैन समै पद वंदै तिनके।
सेस काल नित रहै संग सौंपें गुरु जिनके॥
गुरुता पूज्य प्रभाव अष्ट एकै सम जानै॥श्रीराधे॥
मनकी अटक विचारि अचारज हू सुख मानै॥११॥

मम पाछे यह लखौ चवर जाके कर सोहै।
अपर हस्त वर पानदान मेरी गति जाहै॥
स्यामानुगा सुनाम रंगदेवी की आली॥श्रीराधे॥
इन कीन्ही अस रीति प्रीति मो पद दृढपाली॥१२॥
सम्प्रदाय नहि लहै भाव सहचरि प्राचीना।
दृढ उपजै मन प्रीति होइवै एहि पद लीना॥
जिनके मुखतै गहैं जुगल सेवा सुभकारी॥श्रीराधे॥
तिनहीतें गुरभाव सिद्धि कीन्हे अधिकारी॥१३॥

अनायास जौ हियै उपज आपैते होई।
संस्कार प्राचीन जानियें दृढतर सोई॥
कैसेंहू मन दियै जुगल पद सेवा माहीं॥श्रीराधे॥
पावै नित्य विहार अचल संसै कछु नाहीं॥१४॥

या विधि दृढ सिद्धांत समुझि मन निश्चै कीजै।
जो सेवा की रीति तहाँ ऐस चित दीजै॥

जैसें बुद्धि प्रवेश मम लहै गहै मन सोय ।
दृढ समत जो आपको सकल अंग सिधि होय ॥५५॥

अरिल्ल—सुनि गोपेश्वर बैन चैन श्रीललिता पायो ।
धन्य किशोरी कृपा समुझि मन ही सिर नायो ॥
जुगल चरन छवि छटा सुमिरि सब भांति जुड़ानी ॥श्रीराधे॥ •
अमित धार सखसार कही जी हाँ असवानो ॥१॥
साधु मिलन जब होय सफल सोई छिन जानो ।
गोपेश्वर आनंद अधिक दोऊ दिसि मानो ॥
रसिक संत को प्रश्न वस्तु जोई प्रगटावै ॥श्रीराधे॥
उत्तर दृढ सिद्धांत भये अनवधि सुख छावै ।२॥

अहो परम सुख दैन प्रश्न सेवा को कीन्ह्यौ ।
बिनु सेवा निज नाथ रूप काहू नहि चीन्ह्यौ ॥
सुनिये सेवा मूल प्रभु सेवक मुददाई ॥श्रीराधे॥
नित्य विहारी जुगल कृपा जैसे हम पाई ॥३॥
परमधाम गोलोक सप्त मंडल अनमाये ।
बसे भक्त सब ठौर प्रभू सेवै चित लाये ॥
कारन एकै भक्ति पंच कहि भाव बखानै ॥श्रीराधे॥
च्यारि भाव की रीति चतुर मंडल परिमानै ॥४॥
वलय तानि जे कहें तहा सहचरि परिचारा ।
गोप्य रहस्य निकुंज केलि सुखसिंधु अपारा ॥
वृंदावन ता मध्य जहाँ विहरत पिय प्यारी ॥श्रीराधे॥
सेवैं सखियाँ नित्य भाव शृंगार सुधारी ॥५॥

अष्टजाम की रीति जथाविधि सो अब सुनिये ।
नीके मनमै धारि ताहि पाछे हिय गुनियें ॥
सेवा को अधिकार मुख्य हम अष्टन हाथें ॥श्रीराधे॥
अपर सहचरी अष्ट अष्ट सब ही साथें ॥६॥
तिनके संग अनेक जूथ पालक बहु वृंदा ।
दंपति लाड़ लड़ाय लहैं सगरी सुख कंदा ॥
इनमै जिनतें प्रीति बढ़ै अपने मनमाहीं ॥श्रीराधे॥
रहियै तिनके लाड़ नेम सेवा सुख ताही ॥७॥

अपर सुनौ वृत्तात अष्ट जे हमते आदी।
सम्प्रदाय जो लहै भाव सहचरि प्रतिपादी॥
तौ निज गुरु के संग होय आचारज सेवै॥श्रीराधे॥
सेवा रुचि अभिलाष मागि तिन ही ते लेवै॥८॥

आचारज तें अपर सप्त हम अष्टन माहीं।
जिनते प्रीति प्रतीति हिये श्रद्धा अधिकाहीं॥
प्रथमाचारज सेय प्रसन्नता तिनकी लेवै॥श्रीराधे॥
निज मनको दृढभाव प्रगट उनसो कहि देवै॥९॥

आज्ञा तिनकी पाय अधिक जाते मन लागै।
तब ताके मिलि संग लहै सेवा सुख पागै॥
अपने करि द्वै रूप भाव ऐसो उन मानै॥श्रीराधे॥
आदि अचारज निकट ब्रह्म वेलामन मानै॥१०॥

बहुरि निसीथे सैन समै पद वदै तिनके।
सेस काल नित रहै संग सौंपैं गुरु जिनके॥
गुरुता पूज्य प्रभाव अष्ट एकै सम जानै॥श्रीराधे॥
मनकी अटक विचारि अचारज हू सुख मानै॥११॥

मम पाछे यह लखौ चवर जाके कर सोहै।
अपर हस्त वर पानदान मेरी गति जोहै॥
स्यामानुगा सुनाम रंगदेवी की आली॥श्रीराधे॥
इन कीन्ही अस रीति प्रीति मो पद दृढपाली॥१२॥
सम्प्रदाय नहि लहै भाव सहचरि प्राचीना।
दृढ उपजै मन प्रीति होइवै एहि पद लीना॥
जिनके मुखतै गहैं जुगल सेवा सुभकारी॥श्रीराधे॥
तिनहीतें गुरभाव सिद्धि कीन्हे अधिकारी॥१३॥

अनायास जौ हियै उपज आपैते होई।
संस्कार प्राचीन जानियैं दृढतर सोई॥
कैसेंहू मन दियै जुगल पद सेवा माहीं॥श्रीराधे॥
पावै नित्य विहार अचल ससै कछु नाहीं॥१४॥

या विधि दृढ़ सिद्धात समुझि मन निश्चै कीजै।
जो सेवा की रीति तहाँ ऐसे चित दीजै॥

डेढजाम निसि गयें अचारज सेइ सुवावै ॥श्रीराधे
दै परिदच्छिन दृडप्रणाम करि बाहिर आवैं ॥१५॥
जहाँ जहाँ निज मेल सहचरी जे गुनभारी।
तहाँ तहाँ पुनि सेइ सैन को समै सभारी॥
विदा मागि दै मोद नाय सिर हरे धरै पग ॥श्रीराधे॥
अपनी सहचरि सग लियें निज कुज गहे मग ॥१६॥
अपनो जहाँ निवास आय ता कुज दुवारै।
फिर ठाढे ह्वै जोरि हस्त श्रीकुज निहारै॥
दंपति सैन सुधाम आनि उर सीस नवावै ॥श्रीराधे॥
अस कहि जीहा नाम सदन भीतर तब जावै ॥१७॥
भूसन वसन उतारि पाद कर मुख निज धोवैं।
वरआसन पर बैठि हियें दंपति छवि जोवै॥
ता पाछैं शुभनाम जुगल श्रीराधा कृष्णा ॥श्रीराधे॥
कछू बार उचार करै पुनि राखै तृष्णा ॥१८॥
सेवैं जिनके सग सदा पीतम श्रीप्यारी।
पायो महा प्रसाद हस्त तिनकै सुभकारी॥
कंचन चौकी विसद तासु पै सो लै धारै ॥श्रीराधे।
जे जे अपने साथ भाग तिनकौ निरवारैं ॥१९॥
जे अधिकारी अपर होहि श्रीमहाप्रसाद के।
सबही कौं दै मोद करै भाजन तत स्वाद के॥
तब निज भाग्य मनाय आपु सेवैं धनि धनि कहि। श्रीराधे॥
इच्छा अधिक बढाय तृप्ति मानै आनद लहि॥२०॥
अग सकल जल धोय गहै मुखवास प्रसादी।
सैन ठौर निज जाय सेज बैठै अहलादी॥
वीरी महाप्रसाद सीस धरि मुख मै नावै ॥श्रीराधे॥
दंपति सेवा रीति भोर की सखिन सिखावै। २१॥
जे अपने ढिग रहैं सुवा सारो सुखदाई।
तिनतें कहै सुनाय समै लखि देहु जगाइ॥
अब समिरौ वर नाम जुगल आनद मुदकारी ॥श्रीराधे॥
बिदा सखिन को करै सैन सब करौ सुखारी ॥२२॥

जे दंपति पद लीन सखी सेवा अधिकारी।
तिनके चरण सुगंध हिये आँनै पिय प्यारी॥
निद्रा वस तन होय रहै ताही छवि लीना श्रीराधे॥
चौंकि चौंकि पुनि उठै सुपन लखि सो रस भीना॥२३॥

ब्रह्ममुहूरत समै निकट सारो सुक बोलें।
राधाकृष्ण सुनाम सुने अपने दृग खोलैं॥
उठि बैठें निज सेन नाम मुख हियें सभारै॥श्रीराधे॥
जुगल चरन वर कुंज चित्त भ्रमरी गति धारै॥२४॥

राधा राधा नाम जीह रटि सखी बुलावै।
बहुरि सेज थल त्यागि देह निज कृत्य करावै।
हस्त पाद मुख धोय दंतधावनि करि नीकैं॥श्रीराधे॥
अँतर सुवास लगाय अंग उन मर्दन लीकैं॥२५॥

ऐसे करि अस्नान वस्त्र तन स्वल्प सुधारै।
जुगल प्रसादी पुष्पमाल ते सकल सभारै॥
वर भाजन मैं धारि सीस धरि बाहिर आवै॥श्रीराधे॥
जमुना विमल प्रवाह तीर ताके तब जावै॥२६॥

करि प्रणाम बहुभांति पैठि भीतर कटितांई।
तुलसी पुष्प प्रसाद धरै धारा के मांही॥
मज्जन अंग सुहाय वस्त्र भूषन तन धारैं॥श्रीराधे॥
तिलक आदि शृंगार आपनौ मुकुर निहारै॥२७॥

संग सहेली तथा लियें आचारज कुंजा।
सैन सुथल के निकट जाय पहुँचै सुख पुंजा॥
भीतर को लखि समै पैठि पद वंदि सुबोधै॥श्रीराधे॥
सकल अंग पुनि सेइ शिथिलता सिगरी सोधै॥२८॥

उठि बैठैं जब सेज जीह जय कहि सिर नावै।
अस्त व्यस्त पट केस हरषि सुन्दर सुबनावै॥
सनमुख मुकुर निवेदि जोरि कर विनती करई॥श्रीराधे॥
सहचरि मंडल मध्य दिये बाहिर पग धरई॥२९॥

आचारज तन क्रिया सौच सुख देइ करावै।
अंतर संगधि लगाय अंग उन मर्दन भावै॥

रितु अनुकूल सुनीर विमल अस्नान कराई। श्रीराधे॥
देह पौंछि वरवास समुझि नीकै पहिराई ॥३०॥
कालिह प्रसादी मिले लाड़िली श्रीअग केरे।
ललितादिक के नेम तेई तन सजै सवेरे ॥
ए अपनी सहचरी प्रसादी तिन कह देवै ॥श्रीराधे॥
तेऊ निज निज भृत्य देंहि ते तैसे सेवैं ॥३१॥
जो निज प्रभुके अग लखै सो आपु न धरई।
एक दिवस दै मध्य रीति ऐसी सब करई ॥
ऐसी रीति विचारि अचारज अग सिगारै ॥श्रीराधे॥
भाल तिलक सिंदूर माग दृग अजन सारै ॥३२॥
भूषन मनि गन कुसुम सकल नखशिख पहिराई।
उत्तरीय दै सीस सुभग दरपन दिखराई ॥
लै प्रसन्नता भूरि सुवन वरषैं अभिरामा ॥श्राराधे॥
धन्य भाग निज मानि करै पुनि दृडप्रनामा ॥३३॥
अभिमुख ह्वै कर जारि लखै नैनन की ओरी।
दपति सेवा समै विनय सो कहै निहोरी ॥
अपर सहचरी अष्ट सग अधिपति जे गाई ॥श्रीराधे॥
तेऊ तथा सिगारि जूथपति ल्याय मिलाई ॥३४॥
अरु अपनौ लै वृद जूथपति राजै रुरी।
दपवि सेवा सौज थार कर लीन्हे पूरी ॥
आचारज के निकट ल्याय ते सवै दिखावै ॥श्रीराधे।
जैसी आज्ञा लहै सोस धरि तैसी भावै ॥३५॥
बाजे अमित प्रकार सहेली सुर सम कीन्हे।
राम रागिनो प्रगट समै लखि किये नवीने ॥
रही सेष कछु रैन लेन सुख हिय को भारी ॥श्रीराधे॥
आचारज दृग सैन सखिन की ओर प्रचारी ॥३६॥
दपति सेवा समै जानि चलिवें जिय धारी।
चतुर महेलिन रचे पाँवडे स्वच्छ सुखारी ॥
श्रीआचारज कही उठत मगल सुखवानी ॥श्रोराधे॥
जयति जयति श्रीजयति सदा राधा ठकुरानी ॥३७॥

तथा महेली कल सोई धुनि उच्च उचारै ।
शब्द कुञ्ज प्रतिध्वान श्रवन सुनि सबै सँभारै ॥
अष्टसखी जे अष्ट कुञ्ज पहिलै कहि गाई ॥श्रीराधे॥
तहाँ तहाँ ते निकसि मिलीं एकै थल आई ॥३८॥
आनी अपनी दिसा जूथ बहुवृन्द बनाये ।
मंजुल गति सब वाद्य गीत मंगल धुनि छाये ॥
परम निकुञ्ज सुधाम सप्तमंडल जो गायो ॥श्रीराधे॥
प्राची दिशि के द्वार अग्रवर चौक सुहायो ॥३९॥
रंगदेवी की कुञ्ज तासु दिसि निकट सुहाई ।
याते पहिलै निकट चौक के तेइ आई ॥
भोर समै कौ राग रंग वरषत करवीना ॥श्रीराधे॥
राधा राधा नाम रटै सब तार सलीना ॥४०॥
अग्निकोण तें तथा सुदेवी जू हित आवै ।
भारी संग बनाव नाम राधा मिलि गावै ॥
दच्छिन दिसि तें जूथ सब श्रीललिता आँई ॥श्रीराधे॥
महिमा मंगल गान प्रगट राधा छवि छाँई ॥४१॥
तथा कोण नैरित्य विशाखा वेगी आवत ।
जूथ वृंद बहु संग नाम राधा सुर गावत ॥
चंपकलता प्रदच्छिण दै पश्चिम तै आँइ ॥श्रीराधे॥
जूथ लिये बहु संग वदन राधा धुनि गाँई ॥४२॥
वायुकोण तें जूथ अमित लै चित्रा धाई ।
मंगलगान प्रबंध नाम राधा धुनि छाँई ॥
उत्तरदिसि तें चलीं तुंगविद्या रसभीनी ॥श्रीराधे॥
जूथप संग अनेक नाम राधा धुनि कीनी ॥४३॥
तथा कोण ईसान इंदुलेखा आवत सत ।
जूथप सहचरि संग नाम राधा रस वरषत ॥
नाना तान तरंग सबै गावत इमि आवत ॥श्रीराधे॥
जुगल माधुरी मत्त छटा तैसी छलकावत ॥४४॥
मिलीं परस्पर अष्ट चौक तामै अंग लाई ।
अपर सहचरी पुष्प अंजली नभ वरषाई ॥

जाको जो व्यवहार तथा पद वन्दन कीन्हे ।।श्रीराधे।।
मगल आसिष पाय मोद भरि अति सुख लीन्हे ।।४५।।
मिलि बैठी तिहि ठौर सकल मगल गुन गाये ।
दपति छवि उर आनि सिधु आनन्द बढाये ।।
सेवा समै निहारि चित्त इच्छा अस कीन्ही ।।श्रीराधे।।
जुगल माधुरी सुधा प्यास जिय भई नवीनी ।।४६।।
मो ललिता ते आदि अगजा अष्ट प्रधानी ।
दोय दोय मिलि सग रहैं सब दिन परमानी ।।
मिली विशाखा मोहि आय अतिसै मन चाये ।।श्रीराधे।।
चपक लता सुहाग सग चित्रा गर लाये ।।४७।।
तुगविद्या के सग इदुलेखा छवि देहीं ।
मिलीं सुदेवी जाय रगदेवी रग लेहीं ।।
अष्ट अष्ट जे कही सग इनकै सुखदाई ।।श्रीराधे।।
जिनको जिनते मेल जुग्म ह्वै अति छवि छाई ।।४८।।
ऐसे सबकी रीति चित्त उन मान कीजिये ।
सहचरी वृन्द अपार जूथ किमि अन्त लीजिये ।।
जुग्म होन को हेतु श्रवन सुनि ऐसे गहिये ।।श्रीराधे।।
सेवा जुगम सरूप समै एकै निरवहियै।।४६।।
अपने अपने जूथ वृन्द मडल बहु कीन्हे ।
गावत समै सुहात राग मजुल सुरभीने ।।
जुगलविहारी नित्य परस्पर नेह बढावै ।।श्रीराधे।।
गावैं तेई प्रबध अर्थ सोई मन भावै ।५०।।
पहुँचीं परम निकुञ्ज निकट ऐसे जब जाई ।
सैन कुज द्दग परी दडवत करी सुहाई ।।
नींद सक मन मानि मौन गहि सब ही ठाढी ।।श्रीराधे।।
बिनु पानी ज्यौ मीन तथा अभिलाषा बाढी ।।५१।।
मोर समै के चिह्न जानि पच्छी रव कीन्हे ।
श्रीराधा रट नाम कहै सारौ सुर भीने ।।
सुकी रटै सुर मद नाम श्रीकृष्ण सुखारे ।।श्रीराधे।।
श्रवन परी धुनि कछू स्याम द्दग अल्प उघारे ।।५२।।

मद मद श्रीवदन नाम राधा कहि गावैं।
परम माधुरी सिधु अर्थ ताके बहु भाव।
सो धुनि सुनि श्रीप्रिया नैन अबुज कछु खोले।श्रीराधे॥
चातक ज्यौं जल स्वाति पाय पीतम जै बोले॥५३॥

श्रीप्यारी मुख रहै लाल को नाम बखानी।
गुन सुभाव रस रूप नेह की अवधि प्रमानी।
मिली परस्पर डीठि सिधु रस के दोउ सरसे॥श्रीराधे॥
वेला पट विलगाय लहरि कर सौं कर परसे ५४।

प्रीतम हिय ह्वै गौर स्याम जिय प्यारी तैसें
लाल रटैं मुख कृष्ण प्रिया राधा धुनि जैसे॥
विवस भये स्वर उच्च कहैं दोऊ रस भाने॥श्रीराधे॥
हमै आदि सखि शब्द सुने तन मन तहाँ लीने॥५५॥

सफल होहि दृग तबै जबै दपति मुख देखैं।
जुगल वदन ससि छटा पान करि जीवन लेखैं॥
इद्री वृत्ति समेटि चित्त ताही दिसि लाये॥श्रीराधे॥
परमानद अपार लह्यौ धुनि आहट पाये॥५६॥

सिरहानौ श्री सेज बिछी दच्छिन उत्तर पग।
चहु दिसा चौद्वार सेष जाली समीर मग॥
जो कहिये कछु रूप सेन मदिर का गाई॥श्रीराधे॥
बानी रहत लजाय नैन जीहा नहि पाई॥५७॥

चारि द्वार पै खरे जुगम हम आदिक चातुर।
सुनी अमी धुनि कान भई मति अतिसै आतुर॥
उत्तर दिसि जो द्वार तहा मैं सग विसाखा।श्रीराधे॥
शनै शनै पग धरें हरें लखिवे अभिलाषा॥५८॥

गई कुज के निकट बैन सुनि निश्चै पायो।
श्रीराधा रट नाम वीणा स्वर स्वल्प बजायो॥
चपकलता विचारि सग चित्रा पूरब त्यौं॥श्रीराधे॥
सारगी स्वर मद नाम राधा प्रगटैं ज्यौं॥५९॥

तुगविद्या के सग इदुलेखा दिसि दच्छिन।
निकट बजायो आय मुरज राधा राधा तिन।

तमैं सुन्देवी सग रगदेवी त्यौं पच्छिम ।श्रीराधे॥
मुरली निकट सुनाय कही राधा धुनि उत्तम ॥६०॥
अपर सहचरी अष्ट अष्ट तेऊ पुनि आई ।
तब लागी बहु भीर जूथ नहि गनत सिराहीं ॥
सेज निकट हित रहीं अगजा सखी रैन जे ।श्रीराधे॥
कवरी वसन सुधारि जोरि कर लखै नैन ते ॥६१॥
श्री स्यामा दृग कोर सैन जब ही तिन पाई ।
प्रगटी चरण सरोज तहा पुनि तबै समाई ॥
ता पाछे सब द्वार खुले पट आक्रम मादी ॥श्रीराधे॥
जय जय जय धुनि करै सहचरि अति अहलाही ॥६२॥
कीन्हे दृड प्रणाम जोरि कर मस्तक नायो ।
श्रीराधा लै नाम देहरी सीस लगायो ॥
स्यामा चरण सरोज विमल मन भ्रमरी कीन्हे ॥श्रीराधे॥
सो प्रताप उर धारि विनय पग भीतर दीन्हे ॥६३॥

परिदच्छिन दै सबै द्वार उत्तर तहा आई ।
भीतर करै प्रवेस चरण सनमुख सिर नाई ॥
प्रथम अष्ट हूम आय जुगल पद वन्दन कीन्हे ॥श्रीराधे।
लागी सेवा करन अग लखि आलस भीने ॥६४॥

अष्ट अष्ट जे अपर समै लखि तेऊ आई ।
जूथापति सहचरी सग बहु भीर सुहाई ॥
पद वदन करि सबै जोरि कर मडल ठाढी ॥श्रीराधे॥
सेवा कीजे सौज हस्त लीन्हे रुचि बाढ़ी ॥६५॥

कोऊ सीतल नीर कोउ दरपन कर धारी ।
पानदान कोउ लियें अपर भाजन सुखकारी ॥
अजनपात्र सुधारि कोउ चदन बहु जाती ॥श्रीराधे॥
पुष्पाभरण विचित्र लिये कोउ नाना भाती ॥६६॥

काहूके कर चवर मोरछल छत्र सुहावै ।
सूरजमुखी प्रकास सुखद काहू कर भावै ॥
कोऊ वस्त्र अनूप रग रगी कर लीन्हे ॥श्रीराधे॥
क्रीड़ा कीजे वस्तु अपर ताही विधि कीन्हे ॥६७॥

काहू कर सिंदूर पात्र मणि भूषन अपरा।
कोऊ मुरली लिये कमल कोऊ हितपरा॥
पुष्प छरी कोउ लियें लकुट कचनमनि तैमे॥श्रीराधे॥
काहूके कर लसैं चित्रपट रीझन जैसे॥६८॥
समै सुहाती वस्तु अहै जे भोजन केरी।
बहुत जतन ते लिये सखी हित सौं बहुतेरी॥
जे जे जिनके हस्त वस्तु सबको कहि गावै।श्रीराधे॥
महिमा प्रभू विचारि जानि जिय मस्तक नावैं॥६९॥
सहचरि जूथ अपार हिये दंपति पदप्रीति।
ताही की बढवारि मनावत सेय सुनिती।
नैन चकोरी तृषित जथा ससि ओर निहारै॥श्रीराधे।
जुगलमाधुरी छटा तथा जीवन उर धारै॥७०॥
सेवा करि सब अग सुनौ जब आलस छूटे।
गोपेश्वर दृग खुले निरखि हम अति सुख लूटे॥
अग मोरि एहि ओर अगरि जमुहाई लीन्ही॥श्रीराधे॥
जै आनद बखानि सबन चुटकी मृदु दीन्ही॥७१॥
श्रीप्यारी मम कध भुजा अति हित सौं धारी।
तथा विसाखा ओर लाल सुख दियो अपारी॥
मद विहसि वर वचन कहत दसनावलि उघरी।श्रीराधे॥
अहो भाग्य लखि मानि धन्य सखियन की सुघरी।७२॥
श्रीमुख वचन प्रवाह सुधा ऐसें मृदु बोले।
ए ललिते का भोर भयो कमलन मुख खोले॥
श्रीमहारानी भोर आप इच्छातें होवै॥श्रीराधे॥
इच्छाके आधीन काल आदिक दृग जोवै॥७३॥
रगदेवी रगभरी चरण सेवैं उर लावैं।
बार बार निज सीस रीझि दृग लै परसावैं॥
ऐसें ही रस पगी सबै सब आँगन लागी॥श्रीराधे॥
सेवैं जुगल सरूप छिनै छिन अति अनुरागी॥७४॥
जानि हिये को भाव उठैं मन ऐसी आई।
मै बोली कर जोरि विनय बहु भाँति सुनाई॥

श्रीमहारानी सकल करैं अभिलाषा ऐसी ॥श्रीराधे॥
उठि बैठैं जौ आप निरखि छवि जीवैं तैसी ॥७५॥
तथा विसाखा लाल ओर विनती बहु भाखी।
भक्त मान सुख दैन प्रभू सो हसि अभिलाषी ॥
गहे सखिन श्रीहस्त दोऊ कोउ केस समेटैं ॥श्रीराधे॥
अपर उभै श्रीकध सखी कर मजुल भेटैं ॥७६॥
पहिले पीतम उचकि उठे मुख कहि श्रीराधे।
सहचरि जय जय भाषि निरखि नैय अति सुख लाधे ॥
मुरि प्यारी की ओर लखे पिय सुधि बुधि भूले ॥श्रीराधे॥
आलस रस के सिंधु भरे श्रीअङ्ग अमूले।७७॥
बहुरि धीर जिय धारि नैन अम्बुज सुख लीन्हे।
श्रीप्यारी मुख चद्र छटा पीवत दृग पीने ॥
बार बार बलिहारि लेत सुख सिंधु झकोरैं ॥श्रीराधे॥
अए प्रिये हित उठौ हस्त गहि भाखि निहोरैं।७८॥
मंद विहसि श्रीप्रिया देखि दृग कियो लगेहैं।
सो सोभा पिय निरखि होत नहि क्यौंहू सोहैं ॥
बाहु लता सुख सेतु दाहिनी पीतम लीन्हीं ॥श्रीराधे।
मै ललिता दिस बाम तथाविधि तैसी कीन्ही ॥७९॥
कवरी सखी समेटि पीठि परसै हिय हरषै।
जय जय शब्द उदोत उठत फूलन मुद वरषै।
बैठे जुगल अनूप अङ्ग लगि अङ्ग सुहाए ॥श्रीराधे॥
चहूँ ओर सहचरी आड़ तकिया बहु लाए ॥८०॥
ऊचे विमल विचित्र बृहत दर्पन सुभ तीनी ॥
रगदेवि त्रयसखी धरे सनमुख रसभीनी ॥
तहा देखि प्रतिबिंब आपनो आप लुभावैं ॥श्रीराधे॥
पाछे जे सहचरी खरी लखि मृदु मुसुकावैं ॥८१॥
बहुरि मध्य जो मुकुर तहा मिल जुगल निहारैं।
अरुझि परस्पर नैन विहसि रीझत बलिहारैं ॥
पुनि अञ्जन तन हेरि अलक विथुरी कहुँ अजन ॥श्रीराधे॥
कहुँ लख्यौ मुखराग अरुण रेखा मन रजन ॥८२॥

देखि रहे गति भूलि पलक छवि सिंधु पगाने।
दिये सुदेवी हस्त दोउ रूमाल भिगाने॥
अरस परस रूमाल लिये हसि पोंछि निहारै॥श्रीराधे॥
कबहूं दरपन ओर हेरि तन प्रभा सुधारै॥८३॥
एक हस्त लै अलक अपर कर चिबुक लगावै।
उमग हिये अनुराग विवसता छिन छिन पावै॥
सहचरि बरषै कुसुम सिंधु आनन्द समानी॥श्रीराधे॥
जुगल माधुरी छटा मीन मन जिन सों पानी॥८४॥
वर सुगंधि जा माहि उष्ण जल झारी मनिमै।
चपकलता सुजान खरी आगे जुग करलै॥
श्रीस्यामा दृग कोर दई तिन मस्तक नायो॥श्रीराधे॥
तबही भाजन विमल हरित मनि को तहं आयो॥८५॥
चौकी मनिमै सेज निकट चित्रा लै धारी।
तापै कुसुम बिछाय धरयौ शोभा जन भारी॥
भाजन हूँ के मध्य दूर्वा अंकुर धारे॥श्रीराधे॥
शीतलता ज्यौं लहैं जुगल श्रीनैन निहारे॥८६॥
रंगदेवी ढिंग आय प्रणत ह्वै विनै सुनाई।
श्रीमहारानी चरण धोइवै हिय हुलसाई॥
श्रीइच्छा रुख पाय चरण कर लै हित धोवैं॥श्रीराधे॥
तथा सुदेवी लाल ओर वाही विधि होवैं॥८७॥
चरण धोय सुखपाय पोंछि शुभ चैल सुहाए।
पुनि अपने कर धोय जुगल श्रीहस्त धुवाए॥
तथा वसन वर पोंछि वदन श्रीचंद्र धुवावैं॥श्रीराधे॥
दंपति मन अनकूल सहचरी लखि सुख पावैं॥८८॥
मैं ललिता श्री ओर विसाखा पिय दिसि सोहैं।
झीन भीन पट हस्त लिये मुख जुगल विजोहैं॥
अवसर पाय लुभाय वदन ससि हित अगुछाये॥श्रीराधे॥
नीकै चिकुर सुधारि पुष्प गुथि बेनी लाये॥८६॥
दृग अंजन सुभ सारि तिलक रचना रचि नीकी।
अलकै जुग लटकाय श्रवन ढिग अटकनि जीकी॥

कीर विनिंदक तुंड लसै नासा पर कलिका ॥श्रीराधे॥
चिबुक बिंदु अनुरूप कपोलन पत्र मकरिका ॥९०।
तुंगविद्या पिय रचै इंदुलेखा ढिग प्यारी।
चंदन रंग अनेक हस्त पद पृष्ठि सुधारी॥
अङ्गन वसन सँवारि सुवन आभरण अनेका ॥श्रीराधे॥
नखसिख ते पहिराय जथाविधि सहित विवेका ।९१॥

अतर सुगंध सुवासि पुष्प थलकमल सुहाए।
जुगल हस्त श्री दिये लिये ते नासा लाये॥
अति प्रसन्न ह्वै जुगल परस्पर नासा लावै ॥श्रीराधे॥
दर्पन सनमुख लिये सहचरी विहंसि दिखावै ॥९२॥

अवसर इच्छा जानि विसाखा औ मैं दोऊ।
भोजन कौ लखि समै जोरि कर भाष्यौ साऊ॥
नैन सैन रुख समुझि करी सौ वेगि उपाई ॥श्रीराधे॥
धूप दीप दै प्रथम स्वल्प आचवन कराई ॥९३॥

चौकी दीरघ राखि थार तापै द्वै धारे।
धार उष्ण जो दुग्ध सुगंधित भेद सँवारे।
नाना रस की रीति तथा दधि के बहु भेदा ॥श्रीराधे।
माखन भिन्न प्रकार स्वाद अनगनती केदा ॥९४॥
घैया भेद विचित्र मलाई तथा सँवारी।
मेवा विंजन रूप रचे सो छप्पन कारी।
वरन वरन मनि विमल कटोरा भरि भरि धारे ॥श्रीराधे॥
शंखोदक तिन माहि पत्र तुलसी लघु सारे ॥९५॥

कीन्ही विनै बहोरि प्राण जावन सुख दीजै।
उत्कंठित सब कोइ आप भोजन रुचि कीजै॥
जुगल विहारी नित्य परम निज जन सुखदाई ॥श्रीराधे॥
विहसि थार तन हस्त कियो जय जय धुनि छाई ॥९६॥
प्रेम भरी सहचरी नाम गुन वस्तु बखानै।
स्वाद भेद रस रीति रूप सो दंपति मानै॥
नेह नवेली अली जथा भोजन करवावै ॥श्रीराधे॥
खात खवावत दोउ परस्पर अति सचु पावै ॥९७॥

सकल भाँति दै मोद मनोरथ सबके पूरे।
निज भक्तन सुख हेत करै लीला गुन भूरे॥
जब जानी कछु वृत्ति हठी भोजन रुचि नाही ॥श्रीराधे॥
तबहीं लिये उठाय जतन आचवन कराही ॥९८॥
भाजन अचवन हेत उभै राखे सुचि आनी।
खरिका कनक सुधारि देत कोउ गेरत पानी॥
दीनी द्रव्य विशुद्ध चिकन ताकर ज्यौं जाई। श्रीराधे॥
अगुछाये श्री हस्त वदन पट अमल सुहाई ॥९९॥
पदपकज पुनि धोय पोंछि पट सीस नवावै।
अपर देत मुखवास कोउ बीरी लै आवै।
हसि हसि दपति लेत परस्पर कर मुख देवै ॥श्रीराधे॥
मद चितै मुसुकाय सहचरी सो सुख लेवै ॥१००॥
अतर सुगंधि बनाय दई श्रीहस्त न दोऊ।
दर्पन विमल सुधारि धरै लै सन्मुख कोऊ॥
मगल समै निहारि आरती मगल साजैं। श्रीराधे॥
मगल गीत उदोत विविधि बाजे हित बाजै ॥१०१॥
मै ललिता ढिग आय जोरि कर सीस नवाई।
लै वलाय गनि अष्ट अञ्जली सुमन सराई॥
जुगल विहारी नित्य चरण पकज पुनि वदी ॥श्रीराधे।
मगल आरति थार लियो कर हिय आनदी ॥१०२॥
मगल गीत सुहात वाद्य मगल सुखदाई।
मगल जय धुनि होत कुसुम बरषा बरषाई॥
प्रथम चरण दिसि च्यारि वारि बार द्वै हृदय घुमाइ ।श्रीराधे॥
श्रीमुख सनमुख एक सप्त सर्वांग सुभाई ॥१०३॥
बारि आरती थार धर्यो कर धोय बहोरी।
पुष्प अञ्जली एक दई सखियन चहु ओरी॥
नाना भाँति प्रणाम करै भीतर कोउ बाहिर ॥श्रीराधे॥
जय श्रीराधा कृष्ण इहै धुनि छाय रही चिर ॥१०४॥
निकट आय श्रीचरण परसि कर मस्तक लावैं।
सावधान ह्वै सकल वाद्य सर एक मिलावैं॥

मंगल समै विचारि राग मधुरे सुर गावैं ॥श्रीराधे॥
नृत्य करैं भरि प्रेम देखि दंपति सुख पावैं ॥१०५॥

जुगल विहारी नित्य सखिन इच्छा पहिचानी।
कुंज अनौसर तबै सहचरी धारै पानी॥
तहा सुगंधि सिंचाय कुसुम रचना बहु करहीं ॥श्रीराधे॥
दंपति आय निहारि मोद अतिसै ज्यौ भरहीं ॥१०६॥

अपर सहचरी रचै पावड़े ह्वातें ह्वालौं।
जैसी इनकै प्रीति बुद्धि सो कहौ कहा लौं॥
हम ते आय सुनाय कही तिन सगरी बाता ॥श्रीराधे॥
दंपति सोई विचारि उठे भक्तन सुखदाता ॥१०७॥

अष्ट सहचरी चहूँ ओर मंडल हम दीन्हे।
नित्य विहारी जुगल मध्य आनंद भरि कीन्हे॥
दिये परस्पर बाहु कंध पग मंद सुधारैं ॥श्रीराधे॥
सहचरि बरषैं कुसुम तोरि तृण हंसि लखि वारे ॥१०८॥

नाना भांति विनोद करत कौतूहल भारी।
वचनामृत मृदु कहत सुनत हरुवै मगचारी॥
कही अनौसर कुंज जाय पहुँचे तिहि द्वारी ॥श्रीराधे॥
भीतर जुगल सरूप गये सखिया भईं न्यारी। १०९॥
तहां होय जो रीति सुनै हम नैनन देखै।
प्रगट अङ्गते होहिं अङ्गजा अपर विशेखै।
कुंज वृहत विस्तार बनी रचना अति प्यारी ॥श्रीराधे॥
भिन्न भिन्न है रूप दोऊ विहरै कछु वारी ॥११०॥

तहां अङ्गजा संग अङ्ग सेवा सब करहीं।
दंड एक परिमा सखी ते आनंद भरहीं॥
इहाँ द्वार हम खरी सकल जिय चाह अपारी ॥श्रीराधे॥
बीते कल्प अनेक मनो पल विना निहारी ॥१११॥
अति आरति मन माहिं कबै हग रूप निहारै।
करुणा सील सुभाव जुगल जनहूँ न विसारै॥
द्वार आइ वे हेत लाड़िली इच्छा कीन्ही ॥श्रीराधे॥
चहूँ ओर सहचरी जोरि मंडल रसभीनी ॥११२॥

सुखद पावड़े रचित भूमि गति मद पधारै ।
श्रीस्यामाजू प्रथम निकट आई तिहि द्वारै ॥
तबै सखी ते समै जानि श्रीअंग समानी ।श्रीराधे॥
आकस मादक पाट खुले हम लखि हरखानी ॥११३॥

वारहिं वार प्रणाम किये हिय धरि छवि नीकै ।
रचे पावड़े चित्र मोद लखि उपजै जीकै ॥
दोय दोय हम रूप किये अपने असज्ञानी ।श्रीराधे॥
एक अङ्कते संग चलै स्यामा सुखदानी ॥११४॥

ऐसे मंडल मध्य होय प्यारी पगधारै ।
अपर जूथ सब खरे पीय आगमन निहारै ॥
श्री इच्छा अस भई स्नान की कुंज चलै मग ॥श्रीराधे॥
आली संग विनोद करत आए ताही लग ॥११५॥
भीतर कियो प्रवेस कुंज के मध्य सिंघासन ।
कहियै कहा बनाव देख रीझत प्यारी मन ॥
विमल नीलमनिमई पीत नग अरुण विचित्रित ॥श्रीराधे॥
चारि हस्त परिमान चहूदिसि ऊपर झूमित ॥११६॥
लसैं तीन सोपान दिसा चारौ लघुताई ।
कोमल ताकी अवधि परस ऋतु सम सुखदाई ॥
श्रीश्यामा जू जाय तहाँ बैठी मन हर्षै ।श्रीराधे॥
सेवा समै विचारि सहेली तत्पर दर्षै ॥११७॥

इहाँ सहचरी खडी लाल पाछ तैं आए ।
प्रेम भार पद वंदि पावडे रचे सुहाए ॥
तिनके मंडल मध्य चले निज जन सुखदाई ॥श्रीराधे॥
स्नानकुंज जो अपर तहा जावैं मन आई ॥११८॥

कीयो कुंज प्रवेस तहा सिंघासन ऐसो ।
पीतमई मनि मुख्य अरुण नग नील लसै सो ॥
सबै भाँति सुख रूप तहा बैठे हँसि प्यारे ॥श्रीराधे॥
सेवैं सखी अपार समै सेवा सुविचारे ॥११९॥
सेवैं दोऊ ठौर सहचरी प्रेम पगानी ।
कितनी बाहिर कुंज समै गावैं मृदु बानी ॥

भनर सखी प्रवीन नोर बहु भेद बनावै ।।श्रीराधे।।
सीत उष्ण अनुकूल जानि वरगध मिलावैं ।१२०।।

रगदेवी ढिग आय प्रिया के सीस नवायो ।
चरण धोइवे हेतु हियौ को भाव जनायो ।।
नाना भाँति सुगध द्रव्य पदकज लगाई ।।श्रीराधे।।
अपर नीरजुत गग देत झारी कर भाई ।।१२१।

मजुल पट लै पौछि परसि मस्तक चखलावैं ।
दच्छिन उर पर वाम चरन ऐसे पधरावै ।।
बहुरि विसाखा आय जोरि कर वदन करई ।।श्रीराधे।।
हस्त धोइवे हेत चित्त अभिलाषा भरई ।।१२२।।
श्री इच्छा जिय जानि हस्त अपने कर लेवैं ।
विविध सुगधित द्रव्य लेप श्रीकर युग सेवैं ।।
विमल सुवासित नीर सहचरी झारी भरिकर ।।श्रीराधे।।
गेरत धार विचारि विसाखा रुख लखि तत्पर ।।१२३।

अति आनदित होय धोय श्रीकर अगुछाए ।
दच्छ हस्त श्रीगुल्फ बाम घूटू पधराए ।।
सिघासन धरि सीस भई सनमुख छबि देखै ।।श्रीराधे।।
धन्य मानि निज भाग्य सफल जीवन अति लेखै ।।१२४।।

सुभग सुदेवी हस्त लिये झारी सिर नावै ।
उर अतिसै अभिलाष कलूला हमैं करावैं ।।
श्रीजू को लखि वदन मजुकेसी रुख जानी ।।श्रीराधे।।
भाजन धर्यौ अपर दतधावन हित आनी ।।१२५।।

तामैं पुष्प विचित्र दूब अकुर करि पानी ।
राजहस तन स्वल्प बने मनि के लघुमानी ।।
ता भाजन के मध्य धरे ते विविध सुहावै ।।श्रीराधे।।
लहैं वायु सचार लुढकि बूड़ैं उतरावैं ।।१२६।।
देखि सखिन को भाव प्रियाजू हस्त पसार्यौ ।
तबै सुदेवी विनय मजु गति पानी डार्यौ ।।
भरि भरि जल श्रीवदन कलूला भाजन डारैं ।।श्रीराधे।।
राजहस तन परै विहसि सो खेल निहारैं ।।१२७।।

चित्रा चित्र बनाय दतवावनि लै आई।
जामैं विसद सुगधि मृदुल अतिसै सुखदाई।
श्रीस्यामा श्रीहस्त लई चित्रा नय हरखी ॥श्रीराधे॥
चूरण दत विशुद्ध हेत मेना लै सरसी ॥१२८॥

गीतालाप विनोद वार्त्ता अति सुख छावैं।
परमानद समुद्र परी सहचरी लुभावैं॥
इतने मैं श्रीप्रिया दतवावनि करि निवरी ॥श्रीराधे॥
ससिमडल श्रीवदन धोय पोछत मिलि सिगरी ॥१२९॥

ता पाछे मैं लई सलाका अजनकी कर।
नैन भक्त सुख ऐन झीन रेखा खैंची वर॥
पारिजात कौ पुष्प परम सौरभ मृदु सुदर ॥श्रीराधे॥
रचना वचन सुनाय विनय सो दीह्यौ श्रीकर ॥१३०॥

इदुलेखा लखि समै विमल दरपन कर लीन्हे।
सनमुख ठाढी आय प्रिया पद नेह नवीने॥
श्रीजू पुष्प सुगधि लेंहि हँसि मुकुर विजोहैं ॥श्रीराधे॥
चहूँ ओर सहचरी सुवन वरषै लखि मोहैं ॥१३१॥

तहाँ लाल ढिग रहैं सकल हम तन दूसर धरि।
सेवा जथा प्रकार कर सो सुनिये चित करि॥
विविध सुवासित नीर सीर औ उष्ण विचारैं ॥श्रीराधे॥
जाविधि अति अनुकूल होय लखि तथा सुधारैं ॥१३२॥

कलकठी लखि समै स्वेत मनि चित्रित चौकी।
लै सिघासन निकट धरी नय प्रीति अलौकी॥
मधुविंदा मनि अरुण बृहत भाजन तहँ धार्यौ ॥श्रीराधे॥
जल अकुर ता मध्य पुष्प मनि की धरि सार्यौ ॥१३३॥

रगदेवी कर जोरि नम्र ह्वै सनमुख ठाढ़ी।
चरण धोइवे हेतु हियें अतिसै रुचि बाढी॥
करैं मनोरथ पूर लाल निज जन सुखदाई ॥श्रीराधे॥
श्रीपद चालन देखि रगदेवी ढिंग आई ॥१३४॥
हियें नैन धरि सीस चरन निजहस्त लिये हित।
परम सुगधित द्रव्य लिये कदर्पा है तित॥

विमल सुवासित नीर भरे झारी कर सुन्दरि ॥श्रीराधे॥
निज स्वामिनि रुख ओर लखै गुन निधि सब सहचरि ॥१३५॥
लै लै सोई द्रव्य चरन लावत सुख पाये।
सुन्दरि झारी नीर धार गेरत चित लाये॥
नेह नीर पदकंज धोय वट पट अगुछाए ॥श्रीराधे॥
वाम ऊरु पर चरण दच्छ गति पधराए ॥१३६॥
जुगल चरन कर परसि हिये चख मस्तक लाए।
अभिमुख ठाढी लखै नैन चातक ससि पाए॥
निकट सुदेवी आय विनैजुत सीस नवावै ॥श्रीराधे॥
धोवें श्रीकर कमल चित्र अभिलाष बढावै ॥१३७॥
प्रीतम क्रिया कटाच्छ कोर तिनकी दिसि हेरे।
विनै भार सिर नाय सकुचि बैठी झुकि नेरे॥
सहचरि परम विनीत संग तैसी तिनके है ॥श्रीराधे॥
झारी भरी सुनीर द्रव्य सुभकर जिनकें हैं॥१३८॥
लाल पसार्यौ हस्त सुदेवी नै कर लीह्यौ।
द्रव्य विसद आमोद लेप नीकी विधि कीह्यौ॥
नीर धोय पट पोछि जुगल कर कमल सुहाए ॥श्रीराधे॥
वाम वाहु श्रीगुल्फ अपर घूटूँ धरि भाए ॥१३९॥
सनमुख पिय को रूप सुदेवी लखि मुसुकाँहीं।
इंदुलेखा लै नीर विमल झारी लग आई॥
मन उत्कठा अधिक सीस नै भाव जनावै ॥श्रीराधे॥
लाल कलूला करै मोद छिन छिन हम पावैं ॥१४०॥
प्रीतम हस्त उठाय इंदुलेखा तन हेरे।
धन्य भाग्य निज मानि विनै इनहूँ जल गेरे॥
चंपकलता विचित्र मंजु दातुनि लै आई ॥श्रीराधे॥
सो दीन्ही श्रीहस्त लई पिय अति मन भाई ॥१४१॥
चूरण वरण अनूप दंत मज्जन के हेतू।
चंद्रकला कर लिये देत रुख लखि करि चेतू॥
गान प्रबंध विनोद वार्त्ता मंगल होवैं ॥श्रीराधे॥
दंतधावन करि चुके पीय मुख मंडल धोवैं ॥१४२॥

मृगनैनी पट दियो वदन श्रीकर पोछत लसि ।
मैं अजन दृग सारि चिबुक परस्यो अगुरी हसि ॥
तबै विसाखा विहसि केतकी पुष्प सुहायो ।।श्रीराधे।।
पीत वरन वर गध जानि प्रीतम जिय भाया ।।१४३।।

हिय नैनन सो लाय लाल नासा परसावैं ।
देखत प्यारी रूप छटा उरमैं उमगावैं ॥
चित्रा दर्पन लिये खरी सम्मुख दिखरावे ।।श्रीराधे।।
प्रीतम ता दिसि हेरि सखिन जिय मोद बढावैं ।।१४४।।

श्रीस्यामा के निकट इहा सहचरि मुद भरहीं ।
अरी होत अतिकाल चलौ उन मर्दन करहीं ।
पिस्ता शुद्ध बदाम पीत करपूर सुकेसरि ।।श्रीराधे।।
नाना भाति सुगधि मेलि पीस्यो भाजन धरि ।।१४५।।

शीत उष्ण अनकूल कियें लै मै ढिग आई ।
मै विनतो कर जोरि करी श्रीजू के पाहीं ॥
महाराज सहचरी सकल अभिलाषा भरहीं ।।श्रीराधे ।
श्रीइच्छा जौ होय अग उन मर्दन करहीं ।।१४६।।

मेरौ राख्यौ मान स्वामिनी मद लखीं हसि ।
हम सबहीं निज भाग्य मानि पद सीस दियो खसि ॥
अमल अमोल अनूप अतर सौरभ्य नवीनौ ।श्रीराधे।।
हीरक मनि वर सुभग कठोरैं करि सो लीन्हौ ।।१४७।।

सो अगुरी लै छिरकि वार त्रय धरनी आगैं ।
करि प्रनाम है दच्छ गई मै पृष्ठि विभागै ॥
केस खोलि गति मजु अतर लै माग लगायो ।।श्रीराधे।।
तथा विसाखा रगदेवि उर बाहु सुभायो ।।१४८।।

चपकलता लगाव मृदुल चित्रा उरु जानू ।
जुगल चरन त्यौं लगी इदुलेखा लहि मानू ॥
श्रीमुखमडलचद्र तुगविद्या हित लावे ।।श्रीराधे।।
तथा सुदेवी पीठि लगी अतिही सुख पाव ।।१४९।।

अपने अपने चित्त मोद भरि अतर लगायो ।
उन मर्दन लखि समै सहचरिन धरयौ सुहायो ॥

जा उवटन तें अतर चिकनता अङ्ग न रहई ।श्रीराधे॥
काति मृदुलता उमग पीतता बल तन लहई ॥१५०॥
सो तिन लै लै विहसि बहुरि श्रीअगन लायो ।
कछू वार गति हरे देखि रुख सकुचि छुडायो ॥
जल भीनौ लै मृदुल हस्त पट पोछे अगा ॥श्रीराधे॥
स्वल्प उष्ण गुन भूरि नीर पट भरि बहुरगा ॥१५१॥

करि झारी सो नीर लिये चहुँ ओर सहेली ।
हम सब हस्ताकार हस्त पट जुग कर मेली ॥
श्रीअगन कर फेरि करावैं सुभ अस्नाना ॥श्रीराधे॥
सहचरि परम प्रवीन धार गेरैं सुखधामा ॥१५२॥

इच्छाके अनकूल सुखद मज्जन करवायो ।
कोमल वसन अनूप बहुरि श्री अग अगुछायो ॥
अपर सहचरी केस हस्त लीन्हे मुद पावै ॥श्रीराधे॥
हम सिगरी कर जोरि सीस नय विनै सुनावै ॥१५३॥

महाराज जौ आप खडे होवैं करुणा करि ।
तौ हम लहै अनद विसद साटी श्रीअग धरि ॥
श्रीइच्छा पहिचानि किये ठाढे चहुँदिसि लगि ॥श्रीराधे॥
साटी अमल अनूप विसाखा पहिराई पगि ॥१५४॥

पहुँच्यौ आय विमान वनिक अतिसै सुखदाई ।
देखत बनै सरूप जात नहि क्यौं हू गाई ॥
सभाकुज आकार बन्यौ मनि काम अलेखा ॥श्रीराधे॥
लहै खेचरी चाल तासु मै इहै विसेषा ॥१५५॥

दोऊ कुज के मध्य उतरि लाज्यौ मगलमै ।
मो सों कह्यौ सुनाय सहचरी समाचार लै ॥
या ठौरीतें रचे पावड़े सखियन जानौ ॥श्रीराधे ॥
जो विमान के मध्य सिंघासन तह लगि मानौ ॥१५६॥

श्रीस्यामा जू उतरि पावड़े चरण पधारे ।
चहू ओर हम आदि किये मडल सुखभारे ॥
स्नान कुज के द्वार निकट श्रीजू जब आई ॥ श्रीराधे ॥
वरन वरन पोसाक लिये सहचरि मन भाई ॥१५७॥

पुष्प सुभग बधूक सोइ रग चित्त सुहायो ।
कटि घाघरौ अपार प्रभा सो लै पहिरायो ॥
उत्तरीय सो रग कठ लौ ओढि सुहावै ॥ श्र राधे ॥
पाछै सहचरि केस हस्त लीन्हे सुख पावै ॥१५८॥

कोउ लीये वर छत्र सीस चामर दिसि दोऊ ।
सूरजमुखी विभाग उभै लीन्हे कर कोऊ ॥
मोरपख आकार लगी मनि नाम मोरछल ॥ श्रीराधे ॥
दूनो ओर विलास करे पाछे आली कल ॥१५६॥

बाजे भाति अनेक मिलें स्वर मद सुहावै ।
जै श्रीराधे नाम कहै सखि मगल गावै ॥
सहचरि मडल मध्य प्रिया जू ऐसें आवै ॥ श्रीराधे ॥
उमगि सहेली सुमन अजली हसि वरषावै ॥१६०॥

सुखमा सिंधु अपार लहरि आली छबि छाई ।
जो विमान के मध्य सिघासन ता ढिग आई ॥
मगल शब्द उदोत भयो श्रीराधे नामा ॥ श्रीराधे ॥
श्रीस्यामा जू जबै कियो तापै विश्रामा ॥१६१॥

चहू ओर सहचरी सुभग तकिया बहुलावैं ।
दच्छ बाहु श्रीऊरू दच्छ तिन लागि सुहावैं ॥
भोर समै कछु स्वल्प शीत को रूप विचारैं ॥ श्रीराधे ॥
हरित वरन पट सुखद अपर श्रीअग सुधारैं ॥१६२॥

वाम चरन कर लिये इदुलेखा सहरावैं ।
रगदेवी कर वाम दियो पट चित्र दिखावैं ॥
मस्तक घूमै स्वेत छत्र लखि इदु लजैं तिहि ॥ श्रीराधे ॥
कोऊ मोरछल चमर अपर बहु सौज खरी गहि ॥१६३॥

केश हस्त लै सखी खड़ी पाछे सुख पावैं ।
अपर मुकुर कर विमल तथा सनमुख दिखरावै ॥
राग रागिनी भेद समै लखि चतुर उचारैं ॥ श्रीराधे ॥
गौर अग छवि सिंधु लहरि भरि नैन निहारै ॥१६४॥

पीय निकट अब सुनौ सहचरी जो सुख पावैं ।
सेवा समै विचारि करै तन मन तह लावै ॥

नीर समै अनकूल सहचरी ताहि सवारै ॥ श्रीराधे
अतर अमोल अनूप कोऊ लै भाजन धारै ॥१६५॥
उनमई सुख रूप सखी रचि ताहि बनावै ।
समाचार हम निकट आयने सकल सुनावैं ॥
मैं सनमुख कर जोरि विनै बहु भाति जनाई । श्रीराधे
महाराज श्रीअग अतर लावै जिय आई ॥१६६॥

निज भक्तन सुखदैन लाल जिय मै सो धारी ।
बलि बलि करै प्रणाम सबै अति कृपा निहारी ॥
प्रथम भूमि त्रय वार छिरकि पुनि मस्तक नावै ॥ श्रीराधे ।
अग अग हम आदि मजु गति विहसि लगावै ॥१६७॥

केस देस मै लगी विसाखा दच्छ भुजा धरि ।
रगदेवि भुज वाम हृदय चित्रा आनद भरि ॥
तुगविद्या दिसि पृष्ठिरगी अति मोद बढावै । श्रीराधे ।
चपकलता सुजान इदुलेखा पद लावै ॥१६८॥

श्रीजुग चरणसरोज सुदेवी तन मन दीन्हे ।
सबहो वचन विनोद कहै सुनि तिहि रसभीन्हे ॥
उनमर्दन अनुकूल वरण सुभगध अनेका ॥ श्रीराधे ॥
जो जाहा अग रहीं लगावैं सहित विवेका ॥१६९॥

श्रीअग अति सुकुमार सखी अतिसै परवीनी ।
छिन छिन बाढै मोद उभै दिसि सौ विधि कीन्हीं ॥
नीर विमल जुत गध समै अनुकूल सुहावै ॥ श्रीराधे ॥
भरि झारी चहुँ ओर सखी कर लिये लम्बावै ॥१७०॥

मै भाखी कर जोरि प्रभू आली जिय भावैं ।
श्रीआज्ञा जो होय सुखद अस्नान करावैं ॥
दग अबुज की सैन पाय बलि मस्तक नावै ॥ श्रीराधे ॥
मजुल पट कर पहरि अग धोवै सुख पावै ॥१७१॥

अपर सहचरी धार देत झारी रूख जानी ।
नीकी भाति सुधारि अङ्ग सेवै सुखदानी ॥
लै कोमल जल भोन वसन श्रीतन अगुछावैं ॥ श्रीराधे ॥
केस भार अतिलब आलिमा सोधि गवावैं ॥१७२॥

करी विसाखा विनै आप नो ठाढे हूजै।
धौत वस्त्र कटि देस धरै उपरना दूजै ॥
चहूँ ओर सहचरी अग लगि ठाढे कीन्हे ॥श्रीराधे॥
अरुन वरन सुभ चीर उभे ते श्रीअग दीन्ह ॥१७३॥

सुखद पावडे रचे सखिन छाते विमान लौ।
प्रीतम हिय दृग चाह प्रिया मुख सुधापान कौ ॥
जानि हियै को भाव कियो मडल चहुफेरी।श्रीराधे॥
स्नान कुज के द्वार निकट ठमके कछु वेरी ॥१७४॥

धोती अरुन अनूप उपरना अपर सजाये।
पाछै सहचरि केस लत्र लीन्हे कर भाये ॥
स्वेत छत्र श्रीसीस चमर घूमै दोउ ओरी ॥श्रीराधे॥
अग्र उभै रविमुखी मोरछल पृष्टि सुढारी ॥१७५॥

बाजे विविध प्रकार सखिन एकै सुर कीने।
मगल नाम उचारि राग गावत गति झीने ॥
सहचरि मडल मध्य भये बाहिरि पग धारै ॥श्रीराधे॥
जय जय मगल शब्द सहेली हरखि उचारै ॥१७६॥

हस्ती हस लजात मदगति पिय पग धारै।
वरखैं अजलि सुवन सखी सो छवि उर धारै ॥
एक सखी अतिचतुर जाय आगे सुधि देवै।श्रीराधे॥
श्रीललिता तिहि देहि निछावरि सिरकर लेवैं ॥१७७।

अपनो भाग्य सराहि द्वार पुनि वेगी आवै।
श्रीस्यामा छवि हिये पीय लखि अति सुख पावै ॥
धारै जुगल सरूप अचल उर नेह नवीने ॥श्रीराधे॥
यापै मेरौ मोह अधिक सो मो पद लीने ॥१७८॥

लाल निकट अति जानि कहै सो समाचार सब।
पुष्प थार सग लियें द्वार हमहू आवैं तब ॥
देखि स्याम कौ रूप नैन अरझे नहि डोलै ॥श्रीराधे॥
करि करि विविधि प्रनाम सुवन वरखैं जय बोलै ॥१७९॥

प्रीतम श्रीकर हस्त धारि नय भीतर ल्यावैं।
अरस परस दृग मिलै अचल पद गति नहि पावैं ॥

कछू वार इमि रहै दोऊ धरि धीर निहारै ॥श्रीराधे॥
जुगल रूप निधि उमग सहचरी लहरि सभारै ॥१८०॥

कहैं विसाखा बैन छत्र दिसि डीठि न दीजै।
बिसरि गइ मग चाल अबै आरभ कहीजै॥
सकुचि पीय जिय माहि लखैं सखियन की ओरी ॥श्रीराधे॥
जय भाषै वलिहारि दोउ ओरी तृण तोरी ॥१८१॥

लटकि चलै दै दच्छ सिघासन सनमुख आये।
नैन पिया से निकट प्रिया छवि सुधा सनाए॥
श्रीस्यामा हसि बाह गही पीतम अ ग डोलै ॥श्रीराधे॥
महाराज सो पान धरै पग हम सब बोलै ॥१८२॥

रसिकराय पिय जाय सिघासन बैठे जबही।
जय, जय राधाकृष्ण जुगल जय उचरैं सबही॥
जुग सरूप के मध्य स्वल्प तकिया दीरघ धरि ॥श्रीराधे॥
वाम अ ग पिय उठकि भए अभिमुख आनद भरि ॥१८३॥

अल्प शीत पहिचानि हरित पट सुभग उठायो।
श्रीस्यामा अ ग दच्छ सहारैं तकिया लायो॥
पीतम हूँ तन वाम भार उपवर्हण दीन्हे ॥श्रीराधे॥
तु गविद्या पिय दच्छ चरन सेवत कर लीन्हे ॥१८४॥

तकिया हू पर बाह परस्पर मिलि करतें कर।
अपर जुगल श्रीहस्त चित्रपट लखै सोई वर॥
पीय केस कर लिये सहचरी विहसि सुखावै ।श्रीराधे॥
दोऊ ओर सिर छत्र मोरछल चमर सुहावै ॥१८५॥

नृत्य करैं सहचरि सारी सनमुख रसभीनी।
बाजे मजुल बजैं राग गति लै सुर झीनी॥
लहि प्रबध को अ त सखी झुकि तोरैं तानैं ।श्रीराधे॥
नित्यविहारी जुगल विहसि ओढग सनमानै ॥१८६॥

तबही उठ्यौ विमान जानि रुख जुगलविहारी।
सहचरि वरषै कुसुम कहै जय, जय बलिहारी॥
वापी कूप तडाग बाग उपवन आरामा ॥श्रीराधे॥
सरिता सर गभीर कज फूले अभिरामा ॥१८७॥

डोलै मद समीर लता लोलै द्विज बोलै ।
कौतुक भाँति अनेक लखै दंपति सुख सोलै ॥
मंद मंद गति जान चलै रुख लै मुसकाई ॥श्रीराधे॥
यह नीकी हमि वस्तु परस्पर कहै लखाई ॥१८८॥

झोक वायु की लगै अलक उडि मुख पर आवै ।
चितै परस्पर अरुझि चित्त कर गहि सुरझावै ॥
चलन विवस कर हलै केम कोउ नेक तनाई ॥श्रीराधे॥
दोऊ ओर दृग सिकुर सुभग नासा मी गाई ॥१८९॥

तबै दंतकी पंक्ति खुलै लखि चख झपि जाँहीं ।
तैसे हीं रहि जात उभै छवि माँहि समाँहीं ॥
सबै सहचरी वृन्द सिंधु सुख थाह न पावै ॥श्रीराधे॥
बहुरि उमगि धरि धीर खोलि दृग अहा सुनावै ॥१९०॥

अहा शब्द सुनि श्रवन सकुचि दृग दंपति खोलै ।
लखै परस्पर रूप छटा छवि डीठि न डोलै ॥
अपनी अपनी अलक नापि लघु दीरघ भाखै ॥श्रीराधे॥
हेरि सखिन की ओर कहै यामैं ए साखै ॥१९१॥

नित्यविहारी जुगल नैन ताही रस भीने ।
करुणा कोर कटाक्ष लेस हमरी दिसि दीन्हे ॥
सो सुखमा उर धारि वारि तन मन सिर नावै ॥श्रीराधे॥
जय बोलै मनि शब्द कुसुम अंजलि वरखावै ॥१९२॥

श्रीस्यामा जू कृपा जासु पर पूरी करहीं ।
गोपेश्वर दृढ नेम तेई यह सुख अनुसरहीं ॥
साधन जतन उपाय वेद बहु भाँति बतावै ॥श्रीराधे॥
एक एक सौ वार करै हठि सिद्धि लहावै ॥१९३॥

विना कृपा लवलेस देस सो हाथ न आवै ।
इहै सर्व सिद्धांत सार निर्धार कहावै ॥
कृपापात्र जिमि होय जतन ताकी यह एका ॥श्रीराधे॥
कहि आये अब कहैं करै सो सहित विवेक ॥१९४॥

गोपेश्वर सुख सिंधु मगन ह्वै सीस नवायो ।
प्रेम पुलकि भरि नैन जोरि कर गुरुमुख चाह्यो ॥

देखि रहे कछु वार कह्यौ चाहत नहि कहहीं ।।श्रीराधे।।
पूरन कृपा निहारि विवस्ता सब अग लहहीं ।।१६५।।

चपकलता सुजानि जानि सो रीति अनोखी ।
मद विहसि कुकि हस्त गह्यौ कहि वचन सुपोखी ।।
अरी नैन पट खोल भटू हम जानी चोखी ।।श्रीराधे।
गोपेश्वर धरि धीर कहौ जो हिय कछु घोखी ।१६६।।

सकुचि सीस पद नाय वचन बोले सुखरूपा ।
अहौ नाथ मै धन्य धन्य श्रीकृपा अनूपा ।।
दुर्लभ को अस वस्तु हस्त गत होय न सोहै ।।श्रीराधे।।
श्रीगुरुचरण सरोज रेणु सिर धारत ज.है ।।१९७।।

सकल भाँति जन ताप मेटि निज सम सुख देहू ।
या ही तें अति उच्च गुरू पदवी जग लेहू ।।
श्रीमहिमा को कहै बुद्धि को ऐसी पावै ।।श्रीराधे।।
दीनबन्धु श्रीनाम चित्त अति मोद बढावै ।।१६८।।

महाराज श्रीवदन कथनि सरिता सुख पूरी ।
अकस्मात् सन्देह मिटैं मुद उपजत भूरी ।।
श्रीमुख ते जो सुन्यौ कृपा श्रोपद कछु जान्यौ ।।श्रीराधे।।
अल्प बुद्धि अति मद सक मन मै अस आन्यौ ।।१६६।।

आप कही वहु गाय कुज सुख पुज अनूपा ।
मडल भेद विचित्र सुथल सो जान्यो रूपा ।।
कौन समै व्यापार कुज कौ नीक्स हो हो ।।श्रीराधे।।
सो कहियै करि कृपा बुद्धि मेरी दिसि जोही ।।२००।।

भूषन वसन अनेक रग नाना विधि गाये ।
पुष्पनहू की जाति वर्ण बहु भाँति सुहाये ।।
चदन वस्तु अनेक मिले सो तथा देखिये ।।श्रीराधे।।
जे जे सेवा सौंज भिन्न आकार लेखिये ।।२०१।।

मिश्रित भयें विचित्र चित्र जे अहै पदारथ ।
जा ऋतु मै जो रीति भेद विधि होय जथारथ ।।
अपनी रुचि के किये चित्त निश्चै नहि पावै ।।श्रीराधे।।
सेव्य हियें कछु वृत्ति और यह अपर करावै ।।२०२।।

तौ सेवा सुखपूर उभै दिसि कैसे मानै।
सकल भाँति सरवज्ञ आप हिय की सब जानै।।
अल्प बुद्धि अविवेक बहुत समै मन परई।।श्रीराधे।।
लाज प्रतिष्ठा भीति गहै नहि कारन सरई।।२०३।।

नीति अनीति विचारि यथा अनुसासन होई।
मुख्य हमारौ धर्म सीस धरि करिब सोई।।
गोपेश्वर के वचन सुने अतिसै सुखपायो।।श्रीराधे।।
श्रीललिता लखि प्रश्न अग मन मोद बढायो २०४।।

सकल सखिन की ओर कोर दृगकज निहारै।
सरद विनिंदित कमल वदन हसि वचन उचारै।।
अए प्राण आधार सबै याकी विधि हेरौ।।श्रीराधे।।
पूरण लह्यौ प्रमाद हियें श्रीस्यामा केरौ।।२०५।।

विजन विविधि बनाय खवावै जौ काहू रचि।
ता मुखते रस भेद सुनै तौ होय सफल पचि।।
सेवा विधि अति प्रीति सुनी गुनि हिय इनु राखी।।श्रीराधे।।
सत्य सत्य महाराज सखिन बानी असभाषी।।२०६।।

बाढ्यो अति उत्साह तासु को उत्तर भाखैं।
जिनै प्राणप्रिय भक्त करें पूरी अभिलाषैं।।
गोपेश्वर मम प्राण सुनौ या को जो भेदा।।श्रीराधे।।
अति आनदित होय चित्त नाशै सब खेदा।।२०७।।

प्रथम कुज की रीति कहैं जामैं जो सेवा।
पदभूषन शृगार कुसुम ताहू को भेवा।।
मडल परम निकुज कह्यौ सत कुज बखानी।।श्रीराधे।।
चारि खड मै एक पचविंसति परमानी।।२०८।।

अष्ट दिसा त्रय पक्ति सबै चौबीस गनाई।
मध्य सभा श्रीकुज परम रमनीय लखाई।।
नित्य नेम निसि सैन तहा निश्चै जिय जानौ।।श्रीराधे।।
आजु ईहा पुनि भोर और इमि चारि प्रमानौ।।२०९।।

अष्टदिसा जे कहै अष्ट मडल सुखदाई।
एक एक के मध्य तथा सत कुज गनाई।।

देखि रहे कछु वार कह्यौ चाहत नहि कहहीं ॥श्रीराधे॥
पूरन कृपा निहारि विवस्ता सब अग लहहीं ॥१९५॥
चपकलता सुजानि जानि सो रीति अनोखी।
मद विहसि झुकि हस्त गह्यौ कहि वचन सुपोखी ॥
अरी नैन पट खोल भटू हम जानी चोखी ॥श्रीराधे।
गोपेश्वर धरि धीर कहौ जो हिय कछु धोखी ।१९६॥

सकुचि सीस पद नाय वचन बोले सुखरूपा।
अहौ नाथ मै धन्य धन्य श्रीकृपा अनूपा॥
दुर्लभ को अस वस्तु हस्त गत होय न सोहै ॥श्रीराधे॥
श्रीगुरुचरण सरोज रेणु सिर धारत जाहै ॥१९७॥

सकल भाँति जन ताप मेटि निज सम सुख देहू।
या ही तें अति उच्च गुरू पदवी जग लेहू॥
श्रीमहिमा को कहै बुद्धि को ऐसी पावै ॥श्रीराधे॥
दीनबन्धु श्रीनाम चित्त अति मोद बढावै ॥१९८॥

महाराज श्रीवदन कथनि सरिता सुख पूरी।
अकस्मात् सन्देह मिटैं मुद उपजत भूरी॥
श्रीमुख ते जो सुन्यौ कृपा श्रीपद कछु जान्यौ ॥श्रीराधे॥
अल्प बुद्धि अति मद सक मन मै अस आन्यौ ॥१९९॥

आप कही बहु गाय कुज सुख पुज अनूपा।
मडल भेद विचित्र सुथल सो जान्यो रूपा॥
कौन समै व्यापार कुज कौं नीक्स हो हो ॥श्रीराधे॥
सो कहियै करि कृपा बुद्धि मेरी दिसि जोही ॥२००॥

भूषन वसन अनेक रग नाना विधि गाये।
पुष्पनहू की जाति वर्ण बहु भाँति सुहाये॥
चदन वस्तु अनेक मिलें सो तथा देखिये ॥श्रीराधे॥
जे जे सेवा सौंज भिन्न आकार लेखिये ॥२०१॥

मिश्रित भयें विचित्र चित्र जे अहै पदारथ।
जा ऋतु मै जो रीति भेद विधि होय जथारथ॥
अपनी रुचि के किये चित्त निश्चै नहि पावै ॥श्रीराधे॥
सेव्य हियें कछु वृत्ति और यह अपर करावै ॥२०२॥

तौ सेवा सुखपूर उभै दिसि कैसे मानै।
सकल भाँति सरवज्ञ आप हिय की सब जानै।'
अल्प बुद्धि अविवेक बहुत्त ससै मन वरई।'श्रीराधे॥
लाज प्रतिष्ठा भीति गहै नहि कारन सरई॥२०३॥

नीति अनीति विचारि यथा अनुसासन होई।
मुख्य हमारौ धर्म सीस धरि करिवे सोई॥
गोपेश्वर के वचन सुने अतिसै सुखपायो॥श्रीराधे॥
श्रीललिता लखि प्रश्न अग मन मोद बढायो॥२०४॥

सकल सखिन की ओर कोर दृगकज निहारै।
सरद विनिंदित कमल वदन हसि वचन उचारै॥
अए प्राण आधार सबै याकी दिसि हेरौ॥श्रीराधे॥
पूरण लह्यौ प्रसाद हियें श्रीस्यामा केरौ॥२०५॥

विजन विविधि बनाय खवावै जौ काहू रचि।
ता मुखते रस भेद सुनै तौ होय सफल पचि॥
सेवा विधि अति प्रीति सुनी गुनि हिय इनु राखी॥श्रीराधे॥
सत्य सत्य महाराज सखिन वानी असभाषी॥२०६॥

बाढ्यो अति उत्साह तासु को उत्तर भाखैं।
जिनै प्राणप्रिय भक्त करें पूरी अभिलाषैं॥
गोपेश्वर मम प्राण सुनौ या को जो भेदा॥श्रीराधे॥
अति आनदित होय चित्त नाशै सब खेदा॥२०७॥

प्रथम कुज की रीति कहैं जामैं जो सेवा।
पदभूषन शृगार कुसुम ताहू को भेवा॥
मडल परम निकुज कह्यौ सत कुज बखानी॥श्रीराधे॥
चारि खड मै एक पचविसति परमानी॥२०८॥
अष्ट दिसा त्रय पक्ति सबै चौबीस गनाई।
मध्य सभा श्रीकुज परम रमनीय लगाई॥
नित्य नेम निसि सैन तहा निश्चै जिय जानौ॥श्रीराधे॥
आजु ईहा पुनि भोर और इमि चारि प्रमानौ॥२०९॥
अष्टदिसा जे कहै अष्ट मडल सुखदाई।
एक एक के मध्य तथा सत कुज गनाई॥

तिनके भये विभाग स्वल्प मंडल दस गाए ।।श्रीराधे।।
पंच पंच द्वै खंड तेऊ करि विलग बताए ।।२१०।

चारि दिसा ते चारि मध्य एक मंडल भाई।
एक एक मैं भिन्न भिन्न दस कुंज लखाई ।।
अष्ट कुंज दिग अष्ट मध्य इक सभा बखानी ।।श्रीराधे।।
एक शेष जो रही अनौसर सो परमानी ।।२११।।

दच्छिन दिसि जो अहै बृहत मंडल इमि जानो।
ललित लगीं मनि मुख्य अपर सोभा हित मानो ।।
मंडल ललित अनूप नाम ताको सुखदाई ।।श्रीराधे।।
मेरे सो आधीन तासु सेवा मैं पाई ।।२१२।।

हरित बरन मनि मुख्य अपर सुखमा के हेतू।
मंडल सो नैरित्य कोण है अति सुख सेतू ।।
मंडल हरित बखानि नाम ताहू कौ गावै ।।श्रीराधे।।
अहै विसाखा हस्त तहां सेवा ए भावै ।।२१३।।

पश्चिम दिसि जौ लखौ बृहत मंडल सुखदाई।
पीत बरन मनि मुख्य अपर सोभा हित लाई ।।
मंडल पीत उचार नाम इत लेवै सबही ।। श्रीराधे ।।
चंपकलता प्रधान तहां सेवा इन निबहीं ।।२१४।।

मंडल जो वायव्य कोण द्दखो अतिभारी।
सकल रंग मनि जरी बराबरि चित्रित सारी ।।
मंडल चित्र अमोल नाम ताको इत कहहीं ।। श्रीराधे ।।
चित्रा अधिपति तहां एई सेवा सुख लहही ।।२१५।।

उत्तर दिसि अति विमल बड़ो मंडल जो गावै।
लसै नीलमनि मुख्य अपर सोभा अधिकावैं ।।
नील नाम अस कहै इतै मंडल सब गाई ।। श्रीराधे ।।
तुंगविद्या अधिकार तहां का सेवा पाई ।।२१६।।

मंडल जुत विस्तार कहै ईसान कोण जो।
स्वेत बरन मनि मुख्य लगी सुखमा अपार सो ।।
मंडल स्वेत प्रमान नाम ताको इत जानौ ।। श्रीराधे ।।
इंदुलेखा हैं मौलि तहां सेवा इन मानौ ।।२१७।।

प्राची दिसि गुण भूरि कहैं मडल जो गाई।
धरा वज आकार मुख्य मनि अपर सुहाई ॥
नाम गुलावी लहै बोध ताको इन करही ॥ श्रीराधे ॥
रगदेवी परधान तहाँ सेवा सुख भरहीं ॥२१८॥

वरनै विमल वखानि वह्नि कोणे वर मडल।
हरिचदन रग मुख्य लगीं मनि सुखद सुमगल ॥
गहैं सदली नाम तासु मडल को इत है। श्रीराधे ॥
सकल सुदेवी हाथ काज सेवा के तित हैं ॥२१९॥

अपर कह्यौ षट्कोण जत्र इनते जो बाहिर।
कोण कोण गत कुज सुने पचासत माहिर ॥
पचासत को प्रथम एक मडल पुनि पचा ॥ श्रीराधे ॥
एक एक मै कुज्ज भनो गनती दस सचा ॥२२०॥

अष्ट दिसा कहि अष्ट मध्य वर सभा बखानी।
अनौकास की एक रीति सब ठौर प्रमानी ॥
जो सेवा जिहि ठाम समै लखि जैसे होइ ॥ श्रीराधे ॥
क्रम पद्धवि सब कहै चित्त दै सुनिये सोइ ॥२२१॥

लै मडल सकेत वार इत अष्ट कहावें।
ललित वार पुनि हरित आठ ऐसे क्रम गावैं ॥
जा दिन जोई वार तासु मडल मे जावें ॥ श्रीराधे ॥
दपति करै विलास सखा सेवा सुख पावै ॥२२२॥

जेहि मडल जो रग वार को नाम जथाही।
ता दिन सोइ रग वसन अग तथाही ॥
ता ऊपर जो रग अभूषन सोभा पाव ॥श्रीराधे॥
नील पीत ते आदि जोग समुझै सुख छावै ॥२२३॥

कुसुम रग ता सग लगे सोभा अधिकाहीं।
या क्रम ते आभरन सुवन पट आतन माही ॥
भोजन समै विचारि सुखद जब जैसे दखै ॥श्रीराधे॥
भोजन विधि व्यवहार सबै दिन ऐसे लेखै ॥२२४॥

षट् मडल षट्कोण जन्त्र पर कहे सुनाई।
षट रितु की षट रीति भिन्न सेवा तह गाई ॥

अष्ट मडल मै रहै सोय जागै दिन माही ॥श्रीराधे॥
तीजे प्रहर विहार हेतु षट मडल जाही ॥२२५॥

जा रितु की जो रीति तेउ मडल षट तैसे ।
सेवै सखी सुजान लहै दपति सुख जैसे ॥
कछू वार तह रहैं सकल सेवा मुद लेही ॥श्रीराधे॥
बहुरि नित्य व्यवहार अष्टमडल चित देहीं ॥२२६॥

विधि क्रम ऐसे कहैं जुगल इच्छा सर्वोपरि ।
रुचि इच्छा पहिचानि सबै सेवै हित सहचरि ॥
जो अपनौ अभिलाष सोऊ विनती करि भाखै ॥श्रीराधे॥
निज भक्तन सुख देहि जुगल जन को मन राखै ॥२२७॥

यामै औरौं हेतु सुनौ सो कहैं बखानी ।
जिन सेवा की रीति गही आछे पहिचानी ॥
ता उर मै निति बसै जुगल अतिही सुखमानी ॥श्रीराधे॥
जो हरिको अणु देइ लेइ सो मेरु समानी ॥२२८॥

तन मन सकल प्रकार जुगल पद जिन उरझायो ।
अचरज यामै कहा प्रभू ता उर सुख पायो ॥
भक्त कृष्ण कौ हृदय कृष्ण हिय भक्त कहाव ॥श्रीराधे॥
शिव चतुरानन व्यास भक्त यह बात दृढावै ॥२२९॥

तौ अपने मन माहि जबै जैसी रुचि होई ।
हृदय विराजै जुगल प्रेरना तिनकी सोई ॥
ऐसे सेवा रीति होय सब दिन सुखभारी ॥श्रीराधे॥
इच्छा रुचि दोऊ ओर एक जानौ निरधारी ॥२३०॥

परम निकुज स्थान कह्यौ सतकुज खड चौ ।
रैन तहा नित सैन भोर पुनि रीति वहै सा ॥
प्रात समै उठि चलै दिवस मडल सखि भाखै ॥श्रीराधे॥
जुगल परस्पर हेरि प्रेम तिनको मन राखै ॥२३१॥
दपति कृपा कटाक्ष करै जा मडल ओरी ।
सबै सहचरी सिमिटि सुखद सेवै तिहि ठौरी ॥
सेवा को मुद देहिं सोई अपनो हित भावैं ॥श्रीराधे॥
सरिता प्रेम प्रवाह उभै परि नेम बहावै ॥२३२॥

ललित वसन वर आँजु जुगल श्रीअंग सुहावें।
सेवा सकल प्रकार ललित मंडल की गावें॥
नित्यविहारी जुगल सदा मेरे पद दीन्हा।।श्रीराधे॥
मै ललिता अस नाम तासु पूरो फल लीन्हा।२३३॥

पानदान कर लिये चवर पाछे जो ठाढी।
स्यामानुगा सुनाम प्रीति ललिता पद गाढी॥
तिन विमान की बात सुनी अलक अरुन्धा छाना॥श्री राधे॥
ताहा छवि सनि रही कही मुख तैसी बानी।।२३४॥

एहा मीति विमान नाति गति मजु चलौ छिन।
अरुझि रहे मन केस ठमकि छवि दृखि रहौ छिन।
श्रीललिता जू कान परी बानी अति प्यारी। श्रीराधे॥
नेक मुरकि दृग कोर तासु की ओर निहारी।२३५॥

तिनहूँ जय धुनि करी सीस नय भाग्य मनायो।
श्रीचित्रा सो भाव प्रगट बानी वर गायो॥
महाराज अब जान रीति सुनिवें अभिलाखा॥श्रीराधे॥
यह सेवा सर्वत समुझि पायो सुख लाखा॥२३६॥

श्रीललिता सो बात सुमिरि हिय अति सुख भींजीं।
श्रीचित्रा दिसि हेरि कही तुमपै मै रीझी॥
शिष्टाचार प्रचार भयो सबही सुख पायो॥श्रीराधे॥
अस जीहा वर नाम उचारि श्रीपद सिर नायो॥२३७॥

गोपेश्वर की ओर हेरि हसि प्रेम लखायो।
पुनि विमान को भाव कहन मन मोद बढायो॥
आली री सब सुनौ जुगल ऐसे रस भीने॥श्रीराधे॥
मद मद गति यान चलत वन के सुख लीन्हे॥२३८॥

दोय दंड दिन चढ्यौ जानि विनती मैं कीनी।
महाराज शृंगार समै वेला सुखभीनी॥
करै सबै अभिलाष भरै उत्कंठा मन मै॥श्रीराधे॥
नीकी भाँति सिंगार लखै ए चख श्रीतनमै॥२३९॥
सदा भक्त सुख देन करै सब विधि आचरना।
श्रीइच्छा रुख जान परी हम तबहीं चरना।

अष्ट मडल मै रहै सोय जागै दिन माही ॥श्रीराधे॥
तीजे प्रहर विहार हेतु षट मडल जाही ॥२२५॥

जा रितु की जो रीति तेउ मडल षट तैसे ।
सेवै सखी सुजान लहै दपति सुख जैसे ॥
कछू वार तह रहैं सकल सेवा मुद लेही ॥श्रीराधे॥
बहुरि नित्य व्यवहार अष्टमडल चित देहीं ॥२२६॥

विधि क्रम ऐसे कहै जुगल इच्छा सर्वोपरि ।
रुचि इच्छा पहिचानि सबै सेवै हित सहचरि ॥
जो अपनौ अभिलाष सोऊ विनती करि भाखै ॥श्रीराधे॥
निज भक्तन सुख देहि जुगल जन को मन राखै ॥२२७॥

यामै औरौं हेतु सुनौ सो कहैं बखानी ।
जिन सेवा की रीति गही आछे पहिचानी ॥
ता उर मै निति बसै जुगल अतिही सुखमानी ॥श्रीराधे॥
जो हरिको अणु देइ लेइ सो मेरु समानी ॥२२८॥

तन मन सकल प्रकार जुगल पद जिन उरझायो ।
अचरज यामै कहा प्रभू ता उर सुख पायो ॥
भक्त कृष्ण कौ हृदय कृष्ण हिय भक्त कहाव ॥श्रीराधे॥
शिव चतुरानन व्यास भक्त यह बात दृढावै ॥२२९॥

तौ अपने मन माहि जबै जैसी रुचि होई ।
हृदय विराजै जुगल प्रेरना तिनकी सोई ॥
ऐसे सेवा रीति होय सब दिन सुखभारी ॥श्रीराधे॥
इच्छा रुचि दोऊ ओर एक जानौ निरधारी ॥२३०॥

परम निकुंज स्थान कह्यौ सतकुंज खड चौ ।
रैन तहा नित सैन भोर पुनि रीति वहै सा ॥
प्रात समै उठि चलै दिवस मडल सखि भाखै ॥श्रीराधे॥
जुगल परस्पर हेरि प्रेम तिनको मन राखै ॥२३१॥
दपति कृपा कटाक्ष करै जा मडल ओरी ।
सबै सहचरी सिमिटि सुखद सेवै तिहि ठौरी ॥
सेवा को मुद देहिं सोई अपनो हित भावैं ॥श्रीराधे॥
सरिता प्रेम प्रवाह उभै परि नेम बहावै ॥२३२॥

ललित वसन वर अंजु जुगल श्रीअंग सुहानौं।
सेवा सकल प्रकार ललित मंडल की गानौं॥
नित्यविहारी जुगल सद्म मेरे पद दीन्हौ॥श्रीराधे॥
मै ललिता अस नाम तासु पूरौ फल लीन्हौ॥२३३॥

पानदान कर लिये चवर पाछे जो ठाढी।
स्यामानुगा सुनाम प्रीति ललिता पद गाढा॥
तिन विमान की बात सुनी अलकै अरुझा छानी॥श्रीराधे॥
ताही छवि सनि रही कही मुख तैसी बानी॥२३४॥

एहो मीति विमान नीति गति मंजु चलौ किन।
अरुझि रहे मन केस ठमकि छवि देखि रहौ छिन॥
श्रीललिता जू कान परी बानी अति प्यारी॥श्रीराधे॥
नेक मुरकि दृग कोर तासु की ओर निहारी॥२३५॥

तिनहूँ जय धुनि करी सीस नय भाग्य मनायो।
श्रीचित्रा सो भाव प्रगट बानो वर गायो॥
महाराज अब जान रीति सुनिवें अभिलाखा॥श्रीराधे॥
यह सेवा सबत समुझि पायो सुख लाखा॥२३६॥

श्रीललिता सो बात सुमिरि हिय अति सुख भींजीं।
श्रीचित्रा दिसि हेरि कही तुमपै मै रीझी॥
शिष्टाचार प्रचार भयो सबही सुख पायो॥श्रीराधे॥
अस जीहा वर नाम उचारि श्रीपद सिर नायो॥२३७॥

गोपेश्वर की ओर हेरि हसि प्रेम लखायो।
पुनि विमान को भाव कहन मन मोद बढायो॥
आली री सब सुनौ जुगल ऐसे रस भीने॥श्रीराधे॥
मंद मंद गति यान चलत वन के सुख लीन्हे॥२३८॥

दोय दंड दिन चढ्यौ जानि विनती मै कीनी।
महाराज शृंगार समै वेला सुखभीनी॥
करै सबै अभिलाष भरै उत्कंठा मन मै॥श्रीराधे॥
नीकी भाँति सिंगार लखै ए चख श्रीतनमै॥२३९॥
सदा भक्त सुख हेत करै सब विधि आचरना।
श्रीइच्छा रुख जान परी हम तबहीं चरना।

ता छवि विमल विमान ललित मंडल के द्वारे ॥श्रीराधे॥
मम अनुशासन पाय उनरि लग्यो हित भारे ॥२४०॥

झनतकार जय शब्द भयो वरनी परमाने।
जे मंडल गत अमित सहचरी हरखी जाने॥
कोलाहल अति छयो हरखवल एरी हेरी ॥श्रीराधे॥
कहैं परस्पर द्वार जान आयो अन टेरी ॥२४१॥

दश मंडल के दोय खंड ते प्राची पश्चिम।
प्राची दिशि जे पंच मध्य तिनमैं जो उत्तम॥
ताहू मैं दिग अष्ट अष्ट वरनी वर कुंजा ॥श्रीराधे॥
आंगन बीच विमान सभाथल है सुखपुंजा ॥२४२॥

सबही मंडल माहि अनौनर कुंज कही भिन।
अष्टदिसा जे अष्ट विलग तिन । सो दच्छिन॥
प्राची दिसि जे पंच कहे मंडल सुखदाई ॥श्रीराधे॥
तिन पाँचन के मध्य अहैं जो मंडल भाई ॥२४३॥

ता मंडल के मध्य सभा वरकुंज बखानी।
ताके उत्तर भाग कुंज शृंगार प्रमानी॥
कोलाहल रव सुन्यो अपर कुंजन जे सहचरि ॥श्रीराधे॥
प्रेम विवस शृंगार कुंज दिसि आवै सखचरि ॥२४४॥

परमानन्द उमाह परस्पर मिलि सुख लेन।
वेगि चलौ री वीर द्वार दंपति छवि देखै॥
मंगल द्रव्य अनेक भाँति सजि थार लिये कर ॥श्रीराधे॥
सुखद पावडे रचे चित्रपट पुष्प लाय वर ॥२४५॥

जुगल चरन अनुराग एक जीवन जिनके नित।
गावत मंगल चार हरखजुत चली यान तित॥
डीठि परयौ जब जान सीस जय जय मुख बोलै ॥श्रीराधे॥
निकट आय सुख पाय दंड इव परै न डोलै ॥२४६॥

उठैं निहारैं रूप प्राण तन सर्व सवारैं।
धूप दीप दै विहसि थार आरती उतारैं॥
चहूँ ओर जय सोर कुसुम वरषैं सुख सरसैं ॥श्रीराधे॥
आनद लहैं अपार सीस दंपति पद परसैं ॥२४७॥

तब सनमुख हम अष्ट आय विनती नय भाखैं।
महाराज शृंगार कुञ्ज चलिवै अभिलाखैं॥
नित्य विहारी जुगल उठ लै नाम परस्पर॥श्रीराधे॥
मडल च्यारयो ओर करैं आठौं लखि अवसर॥२४८॥

उभै ओर लगि च्यारि चतुर पाछु सुख सेवैं।
अपर सहचरी वृंद किये मडल मुद लेवैं॥
जान उतरि सोपान मजु गति भूमि धरे पग॥श्रीराधे॥
कौतुक होन अपार चले शृंगार कुञ मग॥२४९॥

चामर छत्र सुहात मोर छल हंसमुखी ह्वै।
मगल वाद्य मिलाय सखी गावैं हरषित ह्वै॥
रचना कुञ्ज अनूप लखत आवत सुख भारे॥श्रीराधे॥
मगलमय शृङ्गार कुञ पहुचे तिहि द्वारे॥२५०॥

भीतर कियो प्रवेस जहाँ सिघासन सोहै।
वानिकता सुनि हारि धीर को जो नहिं मोहै॥
पाद पीठि लगि खरे अरे वानी विस्तारैं॥श्रीराधे॥
अरस परस हठि कहैं प्रथम पग आप सुधारैं॥२५१॥

एक सग सोपान चरन धरि मोद बढ़ावैं।
अग सहारौ लेहि झुकैं सुखसिधु बहावै॥
मानस करि अभिलाष पूर बैठे रसभीने॥श्रीराधे॥
तकिया मृदुल अनेक सखिन चहुँ ओरी दीन्हे॥२५२॥

धन्य मनावै भाग्य आपनौ धन्य कुज कहि।
दपति जहाँ सिंगार हेत राजै प्रमोद लहि॥
मडल किये अपार सखी ठाढीं चहुँ घाँहीं॥श्रीराधे॥
जुगल माधुरी प्रभा लखै हँसि चित्त सिहाँहीं॥२५३॥
अष्ट अगजा मुख सबै मिलि मतौ विचारै।
अब कीजै शृगार सखिन की ओर निहारै॥
अपर सहचरी चतुर भाव लखि सीस नवावैं॥श्रीराधे॥
जे जे सेवा सौंज थार भरि भरि लै आवै॥२५४॥
ललित वसन तन जानि स्वेत मनि मुक्ता भूषन।
हरित कोर चहुँ ओर जरे नग विमल अदूषन॥

रग भेन बहुभाँति सकल रतनन के गहना ॥श्रीराधे॥
लै आई सहचरी बने नूतन सुभ वरना ॥२५५॥

पीत पुष्प अग मध्य नीलिमा कछू सुहाई ।
तिन कुसुमन के रचे अभूषन थाक लगाई ॥
पुष्प जाति बहुभाँति गूथि आभरन अनेका ॥श्रीराधे॥
आन्ने वसन सुगोप्य किये दै जल को सेका ॥२५६॥

मजुल सकल सुगधि मिलो चदन बहु जाती ।
देखत उपजै मोद तथा भाजन धरि पाँती ॥
लै आई कोउ अतर अपर दरपन अजन वर ॥श्रीराधे॥
स्यामानुगा सुधारि सुभग सिदूर लिये कर ॥२५७॥

जे शृगार अपार पदारथ अति सुखदाई ।
वरन विचित्र बनाय सखी ते हित रचि ल्याई ॥
आय दिखावै सकल देखि हमहूँ सुख पावै ॥श्रीराधे॥
मन मै करै विचार विनै का भाँति सुनावै ॥२५८॥

दिन अभिमानी सखी आय बाहिरते टेरी ।
चारि दड दिन चढ्यौ विनै पहुँचै जन केरी ॥
कान परी वह टेर हेरि श्रीजू हसि कहँहीं ।श्रीराधे॥
ए ललिते धुनि कहा सुनी या दिसि कछु लहहीं ॥२५९॥

मैं पायो अति हर्ष जोरि कर मस्तक नाया ।
महाराज दिन च्यारि दड आयो कहि गायो ॥
बहुरि करी विज्ञप्ति सबै उत्कठित मनमै ॥श्रीराधे॥
मगलप्रद शृगार लखैं ए चख श्रीतन मै ॥२६०॥
मद विहसि भ्रूलता कोर कपी रुख जान्यौ ।
उर बाढ्यौ उत्साह समै शृगार प्रमान्यौ ॥
चहूँ ओर सहचरी खरी भरि नेह सु हीके ॥श्रीराधे॥
जुगल रूपके मध्य कियो अतर पट नीकै ॥२६१॥

रगदेवी सिर नाय लाडिली पाछे ठाढी ।
गई सुदेवी लाल ओर हित की अति गाढी ॥
श्रीजू सनमुख भई विसाखा पियकें सोहै ॥श्रीराधे॥
चंपकलता सुजान प्रिया भुज वाम विजोहैं ॥२६२॥

श्रीपीतम भुज दच्छ गहे चित्रा हित पागी।
ललित लाडिली चरण इदुलेखा अनुरागी॥
तुगविद्या निज नेह पीय पद पद्म लगायो॥श्रीराधे॥
जुगल अग इमि अष्ट परसि अति भाग्य मनायो।२६३॥

अपर सहचरी वृद सौंज लीन्हे रुख देखै।
ता छिन जाको काम जहाते प्रगट सरेखै॥
रगदेवी श्रीकेस सूति वेनो रचि गाथै॥श्रीराधे॥
स्वेत मध्य मनि लाय सुवन नाना नग साथै॥२६४॥

गडा दै दै मध्य पच लर छोर सुहाई।
लर लर झूमक तीनि सुवन मनि रचे लगाई॥
बारहि बार निहारि सुधारैं चित्त अरूझै॥श्रीराधे॥
एरी चोटी बनी अमल सखियनतें बूझै॥२६५॥

श्रेणी है शृगार अग वेनी हठि सेवै।
या ही ते सब ठौर सुजस पुरौ सो लेवै॥
मैं लीन्ह्यौ पट मजु हस्त कछु नीर भिगानौ॥श्रीराधे॥
श्रीमुख मडल पोंछि हियो लखि अधिक जुड़ानौ॥२६६॥

रचना तिलक अनेक भाति रचि सुभग बनाई।
विविपाटी के मध्य रेखा सिंदूर सुहाई।
उभै कपोल न फबे पत्र मकरी छवि लहहीं॥श्रीराधे॥
नैन दया के ऐन रेखा अजन मन गहहीं॥२६७॥

श्रीनासा पर कली स्याम रग चिबुक बिंदु त्यौं।
अलकै दोउ सुधारि कुडली भूत करी ज्यौं॥
हिये पीय को नाम लिख्यौ चदन बहुरगा॥श्रीराधे॥
अगराग अनकूल समै लखि रचि सब अगा॥२६८॥

चपकलता प्रवीन जुगल भुज तिलक रचाये।
श्रीविविचरण सरोज इदुलेखा त्यौं भाये॥
रगदेवी भरि रग लखै बेनी की ओरी॥श्रीराधे॥
वस्तु अनूप हु होय लगे श्रीअगन थोरी॥२६९॥

अग रच्छा की रीति कचुकी ललित सुरगी।
कठ बाहु कटि देस हिये सो फबी अभगी॥

तापर बँधी सुहात काछनी रग अनेका ॥श्रीराधे॥
जा ढिंग जो सुख देत रग पचरग विवेका ॥२७०॥

जो जाही अग रही सखी भूषन पहिरावैं।
श्रीजू की रुचि जानि आप सोई सुख भावैं॥
किंकिणि जाल अनूप काछनी पर मैं लाई ॥श्रीराधे॥
स्वेत हरित मनिमई बद्धिका हिय पहिराई ॥२७१॥

कठसूत्र सौभाग्य तथा लर द्वि तृ पचा।
सप्त इकादस लसैं बडी छोटी सुख सचा॥
चौकी बद्धी मध्य पृष्ट हिय झूमक दोहैं ॥श्रीराधे॥
लगी धुकधुकी लरन प्रथक तेऊ अति सोहैं ॥२७२॥

कठ चरण परिमान बृहत वनमाल विराजै।
ताकी रचना देखि कहत अतिहीं मति लाजै॥
बन्दी वेना सीस फूल वर मौक्ति सजे हैं। श्रीराधे॥
कुडल मकराकार श्रवन ढिग दोउ लगे हैं ॥२७३॥

करनफूल श्रुति छिद्र उभे झूमकगत लोलक।
अलक अटक मन लाल जाल प्रतिबिंबक कपोलक॥
श्रीनासा पुट वाम लसै नथ वेसरि दच्छिन ॥श्रीराधे॥
कुसुमाभरन विभूषि चित्र गति देखि रही छिन ॥२७४॥

चपकलता सिंगारि पच बाजू भुज दोऊ।
एक मध्य द्वै बगल हेठ ऊपर जुग सोऊ॥
हस्त पृष्ट मनि स्वेत हरितमय श्रीकर चूरी ॥श्रीराधे॥
ककण पहुँची वलय पछेली छनी रूरी। २७५॥

ता आगै करपूर्ण दसौ अगुरी छवि छापै।
सुवन फवे जा भाँति जात सो कहि कहु कापै॥
चपकलता निहारि वारि निज कर श्रुति लावै ॥श्रीराधे॥
ऐसें ही सब सखी निरखि हरखै सुख पावै ॥२७६॥

इदुलेखा श्रीचरण जुगल भूषन पहिराये।
बिछुवा औ पदपर्ण तथा पायल मन लाये॥
ता ऊपर शृखला तासु पर जे हरिधारी ॥श्रीराधे॥
पुष्प रचे बहु भाव पेखि नयनै बलिहारी ॥२७७॥

अरुणवरन पट सीस बार द्वै फेरि उठायो।
छोर उभै अति चित्र लागि भुज दोऊ सुहायो।
सीत स्वल्प उनमानि रूम पट तूमी जोड़ा ।श्रीराधे।
सोऊ मौलि उठाय बगल दोऊ दिसि मोड़ ।२७८।।

जो पीतम हिय कज तासु प्रतिबिंब अपर वर।
सो मैं अधिक बनाय मोद हित दियो प्रिया कर ।।
दरपन विमल सुधारि बृहत आगें लै धारयौ।श्रीराधे।।
श्रीप्यारी निज रूप आपनो तहाँ निहारयौ ।।२७९।।

नखसिख लौं अग देखि सखिन की सेवा मानी।
सकल ठौर शृंगार भलौ इन कियो प्रमानी
हमहु जिय भय मानि जोरि कर हिये विचारै ।श्रीराधे।।
बारहि बार मनाय प्रिया पद कमल निहारै ।२८०।।

इतने हीं मैं मन विहसि श्रीजू हम ओरी।
दया अमीरस पूरि हेरि दृग मोद दियो री ।।
श्रीमुख वर पुट ओष्ठ हले मगल धुनि हेतू।।श्रीराधे।।
दत छटा प्रस्तार भयो मानौ सखि खेतू।।२८१।।

मुद मगल कल्यान श्रेय सुभ हित जस खानी।
सुधा सार सुख भार सने प्रगटी असवानी ।।
मेरे मन अनकूल सदा तुमरौ आचरना ।।श्रीराधे।।
अचरज यामैं कहा अङ्ग अङ्गी कहि वरना ।।२८२।।

धन्य तिहारे हस्त करै ए ऐसी रचना।
तौई तौ वस मोर करौ मूढी मन कसना ।।
बार बार सिर नाय परै हम श्रीजू चरना ।।श्रीराधे।।
भरि भरि नैन निहारि वारि बलि तोरै तिरना ।।२८३।।

स्वेत छत्र श्रीसीस फिरै चामर दोऊ ओरी।
अभिमुख सूरजमुखी मोरछल तेऊ दोरी।
बीच बीच कुसुम वर सखी वरषैं मन हरषैं ।।श्रीराधे।।
अतिसै कृपा निहारि उदधि आनद उर सरसै ।।२८४।।

लाल ओर जे रही सखा देखन इत आवै ।
हमहु पिय दिसि जाय लखै पूरौं सुख पावैं ।।

निकट होय पद वदि सकल शृंगार निहारै ॥श्रीराधे॥
जैसी जा अंग अधिक सजो रचना छवि भरै ॥२८५॥

कहैं परस्पर वचन सखी मन मोद बढ़ाई।
देखो री पिय सीस ललित वर पाग सुहाई॥
प्रथम सुश्वा केस सूनि सब लिये समेटी॥श्रीराधे॥
क्यू बार ते मोरि कराजू रावर फेटी॥२८६॥

अलकै दोउ घुमाय दई श्रवनन के आगे।
ता दिसि री भरि नैन लखौ जिनि है सुख भागै॥
भाल विसाखा खैरि अनूपम रचना कीन्ही ॥श्रीराधे॥
नासा कली कपाल उभै पत्रावलि दीन्ही॥२८७॥

भृकुटि कोर मरोर हियें देखत उपजावै।
भारे नील समुद्र नैन अंजन मन भावे॥
अरुण बिंदु वर चिबुक डीठि पकरै बरजोरी॥श्रीराधे॥
वक्ष लालकै लिख्यौ नाम प्यारी मनु सोरी॥२८८॥

चित्रा चित्र विचित्र जुगल भुज चन्दन लायो।
देखन बनै बनाव चित्त नहिं चलत चलायो॥
अंगराग श्रीचरण तुंगविद्या जुगभायो॥श्रीराधे॥
बड़ भागिनि अनुराग आपनी प्रगट जनायो॥२८९॥

लखौ झुकनि सुठि बनी कुसुंभी फेटा दहिने।
पेंच देत मन पेच लेत गोला जिय गहिने॥
ता ऊपर सिरपेंच कलगी झुकि झुकि हालै॥श्रीराधे॥
करि मनि चित्र अनूप सुवन तुरी जुग जालै॥२९०॥

भाल निकट जो पेच तहाँ समला किन पेखौ।
मोतिन की द्वै लरै पाँति लघु झुमकी लेखौ॥
कान ढिगारै खुले केस दोउ ओरी एरी॥श्रीराधे॥
झूमक बृहत बनाव सुवन मनि झूमै तेरी॥२९१॥

कनक सूत्र वर गाथि मध्य पन्ना जुग भारे।
श्रवनन तेई सुहात भट्टू मोती लटकारे॥
अरी कान पर धरी लरी फूलन की लटकैं॥श्रीराधे॥
कोउ मूंदि मुख हसै हस्त निज अञ्चल पटकै॥२९२॥

अरी वीर जिय पीर होत लखि नामा अ`री।
झूमत विसन्‍ बुलाक ओष्ठ अरुणाई थोरी॥
वागौ ललित अनूप अग लगि चुस्त फव्यौ री।श्राराधे।
जे सकीरण ठाम तहाँ सुगन्द खुल्यो री।२६३।

बाहैं चूरीदार चीनि ऊँची वद झूमै।
पाट बहुत सजाफ हरी बर घेरा घूमें।
सोने सूत सुहात चुन्यो कर मजु भले हैं॥श्रीराधे॥
कठा मुक्ता माल कौस्तुभ पञ्च गले हैं।२६४॥

श्रीभुजदडन मध्य विमल अगद एक भारी।
मोती लर दोउ ओर बधी झूमक लटकारी॥
पहुँची हू मनि स्वेत उभै पहुँचन जुग सोहै॥श्रीराधे॥
दसौं आगुरिन बीच मुद्रिका लखै विमौहै।२६५॥

पीत वरन कछु झलक लखी जामा के भीतर।
चित्रा दावन पाट टारि देखै सोभा घर॥
कटि प्रदेस तें जुगल गुल्फ लौं रग बसती॥श्रीराधे॥
ऊरु जानु सुरुवार चुस्त सो पेखि हसती॥२६६॥

जरी स्वेत मनि छला दसौ अगुरी श्रीपद जुग।
श्रीगुल्फन के हेठ लरी मुक्ता बाँधी युग॥
ता ऊपर लर उभै कुसुम की झूमक लटकैं॥श्रीराधे॥
अरझि रहै दृग हेरि सखी मन षट पद अटकै॥२६७॥

पीत बरन चौकोर चित्र रुमाल सीस पर।
तूसी रग अनूप दुसाला फव्यौ अधिकतर॥
श्रीश्यामा हिय कज अपर प्रतिबिंब तासु जौ॥श्रीराधे॥
दच्छ हस्त पिय गहैं लखै जिय प्राण प्राण सो।२६८॥

दरपन विमल बिसाल विसाखा सनमुख देहीं।
नखसिख निज श्रृगार पेखि पीतम सुख लेहीं॥
महाराज श्रृगार आजु अतिसै छवि भारी॥श्रीराधे॥
धन्य हमारौ भाग्य सफल दृग होत निहारी॥२६९॥

तब लाला हसि मद हेरि मृदु वचन प्रकासे।
मगल मोद कदब सखी मन कज विकासे॥

ललिते कहौ सिगार आजु प्यारी तन का है ॥श्रीराधे॥
उत्कंठित मम चित्त नैन चाहत एला है ॥२००॥

ता छिन ताही ठौर बिसाखा घूमत आई।
नीके नैन निहारि प्रिया छबि उर धरि लाई॥
सो मेरे ढिग आय हस्त मम निज सिर लाए ॥श्रीराधे॥
धन्य एई करकंज बार बहु कहि तिन गाए ।२०१॥

जानि परयौ सो हेत लाल जिय अति अकुलाने।
अंतरपट दिसि हेरि बहुरि मो ओर लखाने॥
ललिते वेगि उपाय करौ प्यारो लग जाई ॥श्रीराधे॥
मैं हूँ समय विचार चली चरनन सिरनाई ॥२०२॥

श्रीश्यामा ढिग जाय चरन बंदे कर जोरी।
सुखमा सिंधु अपार मौन दृग राखे वारी॥
सूरज रस्मी जाल रंध्र ह्वै प्रगट लखानी ॥श्रीराधे॥
सारो पंजर मध्य मृदुल बोली अस बानी ॥२०३॥

चढ़यौ जाम अभिराम दिवस या मैं नहि भोरौ।
करौ भोग शृंगार जतन आली मत मोरौ॥
तबहीं सनमुख आय रंगदेवी सिरनायो ॥श्रीराधे॥
महाराज शृंगार भोग को समै सुहायो ॥२०४॥

मैं भाख्यौ कर जोरि नैन श्रीओर निहारी।
श्री अनुशासन होय देउ अंतर पटटारी॥
श्रीअंबुज दृग पलक हेतु पायो बिलगायो ॥ श्रीराधे ॥
जुगलानंद सरूप सिंधु उमगे सुख छायो ॥२०५॥

मिले परस्पर नैन लखैं पलकैं गति भूली।
एक एक छबि धाम अधिक ए इन समतूली॥
अंग अंग प्रति हेरि मंद हँसि लेत बलैया ॥ श्रीराधे ॥
अरस परस शृंगार सराहत रीझि रिझैया ॥२०६॥

सुनि सुनि सखी सिहात अंग फूली नहि मावैं।
जय जय शब्द उचारि पुष्प बरषै सिर नावैं॥
जुगल माधुरी छटा निरखि आछें उर धारैं ॥ श्रीराधे।
छिन छिन आनंद सिंधु मगन ह्वै लहरि सभारैं ॥२०७॥

ललिते कहौ सिगार आजु प्यारी तन का है ॥श्रीराधे॥
उत्कठित मम चित्त नैन चाहत एला है ॥३००॥
ता छिन ताही ठौर बिसाखा घूमत आई।
नीके नैन निहारि प्रिया छवि उर धरि लाई॥
सो मेरे ढिग आय हस्त मम निन सिर लाए ॥श्रीराधे॥
धन्य एई करकज बार बहु कहि तिन गाए ॥३०१॥

जानि परयौ सो हेत लाल जिय अति अकुलाने।
अतरपट दिसि हेरि बहुरि मो ओर लखाने॥
ललिते वेगि उपाय करौ प्यारो लग जाई ॥श्रीराधे॥
मै हूँ समय विचार चली चरनन सिरनाइ ॥३०२॥

श्रीश्यामा ढिग जाय चरन बदे कर जोरी।
सुखमा सिधु अपार मीन दृग राखे वारी॥
सूरज रस्मी जाल रध्र ह्वै प्रगट लखानी ॥श्रीराधे॥
सारो पजर मध्य मृदुल बोली अस बानी ॥३०३॥

चढयौ जाम अभिराम दिवस या मैं नहि भोरौ।
करौ भोग शृगार जतन आली मत मोरौं॥
तबहीं सनमुख आय रगदेवी सिरनायो ॥श्रीराधे॥
महाराज शृगार भोग को समै सुहायो ॥३०४॥

मै भाख्यौ कर जोरि नैन श्रीकोर निहारी।
श्री अनुशासन होय देउ अतर पटटारी॥
श्रीअबुज दृग पलक हेतु पायो बिलगायो ॥ श्रीराधे ॥
जुगलानद सरूप सिधु उमगे सुख छायो ॥३०५॥

मिले परस्पर नैन लखैं पलकैं गति भूली।
एक एक छवि धाम अधिक ए इन समतूली॥
अग अग प्रति हेरि मद हँसि लेत बलैया ॥ श्रीराधे।
अरस परस शृगार सराहत रीझि रिझैया ॥३०६॥

सुनि सुनि सखी सिहात अग फूली नहि भावैं।
जय जय शब्द उचारि पुष्प बरषै सिर नावैं॥
जुगल माधुरी छटा निरखि आछें उर धारैं ॥ श्रीराधे।
छिन छिन आनद सिंधु मगन ह्वै लहरि सभारैं ॥३०७॥

चपकलता प्रवीन आय चरणन सिर नाय्यो
हस्त जोरि भरि [illegible] श्री [illegible]
[illegible] सील [illegible] श्री [illegible] आवे।
धन्य धन्य जय शब्द [illegible] ३०८।
बहु विधि [illegible] करी [illegible]
महाराज अभिलाष [illegible] सुर [illegible]।
मै हूँ लाज विसारि [illegible] ह्वै [illegible] । श्रीराधे ॥
आवै भोग सिंगार [illegible] सुन्दर ३०९।
अभिप्राय उनमान कियो [illegible]
अमित सौंज शृंगार भोग सजि ते ले [illegible]
सकल सहचरी वृन्द आय हम [illegible] । श्रीराधे ॥
सेवक चतुर विनीत कृपा सबके मन भावें।३१०॥
नित्यविहारी जुगल हियो लखि मै सिर नायो।
तथा विसाखा समुझि काज सोई मन आयो॥
आभूषन श्रीचरण हस्त नासा के लीन्हे॥ श्रीराधे॥
नीर धोय अगुछाय धूप दीपक सुचि दीन्हे॥३११॥
अमल स्वेत मनि थार उभै वर चौकी राखे।
भरे कटोरा सौंज समै जो ता अभिलाषे॥
मेवा अमित प्रकार भेद तिनके बहु भाए श्रीराधे॥
मोदक जाति अनेक रचे सखिजन सुखदाए॥३१२॥
दधि माखन वर दुग्ध रची घेया बहु रीती।
नाना विधि पकवान विमल उपजै लखि प्रीती
चूरन चटनी भेद मुरब्बा सुभग अथाने॥ श्रीराधे॥
त्रिविधि भाति फल सुरस रुचरिजा पापर आने।३१३॥
प्रीति सखिन का ओर देखि विंजन अनपारा।
को पावै कहि अंत चित्त समुझै सुखसारा॥
भरे कटोरा पाति थार धरि उभ सुहाए। श्रीराधे॥
मगल भोजन हेत विनैजुत वचन सुनाए।३१४॥
निज जन अति सुख दैन गिरा सो मन मै आई।
विहसि परस्पर निरखि हरखि कर लै मुख नाई॥

दंपति मोद बढाय वस्तु शुभ व्यंजन खवावत। श्रीराधे।
रूप नाम गुन हेतु सखी कहि पृथक बखानत ॥३१५।
अली बढावै प्रीति पदारथ विविधि बखानी।
युगल स्वाद की रीति कथाविधि कहै प्रमानी ॥
सखियन को लखि हेत टेर सुख देत घनेरे। श्रीराधे ॥
भोजन ममै विनोद अगम जानै जो नेरे ॥३१६।
नाना कथा प्रसंग सहचरी सुनै सुनावै
गूढ हियें रस हेतु भाव द्वै कैनेहु खावै ॥
नित्य विहारी जुगल रक्त हित तृप्ति सुनाई ॥ श्रीराधे ॥
तबै अली सुख पाय पात्र सब लिये उठाई ।३१७।
भाजन अचवन हेत अपर जुगलै वर धारे।
कचन खरिका हस्त दिये झारी जल सारे ॥
दै विशुद्ध हित द्रव्य जुगल अचाए आछै ॥ श्रीराधे ॥
पट दीन्ह्यौ श्रीचरण धोय अगुछाए पाछै ॥३१८॥
चूरन मकल सुगंधि मई धरि उभै कटोरी।
श्रीदंपति कर दई सुखद मुखवास निहोरी ॥
वीरी परम विचित्र स्वेत मनि भाजन धरिकै ॥श्रीराधे॥
सनमुख मै कर लिये खरी निरखो सुख भरिकै ॥३१९॥
हँसि हँसि दंपति लेत मजु कर खान खवावत।
श्रीमुख मंडल मोरि नैन भृकुटी थरकावत ॥
कबहू बचन करत देत नहि जो मुखवावै ॥श्रीराधे॥
सत्य जुगल सुख सिंधु श्रोत अस बहु प्रगटावै ॥३२०॥
ए आनंद झकोर सहचरी छिन छिन पावै।
सेवै जुगल सरूप तासु फल इहै मनावैं ॥
जानैं होत अवार मवारै सुवना भरना ॥श्रीराधे॥
श्रीमुख जुग कर चरण करै रचना बहु बरना ॥३२१॥
अंतर अमोल अनूप अमल सौरभ्य सदन वर।
मनि विचित्र रचि कुसुम सोई भरि दिये जुगलकर ॥
श्रीनासा ढिग ल्याय लेन आमोद परस्पर ॥श्रीराधे॥
ता छिन दर्पन आनि धर्यो सनमुख सुंदर तर ॥३२२॥

तहाँ लख प्रतिबिम्ब [illegible] शृ[illegible] निहार।
अति प्रसन्नता [illegible] मृदु [illegible]
अहो अगाजा [illegible] अपार। श्रीराधे॥
ऐसे श्रीमुख वचन [illegible] तन मन वर ॥३२३॥

समै जानि शृं[illegible] बनइ।
[illegible] रचे मुक्ता वर लाइ॥
[illegible] बरन करपू[illegible] मध्य धरि। श्रीराधे
म[illegible]ल [illegible] प्रसून रचना [illegible]रि ३२४॥

चौकी सनमुख राखि थार नापै सो वारी।
मंगल दीप [illegible] किया करपूर प्रचारी
चहू ओर [illegible] कुसुम अंजलि सुभ लीन्हे ॥श्रीराधे॥
निरखै जुगल मुख [illegible] तन दृग दीन्हे ॥३२५॥

बाजे अमित प्रकार बजे मंगल धुनि नाना।
दंपति सुजस बखानि करे मधुरे सुर गाना॥
मै हूँ दृग भरि हेरि जुगल पद सीस नवाई। श्रीराधे॥
जय जय गिरा उचारि कुसुम अंजलि दरसाइ ॥३२६॥

चहूँ ओर जय शब्द वाद्य वर गान मिली धुनि।
छाइ गई सब लोक वंदना कर उठ सुनि॥
बरसे पुष्प अपार थार मै नय कर चारा ॥श्रीराधे॥
चारि चरन हिय उभ एक श्रीवदन विचारी ॥३२७॥

सप्त वार सर्वांग हरषि शृङ्गार आरती।
अंग अंग छवि हेरि हिये धरि इमि उतारती॥
सो धरनी धरि थार गोय कर पुष्प लिये भरि ॥श्रीराधे॥
जय मंगल धुनि गाय अंजली दई सिरोपरि ॥३२८॥

हरषै वरष सुवन सहचरी जय जय बोलै।
बाहिर कुंज प्रचार करे परिदच्छिन डोलै॥
जुगल बिहारी नाम जीह गाँवे सुख पाव ॥श्रीराधे॥
बारबार भरि प्रेम दंडपरनाम सुभाव ॥३२९॥

भीतर आय बलाय लेई चरनन सिर देहीं।
जुगल माधुरी छटा पेखि सेवा फल लेहीं।

दंपति मोद बढाय वस्तु शुभ खात खवावत ।। श्रीराधे ।।
रूप नाम गुन हेतु सखी कहि पृथक बतावत ।।३१५।।
अली बढावैं प्रीति पदारथ विविधि बखानी ।
युगल स्वाद की रीति जथाविधि कहै प्रमानी ।।
सखियन को लखि हेत लेत सुख देत घनेरे ।। श्रीराधे ।।
भोजन मर्म विनोद अगम जानै जो नेरे ।।३१६।।
नाना कथा प्रसंग सहचरी सुनै सुनावै ।
गूढ हिये रस हेतु ग्रास द्वै कैसेहु खावै ।।
नित्य विहारी जुगल भक्त हित तृप्ति सुनाई ।। श्रीराधे ।।
तबै अली सुख पाय पात्र सब लिये उठाई ।।३१७।।
भाजन अचवन हेत अपर जुगलै वर धारे ।
कंचन खरिका हस्त दिये झारी जल सारे ।।
दै विशुद्ध हित द्रव्य जुगल अचाए आछै ।। श्रीराधे ।।
पट दीन्हौ श्रीचरण धोय अंगुछाए पाछै ।।३१८।।
चूरन सफल सुगंधि मई धरि उभै कटोरी ।
श्रीदंपति कर दई सुखद मुखवास निहोरी ।।
बीरी परम विचित्र स्वेत मनि भाजन धरिकै ।।श्रीराधे।।
सनमुख मैं कर लिये खरी निरखौ सुख भरिकै ।।३१९।।
हँसि हँसि दंपति लेत मंजु कर खात खवावत ।
श्रीमुख मंडल मोरि नैन भृकुटी थरकावत ।।
कबहू वचन करत देत नहिं जो मुखवावै ।।श्रीराधे।।
सत्य जुगल सुख सिंधु श्रोत अस बहु प्रगटावै ।।३२०।।
ए आनंद झकोर सहचरी छिन छिन पावै ।
सेवैं जुगल सरूप तासु फल इहै मनावैं ।।
जानैं होत अवार सवारै सुवना भरना ।।श्रीराधे।।
श्रीमुख जुग त्र चरण करै रचना बहु वरना ।।३२१।।
अतर अमोल अनूप अमल सौरभ्य सदन वर ।
मनि विचित्र रचि कुसुम सोई भरि दिये जुगलकर ।।
श्रीनासा ढिग ल्याय लेत आमोद परस्पर ।।श्रीराधे।।
ता छिन दर्पन आनि धरयो सनमुख सुंदर तर ।।३२२।।

ज[illegible] मण्डल [illegible] वर कुंज बखानी ॥श्रीराधे॥
[illegible] सखिन रचना मन आनी ॥२३०॥

मध्य [illegible] विमल भक्ति [illegible] मन लागा।
[illegible] मृदुल गेंदुवा धरे विभागी ॥
[illegible] अमित ऊपर वर चंदवा ॥श्रीराधे॥
अष्ट [illegible] डोरि लै बाँधी खम्भवा ॥२३१॥

हठ लगीं सोपान पच चहुँ ओर सुहाई।
आन्तरण सब ठोर पेखि मन रहत लुभाई ॥
सायवान सुभ रूप लग्यो बाहिर चौकोरी ॥श्रीराधे॥
छरा पुष्प मनिमाल जाल झूमक लटकोरा ॥२३२॥

सींचे अतर अमोल वायु लै लपटै आवै।
मानमय जिनके अग गुल्म बहु धरे सुहावै।
सभा कुंज शृङ्गार ठाम लौं चित्र सुहाए ।श्रीराधे॥
रचे पानड वमन पुष्प नाना विधि लाए ॥२३३॥

समाचार यह सखिन आय सब हमैं सुनायो।
सुनि विचार मन माहि मोद अतिसै हिय पायो ॥
सास नाथ कर जोरि जानि रुख हमहू भाखै ॥श्रीराधे॥
सभा कुंज श्रीचरण धरै अस जन अभिलाखै ॥२३४॥

नित्य विहारी जुगल सदा निज जन रुचि चाहैं।
उठिबे को उद्योग परस्पर चित्त उमाँहैं ॥
कंध मेलि भुजलता दोऊ अवनी पर ठाढे ।श्रीराधे॥
चहूँ ओर सहचरी किये मडल मन बाढे ।२३५॥

चामर छत्र अमोल मोरछल हंसमुखी कर।
सखी लिये अनुकूल पुष्प बरषै आनद भर ॥
जय जय मगल शब्द वाद्य मृदु गान उचारयो ॥श्रीराधे॥
नित्य विहारी जुगल जबै श्रीचरण प्रचारयौ ।२३६॥

सग सहचरी वृंद अपर कुंजन बहु ठाढी।
बरषै अतर समोय कुसुम निरखै रुचि बाढ़ी ॥
दंपति तिन दिसि हेरि देहि परमानंद भूरी ॥श्रीराधे॥
चलै मंद गति हंस हस्ति मद करत विदूरी ॥२३७॥

सभा कुंज ढिग आय देखि अनसै सुख पायो।
सोई पदारथ धन्य सदा जो श्रीमन भायो॥
चढ़त हरे सोपान देहरी नाघत एरे ॥श्रीराधे॥
कौतुक होत अपार जुगल अरि रहत खरेरी ॥३३८॥
कूकैं कारिल मोर चेल पव पग धारैं।
भुकैं विहँसि लखि मद अग श्रीअङ्ग सभारैं।
ऐसे पहुँचे जाय सुखद सिंघासन पाँहीं ॥श्रीराधे॥
सहचरि चतुर प्रवीन थाँभि श्रीतन हरषाँहीं ॥३३९॥

सुख सरिता प्रस्रव मोद निधि झरना झरई।
दंपति आनंद सिंधु चरन सिंघासन धरई॥
रूप माधुरी उदधि दोऊ तकिया लगि साँहैं ॥श्रीराधे॥
भूषन वसन सवारि सहचरी निरखि विमोहैं ॥३४०।
दीरघ ऊचौ स्वल्प मध्य तकिया जो अहई।
आजू ऊरू दच्छ वाम ऊरू पिय लहई॥
घूँट ऊन्नत वाम प्रिया तापै भुज बाँई ॥श्रीराधे॥
एसे पीतम ओर बैठि बेरीति सुहाँई ॥३४१॥

पीतम को कर दच्छ वाम प्यारी कर मंजुल।
देत लेत वर पुष्प मेलि अगुरा दल संकुल॥
श्रीस्यामा भुज दच्छ वाम भुज पीतम केरी ॥श्रीराधे॥
पाछे तकिया बृहत तहाँ ते अरझि रहेरा ॥३४२॥

अभिमुख जुगल सरूप विमिश्रित तन मन राजै।
उत्तर दिसि श्रीवदन किये शोभा भर भ्राजै॥
सीस जुगल वर छत्र श्वेत अमृत कण छाई ॥श्रीराधे॥
चामर बगलन उभे अवधि सुखमा दरसाई ॥३४३॥

अग्र सिंघासन निकट मोरछल जुग्म सुहाँवै।
सनमुख सूरजमुखी दोऊ तमचय बिलगावै॥
अपनी अपनी ठौर सखा ठाढी सुख सेती ॥श्रीराधे॥
जे जे सेवा सौंज हस्त सोहे तिन तेती ॥३४४॥

चंपक लता प्रवीन संग चित्रा जिनके है।
लगी सिंघासन अग्र खरी दंपति मन तेहै॥

इंदुलेखा को जुग्म तुंगविद्या दोउ बाजू ।श्रीराधे।
पिय प्यारी अति निकट लसै सेवा सुख साजू ॥३४५॥
पाद पीठ के कोण दृष्टि निखि दूजे दाऊ
रङ्गदेवी श्रीप्रिया अङ्ग परसै लता साऊ ॥
तथा सुदेवी जुगल लाल ओरि अति निकटै ॥श्रीराधे॥
ठाढी चाव अपार हिय सेवा रुचि निकटै ॥३४६॥
रंगदेवी वर जुग्म सुदेवी इनको जानौ ।
तिनकी सहचरि मुख्य अष्ट मे एह पमानौ ।
कलकंठी अरु नाम कहै मानेरी ताऊ ।श्रीराधे॥
पाछु खरी सुजान सिंघासन कागी मोऊ ॥३४७॥

ऐसे मंडल किये सहचरी संग लीन्हे ।
जाको जन अधिकार पाँति अनगनना कीन्हे ॥
ठाँढी तन मन दिये जुगल पदपंकज माँहा ॥श्रीराधे॥
सेवा मोन अपार नैन ते लाये सुहाटी ॥३४८॥
अधिपति मुख्य प्रधान हाय ना मडल जाइ ।
ता दिन सभा मनाय नृत्य अधिकारी माई ॥
मडल ललित अनूप इहाँ सो मैं ई राजा ।श्रीराधे।
सहचरि कर्म अनेक एक मेरे बस काजा ॥३४९॥
याही ते लै संग विसाखा हिय हरखानी ।
ठाढी सनमुख जाय भाग्य पूरा निज मानी ॥
अपर सहचरी वृन्द जिन्हैं मेरी गति एका ॥श्रीराधे॥
नृत्य गान वर वाद्य कुशल एकन ते एका ॥३५०॥
वाद्य मिले सुर एक अलप सम लखि करई ।
दंपति होहि प्रसन्न जतन सो मन सब धरई ॥
तबही उठि हम जाय निवारन साम लगायो ॥श्रीराधे॥
लै बलाय कर जारि नृत्य का भाव जनायो ॥३५१॥
आहग अबुज विकसि हार उलटे पग धरि धार ।
मिली आय विज जूथ प्रणात डग डग बहु करि करि ॥
मगल गान प्रबन्ध सप्त सुर तान ग्राम जे ॥श्रीराधे॥
एकविध अस कहैं मूर्छना तान अमित ते ॥३५२॥

उपज अपरन [illegible] सुर [illegible] उदय [illegible]।
वर्त वृत्ति वर [illegible] रचयि ॥
नृत्य भेद [illegible] व
जानी जेस। [illegible] आइ ३५३

देखे सुनै [illegible] प्रसन्न
त्यौं त्यौं मो हिय हरप [illegible] रस नानम
कीन्ही जतन अनेक [illegible] श्रीराधे॥
छाय रह्यो सुखसार चार [illegible] सिंधु [illegible] २५४

जुगल प्रेम [illegible] नतन [illegible] ऐस ।
जा विधि उपजे [illegible] तना ।
नाना तरल तरंग [illegible] करे ।श्रीराधे॥
दंपति हिय [illegible] नव हम [illegible] निहारे ॥२५५॥

तथा विसाखा रीति अलौकिक बहु प्रगटावे ।
श्री प्यारी पिय परखि मोद मन अधिक बढ़ावे ॥
अपर सहचरी वृन्द जथा अभिलाषा जाकी ।श्रीराधे।
नृत्य गान दरसाय रिझाय न राखत बाकी ॥२५६॥

हम सब या सुख मगन नेह मन दसा भुलानी ।
क्रिया कदंब प्रमाण रीझ दंपति फल मानी ॥
श्रीजू मृदुल सुभाव जानि ए श्रमित भई है ॥श्रीराधे॥
निज निज कंठ उतारि माल श्रीहस्त गही है ॥२५७॥

नैन मील के एन सैन दै निकट बुलाई ।
परमानंद समुद्र मझावत हमहू आई ॥
अति ही कृपा निहारि परी चरनन सुख पावैं ॥श्रीराधे॥
बार बार हिय लाय परसि हग सीस लगावैं ।२५८।

उठि उठि लखै सरूप जोरि कर सन्मुख ठाढ़ी ।
माल प्रसाद लई पान बीरा हित बाढ़ी ।
सहचरि सब सनमान पाय सुख सिंधु समानी ॥श्रीराधे॥
धन्य धन्य हम धन्य रहे अति हिय हरखानी ॥२५९॥

अपनी अपनी ठौर पाय विश्राम सुहानी ।
जुगल माधुरी छटा लखै हग प्यासे पानी ॥

राग रंग रस पगे पंच घटिका गति जानी ।।श्रीराधे।।
पावें श्रीजू नीर अनल अन मन हित आनी ।।३६ ।।

अग्रभाग हम आय विसाखा दोऊ ठाढी ।
निरखैं दंपति वदन चाह सोई चित बाढी ।।
जानि हियैं को भाव मंद हँसि हेरि परस्पर ।।श्रीराधे।।
बोले आनंद कंद वचन जन पोषक जलधर ।।३६१।।

यह सेवा की रीति उभै ओरी सुखदाई ।
स्वामी सेवक चाह रूप एकै दरसाई ।।
सत स्वामी मो होय दास कर सर्म प्रमानै ।।श्रीराधे।।
भृत्य नाथ हिय गहै वहै तिन बिन नहि जानै ।।३६२।।

श्रीमुख के अस बैन सुधा धारा सुख सरसे ।
सहचरि अनवधि मोद लहैं श्रवनन हिय परसे ।।
तन मन वचन विचार सार सिद्धांत सदा अस ।।श्रीराधे।।
फनि मनि जीवन जोग जथा दंपति पद हम तस ।।३६३।।

या विधि परम उछाह उभै ओरी अधिकाई ।
नीर पान की जतन करी तबहीं सुखदाई ।।
करन कलूला हेत सखी भाजन कर लीन्हे ।। श्रीराधे ।।
सनमुख ठाढी आय निकट अति रुख गति चीन्हे ।।३६४।।

वर झारी कर लिये अपर सहचरी निहारैं ।
सर्वाधार विनोद सहित जुग हस्त पसारैं ।।
करैं कलूला विसद पानि मुख लै जल डारैं ।। श्रीराधे ।।
आलौं वसन सुगंधि भरयौ दै पोछि सुधारैं ।।३६५।।

अमल स्वच्छ मनि स्वेत रकाबी सुभग सुहाई ।
तापै वस्त्र भिजोय नीर सो दियो बिछाई ।।
हीरक मनि को घटित कटोरा बानिक प्यारी ।। श्रीराधे ।।
निरमल नीरस सीर पूर करि बायें धारी ।।३६६।।

ऊपर धरि सरपोस सखी लै हम ढिग आई ।
एक विसाखा ओर एक मो लगें सुहाई ।।
अपर सहचरी स्वल्प कटोरी चूरन धरिकैं ।। श्रीराधे ।।
बहुत सुगंधित वस्तु गुणद एकी सम करिकै ।।३६७।

अति आनंदित होय रकाबी हम कर धारी।
ऊपर जो सरपोस सखिन सो दियो उघारी॥
छूटैं लपट सुगंध नीर लालच उपजावै॥श्रीराधे॥
देखतहीं दृग हियो ऐंचि अपनी दिसि ल्यावै ६८॥

प्रथम कटोरी दई हस्त श्रीचूरन केरी।
सो मेल्यौ श्रीवदन स्वाद गुण गंध घनेरी॥
ता पाछे मुखचंद्र नीर हित नेक नवायो॥श्रीराधे॥
हम जय धन्य बखानि कटरा ओष्ठ लगायो ३६९।
घूट घूट रस लेत स्वाद तामै सब दरसैं।
जे रुचि हिये उदोत नीर मैं तेई सरसै॥
पीवत भलें सराहि हरख बस मन अस आई।श्रीराधे॥
श्रीकर लिये उठाय कटोरा दोउ सुहाई॥३७०॥
अरस परस मुख लाय पियावत पिये सुखारे।
ता छिन को आनंद कहौं का बनै निहारे॥
जुगल विहारी नित्य करै क्रीडा इहि भाती॥श्रीराधे॥
सकल सहचरी वृंद होय सीतल अति छाती।३७१।
लै भाजन दै वसन जुगल मुख कर अंगुछाई।
बहुरि दिव्य मुखवास दई सो अति मन भाई॥
बीरी रुचिर सुवास वस्तु धरि विसद अनेका॥श्रीराधे॥
चित्र विचित्र अनूप रूप रचि सहित विवेका॥३७२॥

उज्वल हीरा घटित रकाबी वसन झीन धरि।
तापै बीरी राखि चातुरी अधिक प्रगट करि॥
आले वस्त्र विमूंदि सखिन हमरे कर दीन्हीं॥श्रीराधे॥
सहित विसाखा हरषि हस्त दोऊ दिसि लीन्हीं॥३७३॥
श्रीआनन ससि छटा नैन चातक रस पागे।
वर तमोल जुत वदन लखै उत्कंठा लागे॥
छिन छिन जन मन चाह करै पूरी पिय प्यारी॥श्रीराधे॥
मंजुल हस्त उठाय पान लै हसि मुख धारी॥३७४॥
खात खवावत अरस परस अति नेह नवीने।
सरिता प्रेम प्रवाह उमग तन मन दृग भीने॥

देत लेत हठि हेत विनोद प्रमोद विवस हसि ।श्रीराधे।।
नखतावलि रद छटा अरुन रग मनी बनी लसि । ३७५।।
सखी विदूषक वेस विविधि विधि बनिबनि आवै ।
कौतुक भाति अनेक प्रगट करि जुगल रिझावैं ।।
स्यामानुगा प्रवीन वीन अच्छर धुनि गाई ।श्रीराधे।।
सारग राग अलापि समै की रीति जनाई ।।३७६।।
डेढ जाम दिन बिगत भयो ऊपर बीतत अब ।
राजभोग वर समै जानि अति काल कहत सब ।।
मडल ललित अनूप एक तामै दस गाये ।।श्रीराधे।।
पच पच के भाग उभै एहि रीति सुहाये ।।३७७।।
तिन पाचन मै मध्य सोई जा थल अवराजै ।
अपर च्यारि दिसि च्यारि विमल मडल वर भ्राजै ।।
जो प्राची दिग अहै सुभग मडल सुख खानी ।।श्रीराधे।।
सभा कुज ता बीच तहा रचना अधिकानी ।।३७८।।
दिव्य सिघासन धारि बिछौना मृदुल सुहाए ।
अतर सींचि सब ठौर सुखन बहु काम बनाए ।।
बैठे हैं जिहि ठौर तहा तें इतलौ छाए ।।श्रीराधे।।
विमल वितान बनाव पेखि मन अटकि लुभाए ।।३७९।।
झालरि चित्र विचित्र लगी मनि अति झलकाहीं ।
नगमुक्ता वर जाल कुसुम ता मध्य सुहाहीं ।।
लगि झालरि की जौर जाल ते दोऊ ओरी ।।श्रीराधे।।
रहे भूमि लौं लटकि छरी नाना रग सोरी ।।३८०।।
मध्य पावडे पुष्प छौम पट सुखद रचाये ।
राजभोग सुभ साज सकल ता कुज सुहाये ।।
दपति चित्त प्रमोद हेत रचना बहु भाइ ।।श्रीराधे।।
चतुर सहेली आय हम सब ख्यौ सुनाई ।।३८१।।
कीन्ह्यौ चित्त विचार कहैं का जुक्ति बनाई ।
सहसा आतुर वचन कथनि अनुचित प्रभु पाई ।।
सखी विदूषक एक वेस तापस धरि आई ।।श्रीराधे।।
जथा राजगृह जाय ऋषीश्वर विपिन विहाई । ३८१।।

वृद्ध ग्राम च्युत देह गेह तेरैं नृप आयो।
तप सच्यौ बहुकाल अबैं लौं तथा बिनायो॥
मन्दर कन्दर बैठि जोग अष्टाग उपायो ।श्रीराधे॥
इन्द्री वृत्ति समेटि चित्त निरवासित भायो।३८३॥
प्राण सञ्चर करि एक चक्र षट सूधे कीन्हे।
गुरु उपदेशित रूप सुमिरि निज पद मन दीन्हे॥
लागी शुद्ध समाधि बाह्य व्यापार न जानौ॥श्रीराधे॥
का जानी जुग गए किते सौ सत्य प्रमानो।३८४॥
सो समाधि निर्मुक्त भई अबही ततकाला।
क्षुधा वह्नि सतप्त देह मै लखी नृपाला॥
जीह चपल वस दीन हीन मन रस दिसि धावै॥श्रीराधे॥
कीन्ह्यौ बहुत विचार स्वल्प थिरता नहि पावै॥३८५॥
अहो नृपति सिर मौर सुजस नैसै सुनि आयो।
भोजन नाना भाति मिलै मेरे मन भायो॥
विद्या सकल प्रवीन तुगविद्या सुनि बानी॥श्रीराधे॥
सिद्ध निकट सिरनाय बैठि जोरे जुग पानी॥३८६॥
अहो तपस्या धाम देहु वर जो हम चाहै।
पाछे सो तुम कहौ कर यामै सक नाहैं॥
यह कल्पाना सुधा कृपा करि हमकौ दीजै॥श्रीराधे॥
गावैं सुजस तुम्हार अवै वरु सरवस लीजै॥३८७॥
हमरे भाल सुहाग नाम जिनकौ लै राजैं।
चाहत हैं यह वस्तु वीर तिनही के काजें॥
सुनि दंपति प्रिय वचन सखिन हिय भाव अपारी॥श्रीराधे॥
विहसे जुगल किसोर हँसी नहि थमत सभारी॥३८८॥
सकल सहचरी चरण परै तन मन वलिहारैं।
हास्य प्रौढ इमि कला करैं कौतुक सुख सारैं॥
नित्य विहारी जुगल जानि जन जिय सुखदाई॥श्रीराधे॥
चितये लोचन कोर हमहुँ जीवन निधि पाई॥३८९॥
सीस नाय कर जोरि विनै सिगरी हम भाषैं।
महाराज अब राजभोग सुख जिय अभिलाषैं॥

देत लेत हठि हेत विनोद प्रमोद विवस हसि ।श्रीराधे॥
नखतावलि रद छटा अरुन रग मनी बनी लसि । ३७५॥
सखी विदूषक वेस विविधि विधि बनिबनि आवै ।
कौतुक भाति अनेक प्रगट करि जुगल रिझावैं ॥
स्यामानुगा प्रवीन वीन अच्छर धुनि गाई ।श्रीराधे॥
सारग राग अलापि समै की रीति जनाई ॥३७६॥
डेढ़ जाम दिन विगत भयो ऊपर बीतत अब ।
राजभोग वर समै जानि अति काल कहत सब ॥
मडल ललित अनूप एक तामै दस गाये ॥श्रीराधे॥
पच पच के भाग उभै एहि रीति सुहाये ॥३७७॥
तिन पाचन मै मध्य सोई जा थल अवराजे ।
अपर च्यारि दिसि च्यारि विमल मडल वर भ्राजे ॥
जो प्राची दिग अहै सुभग मडल सुख खानी ।श्रीराधे॥
सभा कुज ता बीच तहा रचना अधि[illegible]नी ॥३७८॥
दिव्य सिघासन धारि बिछौना मृदुल सुहाए ।
अतर सींचि सब ठौर सुवन बहु काम बनाए ॥
बैठे हैं जिहि ठौर तहा तें इतलौ छाए ॥श्रीराधे॥
विमल वितान बनाव पेखि मन अटकि लुभाए ॥३७९॥
झालरि चित्र विचित्र लगी मनि अति झलकाहीं ।
नगमुक्ता वर जाल कुसुम ता मध्य सुहाहीं ॥
लगि झालरि की जौर जाल ते दोऊ ओरी ॥श्रीराधे॥
रहे भूमि लौं लटकि छरी नाना रग सोरी ॥३८०॥
मध्य पावडे पुष्प छौम पट सुखद रचाये ।
राजभोग सुभ साज सकल ता कुज सुहाये ॥
दपति चित्त प्रमोद हेत रचना बहु भाइ ॥श्रीराधे॥
चतुर सहेली आय हम सब [illegible]ह्यौ सुनाई ॥३८१॥
कीन्ह्यौ चित्त विचार कहैं का जुक्ति बनाई ।
सहसा आतुर वचन कथनि अनुचित प्रभु पाई ॥
सखी विदूषक एक वेस तापस धरि आई ॥श्रीराधे॥
जथा राजगृह जाय ऋषीश्वर विपिन विहाई । ३८१॥

वृद्ध ज्ञाम व्रत देह गेह तेरें नृप आयो।
तप सच्यौ बहुकाल अबैं लौ तथा बिनाया॥
मन्दर कन्दर बैठि जोग अष्टाग उपायो श्रीराधे॥
इन्द्री वृत्ति समेटि चित्त निरवासित भायो ३८३॥
प्राण सञ्चन करि एक चक्र षट भूवे कीन्हे।
गुरु उपदेशित रूप सुमिरि निज पद मन दीन्हे॥
लागी शुद्ध समाधि बाह्य व्यापार न जानौ॥श्रीराधे॥
का जानो जुग गए किते सौ सत्य प्रमानो ॥३८४॥
सो समाधि निर्मुक्त भई अबही ततकाला।
क्षुधा वह्नि सतप्त देह मै लखी नृपाला॥
जीह चपल वस दीन हीन मन रस दिसि धावै॥श्रीराधे॥
कीन्ह्यौ बहुत विचार स्वल्प थिरता नहि पावै॥३८५॥
अहो नृपति सिर मौर सुजस नैसे सुनि आयो।
भोजन नाना भाति मिलै मेरे मन भायो॥
विद्या सकल प्रवीन तु गविद्या सुनि बानी॥श्रीराधे॥
सिद्ध निकट सिरनाय बैठि जोरे जुग पानी॥३८६॥
अहो तपस्या धाम देहु वर जो हम चाहै।
पाछे सो तुम कहौ कर यामै सक नाहै॥
यह कल्पाना क्षुधा कृपा करि हमकौ दीजै॥श्रीराधे॥
गावै सुजस तुम्हार अबै बरु सरवस लीजै॥३८७॥
हमरे भाल सुहाग नाम जिनकौ लै राजैं।
चाहत हैं यह वस्तु वीर तिनही के काजें॥
सुनि दंपति प्रिय वचन सखिन हिय भाव अपारी॥श्रीराधे॥
विहसे जुगल किसोर हँसी नहि थमत सभारी॥३८८॥
सकल सहचरी चरण परैं तन मन बलिहारैं।
हास्य प्रौढ इमि कला करैं कौतुक सुख सारैं॥
नित्य विहारी जुगल जानि जन जिय सुखदाई॥श्रीराधे॥
चितये लोचन कोर हमहुँ जीवन निधि पाई॥३८६॥
सीस नाय कर जोरि विनै सिगरी हम भाषैं।
महाराज अब राजभोग सुख जिय अभिलाषैं॥

देवें हर्ष अपार चित्त आनी सो बानी ॥श्रीराधे॥
उठिवे के उद्योग जुगल कीन्ह्यौ रसखानी ॥३६०॥
सहचरि कध सहारि उतरि ठाढे दोउ धरनी ।
उतरनि देखत बनी जात जीहा नहि बरनी ॥
सखि मडल ह्वै मध्य परस्पर दै गलबाहीं ॥श्रीराधे॥
चले धरैं गति मद चरन लखि नैन सिराहीं ॥३६१॥
जुगल छत्र सिर फिरैं चमर घूमैं दिसि दोऊ ।
हस्त मोरछल सखिन उभै रविमुख भी सोऊ ॥
उठै परम आमोद पाँवडे चित्र सुहाए ॥श्रीराधे॥
कुज निकसि सोपान उतरि चदवा तर आए ॥३६२।
लखै अनूप वितान जाल बगलन दोउ लटिके ।
जाल मध्य विश्राम करैं पक्षी मनि घटिके ॥
डोलै पाय समीर वेग कौतुक बहु बाढै ॥श्रीराधे॥
दपति जा दिसि नैन देंहि ते पकर गाढै ॥३९३॥
या विधि आनद मोद बढावत आवत प्यारे ।
राजभोग जा ठौर कुज सो लखी सुखारे ॥
देखि भए मन मगन चढे सोपान गए थल ॥श्रीराधे॥
रचना सहचरि हस्त पेखि दृग परत नहीं पल ॥३६४॥
सिघासन वर बनिक हेरि हरषे मन माहीं ।
ठौर ठौर आनद एक एकन अधिकाहीं ॥
अतिसै प्रमुदित होए चरन वर तापै धारे ॥श्रीराधे॥
जुगल सहारौ लेत चहूँ दिसि सखी सँभारे ॥३६५॥
बैठत मजुल केलि भट्ठ देखत बनि आई ।
बार बार सौ छटा हिये अरुभत वरिआई ॥
श्रीपदजुग लटकाय जुगल बैठे इमि सोहैं ॥श्रीराधे॥
अग अग सहचरी उतारत भूषन जाहैं ॥३६६॥
भूषन सकल उतारि लिये तन एक न राखे ।
मध्य कियो आवरन वसन बदलैं अभिलाखे ॥
दोऊ आर सहचरी सीस नय विनय सुनावैं ॥श्रीराधे॥
महाराज कार कृपा खडे हूजै मुद पावै ॥३६७॥

निज भक्तन के हेत करैं सब अति सुख पाई।
श्रीतन साटी कोर चित्र रग अरुण सजाई॥
धोती ललित अनूप उपरना रचि पीतम अग॥श्रीराधे॥
बिलग भयो पट मध्य हरखि बैठे दपनि सग॥३६८॥
पाक सदन सहचरी भरी मन मोद अपार।
फूली अग न मात सौज मन हिये सवारै॥
कोलाहल अति भयो हरष वस वचन उचार॥श्रीराधे॥
धरौ उठावौ लेहु देहु पूरी धुनि सारै॥३६९॥
इहाँ सहचरिन आय धरे भाजन मनि ज्योई।
चरन धोइवे हेत लिये झारी कर कोई॥
चपकलता विनीत सग चित्रा ढिग आइ॥श्रीराधे॥
श्रीपद सीस लगाय जोरि कर विनै सुनाई॥४००॥
मन उत्कठा अधिक ढीठ ह्वै कहत लजावै।
जुगल चरन चख लाय धोइवे हिय हुलसावै॥
श्रीदृग अबुज हेतु जानि पद कज लिये कर॥श्रीराधे॥
विमल सुगधित नीर धोय पोछे पट रिजु वर॥४०१॥
तुगविद्या लखि समैं इदुलेखा सग लीन्हे।
दोऊ ओर श्रीहस्त कज धाये रसभीने॥
रगदेवी सुख सग सुदेवी दोऊ आई॥श्रीराधे॥
झारी अमिय सुनीर पूरि कर लिये सुहाई॥४०२॥
रुख उनमानि सुजान जानि अवसर जब सोई।
जल गेरत श्रीहस्त कलुला मजुल होई॥
अति मृदु पट अगुछाय वदन कर सीस नवायो।श्रीराधे॥
सहज माधुरी अधिक निरखि सखियन सुख पायो॥४०३॥
पाक सदन सहचरिन काज सब सिद्धि कराये।
समाचार हम निकट कान लगि सकल जनाये॥
सग विसाखा लिये हरषि सनमुख मै आई॥श्रीराधे॥
नम्र भई कर जोरि खरी निरखौ सकुचाई॥४०४॥
कृपासिंधु जनबधु विहसि दृग मो दिसि दीन्हे।
बार बार तन वारि अगम सुख हमहू लीन्हे॥

देवें हर्ष अपार चित्त आनी सो वानी ॥श्रीराधे॥
उठिवे के उद्योग जुगल कीन्ह्यौ रसखानी ॥३९०॥

सहचरि कध सहारि उतरि ठाढे दोउ धरनी।
उतरनि देखत बनी जात जीहा नहि वरनी॥
सखि मडल ह्वै मध्य परस्पर दै गलबाहीं ॥श्रीराधे॥
चले धरैं गति मद चरन लखि नैन सिराहीं ॥३९१॥

जुगल छत्र सिर फिरैं चमर घूमैं दिसि दोऊ।
हस्त मोरछल सखिन उभै रविमुख भी सोऊ॥
उठै परम आमोद पाँवडे चित्र सुहाए ॥श्रीराधे॥
कुज निकसि सोपान उतरि चदत्रा तर आए ॥३९२।

लखे अनूप वितान जाल बगलन दोउ लटिके।
जाल मध्य विश्राम करैं पत्ती मनि घाटके॥
डोलै पाय समीर वेग कौतुक बहु बाढै ॥श्रीराधे॥
दपति जा दिसि नैन दैंहि ते पक्ष गाढै ॥३९३॥

या विधि आनद मोद बढावत आवत प्यारे।
राजभोग जा ठौर कुज सा लखी सुखारे॥
देखि भए मन मगन चढे सोपान गए थल ॥श्रीराधे॥
रचना सहचरि हस्त पेखि दृग परत नहीं पल ॥३९४॥

सिघासन वर बनिक हेरि हरषे मन माहीं।
ठौर ठौर आनद एक एकन अधिकाहीं॥
अतिसै प्रमुदित होए चरन वर तापै धारे ॥श्रीराधे॥
जुगल सहारौ लेत चहूँ दिसि सखी सँभारे ॥३९५॥
बैठत मजुल केलि भट्ठ देखत बनि आई।
बार बार सौ छटा हिये अरुझत वरिआई॥
श्रीपदजुग लटकाय जुगल बैठे इमि सोहैं ॥श्रीराधे॥
अग अग सहचरी उतारत भूषन जाहैं ॥३९६॥

भूषन सकल उतारि लिये तन एक न राखे।
मध्य कियो आवरन वसन बदलैं अभिलाखे॥
दोऊ ओर सहचरी सीस नय विनय सुनावैं ॥श्रीराधे॥
महाराज करि कृपा खड़े हूजै मुद पावैं ॥३९७॥

निज भक्तन के हेत करैं सब अति सुख पाई।
श्रीतन साटी कोर चित्र रंग अरुण सजाई॥
धोती ललित अनूप उपरना रचि पीतम अंग॥श्रीराधे।
बिलग भयो पट मध्य हरखि बैठे दंपति संग॥३९८॥
पाक सदन सहचरी भरी मन मोद अपार।
फूली अंग न मात सौंज मन किये सवारै॥
कोलाहल अति भयो हरष वस वचन उचारे॥श्रीराधे॥
धरौ उठावौ लेहु देहु पूरी धुनि सारै॥३९९॥
इहाँ सहचरिन आन धरे भाजन मनि दोई।
चरन धोइवे हेत लिये झारी कर कोई॥
चंपकलता विनीत संग चित्रा ढिग आई॥श्रीराधे॥
श्रीपद सीस लगाय जोरि कर विनै सुनाई॥४००॥
मन उत्कंठा अधिक ढीठ ह्वै कहत लजाव।
जुगल चरन चख लाय धोइवे हिय हुलसावै॥
श्रीदृग अंबुज हेतु जानि पद कंज लिये कर॥श्रीराधे॥
विमल सुगंधित नीर धोय पोंछै पट रिजु वर॥४०१॥
तुंगविद्या लखि समैं इंदुलेखा संग लीन्हे।
दोऊ ओर श्रीहस्त कंज धोये रसभीने॥
रंगदेवी सुख संग सुदेवी दोऊ आई॥श्रीराधे॥
झारी अमिय सुनीर पूरि कर लिये सुहाई॥४०२।
रुख उनमानि सुजान जानि अवसर जब सोई।
जल गेरत श्रीहस्त कलुला मंजुल होई॥
अति मृदु पट अंगुछाय वदन कर सीस नवायो।श्रीराधे॥
सहज माधुरी अधिक निरखि सखियन सुख पायो॥४०३॥
पाक सदन सहचरिन काज सब सिद्धि कराये।
समाचार हम निकट कान लगि सकल जनाये॥
संग विसाखा लिये हरषि सनमुख मैं आई॥श्रीराधे॥
नम्र भई कर जोरि खरी निरखौ सकुचाई॥४०४॥
कृपासिंधु जनबंधु विहंसि दृग मो दिसि दीन्हे।
बार बार तन वारि अगम सुख हमहू लीन्हे॥

हस्त वंदना किये विनै बानी अस भाखी ।श्रीराधे॥
महाराज सब राजभोग सेवा अभिलाषी ॥४०५॥

मंद हसनि श्रीवदन भई रदछटा विकासी ।
जय जय धुनि सहचरी करी लहि आनंदरासी ।
परमामोद प्रमोद हेत सुभ धूप सराई ॥श्रीराधे॥
पीत कपूर सुगंध पूर लै दीप दिखाई ॥४०६॥
प्रथम आचवन स्वल्प दियो पट दै हगखानी ।
सिंघासन सम धरी कनक चौकी मनि आनी ॥
ससिमंडल से थार काम देखत चख अटकै ॥श्रीराधे ।
धारे उभय सुधारि पोंछि मंजुल कर पटकै ।४०७।

हरित अरुण मनि पीत नील सित पद्म विविधि रंग ।
उभै थार चहुँ ओर कटोरा पाति सप्त संग ॥
धरी कटोरी मध्य मध्य लहु स्वल्प सोऊ है ॥श्रीराधे॥
उडगन राजी बीच इंदु जनु थार दोऊ हैं ॥४०८॥
मुद्रित भाजन सौंज लिये कर सब सहचरिया ।
मेरौ मुख हग भाव विसाखा लखि ततपरिया ॥
प्रथम दिखावत खोलि देखि हम चित्त विचारै ॥श्रीराधे॥
दंपति आनंद हेत जथाविधि थार प्रचारैं ॥४०९॥

ओदन रंग अनेक स्वाद गुण वर्ण सुहाए ।
सूपा जाति अपार और औषधो सुखद मिलाए ॥
वटिका भेद अनंत सुरस देखत रुचिकारी ॥श्रीराधे॥
साक सवारे विविध रूप रसनिधि तरकारी ॥४१०॥

वटक अपरिमित भांति रचे सखियन रस पूरे ।
देखत उपजै हर्ष स्वाद गुणदायक भूरे ॥
कढी बनी बहु जाति फुलौंगी भेद अनेका ॥श्रीराधे॥
पिष्ट प्रकार सुधारि अधिक एकन ते एका ।४११॥

सालन अमित अनंत अन्नमय जे कहि गाए ।
नेह प्रीति हित सानि सखिन रसखानि बनाए ॥
ससकुलि पोली पुवा पुष्ट गर्भित बहु भाती ॥श्रीराधे॥
मोदक वर्ण विचित्र जाति कितनो मन भातो ॥४१२॥

फेनी मोहनभोग जलेबी गुटिका घेवर।
इनते आदि अनत कहे पकवान रचे वर॥
पेराहू बहु रीति तथा खोवा विधि नाना॥श्रीराधे॥
पायस मेवा कद मेलि रचि भेद अमना॥४१३॥
पय के जिते प्रकार लखे मन मोद बढावै।
दधि माखन दै वस्तु पृथक गुण नाम कहावैं॥
पाक पुष्ट बल हेत अपर वर किये घनेरे॥श्रीराधे॥
चूरन चटनी पचन द्रव्य पापर बहुनेरे।४१४॥
मेवा आले सुस्क दोऊ रचि विविध बनाए।
तथा मुरब्बा नाम जाति बहु धरे सुहाए॥
कचरी भाति अनेक स्वाद पूरी सुखदाई॥श्रीराधे॥
अमित अथाने लसे पेखि मन रुचि अधिकाई।॥४१५॥
भक्ष कहावै वस्तु बनी अनगनती ते हैं।
भोज्य पदारथ सकल भेद नाना करि जे हैं॥
सोहैं धरे अपार लेह्य के भेद अनेका॥श्रीराधे॥
अनवधि चोस्य अरूप सखिन रचि किये विवेका॥४१६॥
एक एक के मध्य स्वाद ए सकल प्रकासे।
छत्तिस विजन कहैं छवो रस पृथक विलासे॥
पच पदारथ सहित विमल छप्पन परकारा॥श्रीराधे॥
जद्यपि एकै वस्तु तऊ रसखानि अपारा॥४१७॥
भोजन कीजे सौंज एक जो वग्नन करई।
निश्चै होय न तासु गिरामति वर हठ धरई॥
इच्छा रुचि मन माहि जबै दपति जस करहीं॥श्रीराधे॥
प्रगट होहि तम तबै चित्त गति लखि अनुसरहीं॥४१८॥
प्रभु इच्छा दुर्ज्ञेय सर्व समत यह जानौ।
कहि पावै को अत जथारथ वस्तु प्रमानौ॥
जानै सोई प्रवीन दया करि नाथ जनावैं॥श्रीराधे॥
मति वैभव उनमानि विविध श्रुति पार न पावैं॥४१९॥
नित्य विहारी जुगल अग निज तें उपजाई।
सेवा आनदसिंधु रीति श्रीमुख दरसाई॥

सहचरि आज्ञ प्रमान लहै जो का विधि गाई ॥श्रीराधे॥
निज सेवा वस किये प्रभू तनमयता पाई ॥४२०॥

ए ई इच्छा को रूप वस्तु इच्छामय सगरी।
प्रेम हिये अनुराग अधिक अनवधि रति अगरी॥
दंपति रुचि पहिचानि सानि मन जे कर ल्याँई ॥श्रीराधे॥
थार कटोरा पूरि धरी ते परम सुहाँई।४२१॥
नीकैं सकल निहारि किये भाजन परिपूरे।
अपर हस्त लै खरी सबै आनद मन भूरे॥
वृन्दादल धरि पानि जुक्त शखोन्क कीन्हौ ॥श्रीराधे॥
मूल मत्र वर नाम जुगल त्रय बार सु लीन्हौ ॥४२२॥

ता पाछें सब सौंज मध्य सो स्वल्प प्रचारयौ।
घटा नाद जनाया चित्त दंपति पद धारयौ॥
हस्त वदना किये प्रिया पीतम दिसि हेरी ॥श्रीराधे॥
मद हँसे मन वृत्ति जानि सखियन की मेरी ॥४२३॥
मै हूँ चित्त विचार कियो अवगहरन नीकी।
वार गये गत सार वस्तु कछु ह्वै है फीकी॥
तब ही लाज विहाय धृष्टता मन दृढ आनी ॥श्रीराधे॥
सीस नाय कर जोरि कही आतुरि अस बानी ॥४२४॥

महाराज ए सबै भरें अभिलाषा ऐसी।
अब देखैं सुख नैन करत भोजन विधि जैसी॥
होय परिश्रम सिद्धि परम सेवा फल लाहैं ॥श्रीराधे॥
चातक स्वाती बुंद जथा छिन सोई चाहैं ॥४२५॥
प्रेमविबोधक गिरा श्रवन सुनि हेरि परस्पर।
पूरैं जन मन काम बिहसि झुकि थार परसिकर॥
नित्य विहारी जुगल ग्रास वर पच वदन दै ॥श्रीराधे॥
अमित कोटि ब्रह्माड तृप्ति हित स्वल्प नीर लै ॥४२६॥

या विधि जेंवत जुगल सखी जय जय धुनि उचरै।
निरखै बरषैं पुष्प हरषि लखि समै सुसचारैं॥
बाहिर कुज प्रदेस वाद्य सुर एक भए सब ॥श्रीराधे॥
समै सुहावन राग कीन गति कहैं सखी तब ॥४२७॥

भोजन विविध विलास निकट हम देखैं ठाढी ।
अरस परस अनुराग नेह रति रुचि सुचि गाढी
नाम रूप गुण स्वाद वरन विजन हैं जेते ।श्रीराधे।
तिनके तथा सरूप जुरे कहि भाखैं ते ते ४२८
जा ऊपर जो वस्तु खान की विधि सुखदाई ।
इच्छा रुचि पहिचानि जानि रुख रहैं जनाई ।।
सुधा भरी लै खरी कोउ झारी कर वेला ।।श्रीराधे।।
अपर नीर अति सीर विमल चख लखें सुहेला ।२९
वर दाड़िम रस गहैं काउ रस ईक्षु सुखरै ।
जे पीवत हित देहि गुणन रस कहे अपारै ।।
जब जैसी रुचि लखै समर्पैं भरिवे लानो ।।श्रीराधे।।
मध्य मध्य सुख पाय हरषि दपति पीवत सो ।।४३०।।

हरिचदन मनि रचे अतर बहु भाँति सिचाए ।
बीजै दोऊ ओर विजन हरवै रुख पाए ।।
रीझ होत मन माँहि वस्तु जापै अधिकाई ।।श्रीराधे।।
श्रीप्यारी सुख दैन लाल ऐसी जिय आई ।।४३१।।
मजुल कर गहि कवल तासु गुन कहैं बखानी ।
सग लगी सहचरी अधिक वरनै मृदुबानी ।।
मद हसनि भ्रूलता तनी नासा लघु सिकुरनि ।श्रीराधे।।
वाम हस्त ते गहनि कुटिल लटकनि मुख चिकुरनि ।।४३२।।

अनियारे रस ऐन जाल डोरा अरुनारे ।
भारे पानिय भरे रेख अजित कजरारे ।।
पलक झपनि श्रीदृगन ढुरनि कोरन कसि हेरनि ।।श्रीराधे।।
सुधा अखडल पूर वदन मडल तसि फेरनि ।।४३३ ।
श्रीस्यामा इहि भाति जबै चितई पिय ओरी ।
भूलि गई सो बात भई गति चद चकोरी ।।
कछु वार ईमि रहे लहे सुख मान सभारे ।श्रीराधे।।
लखे सिथल सब अग विवस नहि सकैं सभारे ।।४३४।।

कपित करतैं ग्रास खसत मैं जान्यो जबहीं ।
दियो सहारौ वेगि पानि निज थाम्यौ तबहीं ।।

चितये पिय मम ओर न कछु नै किये लजौहै ।।श्रीराधे।।
मै स्यामातन हेरि समै साध्यो हसि गौहै ।।४३५।।

विनय करी करजोरि लाल अति काम कठिन है ।
मेरे मन मिलि चलौ होय तौ सिद्ध जतन है ।।
निज कर गहि पिय हस्त कियो प्यारी मन सनमुख ।।श्रीराधे।।
मान प्रिये सनमान देई दीजै भक्तन सुख ।।४३६।।

दंपति आनंदसिंधु उमगि सुख सरित बहावे ।
गोपेश्वर श्रीचरण कृपा ते हम अवगाहैं ।।
खात खवावत होत मोद कौतुक विधि नाना ।।श्रीराधे।।
पेय पदारथ अमित स्वाद रसनिधि करि पाना ।।४३७।।

सहचरि वचन प्रबंध कथा इतिहास बखानें ।
जा विधि भोजन ओर प्रीति उपजत जिय जानें ।।
कोऊ अति अनुराग भरी निज नेह जनावे ।।श्रीराधे।।
जिहि तिहि भाति खवाय कछू वर भाग्य मनावैं । ४३८।।

या विधि भोजन करत जुगल सुख लेत देत भर ।
जो जाकी अभिलाष तथाविधि पूरि गहत कर ।।
दोऊ सराहै स्वाद वस्तु जन मोद बढावें ।।श्रीराधे।।
सुनि सुनि सहचरि वृंद हरखि जय कहि सिर नावै ।।४३९।।

भोजन समै निहारि सार मुद सबहीं पायो ।
देखि नैन जिय समुझि अगम सुख जात न गायो ।।
जानि पर्‌यौ मन हर्‌यौ चाह बरबस हू नाहीं ।।श्रीराधे।।
जाय तबै हम निकट दियो अचवन कर माहीं ।।४४०।।

सहचरि दौरि अनेक लई सब सौंज उठाई ।
धारे अचवन हेत विमल जुगगात्र सुहाई ।।
खरिका चित्र विचित्र कनक रचि दहि सुधारी ।।श्रीराधे।।
गेरत नीर विचारि गहैं कर मनि भरि झारी ।।४४१।।

दई सुगंधित द्रव्य हस्त ज्यौ जाय चिकनता ।
पुनि आले पट मंजु पोंछि कर वदन सुखनता ।।
दोऊ ओर अचवाय हरखि नय आनद पावैं ।।श्रीराधे।।
नेह भरी सहचरी जुगल श्रीचरण छुवावै ।।४४२।।

वसन झीन अँगुछाय लाय चख सिर परसावैं।
अतिसै भाग्य मनाय सिंघासन पर पधरावै॥
नाना भांति सुगंधि वस्तु चूरन सुखदाई॥श्रीराधे॥
हीरक मनिवर स्वल्प कटोरी धरि धरि ल्याई॥४४३॥

विमल रकाबी वसन जुक्त तापै सो धारा।
मैउ बिसाखा निकट जाय विनती अनुसारी॥
महाराज मुखवास परम आनंद मुदकारी॥श्रीराधे॥
लै दीजै श्रीवदन निरखि हम होहिं सुखारी॥४४४॥

नित्य विहारी जुगल हस्त श्री लै मुख मेली।
अतर विचित्रत फहा दिये कर भई सु खेली॥
सहचरि वृंद अनंद लखे दंपति छवि हरख॥श्रीराधे॥
राग रागिनी भेद गाय कुसुमावलि बरखैं॥४४५॥

ए मंडल जे पांच मध्य शृंगार बखान्यो।
राजभोग सुख गाय दिशा प्राची परिमान्यो॥
जो मंडल है बीच तासु दिसि दच्छिन कहियै।श्रीराधे॥
मंडल आनंद कंद सौन थल साईं लहियै॥४४६॥

ताहू मैं दस कुंज अष्ट दिसि अष्ट सुहावैं।
मध्य सभा सुख धाम अनौसर एक बतावै॥
सभा कुंज नव खंड नवन मैं सप्तम जोहै।श्रीराधे॥
आजु दिवस हित सैन सेज रचना पद सोहै॥४४७॥

पावा पाटी जात रूप नाना मनि लागी।
उत्तर दच्छिन पलँग बिछावे सखी सुरागी॥
देखत ही दृग पगै अवधि कोमलता जैसे॥श्रीराधे॥
मंजुल सुभ्र विचित्र बिछौना कीन्हे तैसे॥४४८॥

मनि मुक्ता वर काम झूमका परम सुहाए।
चहूं कोर चौडोरि जाल कसिते लटकाए॥
चारयौ ओर लखात जाल पाटी लगि लटकत॥श्रीराधे॥
मनि गन ग्रथित विचित्र सुबन रचना चित अटकत॥४४९॥

वरतुल दीरघ स्वल्प बृहत चौकोन अनेका।
जो तकिया जा ठाम रहैं धरि सहित विवेका॥

चादर उज्ज्वल छोम सेज सरपोसित दीन्ही ।।श्रीराधे॥
पलग लगी सब दिशा तानि सोपान नवीनी ।।४५०।।
रग रग पट छाय कुसुम मुक्ता मनि लाई ।
भूमि कुन सब ठौर बिछौना रचे सुहाई ।।
अतर अमाल निचाय पुष्प माला लटकाई ।।श्रीराधे।।
जे जे क्रीडा साज ठाम बहु धरी बनाई ।।४५१।।
कहूँ हार शृगार कहू मनि गुल्म पुष्पमय ।
हाटक मनि गाठ बने धरे द्विज जाति अमित कय ।।
परम सुगंधित द्रव्य खुले भाजन ते राखी ।।श्रीराधे।।
डालें त्रिविध समीर लपट उपजै सुखरासी ।।४५२।।
जिते कुजके द्वार जाल मनि कुसुम लगाए ।
परदा नाना भाँति लसे सब ठौर बँधाए ।।
तास बादला कोउ कीमखापन के कोऊ ।।श्रीराधे।।
लौकिक नाम प्रसिद्ध बोध हित कहियत सोऊ ।।४५३।।
अपर मुसज्जर कहै तथा पीलाम सुहाए ।
सान सूत विचित्र बनाती बनिक सुभाए ।।
नग माता सब जाति लगे रचना अति भारी ।।श्रीराधे।।
भीतर बाहिर खभ पाँति जितनी रुचि कारी ।।४५४।।
उत्तिम मध्यम करि विचार तिनमैते लागे ।
सायबान चहुँ ओर बँधे बाहिर दुति जागे ।।
तन मन वृत्ति लगाय रची सखियन जो रचना ।।श्रीराधे।
देखि धारिय चित्त कहै तस होय न रसना ।।४५५।।
नीकै नैन निहारि सभारि सवारि चौप चित ।
सब मिलि कियो विचार वेगि अब चलौ प्रभू तित ।।
आय सकुचि मम निकट कान धुनि मद्द सुनाई ।।श्रीराधे।।
सैन कुज गत भाव सिद्धता सकल जनाई ।४५६।।
ताही समै विमान स्वल्प मनि पुष्प रचानो ।
झनतकार करि शब्द कुज गॅसि द्वार लगानो ।।
मध्य दिवस को गज रठ नाठन बाजन लाग्यी ।।श्रीराधे।।
श्रीतन आलस चिन्ह लेस जान्यो कछु जाग्यो ।।४५७।।

सिंघासन तें उतै पावडे रचि विमान लग।
हमहूँ समै विचारि जोरि कर सीस दियो पग ॥
निरखि माधुरी जुगल चित्त परमानंद पाइ ॥श्रीराधे॥
विनती बार निहोरि पाय रख सकुचि सुनाई ॥४५८॥
महाराज अभिलाष अवे सवक मन ऐसी।
सैन कुंज श्रीचरण चरैं इच्छा पुनि जैसी ॥
जन अति देवे मोद मंद हास श्रापद चाँरयौ ॥श्रीराधे॥
उनरत लागीं चहूँ ओर साख अग समारयौ ॥४५९॥
सहचरि मंडल मध्य जुगल गति मंद पधारे।
जय कहि बरखैं सुवन सखी हित सहित निहारैं ॥
बैठे आप विमान परम सिंघासन वर पर ॥श्रीराधे॥
नभचारी सो भयो चलनि ताहू की सुखतर ॥४६०॥

चढि चढि अपनी कुंज सखी ठाढी निरखन हित।
मंगल द्रव्य मिलाय कुसुम बरखैं निकसत जित ॥
धूप दीप दै अर्घ करैं नीराजन जै जै ॥श्रीराधे॥
दंपति श्रीतन छटा पेखि उर धारैं ते ते ॥४६१॥
सैन कुंज के निकट अभिरि लाग्यो वर जाना।
उतरि सखीगण मध्य दोउ चले सुजाना ॥
ठौर ठौर तिहि धाम लखैं रचना सुभकारी ॥श्रीराधे॥
कहैं सुनैं मृदु बैन पूछि हँसि दैं सुख भारी ॥४६२॥
देखत घूमत फिरत जात जब जा दिसि ओरी।
निज कुंजन गण सखी लखैं कुसुमावलि छोरी ॥
देत लेत आनंद मोद ढिंग सेज पधारे ॥श्रीराधे॥
पेखि हरखि हँसि मंद सखिन की ओर निहारे ॥४६३॥

तिनहूँ तन मन वारि देखि पद सीस नवाए।
जय मंगल धुनि भई पलंग श्रीपद परपाए ॥
तीन चढत सोपान कृपा देखी ता छिन की ॥श्रीराधे॥
अबहूँ दसा भुलात सुमिरि हिय सो तन मनकी ॥४६४॥
बैठे मोद बढाय सेज प्यारी प्रीतम हसि।
सहचरि भरी उमाह निरखि बलि नम्र होत खसि ॥

चादरि उज्ज्वल क्षौम सेज सरपोसित दीन्ही ॥श्रीराधे॥
पलग लगी सब दिशा तीनि सोपान नवीनी ॥४५०॥
रग रग पट छाय कुसुम मुक्ता मनि लाई।
भूमि कुज सब ठौर बिछौना रचे सुहाई।
अतर अमोल छिचाय पुष्प माला लटकाई ॥श्रीराधे॥
जे जे क्रीडा सोज ठाम बहु धरी बनाई ॥४५१॥
कहूँ हार शृगार कहू मनि गुल्म पुष्पमय।
हाटक मनि गाठ बने धरे द्विज जाति अमित कय॥
परम सुगधित द्रव्य खुले भाजन ते राखी ॥श्रीराधे॥
डालै त्रिविध समीर लपट उपजै सुखरासी ॥४५२॥
जिते कुजके द्वार जाल मनि कुसुम लगाए।
परदा नाना भाँति लसै सब ठौर बँधाए॥
तास बाद ले कोउ कीमखापन के कोऊ ॥श्रीराधे॥
लौकिक नाम प्रसिद्ध बोध हित कहियत सोऊ ॥४५३॥
अपर मुसज्जर कहै तथा पीलाम सुहाए।
सोने सूत विचित्र बनाती बनिक सुभाए॥
नग मोती सब जाति लगे रचना अति भारी ॥श्रीराधे॥
भीतर बाहिर खभ पाँति जितनी रुचि कारी ॥४५४॥
उत्तिम मध्यम करि विचार तिनमैते लागे।
सायवान चहुँ ओर बँधे बाहिर दुति जागे॥
तन मन वृत्ति लगाय रची सखियन जो रचना ॥श्रीराधे॥
देखि धारियै चित्त कहै तस होय न रसना ॥४५५॥
नीकै नैन निहारि सभारि सवारि चौप चित।
सब मिलि कियो विचार वेगि अब चलौ प्रभू तित॥
आय सकुचि मम निकट कान धुनि मद सुनाई ॥श्रीराधे॥
सैन कुज गत भाव सिद्धता सकल जनाई। ४५६॥
ताही समै विमान स्वल्प मनि पुष्प रचानो।
झनतकार करि शब्द कुज गॅसि द्वार लगानो॥
मध्य दिवस को गज रठ नाठन बाजन लाग्यी ॥श्रीराधे॥
श्रीतन आलस चिन्ह लेस जान्यो कछु जाग्यो ॥४५७॥

सिंघासन तें उतै पावडे रचि विमान लग ।
हमहूँ समै विचारि जोरि कर सीस दियो पग ॥
निरखि माधुरी जुगल चित्त परमानद पाई ॥श्रीराधे॥
विनती वार निहोरि पाय रुख सकुचि सुनाई ॥४५८॥

महाराज अभिलाष अबे सबक मन ऐसी ।
सैन कुज श्रीचरण चरै इच्छा पुनि जैसी ॥
जन अति देवे मोद मन हास आपद चॉरयौ ॥श्रीराधे॥
उतरत लागीं चहूँ ओर सखि अग समारयौ ॥४५९॥

सहचरि मडल मध्य जुगल गति मद पधारे ।
जय कहि वरखै सुवन सखी हित सहित निहारै ॥
बेठे आप विमान परम सिंघासन वर पर ॥श्रीराधे॥
नभचारी सो भयो चलनि ताहू की सुखतर ॥४६०॥

चढ़ि चढि अपनी कुज सखी ठाढी निरखन हित ।
मगल द्रव्य मिलाय कुसुम वरखै निकसत जित ॥
धूप दीप दै अर्घ करै नीराजन जे जे ॥श्रीराधे॥
दंपति श्रीतन छटा पेखि उर धारैं ते ते ॥४६१॥

सैन कुज के निकट अभिरि लाग्यो वर जाना ।
उतरि सखीगण मध्य दोउ चले सुजाना ॥
ठौर ठौर तिहि धाम लखै रचना सुभकारी ॥श्रीराधे॥
कहै सुनै मृदु बैन पूछि हसि दै सुख भारी ॥४६२॥

देखत घूमत फिरत जात जब जा दिसि ओरी ।
निज कुजन गण सखी लखै कुसुमावलि छोरी ॥
देत लेत आनद मोद ढिंग सेज पधारे ॥श्रीराधे॥
पेखि हरखि हँसि मद सखिन की ओर निहारे ॥४६३॥

तिनहूँ तन मन वारि देखि पद सीस नवाए ।
जय मगल धुनि भई पलग श्रीपद परसाए ॥
तीन चढत सोपान कृपा देखो ता छिन की ॥श्रीराधे॥
अबहूँ दसा भुलात सुमिरि हिय सो तन मनकी ॥४६४॥

बैठे मोद बढाय सेज प्यारी प्रीतम हसि ।
सहचरि भरी उमाह निरखि बलि नम्र होत खसि ॥

किरा धरि चहु ओर परस्पर अग लगि राजै ।।श्री राधे।।
सखी समै अनुसार साज सेवा के सजे ।४६५।।

लघू विपासा जानि नीर करि जतन सवारे ।
ताजल अमल सुगंध स्वाद रुचि रूप अपारे ।।
स्वच्छ रकवी वसन जुक्त वेला द्वै भरि धरि ।।श्री राधे।।
मैउ विसाखा सहित हस्त लै खरी निकट करि ।४६६।।
पीवत चित्त प्रसन्न प्रिया प्रीतम हित सेती ।
मध्य बखानत स्वाद जतन सखियन की जेती ।।
ता पाछे ललि हरखि वसन मुख पोछन हित दे ।।श्री राधे।।
बीरी परम मनोज्ञ थार भाजन आगे लै ।४६७।
दपनि श्रीकर लेत वदन मेलत मुसुकावै ।
खात खवावत करत केलि आनद भर छावै ।।
देखत जेहि रुचि होय अनर वर कहा बनाई ।।श्री राधे।।
जुगल हस्त श्री दियो ललट ताकी मन भाई ।।४६८।
सनमुख चौका राखि विमल हाटक मनि जरिया ।
हीरक मनि को थार स्वच्छ ले तापै धरिया ।।
रग अनेक विचित्र कुसुम रचना तामै करि ।श्रीराधे।।
चहूँ ओर सहचरी सुवन अजलि ठाढी भरि ।।४६९।।
मै करसपुट पुष्प भरे दपति छवि हेरी ।
जय जय नित्य विहार जुगल वरमुख धुनि टेरी ।।
श्रीपद सीस नवाय अजली नभ दिसि वरखी ।श्रीराधे।।
बहुरि लियो कर थार आरती हित हिय हरखी ।।४७०।
सहचरि बरखै कुसुम गान मगल सुरगावै ।
राजभोग सुखसार करै नीराजन चोवै ।।
तन मन सर्व सवारि थार नय धरनी धारी ।।श्रीराधे।।
सुवन अजली एक विहसि पुनि मस्तक सारी ।४७१।।
परमानद उमाह पूरि परिदच्छिन लावै ।
अतिसै भाग्य मनाय दड इव ननी विभावै ।।
सब ठाढ़ी कर जोरि लियें हस्तन सुभ सामा ।।श्रीराधे।।
[illegible] विजन आदि अनगनती बामा ।।४७२।।

नैनन रूप निहारि धारि हिय मोद बढावै।
छिन छिन यह सुख वृद्धि प्रणत ह्वै सखी मनावै।
पानदान लै खरी निकट सुख जोवैं आली॥श्रीराधे॥
सेवै तन मन लाय वृत्ति दंपति पद घाली॥४७३॥

छवि सागर श्रीअंग जुगल आलस रसभीने
नैन सदन शृंगार पलक झपटनि पट दीन्हे॥
सैन समै उनमानि सखी सब अगन लागी।श्रीराधे॥
श्रीस्यामा तन स्याम सुवावत सेज सुहागी॥४७४॥
मामा सैन निहारि लाल छवि सो मन आनी।
मूंदि लिये निज नैन धेय तन वृत्ति समानी॥
चतुर सहेली जानि विहसि पिय सेज सुहाए॥श्रीराधे॥
तकिया ठौर अनेक सुखद दोउ ओर लगाए॥४७५॥

अंग अंग सहचरी लगी सेवा सुख लेवै।
जा विधि निद्रा वृद्धि होय ताही गति सेवै॥
नींद भरे श्रीअंग लेत करवट इत उत हैं॥श्रीराधे॥
आली परम प्रबीन सुखद सेवत तित तित है।४७६॥
अति निद्रा भरभार पेखि दोऊ दिसि जबही।
हम सबही धरि मौन उठैं हरुवैं गति तबहीं॥
मंद मंद पग धरत जाल परदा कछु खोलत॥श्रीराधे॥
सैन नहीं अस करत परस्पर कोऊ न बोलत॥४७७॥

बाहिर कुंज प्रदेश निकसि कर जोरि सीस नय।
करि प्रणाम कछु दूरि जाय बैठैं आनंद लय॥
दंड एक सुर मंद नाम श्रीराधा लेवैं॥श्रीराधे॥
बहुरि हियें श्रीचरण धारि चलिवे चित देवैं॥४७८॥
जाके मंडल जुगल बसौं जा दिन करि प्रीती।
ता दिन ताको कुंज सबै जावैं अस नीती॥
षट मंडल के मध्य दिसा दच्छिन मम कुंजा।श्रीराधे।
ताही मग सब चली सखी अनगनती पुंजा॥४७९॥
मम बैठन को ठाम नाम कहि सभा बखानै।
धरे सिंघासन अष्ट रीति ता दिन असमानै॥

तहां जाय हम अष्ट बैठि सौ कथा चलावैं ॥श्रीराधे।
सेवन जा विधि होय ताहि कहि सुनि सुख पावैं ॥४८०॥
छत्र चमर त आदि लिये सहचरि हम सेवें।
सुनें सरल चित लाय अचल सवा फल लेवें॥
रत्नप्रभा वे आदि अष्ट जे मम परिचारी ॥श्रीराधे॥
सब दिन की जा रीति करै ते समै विचारी ॥४८१॥
भोर मगला समै अवै लौ सैन समेती।
नित्य विहारी जुगल प्रसादी समिटी जेती॥
सबको अष्ट विभाग लाय भाजन वर वारे ॥श्रीराधे॥
राख मेरो अस सप्त एहि भाति सवार ॥४८२॥
सप्त विसाखा आदि कुंज दिसि सप्त सुहाई।
निज आलिन के हाथ तहा ते देहि पठाई॥
विनती भाखें आय प्रसादी समै सुहानी ॥श्रीराधे॥
हमहू भाग्य मनाय करै अगीकृत वानी ॥४८३॥
अपनी अपनी कुंज जाइ वे हेत विचारै।
सेवा समै सभारि नेह वस उठै न पारै॥
उठै मिलै गरलाय विछुर तें प्राण दुखित ह्वै ॥श्रीराधे॥
चलै मुरै गहि हस्त ठमकि पुनि धरै डगें ह्वै ॥४८४॥
निज निज कुंजन जाय वसन भूषन उतराए।
केवल साटी धारि हस्त पद वदन धुवाए॥
वर चौकी पर बैठि संग जिन कै जे आली ॥श्रीराधे॥
करि सबही को बोध प्रसादी दै हितपाली ॥४८५॥
सुमिरि किसोरी नाम सीस धरि सेवन करहीं।
परमानद उमाह हिये सुख सागर भरहीं॥
अचवन करि लै वसन सेज बैठे मृदु आई ॥श्रीराधे॥
वदन मेलि मुखवास खात बीरी हरखाई ॥४८६॥
तीजे पहर सभारि जुगल जागन की विरियाँ।
सेवा समै बताय सखी दै विदा निविरियाँ॥
दंपति छवि उर धारि नैन मूदैं चितलावैं ॥श्रीराधे॥
ताही रस ह्वै लीन काल ऐसे कछु जावैं ॥४८७॥

जो जिनके हैं संग सदा सबकी अस रीती।
करै नित्य व्यवहार अचल दंपति पद प्रीती॥
एरु अंग जो कहैं लहैं नहिं अंत बखानै॥श्रीराधे॥
सेवा भाव प्रमान कृपा तिनकी तिनको सब जानै॥४८८॥

सकल भाँति संपन्न सेय निज निज प्रभु सबहीं।
अपने अपने ठाम जाय विश्रामै जबहीं।
दोय दंड परिमान काल बीत्यौ अस जानै॥श्रीराधे॥
सुमिरि प्रिया वर नाम चित्त सेवा सुख आनै॥४८९॥

करि मज्जन असनान वसन भूषन सजि निज तन।
जाय जगावै नाथ प्रथम जे मौलि कहै गन॥
जाको है अधिकार जहाँ जो विधि सेवा की॥श्रीराधे॥
तैसी तहाँ बनाय अधिक रचना शोभा की॥४९०॥

बनि बनि जूथ अपार साज मंगल सब कीन्हे।
मिले एक थल आय चित्त प्यारी पद दीन्हे॥
आनद मोद बढाय जुग्म अपनो अपनो करि॥श्रीराधे॥
सैन कुंज दिशि चलैं मौन गहि चरण मंद धरि॥४९१॥

आहट भीतर पाय निकट ह्वै शब्द सुनावैं।
समै सुहातौ राग वाद्य मधुरे सुर गावैं॥
जबहीं पट बिलगाय कहैं जय सीस नवावैं॥श्रीराधे॥
अभ्यंतर पग धारि निरखि सुख सिंधु समावैं॥४९२॥

जुगल चरन सिर लाय करै सेवा हित सेती।
उभै और श्रीअंग परसि पावै मुद जेती॥
बातैं मंजु सुनाय कियो सब आलस दूरी॥श्रीराधे॥
दंपति उठती वार करै कौतुक निधि भूरी॥४९३॥

बैठे जुगलकिसोर अंग श्रीअंग लगाई।
तकिया धरे बनाय चहूँ ओरी सुखदाई॥
अरस परस लखि मुकुर अलक उरझी सुरझावैं॥श्रीराधे॥
उमगै आनद सरित सखी जीवन धन पावै॥४९४॥

मनि चौकी पधारि उभै भाजन चित्रित करि।
लै झारी भरि नीर खरी जोवै रुख हँसि डरि।

जानि हिये को भाव चरण धोये अगुछाये ।।श्रीराधे।।
श्रीकर नीकै धोय पौंछि पट सीस लगाए ।।४६५।
श्रीमुख मडल विमल नीर प्रक्षाल्य बहोरी ।
अति कोमल वर चीर फेरि बलि नय कर जोरी ।।
सिगरे केस समेटि रुचिर जूरा रचि बाधे ।।श्रीराधे।।
कुटिल अलक ढिग श्रवन उभै लटकै छुइ काधे ।।४६६।।
रचना तिलक विचित्र करी देखत अति प्यारी ।
नासा जुगल कपोल चिबुक बिंदुल दुतिकारी ।।
नैनन अजन रेख कुसुम श्रवनन मस्तक सजि ।।श्रीराधे।।
दर्पन सनमुख दियो परस्पर लखि मृदु हँसि लजि ।।४६७।।
सब ठाढी कर जोरि लखै छवि आनद भारे ।
विनै करी नय सीस जबै इत नैन निहारै ।।
महाराज अब समै भोग सीतल सुखदाई ।।श्रीराधे।।
सकुच विवस नहि कहैं चित्त अति रह्यौ लुभाई ।।४६८।।
मद हसनि सकेत चलनि भृकुटी झपकनि दृग ।
पाय नवायो भाल जतन द्रुत करी तथा ढिग ।।
वर चौकी पर थार उभै अति विमल धराए ।।श्रीराधे।।
भाति भाति मनि रग कटोरा पाति सुहाए । ४६६।।
अमित जाति फल पक टूटि जे तत छिन आवै ।
तिनके भेद अनेक सखी बहु स्वाद बनावै ।।
मेवा हू अनगनित नाम तरुते तत्काले ।।श्रीराधे।।
ल्यावै सहचरि तोरि पेखि पहिचानि रसाले ।।५००।।
कद सुगधित द्रव्य मेलि रचि विविध बनाए ।
अम्ल तिक्त कटु लवन मिलाय अपार सुहाए ।।
गान हेतु रस रीति नीतिजुन करी अपारी ।।श्रीराधे।।
परसै सिगरे भाव सुखद रुचि की अनुसारी ।।५०१।।
नीर नीर अति विमल सुगधित लै भरि झारी ।
अमृत वर गुन पूर विसद कोऊ कर धारी ।।
दाडिम परम अनूप चित्र रस रीति सवारी ।।श्राराधे।।
अमृतरा रस इच्छु अपर बहु रचे सखारी ।।५०२।।

गगाजली प्रपूरि हस्त लै वेलाहू कर।
फल मेवा सब थार कटोरा मध्य किये वर॥
धूप दीप ए सारि दियो अचवन श्रीकर जब॥श्रीराधे॥
जन सुखदाई जुगल करन लागे भोजन तब॥५०३।

आनद मोद उमाह भरे हसि खात खवावै।
भिन्न भिन्न गुण स्वाद सखी किह रुचि उपजावै॥
वेला भरि भरि देत पान हित रस रुख जानी॥श्रीराधे॥
पीवत मध्य सराहि अहा बोलत मृदु बानी॥५०४॥

प्रीति विवस सहचरी कहैं अब कै यह पीजै।
अपर भनै भरि नेह घूँट द्वै याकी लीजै॥
सबको राखत मान पान करि दोऊ प्यारे॥श्रीराधे॥
सीतल भोजन होत लखै सीतल चख तारे॥५०५॥

निज अभिलाष पूरि जानि दपति मन रीती।
भोजन प्रेम समेत करावत अनवधि प्रीती॥
लख्यौ नयन व्यवहार अरुचिता अग विजाने॥श्रीराधे॥
तबही सौंज उठाय लई भाजन जुग आने॥५०६॥

गेरत झारी नार सखी अचवत प्यारी पिय।
दे खरिका अचवाय वसन मजुल आलौ दिय॥
श्रीपद जुगल धुवाय अगौछे सीस लगाए॥श्रीराधे॥
तकिया सुभग सवारि पलग ऊपर पधराए॥५०७॥

परम सुगधित द्रव्य दई मुखवास विसद सुचि।
प्रेम नेम अनुराग नेहजुत रचि बीरी रुचि।
वर भाजन धरि हस्त सखी दोऊ दिसि देहीं॥श्रीराधे॥
जानि हियै कौ भाव जुगल हँसि श्रीकर लेहीं॥५०८॥

अरस परम मुसिक्यात खात हेरनि दृग अरुझैं।
सहचरि अतर वनाय देत कर लखि जिय लरझै॥
रचना पुष्प विचित्र करी मनि थार सवारी॥श्रीराधे॥
सो चौकी पर धारि प्रथम कुसुमावलि सारी।५०९॥
लै बलाय नय बहुरि आरती सीतल कीन्ही।

बारहि बार प्रणाम करै परिदच्छिन भावै ॥श्रीराधे॥
दंपति छवि उरधारि सीस श्रीपद परसावै ।५१०॥
चौकी अपर विशुद्ध विमल लै आगे धारै ।
जो सेवत सुख रूप बिछौना तथा सवारै ॥
थार परम रमनीय धरै तापै रुचि कारी ॥श्रीराधे।
पानदान वा मध्य लहै शोभा अति भारी ।५११॥
नैन चित्त लखि गहै भरी बीरी ता माही ।
स्वल्प कटोरी चहू ओर मनि धरी सुहाहीं ।
नाना भाति सुगध द्रव्य मेवा तिन मै भरि ॥श्रीराधे॥
अतरदान बहु जाति खुले ताके जोरै धरि ।५१२॥
जे जे क्रीड़ा सौज सखी कर लीन्हे सोहैं ।
बीजन दोऊ ओर अनूपम करै विमोहैं ॥
सनमुख ठाढी वृन्द सहचरी राग अलापै ॥श्रीराधे॥
उघटै तान तरग नृत्य बहु क्रिया कलापै ॥५१३॥
हम अनुशासन पाय अष्ट बैठी दोउ ओरी ।
च्यारि च्यारि की पाँति जुग्म अभिमुख निज सोरी ॥
मै प्यारी दिसि तथा विसाखा पिय ढिग जानौ ॥श्रीराधे॥
आमी सामी जुग्म रीति ऐसी पहिचानौ ॥५१४॥
चौकी अपर मगाय मध्य हम अपने धारी ।
बिष्टर सुभग रचाय बिछाई पासा सारी ॥
खेलै चित्त लगाय खेल सो अष्ट परस्पर ॥श्रीराधे।
हारि जीति सुख लहैं प्रिया पीतम लखि ततपर ॥५१५॥
खेलै खेल विचित्र होत कौतुक अतिभारी ।
आनद उदधि उमाह सबन तन दसा बिसारी ॥
क्रीड़त भई अबार सार पौ एक अरानी ॥श्रीराधे॥
पासा मेरे हाथ जुगल बोलत हँसि बानी ।५१६॥
प्यारी कहैं प्रचारि डारि ललिते पौ हेरी ।
लाल बलकि मुख भनै तीन काने अवलैरी ॥
तब श्रीस्यामा कही हाथ फकै हम अपने ॥श्रीराधे॥
पौ पारै सौ बार जीति पावौ नहि सपने ॥५१७॥

गहि लीन्ही पिय बाँह रीति से। होय न ऐसी।
हानि लाभ गति एक हाथ ललित। के तैसी।
गहैं परस्पर हस्त रखाई दृग भृकुटिन मुख श्रीरा०॥
हम सबके मन चाह इहै पावै छिन छिन सुख।५१८।

नैन सैन दै कोर दोऊ मेरी दिसि हेरैं।
भृकुटी पलक जनाय काज अपनो पुनि टेरै॥
मै मन कियो विचार मोद उलहे दोउ आरी।श्रीराधे।
सीस नाय कर जोरि विनै बलि करी निहोरी॥५१६॥

महाराज सहचरी सबन हिय चाह अबै अस।
खेलत भई अबार धरी राखै जस की तस॥
रैन सैन के समै ल्याय धारै पुनि सोई॥श्रीराधे॥
स्वस्थ चित्त मुद बढै करैं अज्ञा जो होई॥५२०॥

हस्त वदना किये नम्र ह्वै सबै उचारै।
दिवस शेष षट दण्ड रीति मज्जन मन धारै॥
लाल करी मनु हारि कीजिये अब असनाना।श्रीराधे॥
जो ललितादिक कहैं अहै सोई परिमाना॥५२१॥

निज भक्तन सुख हेत कृपा सब दिन श्री आरी।
मद विहसि मृदु गिरा भई मुख ऐसे हारी॥
बार बार बलिहार सबै श्रीपद सिर राखै॥श्रीराधे॥
महाराज जन मान देई पुजवै अभिलाखै॥५२२॥

जो मडल है मध्य तासु दच्छिन जहाँ सूते।
मडल पश्चिम ओर अधिक रचना याहूते॥
सभा कुज ता मध्य बनी वानिक अति भारी॥श्रीराधे॥
मज्जन हेत सुनीर सखी तहाँ धरै सवारी।५२३॥
अतर पट करि मध्य ठाम द्वै भिन्न बनावै।
स्नान हेत वर पीठ उभै धरि अधिक रचावैं॥
लागी सखी अपार रचै रचना चित राती॥श्रीराधे॥
पावै परम विनोद हरखि दपति जिहि भाँती।५२४॥
वेगि सहचरी एक आय मो सा सब गायो।
गठित विमल मनि पुष्प जान लघु लग्या सुहायो॥

बारहि वार प्रणाम करै परिदच्छिन भावै ॥श्रीराधे॥
दंपति छवि उरधारि सीस श्रीपद परसावैं ॥५१०॥
चौकी अपर विशुद्ध विमल लै आगे धारे।
जो देखत सुख रूप बिछौना तथा सवारै ॥
थार परम रमनीय धरै तापै रुचि कारी ॥श्रीराधे।
पानदान वा मध्य लहै शोभा अति भारी।५११॥
नैन चित्त लखि गहै भरी बीरी ता माही।
स्वल्प कटोरी चहू ओर मनि धरी सुहाही॥
नाना भांति सुगंध द्रव्य मेवा तिन मै भरि ॥श्रीराधे॥
अतरदान बहु जाति खुले ताके जोरै धरि।५१२॥
जे जे क्रीड़ा सौंज सखी कर लीन्हे सोहैं।
बीजन दोऊ ओर अनूपम करै विमोहै॥
सनमुख ठाढी वृन्द सहचरी राग अलापै ॥श्रीराधे॥
उघटै तान तरंग नृत्य बहु क्रिया कलापै ॥५१३॥
हम अनुशासन पाय अष्ट बैठी दोउ ओरी।
च्यारि च्यारि की पाँति जुग्म अभिमुख निज सोरी॥
मै प्यारी दिसि तथा विसाखा पिय ढिग जानौ ॥श्रीराधे॥
आमी सामी जुग्म रीति ऐसी पहिचानौ ॥५१४॥
चौकी अपर मगाय मध्य हम अपने धारी।
विष्टर सुभग रचाय बिछाई पासा सारी॥
खेलै चित्त लगाय खेल सो अष्ट परस्पर ॥श्रीराधे।
हारि जीति सुख लहै प्रिया पीतम लखि ततपर ॥५१५॥
खेलै खेल विचित्र होत कौतुक अतिभारी।
आनंद उदधि उमाह सबन तन दसा बिसारी॥
क्रीड़त भई अवार सार पौ एक अरानी ॥श्रीराधे॥
पासा मेरे हाथ जुगल बोलत हँसि वानी ॥५१६॥
प्यारी कहैं प्रचारि डारि ललिते पौ हैंरी।
लाल बलकि मुख भनै तीन काने अबलैरी॥
तब श्रीस्यामा कही हाथ फकै हम अपने ॥श्रीरा०॥
[illegible] ॥५१७॥

गहि लीन्ही पिय बाँह रीनि मा होय न ऐसी।
हानि लाभ गति एक हाथ ललिता के तैसी।
गहैं परस्पर हस्त रखाई दृग भृकुटिन मुख श्रीराधे॥
हम सबके मन चाह इहै पावै छिन छिन सुख।५१८।
नैन सैन दै कोर दोऊ मेरी दिसि हेरै।
भृकुटी पलक जनाय काज अपनो पुनि टेरै॥
मै मन कियो विचार मोद उलहै दोउ आरी।श्रीराधे।
सीस नाय कर जोरि विनै बलि करी निहोरी॥५१६॥
महाराज सहचरी सबन हिय चाह अबै अस।
खेलत भई अबार धरो राखै जस की तस॥
रैन सैन के समै ल्याय धारै पुनि सोई॥श्रीराधे॥
स्वस्थ चित्त मुद बढै करै अज्ञा जो होई॥५२०॥
हस्त वदना किये नम्र ह्वै सबै उचारै।
दिवस शेष षट दृड रीति मज्जन मन धारै॥
लाल करी मनु हारि कीजिये अब असनाना।श्रीराधे।
जो ललितादिक कहैं अहै सोई परिमाना॥५२१॥
निज भक्तन सुख हेत कृपा सब दिन श्री आरी।
मद विहसि मृदु गिरा भइ मुख ऐसे होरी॥
बार बार बलिहोर सबै श्रीपद सिर राखै॥श्रीराधे॥
महाराज जन मान देई पुजवै अभिलाखै॥५२२॥
जो मडल है मध्य तासु दच्छिन जहाँ सूतें।
मडल पश्चिम ओर अधिक रचना याहूते॥
सभा कुज ता मध्य बनी बानिक अति भारी॥श्रीराधे॥
मज्जन हेत सुनीर सखी तहाँ धरै सवारी।५२३॥
अतर पट करि मध्य ठाम द्वै भिन्न बनावै।
स्नान हेत वर पीठ उभै धरि अधिक रचावैं॥
लागी सखी अपार रचै रचना चित राती॥श्रीराधे॥
पावै परम विनोद हरखि दपति जिहि भाँती॥५२४॥
वेगि सहचरी एक आय मो सा सब गायो।
गठित विमल मनि पुष्प जान लघु लग्या सुहायो॥

सबको हेतु पिआनि उठे दंपति मुसुकाई ॥श्रीराधे॥
आली मंडल मध्य चले गति हँस लजाई ॥५२५॥
बसन पुष्प रचि मंजु पाँवडे मनिन सजारे।
निरखत हरखत आय जान बैठे दोउ प्यारे।
वरुण दिसा जो कुंज हेतु मज्जन कहि गाई।श्रीराधे॥
वाके तीर विमान मन्दगति पहुँच्यौ जाई ॥५२६॥
नित्य विहारी जुगल उतरि ता मध्य पधारे।
भिन्न भिन्न ले चलीं सखी थल जहाँ सवारे॥
तहाँ तहाँ जन प्रीति रीति गहि राजै दोऊ ॥श्रीराधे॥
श्रीपद कर मुखचंद्र धोय पोछे पट सोऊ ।५२७।
मज्जन को विधि जथा तथा अमनान करावै।
श्रीमन रुचि अनकूल सकल सेवा सुख भावै।
प्रेम सहित अन्हवाय वसन श्रीअंग अगुछाये ॥श्रीराधे॥
छोम वास सुभ राति सुनौ जा गति पहिराये ॥५२८॥
ललित वरन पट मंजु अनूपम श्रीअंग लायक।
कटि प्रदेस लै गुल्फ पाय जामा चिपटायक॥
कंठ ऊरु परिजंत वरन तैसी तन कुरता ॥श्रीराधे॥
चुस्त जुगल भुज बाँह बकुम घुंडी छवि घुरता ॥५२९॥
सोने सूत विचित्र काम दोऊ पट भारी।
डीठि परै जा ओर टरै वर बस नहि टारी॥
सीस टोपिका दई झुकत बाँई दिसि दच्छिन ॥श्रीराधे॥
केस खुले लै हस्त सखी सुख लहैं विचच्छन ॥५३०॥
सहचरि दंपति अंग एक सम पट पहिराए।
त्यागि पीठ सो उतरि भूमि श्रीपद परसाए॥
द्वै द्वै करि निज रूप सखी संग लागी सवै ॥श्रीराधे॥
दै मंडल चहुँ ओर निरखि जीवन फल लेवै ॥५३१॥
चित्रित अपर विमान पुष्प मनि रचित स्वरूप जो।
बाहिर कुंज समीप झमकि करि शब्द लग्यो सो।
दोऊ ओर सहचरिन पावडे रचे जान लौं।श्रीराधे॥
मंद मंद गति चले कियो मज्जन ता थल सौं।५३२॥

अरस परस लखि रूप मिले श्रीदृग हरखाने।
जुगल माधुरी सिंधु उमगि ढिग जान मिलाने॥
मानौ बीते कल्प बिलगता अस मन मानो।श्रीराधे॥
तृषित मीन तन ताप मिटे पाये ज्यौं पानी॥५३३॥

भेटे कंठ लगाय विवस गल बाहीं दीन्हे।
सैंवन सखी वरषाय तोरि तृण बलि हिय कीन्हे॥
नित्यविहारी जुगल अली मंडलगत राजै॥श्रीराधे॥
जान मध्य वर पीठ जाय बैठे छबि छाजै॥५३४॥

अब उत्तर दिसि शेष पंच मंडल मैं जाहैं।
सभा कुंज ता मध्य पेखि सबको मन मोहैं॥
वाके निकट सुहात रास मंडल लघु नीको॥श्रीराधे॥
नाना मनि मय ग्राम भाव तौ अतिसै जीको।५३५॥

सखियन दिव्य रचाय सिंघासन तापै धारयौ।
चंदवा मुक्ता दाम अमल नग छरी सवारयौ॥
मंजु सुखद तन परसि बिछौना सकल ठाम करि॥श्रीराधे॥
वर उपवर्हण राखि खरी छत्रादिक कर धरि॥५३६।

आसा करै विमान आगमन सबै सयानी।
सुनी गान धुनि कान शब्द मंगल हरखानी॥
आय निकट सो लग्यो सीस नय जय धनि भाखै॥श्रीराधे॥
कुसुमावलि वरखाय परसि पद भरि अभिलाखै॥५३७॥

दंपति इन तन हेरि उतरि सहचरि गण लीन्हे।
उमह्यौ हर्ष अपार रासमंडल पग दीन्हे॥
वर सिंघासन आय दोऊ बैठे छबि सेती॥श्रीराधे॥
अली लसै चहु ओर भाव पूरी अति जेती॥५३८।
टोपी धरी उतारि वार सखि हस्त सुखावै।
छत्र मोरछल चमर विजन कोउ मंद डुलावै॥
अपर सौंज शृंगार थार भरि भरि लै आवै॥श्रीराधे॥
कुसुमाभरन बनाय ल्याय सब हमै दिखावै।५३९।
परमामोद सुगंधि मेलि चंदन बहुरंगा।
भरी कटोरी लिये खरी हिय प्रेम अभंगा॥

सबको हेतु पिछानि उठे दंपति मुसुकाई ॥श्रीराधे॥
आली मंडल मध्य चले गति हँस लजाई ॥५२५॥
वसन पुष्प रचि मंजु पाँवडे सखिन सवारे।
निरखत हरखत आय जान बैठे दोउ प्यारे॥
वरुण दिसा जो कुंज हेतु मज्जन कहि गाई ॥श्रीराधे॥
वाके तीर विमान मंदगति पहुँच्यौ जाई ॥५२६॥
नित्य विहारी जुगल उतरि ता मध्य पधारे।
भिन्न भिन्न लै चलीं सखी थल जहाँ सवारे॥
तहाँ तहाँ जन प्रीति रीति गहि राजै दोऊ ॥श्रीराधे॥
श्रीपद कर मुखचंद्र धोय पोछै पट सोऊ ॥५२७।
मज्जन की विधि जथा तथा असनान करावै।
श्रीमन रुचि अनकूल सकल सेवा सुख भावै॥
प्रेम सहित अन्हवाय वसन श्रीअंग अंगुछाये ॥श्रीराधे॥
क्षौम वास सुभ रीति सुनौ जा गति पहिराये ॥५२८॥
ललित वरन पट मंजु अनूपम श्रीअंग लायक।
कटि प्रदेस लै गुल्फ पाय जामा चिपटायक॥
कंठ ऊरु परिजंत वरन तैसी तन कुरता ॥श्रीराधे॥
चुस्त जुगल भुज बाँह बकुम घुंडी छवि घुरता ॥५२९॥
सोने सूत विचित्र काम दोऊ पट भारी।
डीठि परै जा ओर टरै वर बस नहिं टारी॥
सीस टोपिका दई झुकत बाँई दिसि दच्छिन ॥श्रीराधे॥
केस खुले लै हस्त सखी सुख लहैं विचछन ॥५३०॥
सहचरि दंपति अंग एक सम पट पहिराए।
त्यागि पीठ सो उतरि भूमि श्रीपद परसाए॥
द्वै द्वै करि निज रूप सखी संग लागी सेवै ॥श्रीराधे॥
दै मंडल चहुँ ओर निरखि जीवन फल लेवै ॥५३१॥
चित्रित अपर विमान पुष्प मनि रचित स्वलग जो।
बाहिर कुंज समीप झमकि करि शब्द लग्यो सो।
दोऊ ओर सहचरिन पावडे रचे जान लौं ॥श्रीराधे॥
मंद मंद गति चले कियो मज्जन ता थल सौं। ५३२॥

अरस परस लखि रूप मिले श्रीदृग हरखाने।
जुगल माधुरी सिंधु उमगि ढिग जान मिलाने॥
मानौ बीते कल्प बिलगता अस मन मानो।श्रीराधे॥
तृषित मीन तन ताप मिटे पाये ज्यौ पानी॥५३३॥

भेटे कंठ लगाय विवस गल बाहीं दीन्हे।
सैवन सखी वरषाय तोरि तृण बलि हिय कीन्हे॥
नित्यविहारी जुगल अली मंडलगत राजै॥श्रीराधे॥
जान मध्य वर पीठ जाय बैठे छवि छाजै॥५३४॥

अब उत्तर दिसि शेष पंच मंडल मैं जाहै।
सभा कुंज ता मध्य पेखि सबको मन मोहैं॥
वाके निकट सुहात रास मंडल लघु नीको॥श्रीराधे॥
नाना मनि मय काम भाव तौ अतिसै जीको॥५३५॥

सखियन दिव्य रचाय सिंघासन तापै धार्यौ।
चंदवा मुक्ता दाम अमल नग छरी संवार्यौ॥
मंजु सुखद तन परसि बिछौना सकल ठाम करि॥श्रीराधे॥
वर उपवर्हण राखि खरी छत्रादिक कर धरि॥५३६।

आसा करै विमान आगमन सबै सयानी।
सुनी गान धुनि कान शब्द मंगल हरखानी॥
आय निकट सो लख्यो सीस नय जय धनि भाखै॥श्रीराधे॥
कुसुमावलि वरखाय परसि पद भरि अभिलाखै॥५३७॥

दंपति इन तन हेरि उतरि सहचरि गण लीन्हे।
उमह्यौ हर्ष अपार रासमंडल पग दीन्हे॥
वर सिंघासन आय दोऊ बैठे छवि सेती॥श्रीराधे॥
अली लसै चहु ओर भाव पूरी अति जेती॥५३८।

टोपी धरी उतारि वार सखि हस्त सुखावै।
छत्र मोरछल चमर विजन कोउ मंद डुलावै॥
अपर सौंज शृंगार थार भरि भरि लै आवै॥श्रीराधे॥
कुसुमाभरन बनाय ल्याय सब हमैं दिखावै।५३९।

परमामोद सुगंधि मेलि चंदन बहुरंगा।
भरी कटोरी लिये खरी हिय प्रेम अभंगा॥

हमहू मनै विचारि करै कर जोरि विनै नय ॥श्रीराधे॥
दिग मना पय हरषि धुनि मृदु बोलै जय ।५४०।
अतर पट दै मध्य जतन शृगार विभावै।
अपना अपनो ओर सबै आनन मन लावै॥
श्रीश्यामा श्रीसीस केस मै लगी सवारौ ॥श्रीराधे॥
पाटी अलक सुधारि गूथि मनि पुष्प सिगारौ ॥५४१॥

रगदेवी श्रीभाल तिलक बहु रग रचावै।
नासा कस्तूरी कपोल पत्र दृग अजन लावै॥
चिबुक श्याम दै बिंदु कुडली अलक बनावै ॥श्रीराधे।
छिय प्यारी पिय नाम लेखि कर चरण सुभ वै ।५४२।

भूषन मुक्ता श्वेत विमल मनि हरित कार लसि।
चपकलता प्रवीन कठ श्री पहिरावत हसि।
ग्रीवा लगि लर जुग्म पच लघु दीरघ त्यौही ॥श्रीराधे॥
हृदय बद्धिका मध्य फबे झूमक वर ज्यौही ।५४३।

अपर लरो छवि भरी धुकधुकी सहित विराजै।
सुवन माल विच बीच बृहत वनमाला छाजै॥
अरुण रेख जुत माग तहा अगुष्ट पर्व-सी ॥श्रीराधे॥
ताही मै सब काम ध्वजा शृगार गर्वकी ॥५४४॥

सोइ चद्रिका बगल उभै बूही परिमानी।
लाक सुभग ता मनौ किरिन मडल छवि सानी॥
वदी वेला अग स्वल्प झुकि अवधि श्रवन लै ॥श्रीराधे॥
किरनि वदिका मध्य केस मनि पुष्प जाल कै ॥५४५।

कुडल मकराकार उभै झूमक लोलक तम।
करनफूल श्रुति विवर दोऊ लोलक झूमक जस॥
रचना कुसुम विचित्र अलक आगे विधिलटकै ॥श्रीराधे॥
वार वार दृग आय पिय के जिन ते अटकै।५४६॥

श्रीनासा पुट वाम नथमडल लटकन जुत।
बेसरि दच्छ विभाग झुकनि बाकी मोती उत॥
मध्य बुलाक सुहात ओष्ठ उतर चलि परसै ॥श्रीराधे
ससिमडल थल बैठि मनौ ए सब ही दरसै ॥५४७॥

रेखा बीच नील इद्री वर दोऊ।
तखित रस हेत भोगि छौ नाते सोऊ॥
हिय कसकि चाप क्लुमित जुग मद्के॥श्रीराधे॥
से बिंदु अपर समता षटपद के॥५४८॥
सिंदूर केश अबुद समुदाई।
चित्रित मेघ होत ज्यौं सध्याई॥
बलाका सघ नखत मुक्ता बहु रगा॥श्रीराधे॥
तह चद किये अपनौ अस अगा॥५४६॥
सम वदन हेतु उपमा धरि पूरी।
वृदन मध्य भई देखै छवि दूरी॥
नहेली कहै रूप का वरनै एरी॥श्रीराधे॥
होत सिंगार थभो नाहिन कछु देरी॥५५०॥
भुजलता जुगल भूषन सब लाए।
ऊपर भेद विजायठ पच सुहाए॥
मणिबध लसै पहुची तह दोई॥श्रीराधे॥
अगुरिन दसौ पत्र कर सोभित सोई॥५५१॥
रन अनूप तासुपै सजे सवारी।
य ह्वै दूरि मगन दृग होत निहारी॥
चरन सरोज आय निज गोदी धारे॥श्रीराधे॥
पायल पादपृष्ठ चुटकी दस सारे॥५५२॥
विभूषित किये हरषि दृग मस्तक लाए।
चरन कछु मोरि दच्छ झूमत पधराए॥
पिका सीन ओर बाँई झुकती सी॥श्रीराधे॥
चख तह फसे दत चापे कहि सीसी॥५५३॥
हस्तन दिए जलज अनुपम गुनपूरे।
एक रस रहै छटा उपजत छिन भूरे॥
नरखि उठाय रुमाल वसती ओसिर॥श्रीराधे॥
ाग लटकाय छोर कधन दोऊ थिर॥५५४॥
सहचरी वृद पेखि नख सिख छवि भारी।
वृहत बनाय स्वछ लै आगे झारी॥

हमहू समै विचारि करै कर जोरि विनै नय ॥श्रीराधे॥
श्रीदृग सज्ञा पाय हरषि धुनि मृदु बोलै जय ।।५४०॥
अतर पद दै मध्य जतन श्रृंगार विभावै।
अपनी अपनी ओर सवै श्रीतन मन लावै ॥
श्रीस्यामा श्रीसीस केस मै लगी सवारौ ॥श्रीराधे॥
पाटी अलक सुधारि गूथि मनि पुष्प सिगारौ ॥५४१॥
रगदेवी श्रीभाल तिलक बहु रग रचावै ।
नासा कली कपोल पत्र दृग अजन लावै ॥
चिबुक श्याम दै बिदु कुडली अलक बनावै ॥श्रीराधे।
हिय प्यारी पिय नाज लेखि कर चरण सुभावै ॥५४२।
भूषन मुक्ता श्वेत विमल मनि हरित कार लखि।
चपकलता प्रवीन कठ श्री पहिरावत हसि ।
ग्रीवा लगि लर जुग्म पच लघु दीरघ त्यौही ॥श्रीराधे॥
हृदय बद्धिका मध्य फवे झूमक वर ज्यौही ।५४३॥
अपर लरी छबि भरी धुकधुकी सहित विराजै ।
सुवन माल बिच बीच बृहत वनमाला छाजै ॥
अरुण रेख जुत माग तहा अगुष्ट पर्व-सी ॥श्रीराधे॥
ताही मै सब काम ध्वजा श्रृंगार गर्वकी ॥५४४॥
सोइ चद्रिका बगल उभै बृही परिमानी।
लाक सुभग ता मनौ किरिन मडल छबि सानी ॥
वदी वेला अग स्वल्प झुकि अवधि श्रवन लै ॥श्रीराधे॥
किरनि वदिका मध्य केस मनि पुष्प जाल कै ॥५४५।
कुडल मकराकार उभै झूमक लोलक तस ।
करनफूल श्रुति विवर दोऊ लोलक झूमक जस ॥
रचना कुसुम विचित्र अलक आगे विधि लटकै ॥श्रीराधे॥
वार वार दृग आय पिय के जिन ते अटकै।५४६॥
श्रीनासा पुट वाम नथमडल लटकन जुत।
बेसरि दच्छ बिभाग झुकनि बाकी मोती उत ॥
मध्य बुलाक सुहात ओष्ठ उतर चलि परसै ॥श्रीराधे॥
ससिमडल थल बैठि मनौ ए सब ही दरसै ॥५४७॥

रेखा बीच नील इद्री वर दोऊ।
नखित रस हेत भोगि छौ नाने सोऊ॥
। हिय कसकि चाप क्लुमित जुग मडके ॥श्रीराधे॥
से बिंदु अपर समता षटपद के॥५४८॥
› सिदूर केश अबुद समुदाई।
चित्रित मेघ होत ज्यौ सध्याई॥
बलाका सघ नखत मुक्ता बहु रगा॥श्रीराधे॥
। तह चद किये अपनौ अस अगा।५४६।
ा सम वदन हेतु उपमा धरि पूरी।
वृदन मध्य भई देखै छवि दूरी॥
सहेली कहै रूप का वरनै एरी॥श्रीराधे॥
होत सिंगार थभौ नाहिन कछु देरी॥५५०॥
ा भुजलता जुगल भूषन सब लाए।
ऊपर भेद विजायठ पच सुहाए॥
ष्ठ मणिबध लसै पहुची तइ दोई॥श्रीराधे॥
अगुरिन दसौ पत्र कर सोभित सोई॥५५१॥
रन अनूप तासुपै सजे सवारी।
ाय ह्वै दूरि मगन हग होत निहारी॥
। चरन सरोज आय निज गोदी धारे॥श्रीराधे॥
पायल पादपृष्ठ चुटकी दस सारे॥५५२॥
विभूषित किये हरषि हग मस्तक लाए।
चरन कछु मोरि दच्छ झूमत पधराए॥
ोपिका सीस ओर बाँई झुकती सी॥श्रीराधे॥
चख तह फसे दृत चापे कहि सीसी॥५५३॥
हस्तन दिए जलज अनुपम गुनपूरे।
एक रस रहै छटा उपजत छिन भूरे॥
नरखि उठाय रुमाल वसती ओसिर॥श्रीराधे॥
ाग लटकाय छोर कधन दोऊ थिर॥५५४॥
ाहचरी वृद पेखि नख सिख छवि भारी।
बृहत वनाय स्वच्छ लै आगें धारी॥

हमहू समै विचारि करै कर जोरि विनै नय ॥श्रीराधे॥
श्रीहग सज्ञा पाय हरषि धुनि मृदु बोलै जय ॥५४०॥
अतर पद दै मध्य जतन शृगार विभावै।
अपनी अपनो ओर सबै श्रीतन मन लावै॥
श्रीस्यामा श्रीसीस केस मै लगी सवारौं ॥श्रीराधे॥
पाटी अलक सुधारि गूथि मनि पुष्प सिगारौं ॥५४१॥
रगदेवी श्रीभाल तिलक बहु रग रचावै।
नासा फली कपोल पत्र हग अजन लावै॥
चिबुक श्याम दै बिदु कुडली अलक बनावै ॥श्राराधे।
हिय प्यारी पिय नाम लेखि कर चरण सुभावै ॥५४२।
भूषन मुक्ता श्वेत विमल मनि हरित कार लसि।
चपकलता प्रवीन कठ श्री पहिरावत हसि।
ग्रीवा लगि लर जुग्म पच लघु दीरघ त्यौंही ॥श्रीराधे॥
हृदय बद्रिका मध्य फवे झूमक वर ज्यौंही ॥५४३॥
अपर लरी छवि भरी धुकु धुकी सहित विराजै।
सुबन माल बिच बीच बृहत बनमाला छाजै॥
अरुण रेख जुत माग तहा अगुष्ट पर्व-सी ॥श्रीराधे॥
ताही मैं सब काम ध्वजा शृगार गर्वकी ॥५४४॥
सोइ चद्रिका बगल उभै बृही परिमानी।
लाक सुभग ता मनौ किरिन मडल छवि सानी॥
वदी वेला अग स्वल्प झुकि अवधि श्रवन लै ॥श्रीराधे॥
किरनि वदिका मध्य केस मनि पुष्प जाल कै ॥५४५।
कुडल मकराकार उभै झूमक लोलक तम।
करनफूल श्रुति विवर दोऊ लोलक झूमक जस॥
रचना कुसुम विचित्र अलक आगें विधिलटकै ॥श्रीराधे॥
वार वार हग आय पिय के जिन ते अटकै। ५४६॥
श्रीनासा पुट वाम नथमडल लटकन जुत।
बेसरि दच्छ बिभाग झुकनि बाकी मोती उत॥
मध्य बुलाक सुहात ओष्ठ उतर चलि परसै ॥श्रीराधे॥
ससिमडल थल बैठि मनौ ए सब ही दरसै ॥५४७॥

वर्तुल रेखा बीच नील इद्री वर दोऊ।
चित्र लिखित रस हेत भोगि छौ नाते सोऊ॥
इदुमौलि हिय कसकि चाप क्लुमित जुग मदके ॥श्रीराधे॥
शक्रवधू से बिंदु अपर समता षटपद के ॥५४८॥
इद्रधनुक सिंदूर केश अबुद समुदाई।
चदन चित्रित मेघ होत ज्यौं सध्याई॥
सुवन बलाका सघ नखत मुक्ता बहु रगा ॥श्रीराधे॥
इदुलेखा तह चद किये अपनौ अस अगा।५४६।
श्रीस्यामा सम वदन हेतु उपमा धरि पूरी।
सहचरि वृदन मध्य भई देखै छवि दूरी॥
कोउ सहेली कहै रूप का बरनै एरी ॥श्रीराधे॥
अबही होत सिंगार थभो नाहिन कछु देरी ॥५५०॥
तुगविद्या भुजलता जुगल भूषन सब लाए।
कोहनी ऊपर भेद विजायठ पच सुहाए॥
हस्त पृष्ठ मणिबध लसै पहुची तह दोई ॥श्रीराधे॥
छापै अगुरिन दसौ पत्र कर सोभित सोई ॥५५१॥
कुसुमाभरन अनूप तासुपै सजे सवारी।
सीस लाय ह्वै दूरि मगन दृग होत निहारी॥
मैं पुनि चरन सरोज आय निज गोदी धारे॥श्रीराधे॥
नूपुरु पायल पादपृष्ठ चुटकी दस सारे ॥५५२॥
कुसुम विभूषित किये हरषि दृग मस्तक लाए।
वाम चरन कछु मोरि दच्छ झूमत पधराए॥
दई टोपिका सीस ओर बाँई झुकती सी ॥श्रीराधे॥
सबके चख तह फसे दृत चापे कहि सीसी ॥५५३॥
श्रीजुग हस्तन दिए जलज अनुपम गुनपूरे।
सदा एक रस रहै छटा उपजत छिन भूरे॥
पाछै निरखि उठाय रुमाल वसती ओसिर ॥श्रीराधे॥
अग्र भाग लटकाय छोर कधन दोऊ थिर ॥५५४॥
सकल सहचरी वृद पेखि नख सिख छवि भारी।
दर्पन बृहत बनाय स्वच्छ लै आगे धारी॥

श्रीजू निज प्रतिबिंब निरखि दृग तहाँ लगाने ॥श्रीराधे॥
आप आपने रूप रीझि मन चख सकुचाने ॥५५५॥
गोपेश्वर सर्वस्व परम धन हमरे सोई ।
भई सक मन माहि डीठि लागै जिनि कोई ॥
करि करि मंत्र विधान वस्तु नाना विधि वारै ॥श्रीराधे॥
विगत निमेष निहारि अनूपम छवि उर धारै ॥५५६॥

सखी माधवी नाम विसाखा संग रहै जो ।
श्रीपीतम शृङ्गार देखि नीकै आई सो ॥
निरखि लाडिली रूप मत्त ह्वै दसा भुलानी ॥श्रीराधे॥
ता ओरी वृत्तांत पूछिवे मन हम ठानी ॥५५७॥

भई चेतना ताहि मंद स्वर कहिवे लागी ।
लाल अंग शृङ्गार सुनै सिगरी रस पागी ॥
प्रथम नम्र ह्वै लगी विसाखा गूथन बेनी ॥श्रीराधे॥
पाटी अलक सवारि पुष्प मनि चित्रित श्रेनी ॥५५८॥

चित्रा दृग सुख लेहि करै रचना चंदन की ।
नैनन नैन मिलाइ देहि रेखा अंजन की ॥
नासा कली कपोल पत्र अलकै भृकुटी रचि ॥श्रीराधे॥
चिबुक बिंदु सो पीत हिये वर नाम प्रिया खचि ॥५५९॥

अंगराग बहुरंग हस्त पद सुभग रचाए ।
वर मुक्ता मनि स्वेत हरित जुत भूषन भाए ॥
कंठा कंठ सुहात लरी जुग त्रय हिय वद्धी ॥श्रीराधे॥
शोभित असन मराल माल झूमक ता मद्धी ॥५६०॥
बिच बिच दाम प्रसून बृहत वैजंती झूमै ।
देखि रहै नहि धीर चित्त ताही दिस लूमै ॥
ऐसी मौलि सुहात चंद्रिका किरिनि तथाही ॥श्रीराधे॥
वंदी वेना अंग स्वल्प लगि श्रवनन आई ॥५६१॥

वंदी किरनिन मध्य केस तहं जाल रचाए ।
कुंडल उभै विभात झूमका लोलक भाए ॥
करनफूल श्रुति छिद्र जुगल झूमक लोलक वर ॥श्रीराधे॥
रचना सुवन रचाय श्रवन लटकै तिनकी लर ॥५६२॥

अलक कुंडली भूत कपोलन परसि जनावै ।
नेक निहारे डसै मनौ तन गरल चढ़ावै ।।
श्रीनासा पुट दच्छ सहित लटकन नथ जैसा ।।श्रीराधे।।
मुक्ता जुग्म अनूप वाम पुट वेसरि तैसी ।।५६३।।

सोभित मध्य बुलाक झुकनि चख चित्त लुभावे ।
लहै सहायक दंत छटा बल द्विगुन जनावै ।।
चित्रित टोपी दई सीस चित्रा झुकि दाहिन ।।श्रीराधे।।
देखि लगी दृग ढरी बुद्धि मन निज वस नाहिन ।।५६४।।

इंदुलेखा भुज दंड जुगल भूखै हिय भावै ।
मोदक दंव उमाहि सकल भूषन पहिरावै ।।
पंच विजायठ हस्तपृष्ठ पहुंची जुग चूरा ।।श्रीराधे।।
दसौ अंगूठी सजै तथा करपत्र करूरा ।।५६५।।

अमल सुवन आभरन तासुपै कसि लसि देखै ।
सीस लाय ह्वै बिलग धन्य जीवन निज लेखै ।।
बहुरि सुदेवी आय मौलि श्रीपद परसाए ।।श्रीराधे।।
हंसि हंसि गोदी धारि प्रेम वश हिय लगाए ।।५६६।।

नूपुर पायल पादपृष्ठ अंगुरिन चुटुकी दस ।
सुवन विचित्र सजाय पेखि अनुराग लहैं तस ।।
चरण वाम श्रीमोरि दच्छ झूमत पधराए ।।श्रीराधे।।
रंग वसती निरखि सीस रूमाल उठाए ।।५६७।।

अमल कमल आमोद सदन श्रीकर जुग दीन्हे ।
नख सिख रूप अपार निहारि हिये धरि लीन्हे ।।
दीरघ स्वच्छ सवारि मुकुर आगें दिखरायो ।।श्रीराधे।।
आप आप छवि देखि विहसि आनंद भर पायो ।।५६८।

मो दिसि हेरि बुलाय श्रवन पिय गिरा सुनाई ।
लखौ लाडिली रूप जाय जिनि होहु जनाई ।।
तेरे मुखते जानि जतन वर कीजै सोई ।।श्रीराधे।।
जुगल ओर मुद सिंधु बढै सब को हित होई ।।५०९।।
माधवि ऐसे भाषि परी मम चरण बहोरी ।
एह सुख छाँडि न जाउँ तहाँ हा हा बलि तोरी ।।

श्रीजू निज प्रतिबिंब निरखि दृग तहां लगाने ॥श्रीराधे॥
आप आपने रूप रीझि मन चख सकुचाने ॥५५५॥
गोपेश्वर सर्वस्व परम धन हमरे सोई।
भई सक मन माहि डीठि लागै जिनि कोई॥
करि करि मंत्र विधान वस्तु नाना विधि वारै ॥श्रीराधे॥
विगत निमेष निहारि अनूपम छवि उर धारै ॥५५६॥

सखी माधवी नाम विसाखा संग रहै जो।
श्रीपीतम शृङ्गार देखि नीकै आई सो॥
निरखि लाडिली रूप मत्त ह्वै दसा भुलानी ॥श्रीराधे॥
ता ओरी वृत्तांत पूछिवे मन हम ठानी ॥५५७॥

भई चेतना ताहि मंद स्वर कहिवे लागी।
लाल अंग शृङ्गार सुनै सिगरी रस पागी॥
प्रथम नम्र ह्वै लगी विसाखा गूथन बेनी ॥श्रीराधे॥
पाटी अलक सवारि पुष्प मनि चित्रित श्रेनी ॥५५८॥

चित्रा दृग सुख लेहि करै रचना चंदन की।
नैनन नैन मिलाइ देहि रेखा अंजन की॥
नासा कली कपोल पत्र अलकै भृकुटी रचि ॥श्रीराधे॥
चिबुक बिंदु सो पीत हिये वर नाम प्रिया खचि ॥५५९॥

अंगराग बहुरंग हस्त पद सुभग रचाए।
वर मुक्ता मनि स्वेत हरित जुत भूषन भाए॥
कंठा कंठ सुहात लरी जुग त्रय हिय वद्धी ॥श्रीराधे॥
शोभित असन मराल माल झूमक ता मद्धी ॥५६०॥
बिच बिच दाम प्रसून बृहत वैजंती झूमै।
देखि रहै नहि धीर चित्त ताही दिस लूमै॥
ऐसी मौलि सुहात चंद्रिका किरिनि तथाही ॥श्रीराधे॥
वंदी वेना अंग स्वल्प लगि श्रवनन आई ॥५६१॥

वंदी किरननि मध्य केस तंह जाल रचाए।
कुंडल उभै विभात झूमका लोलक भाए॥
करनफूल श्रुति छिद्र जुगल झूमक लोलक वर ॥श्रीराधे॥
रचना सुवन रचाय श्रवन लटकै तिनकी लर ॥५६२॥

अलक कुडली भूत कपोलन परसि जनावै ।
नेक निहारे डसै मनौ तन गरल चढावै ॥
श्रीनासा पुट दच्छ सहित लटकन नथ जैसा ।श्रीराधे॥
मुक्ता जुग्म अनूप वाम पुट बेसरि तैसी ॥५६३॥
सोभित मध्य बुलाक झुकनि चख चित्त लुभावे ।
लहै सहायक दंत छटा बल द्विगुन जनावै ॥
चित्रित टोपी दई सीस चित्रा झुकि दाहिन ॥श्रीराधे॥
देखि लगी दृग ठकी बुद्धि मन निज वस नाहिन ॥५६४॥

इदुलेखा भुज दड जुगल भूखै हिय भावै ।
मोदक दव उमाहि सकल भूषन पहिरावै ॥
पच विजायठ हस्तपृष्ठ पहुची जुग चूरा ॥श्रीराधे॥
दसौ अगूठी सजै तथा करपत्र करूरा ॥५६५॥

अमल सुवन आभरन तासुपै कसि लसि देखै ।
सीस लाय ह्वै विलग धन्य जीवन निज लेखै ॥
बहुरि सुदेवी आय मौलि श्रीपद परसाए ॥श्रीराधे॥
हसि हसि गोदी धारि प्रेम वश हिय लगाए ॥५६६॥

नूपुर पायल पादपृष्ठ अगुरिन चुटुकी दस ।
सुवन विचित्र सजाय पेखि अनुराग लहैं तस ॥
चरण वाम श्रीमोरि दच्छ झूमत पधराए ॥श्रीराधे॥
रग वसती निरखि सीस रूमाल उठाए ॥५६७॥

अमल कमल आमोद सदन श्रीकर जुग दीन्हे ।
नख सिख रूप अपार निहारि हिये धरि लीन्हे ॥
दीरघ स्वच्छ सवारि मुकुर आगे दिखरायो ॥श्रीराधे॥
आप आप छवि देखि विहसि आनद भर पायो ॥५६८।

मो दिसि हेरि बुलाय श्रवन पिय गिरा सुनाई ।
लखौ लाडिली रूप जाय जिनि होहु जनाई ॥
तेरे मुखते जानि जतन वर कीजै सोई ॥श्रीराधे॥
जुगल ओर मुद सिधु बढै सब को हित होई ॥५ ६॥
माधवि ऐसे भाषि परी मम चरण बहोरी ।
एह सुख छाँडि न जाउँ तहाँ हा हा बलि तोरी ॥

ए बाते सब होत परस्पर श्रीजू जानी ॥श्रीराधे॥
कृपा विलोचन कोर हेरि हम तन मुसुकानी ॥५७०॥
श्रीपद सीस लगाय जोरि कर नय बलिभाषी।
श्रीमहारानी एक अली कब की अभिलाषी॥
श्रीभृकुटी रुख पाय माधवो आगे लीन्ही ॥श्रीराधे॥
सावधान ह्वै कहौ सकल श्रीआज्ञा दीन्ही ॥५७१॥
करि प्रणाम अति नम्र भई मृदु गिरा उचारी।
नख सिख भेद सिगार रीति बरनी इक सारी॥
भूषन वसन सुहात वेस दोऊ एकै सम ॥श्रीराधे॥
श्रीश्यामा को श्याम आजु सबके मन है भ्रम ॥५७२॥
सुनि उमग्यो हिय हर्ष कही श्रीमुख हँसि वानी।
ओष्ठ अभ्र चलि पाँति नखत रद छटा लखानी॥
ए ललिते पट मध्य बिलग कीजै अब आई।श्रीराधे॥
कौन भाँति भ्रम अहै रूप ताको दरसाई ॥५७३॥
अतर पट कर खैंचि अली जय धुनि भनि हरषै।
मगन भई सुख सिंधु उमगि लखि सुवन सुवरषै॥
दंपति विहसि निहारि परस्पर दृग अरझाने ॥श्रीराधे॥
भये माधुरी लीन सिथल तन नैन झपाने ॥५७४॥
जो समता के हेत धारि उपमा वनि आई।
इंदुलेखा ससि रूप वस्तु कितनी तन लाई॥
ताहि बाँह गहि ल्याय करी श्रीसनमुख ठाढी ॥श्रीराधे॥
इत उत सखी निहारि हसैं हाँसी अति बाढी ॥५७५॥
पिय प्यारी दृग खोलि लखै कौतुक जिय बाढे।
मद विहसि मृदु कहैं हँसत हौरी का गाढे॥
महाराज यह रूप हेत उपमा धरि आई ॥श्रीराधे॥
ज्यौं रवि आगें दीप तथा सोभा इन पाई ॥५७६॥
उपल महामणि निकट सुपचनी रति ढिग जैसें।
जीव ईस अनुरूप सुधा मदिरा लग तैसे॥
अतर महत लखाय बात बहु सुमिरन आँवै ॥श्रीराधे॥
होत अबै अतिकाल सुने एऊ सकुचाँवै ॥५७७॥

याते हसी अपार होत इनकी दिनि हेरी।
महाराज अविनीति छमा कीजे सब केरा॥
तुगविद्या अस भाषि इदुलेखा ढिग आँई।।श्रीराधे।।
भलौ बनायो रूप चलो तुम सबे हसाँइ॥५७८॥

बाहिर तिन्है निकासि आय दरपन वर कर धरि।
सिंघासन के निकट मध्य ठाढी सनमुख करि॥
दंपति तहाँ विलोकि परस्पर रीझि निहारें॥श्रीराधे॥
नैन प्राण मन बुद्धि सने दोऊ बलिहार॥५७९॥

पीतम निज कर कमल नासिका प्यारी लायो।
प्रिया जलद वर हस्त लाल हँसि घ्राण छुवाया॥
हेरनि बोलनि हसनि चलनि भृकुटी चख कारनि॥श्रीराधे॥
उदधि उभै मुद उमग लहरि अलि मीन झकारनि॥५८०॥

जलचरि सहचरि लहैं हरष जीवन छिन सोई।
पिय प्यारी निति केलि हेत इनही के होइ॥
स्वल्प रह्यो दिन जानि प्रणय कीन्ही कर जोरी।श्रीराधे॥
करुणाशील स्वभाव विहसि चितये हम ओरी॥५८१॥

करि प्रणाम है निकट उतारी बलि नथ बेसरि।
चूरन सकल सुगध द्रव्य गुन भूरि पात्र धरि॥
दियो जुगल श्रीहस्त पूरि मुख भलौ बखानै॥श्रीराधे॥
सुधा अनूपम अमल कटोरा भरे प्रमानै॥५८२॥

विमल रकाबी सहित वसन तापै धरि लीन्हे।
श्रीइच्छा रुख जानि वदन ससि योजित कीन्हे॥
घूट घूट रस लेत देत अनवधि सुख भारी॥श्रीराधे॥
अरस परस कर गहैं पियावत पिय मिलि प्यारी॥५८३॥

बहुरि कलूला किये वदन पोछें मृदु पट लै।
मन प्रसन्नता हेत सुभग मुखवास दई नै॥
जानि परै अनुराग सखिन को ते बीरी रचि॥श्रीराधे।
वर भाजन कर धारि खरी लै दोउ ओरी सचि॥५८४॥
दंपति प्रेम विलोकि लेत मुख मेलत हँसि हँसि।
खात खवावत निरखि अली पद परसत खसि खसि॥

ए बाते सब होत परस्पर श्रीजू जानी ।।श्रीराधे।।
कृपा विलोचन कोर हेरि हम तन मुसुकानी ।।५७०।।
श्रीपद सीस लगाय जोरि कर नय बलिभाषी ।
श्रीमहारानी एक अली कब की अभिलाषी ।।
श्रीभृकुटी रुख पाय माधवी आगें लीन्ही ।।श्रीराधे।।
सावधान ह्वै कह्यौ सकल श्रीआज्ञा दीन्ही ।।५७१।।
करि प्रणाम अति नम्र भई मृदु गिरा उचारी ।
नख सिख भेद सिगार रीति बरनी इक सारी ।।
भूषन वसन सुहात वेस दोऊ एकै सम ।।श्रीराधे।।
श्रीश्यामा को श्याम आजु सबके मन है भ्रम ।।५७२।।

सुनि उमग्यो हिय हर्ष कही श्रीमुख हँसि बानी ।
ओष्ठ अभ्र चलि पाँति नखत रद छटा लखानी ।।
ए ललिते पट मध्य बिलग कीजै अब आई ।श्रीराधे।।
कौन भाँति भ्रम अहै रूप ताको दरसाई ।।५७३।।

अतर पट कर खैंचि अली जय धुनि भनि हरषै ।
मगन भई सुख सिंधु उमगि लखि सुवन सुवरषे ।।
दंपति विहसि निहारि परस्पर दृग अरझाने ।।श्रीराधे।।
भये माधुरी लीन सिथल तन नैन झपाने ।।५७४।।

जो समता के हेत धारि उपमा बनि आई ।
इंदुलेखा ससि रूप वस्तु जितनी तन लाई ।।
ताहि बाँह गहि ल्याय करी श्रीसनमुख ठाढी ।।श्रीराधे।।
इत उत सखी निहारि हसैं हाँसी अति बाढी ।।५७५।।

पिय प्यारी दृग खोलि लखै कौतुक जिय बाढे ।
मंद बिहसि मृदु कहैं हँसत हौरी का गाढे ।।
महाराज यह रूप हेत उपमा धरि आई ।।श्रीराधे।।
ज्यौं रवि आगें दीप तथा सोभा इन पाई ।।५७६।।

उपल महामणि निकट सुपचनी रति ढिग जैसे ।
जीव ईस अनुरूप सुधा मदिरा लग तैसे ।।
अतर महत लखाय बात बहु सुमिरन आँवै ।।श्रीराधे।।
होत अबै अतिकाल सुने एऊ सकुचाँवै ।।५७७।।

याते हँसी अपार होत इनकी दिसि हेरी।
महाराज अविनीति छमा कीजै सब केरी॥
तुंगविद्या अस भाषि इंदुलेखा ढिग आँई।।श्रीराधे।।
भलौ बनायो रूप चलो तुम सबै हसाँई।।५७८॥

बाहिर तिन्है निकासि आय दरपन वर कर धरि।
सिंघासन के निकट मध्य ठाढी सनमुख करि॥
दंपति तहाँ विलोकि परस्पर रीझि निहारें॥श्रीराधे॥
नैन प्राण मन बुद्धि सने दोऊ बलिहारें॥५७९॥

पीतम निज कर कमल नासिका प्यारी लायो।
प्रिया जलद वर हस्त लाल हँसि प्राण छुवायो॥
हेरनि बोलनि हसनि चलनि भृकुटी चख कारनि॥श्रीराधे॥
उदधि उभै मुद उमग लहरि अलि मीन झकोरनि॥५८०॥

जलचरि सहचरि लहैं हरष जीवन छिन सोई।
पिय प्यारी निति केलि हेत इनही कें होई॥
स्वल्प रह्यौ दिन जानि प्रणय कीन्ही कर जोरी।श्रीराधे॥
करुणाशील स्वभाव विहसि चितये हम ओरी॥५८१॥

करि प्रणाम ह्वै निकट उतारी बलि नथ बेसरि।
चूरन सकल सुगध द्रव्य गुन भूरि पात्र धरि॥
दियो जुगल श्रीहस्त पूरि मुख भलौ बखानै॥श्रीराधे॥
सुधा अनूपम अमल कटोरा भरे प्रमानै॥५८२॥

विमल रकाबी सहित वसन तापै धरि लीन्हे।
श्रीइच्छा रुख जानि वदन सखि योजित कीन्हे॥
घूंट घूंट रस लेत देत अनवधि सुख भारी॥श्रीराधे॥
अरस परस कर गहैं पियावत पिय मिलि प्यारी॥५८३॥

बहुरि कलूला किये वदन पोछें मृदु पट लै।
मन प्रसन्नता हेत सुभग मुखवास दई नै॥
जानि परै अनुराग सखिन को ते बीरी रचि॥श्रीराधे।
वर भाजन कर धारि खरी लै दोउ ओरी सचि॥५८४॥

दंपति प्रेम विलोकि लेत मुख मेलत हँसि हँसि।
खात खवावत निरखि अली पद परसत खसि खसि॥

मैऊ विसाखा सहित सकुचि नथ वेसरि रर लै ॥श्रीराधे॥
श्रीनासा पुट जुगल वारि बलि सिर चरणन दै ॥५८५॥
नाना अतर सुगध जलज ते सुखद ममोए।
जुगल हस्त श्रीफवे सहचरिन हरखि बिजोए।
मनि चौकी पर थार कुसुम रचना करि धारी ॥श्रीराधे॥
पुष्पाजलि चहुँ ओर सारि नीराजन वारी ॥५८६॥
हरषैं वरषै सुवन सखी परिद्च्छिन लावैं।
जय जय जुगलकिसोर भनै तन भूमि लगावैं ॥
रणतकार रव उठै सहचरी जापै सोहै ॥श्रीराधे॥
ररै जुगल गुन गान श्रवन सुनि जडचर मोहैं ॥५८७॥
सो धुनि सुनि सब कान कहैं यह शब्द कहा है।
चकित भई नभ ओर विलोके ठाम जहा है ॥
ता छिन विमल विमान उदै लखि जिय हरखानी ॥श्रीराधे॥
झमझमाय झुकि लग्यो रासमडल ढिग आनी ॥५८८॥

भक्ति अग मणि रग सकल विरचित छवि छावैं।
तीन खड वर खभ वनिक लखि चित्त लुभावै ॥
ऊपर भूमि समान मध्य वेदी वर सोहै ॥श्रीराधे॥
पच स्वल्प सोपान पीठ अति उत्तम जो है ॥५८९॥

तापै तन्यो वितान छरी मनि अष्ट सुहाई।
झूमक मोती सुवन रचित झालरि झलकाई ॥
रचना अमल अनूप प्रिया पीतम मन मानी ॥श्रीराधे॥
सोई विनती करै सखी मन की रुचि जानी ॥५९०॥

दपति लखि अनुराग सवन को सो जिय धारी।
उठे परस्पर अग थामि लगि सहचरि सारी ॥
आली मडल मध्य मद गति चरन पधारे ॥श्रीराधे॥
चढि विमान हिय हरषि पीठ बैठे दोउ प्यारे ॥५९१॥
प्रभा विनिंदक अमित चद्र विवि छत्र सीस पर।
घूमत पाय समीर वेग चचल झूमक लर ॥
चामर दोऊ ओर मोर छल व्रिजन आदि जे ॥श्रीराधे॥
समै सुहाती सौज सकल सेवा कीहैं ते ॥५९२॥

सहचरि वृंद अनंत सबै सोहैं कर लीन्हे।
तन मन इंद्री वृत्ति नैन दंपति पद दीन्हे॥
सिंघासन के निकट अष्ट हमहू लगि ठाढी॥श्रीराधे॥
रूप माधुरी सुधा चखन पीवत रुचि बाढी॥५६३॥
अपर सहचरी अष्ट मुख्य मेरी बहु गण लै।
नृत्य वाद्य को वेस धारि सनमुख ठाढीं नै॥
आली चढी विमान जूथ गनि कापै जावैं॥श्रीराधे॥
श्रीइच्छा वश जान रूप लघु बृहत विभावै॥५६४॥
कोटिन कोटि विमान अपर नभ मंडल छाए।
कौतुक संग विहार हेत सबही मिलि आए॥
श्रीइच्छा उनमानि जान उठि चल्यो तहाते॥श्रीराधे॥
जय जय जय धुनि पूरि रही दिसि विदिसि जहात॥५९५॥
दंपति रूप निहारि हियें धरि सबहीं हरषैं।
बार बार बलिहारि सुमन अंजलि भर बरषै॥
डोलै त्रिविधि समीर लता वेली द्रुम लोलै॥श्रीराधे॥
द्विजगण जाति समूह मत्त षटपद धुनि बोलै॥५९६॥
जा जा मंडल ओर जात सो जान अनूपा।
निज कुंजन पर खरी सखी निरखैं छवि जूपा॥
वन उपवन आराम बाटिका बाग प्रदेसा॥श्रीराधे॥
गिरि निर्झर सर सरित वापिका कूप सुवेसा॥५६७॥
लखत लखावत जात परस्पर पीतम प्यारी।
शोभा जल थल विपिन जुगल सुख होत निहारी॥
बाहिर मंडल तीन बहै जमुना सुखदाता॥श्रीराधे॥
द्रुम राजी मनि घाट लता विकसित जलजाता॥५९८॥
धारा परसत फिरत विमान चहूँ दिसि तामैं।
अपर जान नभ देस सटे कोलाहल जामैं॥
नृत्य गान सुनि हेरि अमल छवि पीतम प्यारी॥श्रीराधे॥
पूरि रह्यो सुख सार सवन तन दशा बिसारी॥५६९॥
बहुरि जान उठि चल्यौ जानि इच्छा प्रभु केरी।
मंद आवत मंद दिसा अंबर सब घेरी॥

महारास को ठाम बृहत मंडल जो गायो ॥श्रीराधे॥
जमुना स्वल्प प्रवाह तासु चहु ओर सुहायो ।६००॥
सोभा देखि अपार जुगल मन की गति पाई ।
उतर्‍या हरे विमान मध्य धारा लगि आई ॥
उभै दिसा मनि घाट लता द्रुम गुल्म रत्नमय ॥श्रीराधे॥
विविधि जाति नग कंज मंजु गुंजै षटपद चय ॥६०१॥
क्यारी पुष्प विचित्र लगी जलजंत्र सुहाए ।
भूमि बालुका वर्ण अमित गुन कौतुक छाए ॥
सदा अखंडल रास महा मंडल थल आनंद ॥श्रीराधे॥
नित्य विहार अपार मोद आगार सार हद ॥६०२॥
चलै मंद गति जान बलै जल थल चहुँ पासा ।
दंपति सो छबि निरखि हरखि पुजवै जन आसा ॥
मंडल कोर समान विमान झमकि झुकि परस्यो ॥श्रीराधे॥
जय जय शब्द उदोत भयो सबको मन हरस्यो ॥६०३॥
उतरे श्यामा श्याम अली घेरे चहुँ फेरे ।
दिये दच्छ आवर्त्त फिरै मंडल वन हेरे ॥
सिंघासन के निकट आय ठाढे दोउ प्यारे ॥श्रीराधे॥
बानिक अतुलित पीठ सुखो दृग होत निहारे ॥६०४॥
चित्त प्रमोद उमाहि परस्पर बैठन के हित ।
श्रीपद वर सोपान विहसि झुकि परस कियो तित ॥
लटकि सभारैं अंग प्रिया पीतम त्यो अलियाँ ॥श्रीराधे॥
मानौ किरन समूह जुगल ससि तन संग रलियाँ ॥६०५॥
उपवर्हण श्री मेलि दच्छ भुज पीतम बाई ।
तेइ जुगल पद मोरि अपर लबित पधराई ॥
वाम दच्छ श्रीहस्त कमल फेरत हसि हेरत ॥श्रीराधे॥
परम मोहिनी डीठि सुरस सखियन तन गेरत ॥६०६॥
भयो परिश्रम विगत अंग श्रीदंपति जानी ।
नीर पान की चाह चित्त हमहूँ उनमानी ॥
विनय भार सिर नाय जोरि कर गिरा सुनाई ॥श्रीराधे॥
महाराज दिन सेस दंड जुग संध्या आई ॥६०७॥

नीर पान अभिलाष सखी मन सबै विभावैं।
श्रीआज्ञा जो होय क्रिया ताकी प्रगटावैं॥
राखत छिन छिन मान जुगल जन के हित दानी॥श्रीराधे॥
अहो भाग्य रुख पाय परम हम अपनो मानी॥६०८॥

श्रीनासा ते विनय नथ बेसरि उतराई।
वर भाजन जुग आनि कलूला सुखद कराई॥
वसन पोछि गुन द्रव्य कटोरी धरि कर दीन्ही॥श्रीराधे॥
अधिक स्वाद जल हेत पुष्ट लखि सो मुख कीन्ही॥६०९॥

नीर विमल अति सीर कटोरा हीरक भरि कै।
दिये जुगल श्रीहस्त रकावी मध्य सुधरि कै॥
लेत घूँट सुख देत हेत लखि हसि हसि पीवैं॥श्रीराधे।
सखियन के आधार इहे छिन देखत जीवैं॥६१०॥

हेरनि श्रीदृग अल्प मद हसि बोलनि मीठी।
गोपेश्वर तत स्वाद पाय सब लागत सीठी॥
तृप्ति चिह्न उनमानि कलूला हरखि कराए॥श्रीराधे॥
वसन विसद लै हस्त वदन श्रीजुग अगुछाए॥६११॥

दई मजु मुखवास आस दैवे जिय बीरी।
पानदान धरि हस्त लखैं रुख ठाढी नीरी॥
श्रीकर झुकि हसि लेत देत मुख हेरि परस्पर॥श्रीराधे॥
क्रीड़ा सहज सुभाव मोद सर उमगत निर्झर॥६१२॥
नथ बेसरि पहिरावत दोऊ निज कर सुख भरि।
नैन बैन नत प्रान थकित ह्वै रहत ध्यान धरि॥
सौरभ अति चित लाय सुवन गूँथी विवि कलँगी॥श्रीराधे॥
बनी अनूपम चित्र पच लर झूमत विलगी॥६१३॥

लखै सराहै सखी शब्द सुनि प्यारी पीतम।
श्रीदृग अबुज खुले कही जै नयो सीस हम॥
ते कलँगी श्रीजुगल हस्त वर अर्पन कीन्ही॥श्रीराधे॥
परमामोद सुगध नासिका ढिग कर लीन्ही॥६१४॥

कबौं ढुरावत सीस नैन मुख हृदै छुवावत।
अरस परस रस भरे सखिन हँसि हियो सिरावत॥

घूमत मस्तक छत्र मोर छल चमर ढोरत पा ।।श्रीराधे।।
सौंज अनूप अपार अर्ल। ठाढी धरि कर मा ।।६१५।।
सिंघासन के निकट मुख्य अप अपनी सहचरि ।
दंपति सेवा हेत ठाम निज ते ठाढी करि ।।
जे हम आदिक अष्ट जूथ लै सनमुख आई ।श्रीराधे।।
जन्त्र वाद्य बहु भाँति एक धुनि सकल कराई ।।६१६।।

अष्ट अग्र हम खरी अपर वर वाद्य बजावैं ।
राग समै अनुकूल सप्त सुर कंठ लगावैं ।।
दंपति चरण सरोज हृदै धरि सीस नवाई ।।श्रीराधे।।
वाम ओर मम लगे विसाखा गुण समुदाई ।।६१७।।

ग्राम मूर्छना सहित प्रथम आलाप कियो हम ।
तान ताल सुर भेद विषम सम उपज अनूपम ।।
जे जे नित्य विहार प्रबन्ध परम सुखदायक ।।श्रीराधे।।
उघटे ते गति मंजु विसाखा संग सहायक ।।६१८।।

चंपकलता प्रवीन संग चित्रा निज लीन्हें ।
तुंगविद्या को जुग्म इंदुलेखा चित भीने ।।
रंगदेवी गुण खानि सुदेवी सहित सुहावै ।।श्रीराधे।।
प्रथक प्रथक सब गाय चित्त दै जुगल रिझावैं ।।६१९।।

तैसे नृत्य अलेख भेद संगीत नीति गति ।
अप अपनी रुचि करै रीझि दंपति निश्चै मति ।।
श्यामा श्याम विलोकि मंद हँसि सीस ढुरावैं ।श्रीराधे।।
भले भलें श्रीवदन मान दै हमै सुनावै ।।६२०।।

त्यौं त्यौं उमगैं चित्त हरखि नृत्यै कल गावैं ।
जुगल अमल मुखचंद्र हसत पेखै सचुपावै ।।
चाह चौगुनी होत प्रिया प्रीतम सुख दीजे ।श्रीराधे।।
जुगलानंद समुद्र लहरि आलाड़न कीजै ।।६२१।।
नेह विवस मन भयौ नेम कौ अंग भुलानौ ।
वेला भई प्रदोष चिह्न ताको प्रगटानो ।।
प्राची दिसा विलोकि पीतिमा नभ तन छाई ।।श्रीराधे।।
मनौ कामनी वदन नाह कर कुंकुम लाई ।।६२२।।

इंदुलेखा चलि उमगि स्वेतिमा फैली सब थल।
प्रथौ अति अह्लाद सकल उर जिते चराचल॥
दर्पनि श्रीतन फबे तासु प्रतिबिंब अनेका श्रीराधे॥
नग भूषन श्रीअंग अधिक छबि सुखद बिसेखा॥६२३॥

निरखि परस्पर हरखि हिये अभिलाष बढाई।
सफल चाँदनी होय जुगल ऐसी मन आई।
प्यारी बिसाखा ठाम माधुरी कर धरि वशी॥श्रीराधे॥
पिय चितये ता ओर दई तिन अधिक प्रशंसी॥६२४॥

लाल प्रिया मुख हेरि टेर श्रीनाम लगाई।
ग्राम मर्छना तान सप्त सुर उपज बजाई॥
स्याम विमोहक मंत्र नाम स्यामा को दृढतर॥श्रीराधे॥
सोई कियो प्रयोग सुने को होय न इनकर॥६२५॥

जे जे कुञ्जन माहि सहचरी कारज लागी।
भूलि गई सो वृत्ति सकल वशी धुनि पागीं॥
जथा गुनी पठि मंत्र सर्प आकरसन करई॥श्रीराधे॥
बिवस होय बिल छाडि क्रिया तैसी अनुसरई॥६२६॥

तन पट भूषन काज लाज मैं धीर भुलानी।
मत्त रमाते चली प्राण जीवन धुनि मानी॥
कोटिन वृंद विमान बैठि आवैं ता ठौरी॥श्रीराधे॥
आतुर जूथ अनेक विकल अवर गति दौरी॥६२७॥

नभ थल मंडल रहीं पूरि आली धुनि साली।
नैनन जुगल निहारि धारि उर होत सुखाली॥
राग वाद्य आलाप गीत गति अद्भुत छाई॥श्रीराधे॥
दरनि हू मन भई लहे मुद जे सब आई॥६२८॥

जानि हिय अभिलाष श्रेष्ठ हम निकट गई जब।
पिय प्यारी छबि धाम थाम्भि अंग उतरि खरे तब॥
सीतल मंद सुगंध वायु डोलै सुखदाई॥श्रीराधे॥
अमित जाति वर सुवन प्रफुल्लित वनद्युति छाई॥६२९॥

चंद चाँदनी अमल समै सबै चित दीन्हे।
अली चकोरी नैन जुगल ससि रस हित भीने॥

रव द्विज षटपद विपिन अगना भूषन बाजै ॥श्रीराधे॥
वाद्य जत्र कल गीत मनोहर सब ही राजै ॥६३०॥
श्री प्यारी भुज दच्छ लाल अपने गर मेली।
श्याम बाम भुज प्रिया कठ निज दई सुहेली॥
श्रीश्यामा भुज बाम कध मै अपने लीन्ही ॥श्रीराधे॥
तथा बिसाखा अस पीय दाहिन भुज दीन्ही ॥६३१॥

पिय प्यारी निज रूप अपर बिबि प्रगटित कीन्हे॥
ऐसे ही गलबाँह परस्पर पाँती दीन्हे॥
अष्ट सखी दै मध्य अष्ट श्रीजुगल विराजैं ॥श्रीराधे॥
या विधि मडल किये कोटि कोटिन छवि छाजै ॥६३२॥

जैसे फेंटी सर्प बृहत लघु आवृत होई।
तैसें मडल रीति स्वल्प महती गति सोई॥
महारास आरभ जुगल सहचरि गत घूमै ॥श्रीराधे॥
देखत बनै अनूप गिरा मन बुद्धि न जूमै ॥६३३॥
नृत्य भेद सगीत कला गुन प्रगटित भूरी।
तान मान सुर ग्राम मूछना उपजैं पूरी॥
पग पटकनि भुज झटक लटक ग्रीवा कटि मटकनि ॥श्रीराधे॥
मद हसनि करि नैन तारिछे हेरनि अटकनि ॥६३४॥

नासा पलक सिकोर भौह कसि कोर मरोरैं।
मनि मानिक हिय पैठि परस्पर हठि अरि छोरैं॥
कुडल ररकैं श्रवन कपोल अलक चलि परसें ॥श्रीराधे॥
तहाँ परै प्रतिबिब पेखि अरभै चित करसें ॥६३५॥

उमगि उमगि अनुराग अग श्रीअग लगावैं।
चर्बित बदन तमोल छके रस खात खवावैं॥
नैन बैन तन प्राण एक ह्वै आप भुलावै ॥श्रीराधे॥
कृष्ण मानि निज रूप लाल प्यारी दुति पावै ॥६३६॥
पेखत विरह उदात विवस ह्वै गिरा उचारै।
राधा राधा रटै कृष्ण मुख कृष्ण पुकारै॥
सहचरि करै प्रबोध निरखि बूडैं सुखसागर ॥श्रीराधे॥
अधिक एकते एक जुगल नागरि तस नागर ॥६३७॥

मिलै परस्पर हुलसि मनौ निधि चिर गत पाई।
जय जय धुनि परिपूर भुवन वरखा भर छाई॥
नूपुर किंकिनि शब्द हार ककन धुनि सोहै॥श्रीराधे॥
वहसि वहसि लै तान जील दै मान विमोहै॥६३८॥

मिले परस्पर बाहु विकर्षै निज निज ओरी।
मनौ सिधु शृगार मथै कोटिन ता ठौरी॥
धीरज मदर मध्य अचल बूडै उतरावै॥श्रीराधे॥
नेम लाज आधार अंग जौ परसन पावैं॥६३९॥

जो मडल रचि बीच कमल सो मानौ मेरू।
दपति सहचरि पाति जलधि अनगन चहुँ फेरू॥
दरसै धरनी मध्य मध्य ते द्वीप सुहावै॥श्रीराधे॥
साति रोष रस हेत सुरासुर से दरसावै॥६४०॥

नेह रज्जु दोउ ओर गहै कर कपित खैचै।
प्रगटैं रत्न अनेक तेइ सब को मन ऐचैं॥
अधर सुधा के हेत मजुता मध्य विकासी॥श्रीराधे॥
कल्पद्रुम सकल्प विविधि फल करै प्रकासी॥६४१॥

चाह उदै गण अमित अप्सरा स्वेच्छाचारी।
मद गवन गज लजै चपलता अश्व अपारी॥
स्वल्प हास्य पै चद कोटि कोटिन गहि वारैं॥श्रीराधे॥
तहा असोभा नाहि दरिद्रा काहि सभारैं॥६४२॥

विरह दुसह विष सरिस वैद्य ताकी ए सहचरि।
मन प्रसन्नता जुगल धेनु का मद मुदप्रद सरि॥
नाम कौस्तुभ जुग्म परस्पर दपति धारैं॥श्रीराधे।
सखियाँ चित्त वसाय निमिष नहि ताहि बिसारैं॥६४३॥

नेह रज्जु दृढ पाय धीर घूमै अति वेगी।
शृगार सिंधु उर माहि जीव डोलै उद्वेगी॥
व्याल बाल सी अलक बदन ससि गहि लपटानी॥श्रीराधे॥
स्रवत सुधा श्रमबिदु ताहि निज जीवन मानी॥६४४॥

मीन चपल दृग दुरैं जाय चय इद्रनील के।
पलक स्याम झपि चले उर्वरि बस परे सील के॥

वेनी बाहु विसाल भुजग लपटै चलि गूटै ।।श्रीराधे।।
फमें प्रेम सैवाल जाल थिर ह्वै नहि छूटै ।६४५।।
उभै ओर अनुराग तिमगल उमगै भारी
विजय हेतु निय धारि जुटै पुनि कहाँ सनारी ।।
कुडल मकर विलोल अभूषन जलचर नाना ।।श्रीराधे।।
कुसुमाभरन विचित्र उपरि द्विजगन परिमाना ।।६४६।।
प्रेमावधि परिपाक रमा उपजी दृढ प्रीती ।
सबही के मन भई गहै बरबस असनीती ।
तिनको अचल निवास जुगल पद सदा प्रमानी ।।श्रीराधे।।
कृपा साध्य या अहै जतन जाना उनमानी ।।६४७।।
जुगल मोहनी अग सुधा धाराधर बरषै ।
चातक सहचरि प्राण बूद पीवे छिन तरसै ।।
प्रम बद्ध दृग दीठि जोरि हेरै नहि फेरै ।श्रीराधे।।
काहू की भुजलता मध्य लखि एहु निवेरै ।।६४८।।
बढै प्रेम सग रोस परस्पर चिह्न रुखाई ।
सारग सीत निजात भौह पलकै सर पाई ।।
नैन थीर ह्वै रहै मनो उनमानत लछै ।।श्रीराधे।।
छूटत कुटिल कटाक्ष बाण हिय वेधत अछै ।।६४९।।
कोउ गिरै मुरछाय अपर घूमै इक धारै ।
घायल वीर न टरै चोट सौ ही बढि मारै ।।
सिथल अग ते खसै बसन भूषन कुसुमादी ।।श्रीराधे।।
कोलाहल स्वर छयो नयो मन सबै प्रमादी ।।६५०।।
जुगलानन्द विहार भार अनपार अगाधा ।
अचल अखड प्रवाह चाह छिन सौगुनि साधा ।।
काल कोटि सत कल्प अलप अणु सम तह जाई ।श्रीराधे।।
दपति रूप समुद्र लहरि माधुर्य्य समाई ।।६५१।।
रूप छके तन थके जके मन मत्त पगे रस ।
को हम थल है कहा दिवस निसि भाग समै कस ।।
परमानन्द अगाध उदधि बूड़ी सब आली ।।श्रीराधे।।
सुरति समानी जहा तहा तैसी गति साली ।।६५२।।

सबकी दशा विचारि प्रिया पीतम विधि रूपा
सिंघासन सुभ जाय विराजे सुखमा जूपा ॥
कछू वार इमि गये चेतना हमहूँ पाई ॥श्रीराधे॥
सभ्रम चकित निहारि स्वप्न सोहै का माई। ६५३॥
लखै परस्पर जुगल नहीं सो खेल कोऊ अब।
दीन मीन सी भई नीर बिनु सबै विकल तब ॥
गई चेतना चित्त बुद्धि मन प्राण देह तैं ॥श्रीराधे।
ढूढैं मंडल विपिन कुंज नभ दिसा जतन कै ॥६५४।
छिन छिन बाढै कष्ट नष्ट कीन्हे तन डारै।
दंपति आनद सिंधु विलगि विरहानल जारै।
सहसा उठी पुकारि कहा जीवन धन प्यारी ॥श्रीराधे॥
सकल दोष बिसराय वेगि सुधि लेहु हमारी ॥६५५॥
श्रीस्यामा मन मृदुल दया सागर अनपारा।
मत्त भये परिणाम कष्ट उपजै निर्धारा ॥
आरत वानी सुनी सखिन की जिय अकुलाई ॥श्रीराधे॥
निज अधरन वर धारि मुरलिका सुखद बजाई ॥६५६॥
आवोरी इत चल्रो अली सिंघासन पाही।
बार बार अस टेरि कही वसी धुनि माहीं ॥
आनदघन को शब्द सुने ज्यौं चातक जीवैं ॥श्रीराधे॥
भरे नीर बहु ठौर नेम स्वाती जल पीव ॥६५७।
अमीय धार सी परी श्रवन बानी स्वामिनि की।
पूरन कृपा निहारि विथा बीती सब इनिकी ॥
चली तृषित ह्वै तहा जहा बैठे पिय प्यारी ॥श्रीराधे॥
निरखि हरखि हिय धारि धरा गहि जय धुनि धारी ॥६५८॥
उठि उठि करैं प्रणाम चरन वदैं चख लावै।
जीवन तन मन वारि तोरि तृण हियो सिरावै ॥
कियें लजौंहे नैन खरी कोउ लखै न सोहैं ॥श्रीराधे॥
त्रास भरी जिय गुनै विचारै बोल न गोहैं ॥६५९।
जे पाली करि नेह किसोरी अपनी सहचरि।
विमन तिन्है छिन देखि सकैं नहि धीर अल्प धरि ॥

बेनी बाहु विसाल भुजग लपटै चलि गूटैं ॥श्रीराधे॥
फसैं प्रेम सैवाल जाल थिर ह्वै नहि छूटैं ॥६४५॥
उभै ओर अनुराग तिमगल उमगै भारी।
विजय हेतु जिय धारि जुटै पुनि कहँ सभारी ॥
कुडल मकर विलोल अभूषन जलचर नाना ॥श्रीराधे॥
कुसुमाभरन विचित्र उपरि द्विजगन परिमाना ॥६४६॥
प्रेमावधि परिपाक रमा उपजी दृढ प्रीती।
सबही के मन भई गहै बरबस असनीती।
तिनको अचल निवास जुगल पद सदा प्रमानी ॥श्रीराधे॥
कृपा साध्य सो अहै जतन जानी उनमानी ॥६४७॥
जुगल मोहनी अग सुधा धाराधर बरषै।
चातक सहचरि प्राण बूद पीवै छिन तरसै ॥
प्रम बद्ध दृग दीठि जोरि हेरैं नहि फेरै ।श्रीराधे॥
कोहू की भुजलता मध्य लखि एहु निवेरै ॥६४८॥
बढ़ै प्रेम सग रोस परस्पर चिह्न रुखाई।
सारग सीत निजात भौंह पलकै सर पाई ॥
नैन थीर ह्वै रहै मनो उनमानत लछै ॥श्रीराधे॥
छूटत कुटिल कटाच्छ बाण हिय बेधत अछै ॥६४९॥
कोउ गिरै मुरछाय अपर घूमै इक धारै।
घायल वीर न टरै चोट सो ही बढि मारै ॥
सिथल अग ते खसै वसन भूषन कुसुमादी ॥श्रीराधे॥
कोलाहल स्वर छयो नयो मन सबै प्रमादी ॥६५०॥
जुगलानन्द विहार भार अनपार अगाधा।
अचल अखड प्रवाह चाह छिन सौगुनि साधा ॥
काल कोटि सत कल्प अल्प अणु सम तह जाई ।श्रीराधे॥
दपति रूप समुद्र लहरि माधुर्य्य समाई ॥६५१॥
रूर छके तन थके जके मन मत्त पगे रस।
को हम थल है कहा दिवस निसि भाग समै कस ॥
परमानन्द अगाध उदधि बूड़ी सब आली ॥श्रीराधे॥
सुरति समानी जहा तहा तैसी गति साली ॥६५२॥

सबकी दशा विचारि प्रिया पीतम विधि रूपा
सिंघासन सुभ जाय विराजे सुखमा जूपा ॥
कछू बार इमि गये चेतना हमहूँ पाई ॥श्रीराधे॥
सभ्रम चकित निहारि स्वप्न सोहै का माई । ६५३॥

लखैं परस्पर जुगल नहीं सो खेल कोऊ अब ।
दीन मीन सी भई नीर बिनु सबै विकल तब ॥
गई चेतना चित्त बुद्धि मन प्राण देह तै ॥श्रीराधे॥
ढूढैं मडल विपिन कुज्ज नभ दिसा जतन कै ॥६५४।

छिन छिन बाढै कष्ट नष्ट कीन्हे तन डारै ।
दंपति आनद सिंधु बिलगि विरहानल जारै ॥
सहसा उठी पुकारि कहा जीवन धन प्यारी ॥श्रीराधे॥
सकल दोष बिसराय वेगि सुधि लेहु हमारी ॥६५५॥

श्रीस्यामा मन मृदुल दया सागर अनपारा ।
मत्त भये परिणाम कष्ट उपजै निर्धारा ॥
आरत वानी सुनी सखिन की जिय अकुलाई ॥श्रीराधे॥
निज अधरन वर धारि मुरलिका सुखद बजाई ॥६५६॥

आवोरी इत चलो अली सिंघासन पाही ।
बार बार अस टेरि कही वसी धुनि माहीं ॥
आनदघन को शब्द सुने ज्यौं चातक जीवै ॥श्रीराधे॥
भरे नीर बहु ठौर नेम स्वाती जल पीव ॥६५७॥

अमीय धार सी परी श्रवन बोनी स्वामिनि की ।
पूरन कृपा निहारि विथा बीती सब इनिकी ॥
चली तृषित ह्वै तहा जहा बैठे पिय प्यारी ॥श्रीराधे॥
निरखि हरखि हिय धारि धरा गहि जय धुनि धारी ॥६५८॥

उठि उठि करैं प्रणाम चरन वदैं चख लावैं ।
जीवन तन मन वारि तोरि तृण हियो सिरावैं ॥
क्यिं लजौंहे नैन खरी कोउ लखै न सोहैं ॥श्रीराधे॥
त्रास भरी जिय गुनै विचारै बोल न गोहैं ॥६५९॥
जे पाली करि नेह किसोरी अपनी सहचरि ।
विमन तिन्है छिन देखि सकैं नहि धीर अल्प धरि ॥

बेनी बाहु विसाल भुजग लपटै चलि गूटै ॥श्रीराधे॥
फसे प्रेम सैवाल जाल थिर ह्वै नहि छूटैं। ६४५॥
उभै ओर अनुराग तिमगल उमगै भारी।
विजय हेतु जिय धारि जुटै पुनि कहुँ सभारी॥
कुडल मकर विलोल अभूषन जलचर नाना॥श्रीराधे॥
कुसुमाभरन विचित्र उपरि द्विजगन परिमाना॥६४६॥
प्रेमावधि परिपाक रमा उपजी दृढ प्रीती।
सबही के मन भई गहै बरबस असनीती।
तिनको अचल निवास जुगल पद सदा प्रमानी॥श्रीराधे॥
कृपा साध्य सो अहै जतन जानी उनमानी॥६४७॥
जुगल मोहनी अग सुधा धाराधर बरषै।
चातक सहचरि प्राण बूद पीवै छिन तरसैं॥
प्रम बद्ध दृग दीठि जोरि हेरै नहि फेरै। श्रीराधे॥
काहू की भुजलता मध्य लखि एहु निवेरै॥६४८॥
बढै प्रेम सग रोस परस्पर चिह्न रुखाई।
सारग सीत निजात भौह पलकै सर पाई॥
नैन थीर ह्वै रहै मनो उनमानत लछै॥श्रीराधे॥
छूटत कुटिल कटाच्छ बाण हिय बेधत अछै॥६४९॥
कोउ गिरै मुरछाय अपर घूमै इक धारै।
घायल वीर न टरैं चोट सो ही बढि मारै॥
सिथल अग ते खसै वसन भूषन कुसुमादी॥श्रीराधे॥
कोलाहल स्वर भयो नयो मन सबै प्रमादी॥६५०॥
जुगलानन्द विहार भार अनपार अगाधा।
अचल अखड प्रवाह चाह छिन सौगुनि साधा॥
काल कोटि सत कल्प अल्प अणु सम तह जाई।श्रीराधे॥
दपति रूप समुद्र लहरि माधुर्य्य समाई॥६५१॥
रूर छके तन थके जके मन मत्त पगे रस।
को हम थल है कहा दिवस निसि भाग समै कस॥
परमानन्द अगाध उदधि बूड़ी सब आली॥श्रीराधे॥
सुरति समानी जहा तहा तैसी गति साली॥६५२॥

सबकी दशा विचारि प्रिया पीतम विधि रूपा
सिंघासन सुभ जाय विराजे सुखमा जूपा ।
कछू वार इमि गये चेतना हमहूँ पाई ।।श्रीराधे।।
सभ्रम चकित निहारि स्वप्न सो है का माई । ६५३।।
लखैं परस्पर जुगल नहीं सो खेल कोऊ अब ।
दीन मीन सी भई नीर बिनु सबै विकल तब ।।
गई चेतना चित्त बुद्धि मन प्राण देह तै ।।श्रीराधे।
ढूढै मडल विपिन कुज नभ दिसा जतन कै । ६५४।
छिन छिन बाढै कष्ट नष्ट कीन्हे तन डारै ।
दंपति आनद सिंधु बिलगि विरहानल जारै ।
सहसा उठी पुकारि कहा जीवन धन प्यारी ।।श्रीराधे।।
सकल दोष बिसराय वेगि सुधि लेहु हमारी ।।६५५।।
श्रीस्यामा मन मृदुल दया सागर अनपारा ।
मत्त भये परिणाम कष्ट उपजै निर्धारा ।।
आरत बानी सुनी सखिन की जिय अकुलाई ।।श्रीराधे।।
निज अधरन वर धारि मुरलिका सुखद बजाई ।।६५६।।
आवोरी इत चली अली सिंघासन पाही ।
बार बार अस टेरि कही बसी धुनि माहीं ।।
आनदघन को शब्द सुने ज्यौं चातक जीवै ।।श्रीराधे।।
भरे नीर बहु ठौर नेम स्वाती जल पीवै ।।६५७।
अमीय धार सी परी श्रवन बानी स्वामिनि की ।
पूरन कृपा निहारि बिथा बीती सब इनकी ।।
चली तृषित ह्वै तहा जहा बैठे पिय प्यारी ।।श्रीराधे।।
निरखि हरखि हिय धारि धरा गहि जय धुनि धारी ।।६५८।।
उठि उठि करैं प्रणाम चरन वदैं चख लावैं ।
जीवन तन मन वारि तोरि तृण हियो सिरावे ।।
कियें लजौंहे नैन खरी कोउ लखै न सोहैं ।।श्रीराधे।।
त्रास भरी जिय गुनै विचारै बोल न गोहैं ।।६५९।।
जे पाली करि नेह किसोरी अपनी सहचरि ।
विमन तिन्है छिन देखि सकैं नहि धीर अल्प धरि ।।

बेनी बाहु विसाल भुजग लपटै चलि गूटै ॥श्रीराधे॥
फसें प्रेम सैवाल जाल थिर ह्वै नहि छूटैं। ६४५॥
उभै ओर अनुराग तिमगल उमगै भारी।
विजय हेतु जिय धारि जुटै पुनि कहाँ सभारी ॥
कुडल मकर विलोल अभूषन जलचर नाना ॥श्रीराधे॥
कुसुमाभरन विचित्र उपरि द्विजगन परिमाना ॥६४६॥
प्रेमावधि परिपाक रमा उपजी दृढ प्रीती।
सबही के मन भई गहै वरबस असनीती।
तिनको अचल निवास जुगल पद सदा प्रमानी ॥श्रीराधे॥
कृपा साध्य सो अहै जतन जानी उनमानी ॥६४७॥
जुगल मोहनी अग सुधा धाराधर वरषै।
चातक सहचरि प्राण बूद पीवै छिन तरसैं॥
प्रम बद्ध दृग दीठि जोरि हेरै नहि फेरै।श्रीराधे॥
काहू की भुजलता मध्य लखि एहु निवेरै ॥६४८॥
बढ़ै प्रेम सग रोस परस्पर चिह्न रुखाई।
सारग सीत निजात भौह पलकै सर पाई॥
नैन थीर ह्वै रहै मनो उनमानत लछै ॥श्रीराधे॥
छूटत कुटिल कटाक्ष बाण हिय बेधत अछै ॥६४९॥
कोउ गिरै मुरछाय अपर घूमै इक धारै।
घायल वीर न टरै चोट सो ही बढि मारै ॥
सिथल अग ते खसै वसन भूषन कुसुमादी ॥श्रीराधे॥
कोलाहल स्वर भयो नयो मन सबै प्रमादी ॥६५०॥
जुगलानन्द विहार भार अनपार अगाधा।
अचल अखड प्रवाह चाह छिन सौगुनि साधा ॥
काल कोटि सत कल्प अल्प अणु सम तह जाई ।श्रीराधे॥
दपति रूप समुद्र लहरि माधुर्य्य समाई ॥६५१॥
रूर छके तन थके जके मन मत्त पगे रस।
को हम थल है कहा दिवस निसि भाग समै कस ॥
परमानन्द अगाध उदधि बूड़ी सब आली ॥श्रीराधे॥
सुरति समानी जहा तहा तैसी गति साली ॥६५२॥

सबकी दशा विचारि प्रिया प्रीतम विधि रूपा
सिंघासन सुभ जाय विराजे सुखमा जूपा ।
कछू बार इमि गये चेतना हमहूँ पाई ॥श्रीराधे॥
सभ्रम चकित निहारि स्वप्न सोहै का माई । ६५३॥
लखैं परस्पर जुगल नहीं सो खेल कोऊ अब ।
दीन मीन सी भई नीर बिनु सबै विकल तब ।
गई चेतना चित्त बुद्धि मन प्राण देह तै ॥श्रीराधे।
ढूढै मडल विपिन कुज नभ दिसा जतन कै ।६५४।
छिन छिन बाढै कष्ट नष्ट कीन्हे तन डारै ।
दंपति आनद सिंधु बिलगि विरहानल जारै ।
सहसा उठी पुकारि कहा जीवन धन प्यारी ॥श्रीराधे॥
सकल दोष बिसराय वेगि सुधि लेहु हमारी ।६५५॥
श्रीस्यामा मन मृदुल दया सागर अनपारा ।
मत्त भये परिणाम कष्ट उपजै निर्धारा ॥
आरत वानी सुनी सखिन की जिय अकुलाई ॥श्रीराधे॥
निज अधरन वर धारि मुरलिका सुखद बजाई ॥६५६॥
आवोरी इत चलो अली सिंघासन पाही ।
बार बार अस टेरि कही बंसी धुनि माही ॥
आनदघन को शब्द सुने ज्यौं चातक जीवैं ॥श्रीराधे॥
भरे नीर बहु ठौर नेम स्वाती जल पीवैं ॥६५७॥
अमीय धार सी परी श्रवन बानी स्वामिनि की ।
पूरन कृपा निहारि विथा बीती सब इनिकी ॥
चली तृषित ह्वै तहा जहा बैठे पिय प्यारी ॥श्रीराधे॥
निरखि हरखि हिय धारि धरा गहि जय धुनि धारी ॥६५८॥
उठि उठि करैं प्रणाम चरन वदैं चख लावे ।
जीवन तन मन वारि तोरि तृण हियो सिरावै ॥
किये लजौंहे नैन खरी कोउ लखै न सोहैं ॥श्रीराधे॥
त्रास भरी जिय गुनै विचारै बोल न गोहैं ॥६५९।
जे पाली करि नेह किसोरी अपनी सहचरि ।
विमन तिन्है छिन देखि सकैं नहि धीर अल्प धरि ॥

मन्द विहँसि श्रीवदन कही रस सानी बानी ।।श्रीराधे।।
भुजा पसारे दोउ अरी हम हैं अरसानी । ६६० ।
उमगि उमगि अनुराग नाय सिर लेहि बलैया ।
निरखि हरखि बरषाय कुसुम आनद अधिकैया ॥
जै मंगल धुनि कहैं गहैं अरसाने अंगा ॥श्रीराधे।।
निपट चातुरी प्रगट करैं मद्दन श्रम भंगा । ६६१ ।

भूषन सुवन उतारि टोपिका लई सीस त ।
बेनी बधन खोलि केस कर अली बीस के ।।
दंपति श्रीअंग लगी सखी सब सेवा करहीं ।।श्रीराधे।।
जुगल परस्पर परम कर तन कौतुक भरहीं ॥६६२॥

हम समत कोउ सखी दूरि बोली घू घू करि ।
श्रीश्यामा हँसि कही अरी मैं हिये उठी डरि ।।
रंगदेवी कर जोरि सीस नय विनय बखानी ।।श्रीराधे।।
महाराज निसि गई अधिक द्विज रव भयदानी ।।६६३।।

उमगि हिये अभिलाष विसाखा नैं मृदु बोलैं ।
महाराज सब मोहि कहैं निज ओठ न खोलैं ।।
श्रीप्यारी हँसि कही कहौ हित कहिवे कैसी ॥श्रीराधे॥
मैं उठि नायो सीस विनय गाई तब तैसी । ६६४।।

सबै करैं अभिलाष चित्त छिन छिन भरि छोहैं ।
परम निकुञ्ज विलास सैन क्रीड़ा कब जोहैं ।।
नित्य बिहारी जुगल सदा जन को हित चाहैं ।।श्रीराधे।।
भई गिरा श्रीवदन सोइ ललिते मन छाहैं । ६६५।।

लाग्यो आय विमान रास मंडल गसि कोरैं ।
बानिक परम अनूप लखै दृग हठि मन छोरैं ।।
रचे पावडे विमल पीठ ते जान जहाँ लौं ।।श्रीराधे।।
दंपति उतरे भूमि सखी अंग लगी तहाँ लौं ।।६६६।।

परमानंद विनोद भरे कौतुक उपजावत ।
श्रीपद धरत विलास गवन गति हंस लजावत ।।
राजैं सुखद विमान प्रिया पीतम हित सेती ।।श्रीराधे।।
जय भनि सुवन झराय सखी नैं हरषैं तेती ।।६६७।।

ठाढी सहचरि वृद अमित निरखें नभ ओरी ।श्रीराधे॥
तन मन इद्री वृत्ति न्यिे ससि जथा चकोरी ॥६७५॥

नाना वाद्य तरग तान धुनि झनतकार जै ।
शब्द हुलास प्रकास अमल दिग दिसा रह्यौ छै ॥
औदुचन के निकट आय थल जान थिरानौ ॥श्रीराधे॥
भाग्य मनावत अली परम निज वारत प्रानौ ॥६७६॥

सखी समूह समेत उतरि औदुचन देखै ।
मज्जन करियै पैठि जुगल मन वृत्ति विसेखें ॥
हरै हरै सोपान झुकत उतरत दोउ जल मे ॥श्रीराधे॥
सहचरि धसी अनत नीर चाहैं तस थल मे ॥६७७॥

विहरै श्यामा श्याम नीर श्रम रास निवारै ।
सेवै सहचरि अग लहै मुद अनवधि भारै ॥
श्रीतन साटी धारि धौत पट पीतम कटि वर ॥श्रीराधे॥
वसन हरिनिका मजु अली फेरै श्रीवपु पर ॥६७८॥

अरस परस अभिलाष मनोरथ मानस भूरे ।
प्रेम नेम अनुराग लाज धरि ते सब पूरे ॥
परमानद अपार सार पाथोधि विलोई ॥श्रीराधे॥
भए कृतारथ अमिय पाइ प्यारो पिय दोई ॥६७९॥

दपति रुख उनमानि नीरते निकसे बहिरैं ।
प्रथमधा सहचरी किती पट भूषन पहिरैं ॥
अपर लगी श्रीअग सग ए तीर खरी सब ॥श्रीराधे॥
जुगल रूप ह्वै भिन्न घाट जित चाह चढे तब ॥६८०॥

श्रीतन वसन अगोछि ललित केवल सजि सारी ।
लाल अग मृदु पोछि उपरना धोता धारी ।
रचित पावडे न चले सखी मडल मधि होई ॥श्रीराधे॥
आगें पाछें जात बात सुनि मुरि मुद भोई ॥६८१॥

हरषि हियो उमगाय जाय सिघासन धोरै ।
मिले परस्पर जुगल बैठिवे हेत निहोरै ॥
दै निज जन आनद पीठ राजे सुख पाई ॥श्रीराधे॥
सखिन गेंदुवा मृदुल जथाविधि दिये लगाई ॥६८२॥

जानि फुराने केश मेलि जूरा रचि नाथी।
कुटिल अलक दिवि श्रवण लागि लटक मन फाथी॥
जुग भृकुटी बिच बिंदु स्याम नम ता नव सोहै। श्री राधे॥
नैनन अंजन रेख लीक मनमथ की जोहै।६८३॥

तिलसे उभौ कपोल बिंदु दै चिबुक सुहाई।
कंचन बिंदु की रीति लाल मुख तथा लहाई॥
अंजन मंडन वदन जुगल दिखि ऐन कीन्ह। श्रीराधे।
विलग होय छवि निरखि सखिन बलि पद सिर दीन्ह॥६८४॥

कोक निरखि प्रकास नखत लै नाम बखानै।
अपर निसा गत भाग दुइ कहि पच प्रमानै॥
भूत विस्य विवाद शब्द श्री श्रवन सुनावैं। श्रीराधे॥
तिन्है विसाखा बोध देइ नमि अधिक बतावैं॥६८५॥

दंपति मृदु मुसकाय जानि हेरे हम आरी।
हम्हू मस्तक नाय निवेदैं विनै निहोरी॥
महाराज अभिलाष सबे मन मै अस धारैं॥श्रीराधे॥
जो अनुसासन लहै भोग सध्या सुभ सारे॥६८६॥

पीतम समुझि विलास सैन पहिले हसि भाखे।
ए ललिते सब प्रिया करे पूरी अभिलाषैं॥
नव सहेली धारि पात्र श्रीपद कर धोई। श्रीराधे॥
वसन पोछि श्रीवदन आचवन तथा सजोई॥६८७॥

वर चौकी पर थार धारि विधि बहुन कटोरी।
मंडल गति करि पाति थार भीतर सब सोरी॥
मेवा सुरस विपक सुष्कता कछूक तिनमै॥श्रीराधे॥
गुणद सुगंधित द्रव्य अमित सुचि मेली जिन मै॥६८८॥

सकल किये घृत पक स्वाद रस भेद अनेका।
लवण मिष्ट ते आदि जानि रुचि रचे विवेका॥
विंजन भाव अनेक एक मै दासैं सब ही। श्रीराधे।
दंपति मन लखि चाह सकल प्रगटै हित तब ही॥६८९॥

जानि सखिन जिय भाव जुगल अनवधि सुखदानी।
भोजन रुचि उमगाय थार मेले श्रीपानी॥

गुन लच्छन रस रूप स्वाद जे नाम कहावें ॥श्रीराधे॥
नेह पूर हित भूरि अली विधि प्रथक बतावै ॥६६०॥

गहनि उठावनि हस्त वदन परसनि मुख मेलनि
चलनि दसन मृदु हसनि अल्प हेरनि अं\ खेलान ॥
कसनि भौंह झुकि छलनि अलक मोरनि अग डोलनि ॥श्रीराधे॥
गूढ़ भाव दरसाय सकुचि पाटव ढकि बोलान ॥६६१॥

ए रस भोजन करत धरत उर चाहन पूरत ।
बानी स्वाद बखानि प्रगट पालत इनहूँ रत ॥
अरस परस सुख देत लेत बाढ़त रस साई ॥श्रीराधे॥
बाहिर अपर लखाय रीति वह अतर गोई ।६९२॥

दर्पति परम प्रवीन चतुरता अवधि उदधि विधि ।
अली अगजा एऊ दुरै नहि जात इन्हे निभि ॥
जानत भई अजान रीति सेवा असगाई ॥श्रीराधे॥
प्रभु इच्छा अनुकूल चले छिन सुख अधिकाइ ।६६३॥

जुगलानन्द समुद्र अनिल निति नेह प्रवाहा ।
उमग भग अभग तहाँ हमरौ अवगाहा ॥
गोपेश्वर इमि काल जात सुखसिंधु समाने ।श्रीराधे॥
रूपमाधुरी मत्त छके अगजात न जाने ॥६९४॥

भोजन ते मन वृत्ति हटी चिह्नन उनमानो ।
थार उठाए धरे पात्र अचवन हित आनी ॥
खरिचा मजुल कनक तथा कर शुद्ध द्रव्य दै ॥श्रीराधे॥
वसन अगौछे हस्त वदन पा धोय पोछि नै ॥६९५॥

हिय नैनन सिर लाय सिघासन पर पधराए ।
परमामोद प्रमोद चित्त मुखवास खवाए ॥
बीरी चित्र अनूप दोऊ ओरी हित देवै ॥श्रीराधे॥
दपतिजन अनुराग जानि झुकि हसि लखि लेवैं ॥६६६॥

खात खवावत विहसि होत कौतुक चित चाहै ।
निरखि सहेली हरखि सुतरु सेवा फल लाहै ॥
अतर सुगध अनूप दई वारै नीराजन ॥श्रीराधे॥
वाद्य भेद आलापि गीत नृत्यै आलीगन ॥६६७॥

सभाकुज के निकट पाँति जा तीजी गाई।
सप्तखड वर कुज भूमि गच उपरि सुहाई ॥
तहाँ वियारू हेत सुखासन रचैं सहेली ॥श्रीराधे॥
दंपति लखि मुद लहैं प्रीति जिन हियँ नवेली ॥६९८॥

भूमि बिछौना मृदुल साजि सिघासन धारै।
विष्टर सुभग रचाय गदुवा चित्र सनरे॥
तानै विमल वितान छरी नग झालरि मोती ॥श्रीराधे॥
सुवन समस्त लगाय लज समि उडगन जोना ।६९९।

छत्र चमर ते आदि सकल सेवा की सामा।
नौ सत किये सिगार लिये कर लस ललामा ॥
नित्यविहारी जुगल एक आवनि जिय आसा ॥श्रीराधे॥
नाम निरतर रटै जिन्है छिन सौगुनि प्यासा ॥७००॥

पाक कुज गत अली कोटि कोटिन हित पागीं।
विजन भेद अपार सवारैं तन मन लागीं।
दुग्ध सुगधि सुवासि कद मेवा सुचि भरिकै ॥श्रीराधे॥
मद अगिन परिपाक सकल रस प्रगटित करिकै ।७०१।

दधि के भेद अनेक तथा माखन विधि नाना।
लवण मिष्टतायुक्त सुगधित स्वाद अमाना॥
नुक्ती मेवा अमित साक फल मेलि रायते ॥श्रीराधे॥
द्रव्य सुगध अनत विमिश्रित रचे आयते ॥७०२॥

मादक पाक अनूप रूप गुन लच्छन भारे।
स्वाद अपरिमित सुरस नाम सुनतें श्रुति प्यारे ॥
जिते भये पकवान अवधि को कहि किमि पावै। श्रीराधे॥
सखियन को अनुराग प्रगट निज रूप जनावै ॥७०३॥

तरकारी फल अन्न विनिमित जाति अनता।
पापर चूरन गुनद कचरिया स्वाद समता ॥
नाम अथाने वृद मुरब्बा अनवधि कहियै ॥श्रीराधे॥
पेय पदारथ सकल खानि रस की वर लहियै ॥७०४॥

भक्ष भोज्य औ लेह्य चोष्य षट रस सुखदाई।
जे छप्पन परकार पदारथ पच तथाई ॥

गुन लच्छन रस रूप स्वाद जे नाम कहावैं ।।श्रीराधे।
नेह पूर हित भूरि अली विधि प्रथक बतावै ।।६९०।।

गहनि उठावनि हस्त वदन परसनि मुख मेलनि ।
चलनि दसन मृदु हसनि अल्प हेरनि अरि फेरान ।।
कसनि भौंह झुकि छलनि अलक मोरनि अग डोलनि ।।श्रीरा।
गूढ़ भाव दरसाय सकुचि पाटव ढकि बोलनि ।।६९१।।

ए रस भोजन करत धरत उर चाहन पूरत ।
बानी स्वाद बखानि प्रगट पालत इनहूँ रत ।।
अरस परस सुख देत लेत बाढ़त रस साईं ।।श्रीराधे।।
बाहिर अपर लखाय रीति वह अतर गोई ।।६९२।।

दंपति परम प्रवीन चतुरता अवधि उदधि विधि ।
अली अगजा एऊ दुरै नहि जात इन्है निभि ।।
जानत भई अजान रीति सेवा असगाई ।।श्रीराधे।।
प्रभु इच्छा अनुकूल चले छिन सुख अधिकाई ।।६९३।।

जुगलानन्द समुद्र अनिल निति नेह प्रवाहा ।
उमगे भग अभग तहाँ हमरौ अवगाहा ।।
गोपेश्वर इमि काल जात सुखसिंधु समाने ।श्रीराधे।।
रूपमाधुरी मत्त छके अगजात न जाने ।।६९४।।

भोजन ते मन वृत्ति हटी चिह्न उनमानो ।
थार उठाए धरे पात्र अचवन हित आनी ।।
खरिचा मजुल कनक तथा कर शुद्ध द्रव्य दै ।।श्रीराधे।।
वसन अगौछे हस्त वदन पा धोय पोछि नै ।।६९५।।

हिय नैनन सिर लाय सिंघासन पर पधराए ।
परमामोद प्रमोद चित्त मुखवास खवाए ।।
बीरी चित्र अनूप दोऊ ओरी हित देवै ।।श्रीराधे।।
दंपतिजन अनुराग जानि झुकि हँसि लखि लेवैं ।।६९६।।

खात खवावत विहसि होत कौतुक चित चाहै ।
निरखि सहेली हरखि सुतरु सेवा फल लाहै ।।
अतर सुगध अनूप दई वारै नीराजन ।।श्रीराधे।।
वाद्य भेद आलापि गीत नृत्यै आलीगन ।।६९७।।

सभाकुंज के निकट पाँति जो तीजी गाई।
सप्तखंड वर कुंज भूमि गच उपरि सुहाई॥
तहाँ विहार हेत सुखासन रचैं सहेली॥श्रीराधे॥
दंपति लखि मुद लहैं प्रीति जिन हिय नवेली॥६९८॥

भूमि बिछौना मृदुल साजि सिंघासन धारैं।
विष्टर सुभग रचाय गडुवा चित्र सवारैं॥
तानै विमल वितान छरी नग झालरि मोता॥श्रीराधे॥
सुवन समस्त लगाय लज सम्मि उडगन जोता॥६९९॥

छत्र चमर ते आदि सकल सेवा की सामा।
नौ सत किये सिंगार लिये कर लस ललामा॥
नित्यविहारी जुगल एक आवनि जिय आसा॥श्रीराधे॥
नाम निरंतर रटैं जिन्है छिन सौगुनि प्यासा॥७००॥

पाक कुंज गत अली कोटि कोटिन हित पागीं।
विंजन भेद अपार सवारैं तन मन लागीं॥
दुग्ध सुगंधि सुवासि कंद मेवा सुचि भरिकै॥श्रीराधे॥
मंद अगिन परिपाक सकल रस प्रगटित करिकै॥७०१॥

दधि के भेद अनेक तथा माखन विधि नाना।
लवण मिष्टतायुक्त सुगंधित स्वाद अमाना॥
नुक्ती मेवा अमित साक फल मेलि रायते॥श्रीराधे॥
द्रव्य सुगंध अनंत विमिश्रित रचे आयते॥७०२॥

मोदक पाक अनूप रूप गुन लच्छन भारे।
स्वाद अपरिमित सुरस नाम सुनतें अति प्यारे॥
जिते भये पकवान अवधि को कहि किमि पावै।श्रीराधे॥
सखियन को अनुराग प्रगट निज रूप जनावै॥७०३॥

तरकारी फल अन्न विनिर्मित जाति अनंता।
पापर चूरन गुलंद कचरिया स्वाद समंता॥
नाम अथाने वृंद मुरब्बा अनवधि कहियै॥श्रीराधे॥
पेय पदारथ सकल खानि रस की वर लहियै॥७०४॥

भक्ष भोज्य औ लेह्य चोष्य षट रस सुखदाई।
जे छप्पन परकार पदारथ पंच तथाई॥

गुन लच्छन रस रूप स्वाद जे नाम कहावै ॥श्रीराधे॥
नेह पूर हित भूरि अली विधि प्रथक बतावै ॥६६०॥

गहनि उठावनि हस्त वदन परसनि मुख मेलनि
चलनि दसन मृदु हसनि अल्प हेरनि अँ‍ि‍ फेलान ॥
कसनि भौंह झुकि छलनि अलक मोरनि अग डोलनि ॥श्रीराधे
गूढ़ भाव दरसाय सकुचि पाटव ढकि बोलान ॥६६१॥

ए रस भोजन करत धरत उर चाहन पूरत।
बानी स्वाद बखानि प्रगट पालत इनहूँ रत ॥
अरस परस सुख देत लेत बाढ़त रस साई ॥श्रीराधे॥
बाहिर अपर लखाय रीति वह अतर गोई ।६९२॥

दर्पति परम प्रवीन चतुरता अवधि उदधि विधि।
अली अगजा एऊ दुरै नहि जात इन्है निभि ॥
जानत भई अजान रीति सेवा असगाई ॥श्री‍ाधे॥
प्रभु इच्छा अनुकूल चले छिन सुख अधिकाई ।६९३॥

जुगलानन्द समुद्र अनिल निति नेह प्रवाहा।
उमग भग अभग तहाँ हमरौ अवगाहा ॥
गोपेश्वर इमि काल जात सुखसिंधु समाने ।श्रीराधे॥
रूपमाधुरी मत्त छके अगजात न जाने ॥६९४॥

भोजन ते मन वृत्ति हटी चिह्नन उनमानी।
थार उठाए धरे पात्र अचवन हित आनी ॥
खरिचा मजुल कनक तथा कर शुद्ध द्रव्य दै ॥श्रीराधे॥
वसन अगौछे हस्त वदन पा धोय पोछि नै ॥६९५॥

हिय नैनन सिर लाय सिघासन पर पधराए।
परमामोद प्रमोद चित्त मुखवास खवाए ॥
बीरी चित्र अनूप दोऊ ओरी हित देवै ॥श्र राधे॥
दपतिजन अनुराग जानि झुकि हँसि लखि लेवैं ॥६९६॥

खात खवावत विहसि होत कौतुक चित चाहै।
निरखि सहेली हरखि सुतरु सेवा फल लाहै ॥
अतर सुगध अनूप दई वारै नीराजन ॥श्रीराधे॥
वाद्य भेद आलापि गीत नृत्यै आलीगन ॥६९७॥

सभाकुंज के निकट पाँति जो तीजी गाई
सप्तखंड वर कुंज भूमि गच उपरि सुहाई ॥
तहाँ वियारू हेत सुखासन रचैं सहेली ।श्रीराधे॥
दंपति लखि मुद लहैं प्रीति जिन हियें नवेली ।६९८॥

भूमि बिछौना मृदुल साजि सिंघासन धारै ।
विष्टर सुभग रचाय गेंदुवा चित्र सनारै ॥
तानै विमल वितान छरी नग झालरि मोती ॥श्रीराधे॥
सुवन समस्त लगाय लज सम्मि उडगन जोना । ६९९॥

छत्र चमर ते आदि सकल सेवा की सामा ।
नौ सत किये सिंगार लिये कर लस ललामा ॥
नित्यविहारी जुगल एक आवनि जिय आसा ॥श्रीराधे॥
नाम निरंतर रटै जिन्हैं छिन सौगुनि प्यासा ॥७००॥

पाक कुंज गत अली कोटि कोटिन हित पार्गी ।
विंजन भेद अपार सवारैं तन मन लागी ।
दुग्ध सुगंधि सुवासि कंद मेवा सुचि भरिकै ॥श्रीराधे॥
मंद अगिन परिपाक सकल रस प्रगटित करिके ।७०१।

दधि के भेद अनेक तथा माखन विधि नाना ।
लवण मिष्टतायुक्त सुगंधित स्वाद अमाना ॥
नुक्ती मेवा अमित साक फल मेलि रायते ॥श्रीराधे॥
द्रव्य सुगंध अनंत विमिश्रित रचे आयते ॥७०२॥

मादक पाक अनूप रूप गुन लच्छन भारे ।
स्वाद अपरिमित सुरस नाम सुनतें श्रुति प्यारे ॥
जिते भये पकवान अवधि को कहि किमि पावै ।श्रीराधे॥
सखियन को अनुराग प्रगट निज रूप जनावै ॥७०३॥

तरकारी फल अन्न विनिमित जाति अनंता ।
पापर चूरन गुनद कचरिया स्वाद समंता ॥
नाम अथाने वृंद मुरब्बा अनवधि कहियै ॥श्रीराधे॥
पेय पदारथ सकल खानि रस की वर लहियै ।७०४॥

भक्ष भोज्य औ लेह्य चोष्य षट रस सुखदाई ।
जे छप्पन परकार पदारथ पंच तथाई ॥

विजन छत्तिस व्यक्त व्यक्त अस आगन गावैं ।।श्रीराधे।।
रचैं सहेली वस्तु एक तामै सब पावै ।७०५।।

एक वस्तु को नाम रूप गुन लच्छन गावै ।
कबहू मिलै न अत ग्रथ लिखि लिखि श्रम छावै ।।
ऐसौ करि उनमान ज्ञान थिरता बुध कहईं ।।श्रीराधे।।
समत सर्व प्रमाण इहै समुझ सुख लहहीं ।।७०६।

कर्त्ता वस्तु विभाग भोक्ता जो जह जैसो ।
दृढ निर्णय सिद्धात पदारथ है तह तैसो ।।
सखी अगजा ठाम अमाइरू इच्छा वस्तु ।।श्रीराधे।।
दपति सर्वाराध्य जानि चूड़ामनि रस्तु ।।७०७।।

नेह प्रेम अनुराग प्रीति श्रद्धा रस सानी ।
सकल पदारथ सिद्ध किये दपति रुचि जानी ।।
कचन मनि वर पात्र जथाविधि धरि सरपोसे ।।श्रीराधे।।
सौपै तिनकै हाथ रहै निति जासु भरोसे ।।७०८।।

कारज ते निवृत्त भई लखि निसा विभागा ।
दपति आवनि हेत हियें उलह्यो अनुरागा ।।
कोलाहल धुनि छई नई रति बोलै डोलै ।।श्रीराधे।।
भीतर बाहिर आय जाय आकुल गति लोलै ।७०९।।

भरे अमित अभिलाष सफल ह्वै है कब तन दृग ।
करत वियारू जुगल प्राण जीवन देखे ढिग ।।
रत्नप्रभा तब आय मोहि सब हेतु सुनायो ।।श्रीराधे।।
मै दपति दिसि हेरि चित्त उनमान बढायो ।।७१०।।

तबही लाग्यो बजन जाम निसि गजर ठनाठन ।
अनायास अवकास मिल्यो कहिवे बातन मन ।।
चक्रवाक धुनि भई सुनी पीतम चित दैकै ।।श्रीराधे।।
चरण सीस परसाय जानि मै बोली नै कै ।।७११।।

महाराज अकुलात सखी सब निसि दिसि पेखे ।
श्रीतनहूँ श्रम अहै सैन सेवा सुख देखे ।।
श्रीपद चालन हेरि विनै जय धुनि भनि हरख ।।श्रीराधे।
उठिवे को उद्योग जानि कुसुमावलि बरषै ।।७१२।।

पेखैं नैन सिरान नाहि मन टरै न टारै ।
उतर्‍यो गच पर दिव्य जान रवन करि मनकारै ॥
मृदुल पवड़े रचे जुगल ठाडे श्रीपग धरि ।श्रीराध
सहचरि मंडल मध्य चले गर गलबाँही करि ।।७१३
रम्य सिंहासन जान बीच बैठैं सुख फूले ।
बढ्यौ हियें उत्साह सबन सों चलि अनुकूले ॥
मंद मंद गति घसि तहां उतर्‍यो रथ पाई ।श्रीराधा
तहां वियारू ठाम रची आलिन चित चाई ।७१४॥
ज्यौं भागा गन लहैं प्राण जीवन अपना ने ।
त्यौं आतुर लखि चल जुगल दंपति अली बनि ॥
निकट आय सिर वारि वर। नकि तन मन वर ।।श्रीराधे॥
जय भनि सुवन झराय परसि अंग ने बलिहार ।७१५
दंपति जत्रित प्रेम भए इनको सुख चाहैं ।
उठे प्रमाद बढाय परस्पर दै गलबाहैं ॥
मंजु वसन रचि सुवन पावडे चित्र सवारे ।श्रीराधा
सहचरि मंडल मध्य चले झुकि हसि पगधारे ।।७१६॥
परम रम्य वर पीठ निकट दोऊ ह्वै ठाढे ।
वेठन होत विनोद नेह अवुधि जुग बाढे ॥
प्यारा प्रीतम लसैं सिंघासन सखी निहारैं ।।श्रीराध ।
तृषा विवश गतप्राण जथा लहि सुधा सुधारैं ।।७१७॥
वाद्य जंत्र सुर मिली अली कहि समै सुनावै ।
गीत प्रबंध प्रवीन राग मूरति प्रगटावै ॥
जनन वियारू हेत हिये उल है रुचि जैस ।।श्रीराधे॥
अवधि चातुरी सबै जुक्ति ठानै मिलि तैसें ॥७१८॥
हम निरखैं दृग कोर ओर दंपति कर जोरें ।
अति जन गन पर कृपा लहैं रुख विनै निहोरे ॥
श्रीअंबुज दृग अल्प विकसि पल थमत मसानी ।।श्रीराधे॥
सुमिरि नाम नै जानि भाव हिय सब हरखानी ।।७१९॥
वर चौकी पर धारि पात्र विवि अमल रतन मै ।
श्रीजुग चरण सरोज धोय पट पोंछि सीस लै ।

विजन छत्तिस व्यक्त व्यक्त अस आगन गावैं ।।श्रीराधे।।
रचैं सहेली वस्तु एक तामै सब पावै ।७०५।।

एक वस्तु को नाम रूप गुन लच्छन गावै ।
कबहु मिलै न अत ग्रथ लिखि लिखि भ्रम छावै ।।
ऐसौ करि उनमान ज्ञान थिरता बुध कहहीं ।।श्रीराधे।।
समत सर्व प्रमाण इहै समुझै सुख लहहीं ।।७०६।

कर्त्ता वस्तु विभाग भोक्ता जो जह जैसो ।
दृढ निर्णय सिद्धात पदारथ है तह तैसो ।।
सखी अगजा ठाम अमाइक इच्छा वस्तु ।।श्रीराधे।।
दपति सर्वाराध्य जानि चूड़ामनि रस्तु ।।७०७।।

नेह प्रेम अनुराग प्रीति श्रद्धा रस सानी ।
सकल पदारथ सिद्ध किये दपति रुचि जानी ।।
कचन मनि वर पात्र जथाविधि धरि सरपोसे ।।श्रीराधे।।
सौपै तिनकै हाथ रहै निति जासु भरोसे ।।७०८।।

कारज ते निवृत्त भई लखि निसा विभागा ।
दपति आवनि हेत हियें उलह्यो अनुरागा ।।
कोलाहल धुनि छई नई रति बोलै डोलैं ।।श्रीराधे।।
भीतर बाहिर आय जाय आकुल गति लोलै ।७०९।।

भरे अमित अभिलाष सफल ह्वै है कब तन दृग ।
करत बियारू जुगल प्राण जीवन देखे ढिग ।।
रत्नप्रभा तब आय मोहि सब हेतु सुनायो ।।श्रीराधे।।
मै दपति दिसि हेरि चित्त उनमान बढायो ।।७१०।।

तबही लाग्यो बजन जाम निसि गजर ठनाठन ।
अनायास अवकास मिल्यो कहिवे बातन मन ।।
चक्रवाक धुनि भई सुनी पीतम चित दैकै ।।श्रीराधे।।
चरण सीस परसाय जानि मै बोली नै कै ।।७११।।

महाराज अकुलात सखी सब निसि दिसि पेखें ।
श्रीतनहूँ श्रम अहै सैन सेवा सुख देखै ।।
श्रीपद चालन हेरि विनै जय धुनि भनि हरखै ।।श्रीराधे।
उठिवे को उद्योग जानि कुसुमावलि बरषै ।।७१२।।

ऐसै नैन सिरान जाहि मन टरै न टारै ।
उतर्यौ गज पर त्रिय जान स्वन करि झनकारै
मृदुल पावड़े रचे जुगल ठाढे श्रीपग धरि ।श्रीराधे।
सहचरि मडल मध्य चले गर गलबाँही करि ॥७१३

रम्य सिंहासन जान बीच बैठैं सुख फूले ।
बढ्यौ हियें उत्साह सबन सौ चलि अनुकूले ॥
मन्द मद गति घूमि तहा उतर्यो रस पाई श्रीराधे।
जहा नियारू ठाम रची आलिन चित लाई ।७१४॥

ज्यौ भोगी गत लहै प्राण जीवन अपनौ मनि ।
त्यों आतुर लखि चल जुगल दृग रूप अली बनि ॥
निकट आय सिर वारि धरा नवि नन मन वर ॥श्रीराधे॥
जय भनि सुवन झराय परसि अग ने बलिहार ॥७१५

दपति जनित प्रेम भए इनको सुख चाहैं ।
उठे प्रमाद बढाय परस्पर दै गलबाहैं ॥
मजु वसन रचि सुवन पावडे चित्र सवारे ॥श्रीराधे।
सहचरि मडल मध्य चल झुकि हसि पगधारे ।७१६॥

परम रम्य वर पीठ निकट दोऊ ह्वै ठाढे ।
वैठत होत विनोद नेह अबुधि जुग बाढे ॥
प्यारी प्रीतम लसैं सिंघासन सखी निहारैं ॥श्रीराधे।
तृषा विवस गतप्राण जथा लहि सुधा सुधारैं ॥७१७॥

वाद्य जत्र सुर मिली अली कहि समै सुनावै ।
गीत प्रबध प्रवीन राग मूरति प्रगटावै ॥
जनन वियारू हेत हियें उलहै रुचि जैसे ॥श्रीराधे॥
अवधि चातुरी सबैं जुक्ति ठानै मिलि तैसें ॥७१८॥

हम निरखै दृग कोर ओर दपति कर जोरे ।
अति जन गन पर कृपा लहै रुख विनै निहोरे ॥
श्रीअबुज दृग अल्प विकसि पल थभत मुसकानी ॥श्रीराधे॥
सुमिरि नाम नै जानि भाव हिय सब हरखानी ॥७१९॥
वर चौका पर धारि पात्र विवि अमल रतन मै ।
आजुग चरण सरोज धोय पट पोछि सीस लै ।

बिंजन छत्तिस व्यक्त व्यक्त अस आगन गावैं ।।श्रीराधे।।
रचै सहेली वस्तु एक तामै सब पावै । ७०५।।

एक वस्तु को नाम रूप गुन लच्छन गावै ।
कबहू मिलै न अत ग्रथ लिखि लिखि भ्रम छावै ।।
ऐसौ करि उनमान ज्ञान थिरता बुध कहहीं ।।श्रीराधे।।
समत सर्व प्रमाण इहै समुझै सुख लहहीं ।।७०६।।

कर्त्ता वस्तु विभाग भोक्ता जो जह जैसो ।
दृढ निर्णय सिद्धात पदारथ है तह तैसो ।।
सखी अगजा ठाम अमाइक इच्छा वस्तु ।।श्रीराधे।।
दंपति सर्वाराध्य जानि चूड़ामनि रस्तु ।।७०७।।

नेह प्रेम अनुराग प्रीति श्रद्धा रस सानी ।
सकल पदारथ सिद्ध किये दंपति रुचि जानी ।।
कचन मनि वर पात्र जथाविधि धरि सरपोसे ।।श्रीराधे।।
सौंपै तिनकै हाथ रहै निति जासु भरोसे ।।७०८।।

कारज ते निवृत्त भई लखि निसा विभागा ।
दंपति आवनि हेत हियें उलह्यो अनुरागा ।।
कोलाहल धुनि छई नई रति बोलैं डोलैं ।।श्रीराधे।।
भीतर बाहिर आय जाय आकुल गति लोलैं । ७०९।।

भरे अमित अभिलाष सफल ह्वै है कब तन दृग ।
करत वियारू जुगल प्राण जीवन देखै ढिग ।।
रत्नप्रभा तब आय मोहि सब हेतु सुनायो ।।श्रीराधे।।
मै दंपति दिसि हेरि चित्त उनमान बढायो ।।७१०।।

तबही लाग्यो बजन जाम निसि गजर ठनाठन ।
अनायास अवकास मिल्यो कहिवे बातन मन ।।
चक्रवाक धुनि भई सुनी पीतम चित दैकै ।।श्रीराधे।।
चरण सीस परसाय जानि मै बोली नै कै ।।७११।।

महाराज अकुलात सखी सब निसि दिसि पेखैं ।
श्रीतनहूँ श्रम अहै सैन सेवा सुख देखै ।।
श्रीपद चालन हेरि विनै जय धुनि भनि हरखै ।।श्रीराधे।
उठिवे को उद्योग जानि कुसुमावलि वरषै ।।७१२।।

देखै नैन सिरान जाहि मन टरै न टारै।
उतरयौ गच पर सिंह जान त्वन करि फनकारै
मृदुल ग बड़े रचे जुगल ठाडे श्रीपग धरि ।श्रीराधे।
सहचरि मडल मध्य चले गर गलबाँही करि ।७१३

रम्य सिंहासन जान बाच बैठैं सुख फूले।
बढ्यौ हियें उत्साह सबन सो चलि अनुकूले ॥
मन्द मन्द गति घमि तहा उतरयो रथ पाई श्रीराध।
तहा विराजे ठाम रची आलिन चित लाई ७१४।

ज्यों भागी गत लहैं प्राण जीवन अपना मनि।
त्यो आतुर लखि चल जुगल दन कन अला वनि ॥
निकट आय सिर धारि धरा नकि नन मन वर ।।श्रीराधे।।
जय भनि सुवन झराय परसि अग नै बलिहार ।।७१५

दपति जत्रित प्रेम भए इनको सुख चाहैं।
उठे प्रमान बढाय परस्पर दै गलबाहैं॥
मजु वसन रचि सुवन पावडे चित्र सवारे ।।श्रीराध।
सहचरि मडल मध्य चल झुकि हसि पगधारे ।।७१६।।

परम रम्य वर पीठ निकट दोऊ ह्वै ठाढे।
बेठन होत सिंहासन नेह अबुधि जुग बाढे॥
प्यारा प्रीतम लसै सिंघासन सखी निहारैं ।।श्रीराध।
तृषा विवस गतप्राण जथा लहि सुधा सुधारैं ।।७१७।

वाद्य जन्त्र सुर मिली अली कहि समै सुनावै।
गीत प्रबध प्रवीन राग मूरति प्रगटावे॥
जनन वियारू हेत हिये उल है रुचि जैसे ।।श्रीराधे।।
अवधि चातुरी सबैं जुक्ति ठानै मिलि तैसें ।।७१८।।

हम निरखै दृग कोर ओर दंपति कर जोरें।
अति जन गन पर कृपा लहैं रुख विनै निहारे॥
श्रीअबुज दृग अल्प विकसि पल थमत फरानी ।।श्रीराधे॥
सुमिरि नाम नै जानि भाव हिय सब हरखानी ।।७१९।।
वर चौकी पर धारि पात्र विवि अमल रतन मै।
आजुग चरण सरोज धोय पट पोंछि सीस लै।

विजन छत्तिस व्यक्त व्यक्त अस आगन गावैं ॥श्रीराधे॥
रचैं सहेली वस्तु एक तामै सब पावै।७०५॥

एक वस्तु को नाम रूप गुन लच्छन गावै
कबहू मिलै न अत ग्रथ लिखि लिखि श्रम छावै॥
ऐसौ करि उनमान ज्ञान थिरता बुध कहहीं ॥श्रीराधे॥
समत सर्व प्रमाण इहै समुझै सुख लहहीं ॥७०६।

कर्त्ता वस्तु विभाग भोक्ता जो जह जैसो।
दृढ निर्णय सिद्धात पदारथ है तह तैसो॥
सखी अगजा ठाम अमाइक इच्छा वस्तु ॥श्रीराधे॥
दपति सर्वाराध्य जानि चूड़ामनि रस्तु ॥७०७॥

नेह प्रेम अनुराग प्रीति श्रद्धा रस सानी।
सकल पदारथ सिद्ध किये दपति रुचि जानी॥
कचन मनि वर पात्र जथाविधि धरि सरपोसे ॥श्रीराधे॥
सौपै तिनकै हाथ रहै निति जासु भरोसे ॥७०८॥

कारज ते निवृत्त भई लखि निसा विभागा।
दपति आवनि हेत हियें उलह्यो अनुरागा॥
कोलाहल धुनि छई नई रति बोलैं डोलैं ॥श्रीराधे॥
भीतर बाहिर आय जाय आकुल गति लोलै।७०९॥

भरे अमित अभिलाष सफल ह्वै है कब तन दृग।
करत वियारू जुगल प्राण जीवन देखे ढिग॥
रत्नप्रभा तब आय मोहि सब हेतु सुनायो ॥श्रीराधे॥
मै दपति दिसि हेरि चित्त उनमान बढायो ॥७१०॥

तबही लाग्यो बजन जाम निसि गजर ठनाठन।
अनायास अवकास मिल्यो कहिवे बातन मन॥
चक्रवाक धुनि भई सुनी पीतम चित दैकै ॥श्रीराधे॥
चरण सीस परसाय जानि मै बोली नै कै।७११॥

महाराज अकुलात सखी सब निसि दिसि पेखै।
श्रीतनहूँ श्रम अहै सैन सेवा सुख देखै॥
श्रीपद चालन हेरि विनै जय धुनि भनि हरखे ॥श्रीराध।
उठिवे को उद्योग जानि कुसुमावलि वरषै।७१२॥

देखै नैन सिरान जाहि मन टरै न टारै ।
उन्रयौ गच पर दिव्य चात स्वन करि झनकारै
मृदुल पावड़े रचे जुगल ठाढे श्रीपग धरि ।श्रीराध।
सहचरि मडल मध्य चले गर गलबाँही करि ।।७१३

रम्य सिंहासन जान बाच बैठैं सुख फूले ।
बढ्यौ हिये उछाह सजन सो चलि अनुकूले ।।
मन्द मन्द गति घूमि तहा उन्रयौ रत्न पाई श्रीराध।
तहा विराजू ठाम रची आलिन चित लाई ७१४।।

ज्यौ भागी गन लहै प्राण जीवन अपना सो ।
त्यों आतुर लखि चल जुगल पद कज अना बनि ।।
निकट आय सिर वारि धरा तकि तन मन वार ।।श्रीराधे।।
झन भनि सुवन झराय परसि अग ने बलिहारे ।।७१५

दपति जन्त्रित प्रेम भए इनकी सुख चाहै ।
उठे प्रमाद बढाय परस्पर दै गलबाहैं ।।
मजु वसन रचि सुवन पावड़े चित्र सवारे ।श्रीराध।
सहचरि मडल मध्य चले झुकि हसि पगधारे ।।७१६।।

परम रम्य वर पीठ निकट दोऊ ह्वै ठाढे ।
बैठत होत विनाद नेह अबुधि जुग बाढे ।।
प्यारा प्रीतम लसैं सिंघासन सखी निहारैं । श्रीराध ।
तृषा विवस गतप्राण जथा लहि सुधा सुधारैं ।।७१७।

वाद्य जन्त्र सुर मिली अली कहि समै सुनावै ।
गीत प्रबध प्रवीन राग मूरति प्रगटावै ।।
जनन विया हेत हिये उल है रुचि जैसे ।।श्रीराधे।।
अवधि चातुरी सबैं जुक्ति ठानै मिलि तैसें ।।७१८।।

हम निरखै दृग कोर ओर दपति कर जोरें ।
अति जन गन पर कृपा लहै रुख विनै निहोरे ।।
श्रीअबुज दृग अलस विकसि पल थमत झपानी ।।श्रीराधे।।
सुमिरि नाम नै जानि भाव हिय सब हरखानी ।।७१९।।
वर चौका पर धारि पात्र विवि अमल रतन मै ।
श्रीजुग चरण सरोज धोय पट पोंछि सीस लै ।

हस्त कमल श्रीवदन अमल जल प्रच्छालन करि ॥श्रीराधे॥
मंजु मंजन अंगुष्ठाग्र हुलसि हिय चख मस्तक धरि ॥७२०॥

धूप दीप आचमन कराए हरखि सयानी।
थार कटोरा रंग विविधि मनि राखे आनी ॥
थार निकट हम अष्ट सखी कर लै लखि परसै ॥श्रीराधे॥
जथा पदारथ रूप तथा मूरति सी दरसै ॥७२१॥

दंपति भाव बढाय निरखि श्रीदृग सुख लीन्ह्यौ।
निज जन पूरन आस हस्त फुकि वस्तु सुदीन्ह्यौ ॥
भोजन करत विनोद वार्त्ता होत राग रस ॥श्रीराधे॥
कहन सुनन हित जुगल मध्य पीवत नाना रस ॥७२२॥

नाम रूप गुन स्वाद भेद रस विधि जो जाका।
पृथक बतावत सखी रीति भोजन हित ताका ॥
खात खवावत तथा वचन करि मुरि हेरै ॥श्रीराधे॥
तन मन इंद्री प्राण बुद्धि अरुझै न निवेरै ॥७२३॥

नेहसिंधु रस पगे भूलि कर अनतै डारै।
हम श्रीकर सो भरै जानि हसि सकुचि निहारै ॥
बात बरावै कहै तिक्त विजन चख मूदै ॥श्रीराधे॥
गोपेश्वर सब भीजि छकी सुख रस भर बूदै ॥७२४॥

मान बढावत गाय स्वाद मुख दै सुख दानी।
सीतल अमल सुगंध बीच पोवत हसियानी ॥
परमानंद उदोत भयो सखियन के हिय मैं ॥श्रीराधे॥
दंपति भोजन सुखद तृप्ति पाई लखि जिय मैं ॥७२५॥

हम सब नैकरि विनय वस्तु गुन विसद बखानै।
लेत हमारे हेत हस्त श्री सिथल लखानें ॥
चित्त हठ्यो उनमानि वेगि ते लिये उठाई ॥श्रीराधे॥
भाजन अचवन काज धरे नग जुग्म सुहाई ॥७२६॥

गेरत झारी नीर सखी अचवन पिय प्यारी।
खरिका कनक विचित्र लिये मुख शुद्ध सवारी ॥
मंजुल द्रव्य सुगंध हस्त धोये पट पोछे ॥श्रीराधे॥
श्रीजुग चरण सरोज प्रछाले वसन अगोछे ॥७२७॥

विविधि सुगंधित द्रव्य रचित चूरण मुखवासा।
स्वल्प कटोरी उभ धारि दै भरी हुलासा॥
दंपति श्रीकर वदन मेलि सौरभ रस घूटें॥श्रीराधे॥
लखि प्रसन्नता जुगल अंग आली सुख लूटें।७२८॥

अतर अनूप सुधारि फहा दोऊ कर दीन्हे।
नेह भार झुकि विहसि परस्पर नासा कीन्हे॥
उमग्या हर्ष अपार सखा मिलि मंगल गावे॥श्रीराधे॥
नृत्य कला गति भेद चपलता तन दरसावैं॥७२६॥

कौतुक करें अनेक एक दंपति हित लागी।
पिय प्यारी लखि हम अली निय होहि सुभागी॥
तीनि पांति चौबीस कुंज तिन मध्य बखानी॥श्रीराधे॥
सभा कुंज नौ खंड बनिक अनुपम मुद खानी॥७३०॥

परम निकुंज विहार धाम सत कुंज पुंज हित।
नित्यविहारी जुगल सैन निसि नेम सदा तित॥
रचना रची विचित्र सखिन मन रुचि प्रगटाई॥श्रीराधे॥
ठौर ठौर चख चित्त बुद्धि फसि रहत लुभाई॥७३१॥

सर्वोपरि गव विपुल भूमि चित्रित मनि नाना।
परसै हस्त सुहात सिला ज्यौं एक समाना॥
तहां बिछौना मृदुल बिछे पटरंग अनेका॥श्रीराधे॥
तापै रचना कुसुम भाँति सा विलग विवेका॥७३२॥
श्रीमहारानी भक्ति अंग सेवा निज कीन्हे।
दंपति आनंद हेत बनै रुचि समयो चीन्हे॥
अद्भुत अमल अनूप विविधि मनि सेज बिछाई॥श्रीराधे॥
स्वल्प तीनि सोपान चहू दिसि लगी सुहाई॥७३३॥

छौम स्वच्छ अति विसद मंजु विष्टर तापै रचि।
बार बार कर फेरि मेटि सर सुखद किये सचि॥
पचरंगी वर डोरि चतुर पायन बाधैं कसि॥श्रीराधे॥
जाल ग्रथि दै पुष्प नगन झूमक झूमै लसि॥७३४॥
दीरघ वर्तुल स्वल्प बृहत चौकोर अनेका।
तकिया धरे सुधारि जथाविधि सहित विवेका॥

पाटी लगि सोपान प्रथम लौं जाल रचाये ।श्रीराधे।।
चहू ओर मनि पुष्प भाँति नाना करि लाए ।।७३५।।

केवल सुवन विचित्र रग सोपान रचाई ।
तूल अतर वर बोरि गुम्र तिन मध्य धराई ।।
नीके नैन निहारि चित्त सकल्प मिटाये ।।श्रीराधे।
पलग पोस सौरभ्य हरे गति हरखि उठाये ।।७३६।।

नभ दिसि तन्यौ वितान प्राण उलहैं जिहि हेरें ।
मुक्ता मनि गन सुवन काम लखि दृग अरफेरे ।।
झालरि झूमक लरी कुसुम गुच्छा बहु लटकें ।।श्रीराधे।।
सीतल मद सुगध वायु डोलें उर खटकें ।।७३७।।

लिपटे मत्त मलिद सघ मिलि शब्द उचारें ।
हालें पाय समीर उड़ैं गति मद प्रचारें ।।
छरी भरी सौभाग्य अष्ट दिसि खरी सुहावैं ।।श्रीराधे।।
मनौ दड उद्दड भूप शृगार लजावें ।।७३८।।

विजन मोर छत्र चमर अतर भाजन कर धारी ।
पानदान तें आदि अपर जे सौज अपारी ।।
तत्री जत्र अनेक एक सुर करि मृदु गावैं ।श्रीराधे।।
चचल चित्त विलोल अली दृग नभ तन लावैं ।।७३९।।

बार बार अकुलाय उमगि आगमन निहारैं ।
प्यारी पीतम रूप सुधा जिन छिन आधारैं ।।
ज्यौं ज्यौ आवत चढत चद गति मद कद सुख ।।श्रीराधे।।
जुगल बिना सो ठाम वाम उर देत अधिक दुख ।।७४०।।

कलहसी मम निकट आय सब रीति सुनाई ।
मैं सुनि पायो चैन ऐन तन मन मुद छाई ।।
लागी करन विचार विनै का विधि अब कीजै ।।श्रीराधे।।
सेज विराजे पेखि जुगल अनवधि सुख लीजै ।७४१।।

लागी नौबति झरन घरन घर मगल छाया ।
सैन समै अनुकूल शब्द सो होत सुहायो ।।
दपति सो धुनि सुना गुनो निशि अधिक बितानो ।।श्रीराधे।।
श्री पीतम हसि मन्द कही जीवन धन बानी ।।७४२।।

प्रे विसारे लखौ प्रिया अगन छवि छइ।
ि न र ढिग ड र अणिमा अंग जन द॥
िर र गभ पलक प्रगटन करम आगावे।
रन विनय शृगार भूप ममत निज प द॥७४३॥
नम समत समुझि जुक्ति मेरे मन अइ।
य हर्न गुण नसी काज निबहै सुखदाई॥
चत्रा कर गिरो आँखि निद्रा सब ज ने॥श्रीराधे॥
रति हनु विचारि सैन इच्छा मन आने।७४४॥
ान्हो सोई उपाय हसे प्यारी प्रीतम अति
सहचरि सब सकुचाय लाज अगन धारी रति॥
ंजू मा तन हेरि कही काहो अरसाना॥श्रीराधे॥
वक्य लक्ष्य अवराम करी जोरे जुग पाना॥७४५॥
महाराज या समै आप सोवत हे पलकें।
निद्रा सेवा हेत आय श्रीअगन झलकै।
सूनी सेज निहारि चली सो इतही आई॥श्रीराधे॥
तात डरी श्रीनिकट परी मोपै खिझराई॥७४६॥
हाँसी भई अपार मोद श्रीजू अति पायो।
प्रीतम समत सिद्ध भया आनद भर छायो॥
सबको अति अभिलाष जानि दंपति जिय आई॥श्रीराधे॥
कही विहसि री चलो मिटै तुमरी अरसाई॥७४७॥
मधुरालाप सुगध प्रसर धुनि रुनुझुनु छाई।
मानौ मुख्य प्रमोद प्रगट मूरति दरसाई॥
मगलमई विमान उतरि सो निकट लगानो॥श्रीराधे॥
पिय प्यारी ता बनिक हेरि दृग मन विकसानो॥७४८॥
परमानन्द अथाह उदधि उमगे मन दोऊ।
अग परस्पर गहैं सखी लागी बस साऊ॥
सघासन ते उतरि भूमि ठाढे सुख बाढे॥श्रीराधे॥
रचित पावडे मृदुल भूमि श्रीपगऊ काढे॥७४९॥
सहचरि मडल मध्य चले आवत सुख सरसै।
बैठे विहसि विमान अली कुसुमावलि बरषै॥

श्रीमन के अनुकूल जान गति मद घूमि चलि । श्रीराधे॥
शका मानत चित्त अनै उपजै न कोऊ हलि । ७५०॥

मगल भाति अपार कुज कुजन अति छाए।
उच्च भाग प्रासाद अली ठाढी दृग लाए।
शुभकारी वर द्रव्य साजि कर थार सुहावैं। श्रीराधे।
नृत्यगान सुर मजु जान धुनि सुनि हुलसावै ॥७५१॥

कोटिन चद्र प्रकाश भास आकास लखै जब।
उमगि हिये अनुराग भार नै भूमि परै सब॥
भूरि भाग्य सौं ठाम जान जाके ढिग आवैं।॥श्रीराधे॥
पेखि जुगल सरवस्व वारि पूजा विधि भावै ॥७५२॥

दपति रूप निहारि हिये धरि भरि सुखपुजा।
आवन लागी सग सभा मगल थल कुजा॥
सैन सेज के निकट आय जबही झलकानौ ॥श्रीराधे॥
तहाँ रही जे अली मृतक ज्ँई लखि मानौ ॥७५३॥

कोलाहल रव छयो नयो धरनी दिसि जानू।
सहचरि हिय दृग कज वदन विकसे लहि भानू॥
मन बुद्धि इद्री वृत्ति चित्त ए पेखि पगाने ॥श्रीराधे॥
चली देह भरि नेह मत्त गति सुरति समाने ॥७५४॥

इक टक रही निहारि निकट जकथक ह्वै ठाढी।
जथा मीन गति नीर प्यास नित नूतन गाढी॥
जूथापति वर मौलि मत्स्य भारी भय जैसे ॥श्रीराधे॥
सपदि चेतना गही सकुचि लखि परै न तैसे ॥७५५॥

करि करि दण्डप्रणाम जोरि कर अस्तुति भाखें।
सुवन अजली सारि परसि पद भरि अभिलाखैं॥
दपति सेज विलोकि तोष अतिसै उर पायो ॥श्रीराधे॥
उलहनि वृत्ति निहारि सीस हम सब मिलि नायो ॥७५६।

उठे पूर अनुराग हियें प्यारी पीतम पगि।
मेलि परस्पर बाहु कठ मडल हमहू लगि॥
अमल वसन रचि सुवन पावडे चित्र सवारे ॥श्रीराधे॥
विहसि लटकि पग चलनि हेरि तन मन अलि वारे ॥७५७॥

हेत विनोद [illegible] सुन आवत।
राखि [illegible] लुभावत॥
करि परिरम्भिहिं [illegible] ये॥
विमलि मनावनि करत प्रथन पग धरत न हठि [illegible] ७५८॥

जुगलानंद अथाह उदधि उमगे लहि वेला।
कूल पलग ढिग रुके लहरि मन अविक [illegible]छेला।
जलचर सहचरि हरख बढ़त अपनो वन जानो।श्रीराधे।
अधिक बूडि उतरात स्वास निकसत अकुलानो।७५९॥

विवस होय से झुकी हलन आयो प्यारी पद।
थिर भई मन वृत्ति बूडि या तथा लहै हद।
श्रीमृदु चरण सरोज सेन ऊपर पधराये। ।श्रीराधे॥
प्रीतम हरष विशेष भयो सब मनको भायो॥७६०॥

लटकत झूमत झुकत अंग थाभत सुख रासी।
चहूँ ओर सहचरी गहे ता रस छिन प्यासी॥
तन मन दृग धी प्राण एक ह्वै दोउ विराजे॥श्रीराधे॥
सखियन के उत्साह नगारे सुख भर बाजे॥७६१॥

प्रेम विवस अनुराग भरी आली तकिया धरि।
जथा होय अनुकूल तथा ता विधि सो तित करि॥
विवि चूमैं नभ छत्र मोरछल चमर ढुरावैं॥श्रीराधे।
सहचरि वृंद अपार निरखि दृग हिये सिरावैं॥७६२॥

सेवा सौंज अनंत हस्त लीन्हे सब सोहैं।
जुगल माधुरी छटा चखन पीवैं मन मोहैं॥
श्रीजू कृपा निहारि वारि सरवस्व मनावैं॥श्रीराधे॥
यह सेवा फल होय हमैं छिन ऐसे जावैं॥७६३॥

जंत्र मधुर सुर मिले बजावत समैं सुहाए।
नृत्य भेद दरसाय गान तानन रंग छाए॥
धरि धरि नाना वेस देस तैसो दृढ भावैं॥श्रीराधे॥
दंपति लहैं विनोद अली करि जतन हंसावैं॥७६४॥

दूध पियावन हेत समैं लखि रची उपाई।
एक अली बनि धेन दूसरी वच्छ सुहाई॥

अपर दूहिवे काज गोप ह्वै दोहनि कर ले ॥श्रीराधे॥
कसि बँध्यो गहि वत्स तासु पग नोई गर दै ।७६५॥
धार शब्द मुख बोलि झर कहि दूहत ज्यौं ज्यौं ।
धुनि सुनि आकुल वच्छ पूछ मुरि मारत त्यौं त्यौं ॥
उभ हिये पय लोभ परस्पर टरें मारें ॥श्रीराधे॥
दै तारी भनि भले अली हसि गिरा उचारें ॥७६६॥
कौतुक जुगल निहारि हसे अति दूध लोभ हित ।
सो अवसर हम पाय तासु गुन कहे अमित तित ॥
चहू ओर सहचरी दुग्ध को रूपक बाँधै ॥श्रीराधे॥
पिय प्यारी मन माहि बढ़े रुचि रचि करि साधै ॥७६७॥
निकट आय हम अष्ट बैठि आपद ले गोदी ।
मञु पलाटैं लाय द्दगन छाती करि ओदी ॥
बात रुचिर बनाय पाय रुख विनती कीन्ही ॥श्रीराधे।
निसा दृड दस गई अबे मगल रस भीनी ॥७६८॥
अनुशासन जो लहै परम अपनौ हित श्रीमुख ।
जतन करें पय पान सकल चाहैं दाजै सुख ॥
सील सिंधु जन बंधु दया द्दग कोर निहारैं ॥श्रीराधे॥
सेवा समै विचारि उमग हिय उदधि सभारैं ।७६६॥
चोपर गमगी अमल जगमगी चौकी धरिकै ।
तापै अचवन हेत जुग्म भाजन मनि करिकैं ॥
नीर सुधा सम सीर विमल झारी कर धारी ॥श्रीराधे॥
उभै ओर लै खरी झुके लखि जुगल बिहारी ॥७७०॥
अचर्यें मोद बढाय पोछि श्रीमुख कर पटते ।
चूरन परमा मोद द्रव्य गुण भूरि प्रकट ते ॥
रत्न कटोरी स्वल्प धारि दंपति कर दीन्हे ॥श्रीराधे॥
विहसि मेलि श्रीवदन चर्व्य सौरभ रस लीन्हें ॥७७१॥
श्रीइच्छा ते भई धेनु कामद गुन खानी ।
ताको दुग्ध अनूप सकल रसप्रद रुचि मानी ॥
सखी अगजा तेउ रूप जस रच्यौ बनाई ॥श्रीराधे।
जथा जोग सो वस्तु चित्त समुझैं सुखदाई ॥७७२॥

स्वच्छ रकाबी बसन सहित तनि स्वेत कटोरा।
दरनि रच पहिचानि भरया हिय नेह न थोरा॥
टकि चितवत अनि प्रिया न मन कर नाचितन ॥श्रीराधे।
ये ि निहारि सराहि तिन्है सुख मैल अभिनन ।।७७३।।

नेह भरी हिय हरी गर ल मध्य जुगल कैं
अ लन भार अपार पेखि छवि परत न पलक ।।
आजू मृदु मुसकाय कह पहिले इत प्यावा ।।श्रीराधे।
पानर वाले वेगि प्रथम ललिते तित जावो ।।७७४।।

श्यामा कर जुट रकावा हस्त हट या।
आजु आप द्वै घूट लानियै मन हम भयो।
लाल रकावा गही पानि ए प्रान पियारा।।श्रीराधे।
जो सुख लाग पान कर सो दृहु विचारा।।७७५।।

विवि सागर सुख मध्य परी मैं लेउँ हलारे।
छकी जकी सी लखौं दोउ बलि करैं निहारे॥
नागर परम प्रवीन जुगल रस खानि सिरामनि ।।श्रीराधे।।
दूव भयो मिस बाच प्रेम सरिता बहि अनगनि ।।७७६।।

लाल आपने हस्त कटोरा श्रीमुख लाया।
गूढ हिये हित भाव प्रगट सो गुन दरसाया॥
पानम निय इठ जानि प्रिया अंबुज दृग फेरे ।।श्रीराधे।।
मन हसी भूतानि चितै सुख दियो घनेरे ।।७७७।।

हरषि लई द्वै घूट अहा कहि अधिक बखाना।
लाल वदन तन कियो लटकि श्रीगहि निज पानी॥
दृष्टि परस्पर मिली चली बरुनी न चलायें।।श्रीराधे।।
नेह मेह झर लगा अली लखि लेत बलाये ।।७७८।।

पियत पियावत दुग्ध मुख ता छिन छिन पावै।
उत्कंठा अति चित्त सभरि सोई सुख भावै॥
नैन मूदि मन भाय पाय रस बहय पकटै ।।श्रीराधे।।
लह्यो स्ववस शृंगार भूप जनु सरवस लूटै ।।७७९।।

दंपति करैं विनोद मोद केवल जन लागो।
गोपेश्वर श्रीकृपा पाय हमहू तत भागी॥

पूरे सब अभिलाष जनन के पय करि पाना ।।श्रीराधे
श्री अगन सुख छयो नयो रुचि सरसत नाना ।।७८०।।

नेह भरी सहचरी गहैं झारी अचवावै ।
मंजुल वसन अगौछि वदन श्रीकर सिर नावै ।।
परमामोद सुगंध द्रव्य गुणप्रद बहु जाती ।श्रीराधे
धारि कटोरी दई विसद मुखवास सुहाती ।।७८१।।

दंपति श्रीमुख मेलि तासु रस लै सुख पावै ।
बीरी चित्र अनूप अली करि जतन बिभावै ।।
हीरक मनि पट भीन रकाबी उभै सुधारै ।।श्रीराधे
इत विसाखा पानि अपर नै अली हमारै ।।७८२।।

पिय प्यारी अति लगै पगे हित हम नै देवै ।
जुगल हियै जन भाव हेरि झुकि हसि लसि लेवै ।।
बीरी श्रीरी ओष्ठ अरुण रद छटा सुहावै ।।श्रीराधे
ललित झीन पट झापि नखत राजी सकुचावै ।।७८३।।

तन मन सने सनेह परस्पर तकिया लागे ।
कर मेलत झुकि हसत वचन अमृत रस पागे ।।
मधुर गीत धुनि सुनत गुनत चित बैन नैन झपि ।।श्रीराधे
बिथुरी अलक सवारि जुगल दृग हेरि पलक कपि ।।७८४।।

अरसाने अग लसै वसै छवि हिये दोऊ दिसि ।
हरखि निहारै अली निवारै सकल भाति तिसि ।।
चौकि उठे पिय सपदि अनत प्यारी भ्रम मानी ।।श्रीराधे
सोभा अपरमपार लखी श्रीतन अरसानी ।।७८५।।

एक टक रहे निहारि टारि नहि सकत लाल दृग ।
मनौ राग वस भयौ अग थकि रह्यो जथा मृग ।।
बार बार बलिहारि हरखि हमरी दिसि देखै ।।श्रीराधे
नैननही करि सैन बैन धुनि प्रगट न लेखै ।७८६।।

पीतम सहचरि लागि जतन ते श्रीअग धारे ।
हरे हरे सरकाय गेंदुवा चतुरन टारे ।।
लाल अली रगरली करावै सैंन सुखारे ।।श्रीराधे
अलकै वसन सवारि दिये तकिया मृदु सारे ।।७८७।।

सोभा सिंधु तरंग अंग अगनित छवि लहरै ।
पीतम दृग जुग मीन पीन विहरैं जल गहरै ॥
पान किये माधुर्य लहरि भूली चपलाई ॥श्रीराधे॥
हिय विभावैं रूप सलिल जानी अरमाई ॥७८८॥

लहि तन सखी प्रवीन लाल करि जतन तसु ताए ।
तकिया वसन सुधारि केस लखि रीझि बनाए ॥
दर्पन आअंग लगो सबै सेवैं सुख सरसै ॥श्रीराधे॥
हिय कपोलन चखन भाल पेखै वपु परसै ॥७८९॥

जुगलानंद समुद्र माधुरी छटा तरंगा
लखैं उमगि अनुराग सहचरी सेवैं अंगा ॥
परम चातुरी धाम सकल श्रम करै उपाई ॥श्रीराधे॥
आतन श्रम जिमि मिटै नींद छिन छिन अधिकाई ॥७९०॥

दंपति करवट नेत ओर जाकी सोभा गिन ।
अनवधि सेवा सौख्य लहैं फल हिय निज लागिन ॥
आलस रसनिधि भरे अंग सुखमा अनपारी ॥श्रीराधे॥
थीरैं नैन निहारि धरैं उर अचल सभारी ॥७९१॥

स्वास अधिकता देखि विलग ह्वैं निरखै ठाढी ।
चोप सौगुनी हियें अमित अभिलाषा बाढ़ी ॥
धरैं पलग चहुँ वोर सौंज निसि जे हित जानी ॥श्रीराधे॥
प्रेम नेह अनुराग प्रीति पूरी सब आनी ॥७९२॥

सिरहाने की ओर अमिय जल सीतल झारी ।
नाना जतन रचाय उभै ते धरी सुधारी ॥
मेवा विविधि अनूप सकल रसमै गुन खानी ॥श्रीराधे॥
भाजन भरे अनेक धरे दंपति हित मानी ॥७९३॥

पानदान जुग अमल अनूपम वीरी पूरे ।
परमामोद सुगंध द्रव्य गुणप्रद धरि भूरे ॥
भाजन अंतर अमोल जुग्म तिन मैं बहु जाती ॥श्रीराधे॥
कोउ खुले धर अपर ढाकि राखे इहि भाती ॥७९४॥

पुष्पाभरण विचित्र साज नखसिख लौके सब ।
भीन वसन करि जतन उभै भरि थार धरे तब ॥

बगलन वाई दच्छ पीकदानी शुभ धरिकै ॥श्रीराधे॥
कछू दूरि वर मुकुर थापिते ऊभे करिकै ॥७६५॥
लिखे चित्र जिन्ह माहि लखै मन हर्ष बढावै ।
जितने निर्मल स्वच्छ वदन पेखै सुख छावै ॥
नाना मणि रचि बने उपस्कर क्रीड़ा हित जे ॥श्रीराधे॥
जुगलविहारी मोद लहैं ता विधि धरि नित ते ।७६६॥
दर्पन उभै अनूप उच्च आयत निर्मल अति ।
राखे पायत ओर लखै मुद पावै दंपति ॥
सैन नहीं सब काज करै नहि स्वल्प होत धुनि ।श्रीराधे॥
निद्रा भग न होय सक मानत अति जिय गुनि ॥७६७॥
चादरि आयत सौम्य क्षौम सुखदायक सब छिन ।
अष्ट ओर हम गही अष्ट मिलि तानी सो तिन ॥
दंपति रूप निहारि धारि उर सीस नवाई ॥श्रीराधे॥
सावधान करि चित्त वृत्ति गति हरे उठाई ॥७६८।
सौंज सकल सोपान धरी दृग फेरि निहारी ।
जथायोग्य जो होय तथाविधि चित्र सवारी ॥
मन बुधि इद्री प्राण नैन ए मीन हमारे ॥श्रीराधे॥
जुगल माधुरी रूप सुधा जल जीव न पारे ॥७६९॥
जुदे होत अकुलात समै अवसर लखि आनै ।
ते सब तहा बसाय नाम सुमिरैं उर छानैं ॥
उलटे ही पग धरै हरै नयनै कर जोरै ॥श्रीराधे॥
सिथल दसा तन छई चले झुकि वा दिसि होरै ॥८००॥
ज्यौं त्यौं जहा प्रमाण आय पहुँची ता ठाई ।
बोले शब्द न जात सैन मगल ढिग ताई ॥
तहा बैठि कछु बार सुमिरि दंपति छवि नामा ॥श्रीराधे॥
मधुरे स्वर धुनि करी चित्त पायो बिश्रामा ॥८०१॥
मत कियो विचारि भोर सेवा सुख सामा ।
पति लहैं प्रमोद जथाविधि सो दृढ कामा ॥
अपने अपने जूथ वृंद नीकै समुझाई ॥श्रीराधे॥
त बिसाखा सदन सकल सुख मै असगाई ॥८०२॥

आए अष्ट विमान मुख्य औरौ अनगनर्नी ।
न्हीं परस्पर मिलि नथ वि थ न करि विनर्नी ॥
चढ़ी जाय निज जान मग ताके ना रहहीं ।श्रीराधे॥
नभ दिसि ठहरि निहारि सेन मन्तक भू लहर्नी ।८०३।

अपने अपने ठाम जाय उतर सब सहचरि ।
द्वार खरी मुरि सन कुन वदै त्रय विधि करि ॥
मन्दिर सदन प्रविस्य बैठि निज सिंहासन पर ।श्रीराधे॥
सेव सखी समूह लहै सुख हिलि मिलि तत्पर ।८०४।

वसन पुष्प आभरन गध वीरी ते आनी ।
भाजन सकल प्रकार नीर जे मिल प्रनादी ।
ताका पारी होय तहा सब ता छिन आवै ।श्रीराधे॥
तिनकी आज्ञा भये अष्ट करि भाग लगावै ।८०५॥

जे जे जिनके सग मुख्य कहि अष्ट बखानी ।
सकल प्रसादी सौज भाग जे किये प्रमानी ॥
लावैं एक प्रधान अपर आली बहु गण लै ।श्रीराधे॥
सप्त कुज ते जाहि सीस तिनकै शो सब दै ।८०६॥

तहा तहा ते जाय पाय वदै कर जोरैं ।
विनती भार सुनाय प्रसादी देहि निहोरैं ॥
तेऊ परम प्रवीन जानि महिमा उठि वदी ।श्रीराधे॥
लै नय अपने हस्त सीस धारै अभिनदी ।८०७॥

दान मान दै तोष भेटि मृदु गिरा सुनाई ।
श्रीराधे सकेत प्रणय कहि करै बिदाई ॥
सप्त धाम पहुँचाय आय निज प्रभुपद वदै ।श्रीराधे॥
यह सकेत जनाय सकल भाखै नय मदै ।८०८॥

सुनि प्यारी प्रिय नाम हियो उमगै सिर नावै ।
निज आलिन की रीति पेखि अति प्रीति बढ़ावै ॥
सकल सहचरी वृन्द इष्ट कुजन जित जे हैं ।श्रीराधे॥
वर स्वामिनी प्रधान अग सवै निति ते हैं ।८०९॥

रत्नप्रभा ते आदि अष्ट ए मुख्य हमारै ।
इनकै सग अनन्त जूथपति वृन्द अपारै ॥

बगलन बाई दच्छ पीकदानी शुभ धरिकै ॥श्रीराधे॥
कछू दूरि वर मुकुर थापिते ऊभे करिकै ॥७६५॥

लिखे चित्र जिन्ह माहि लखै मन हर्ष बढावै ।
कितने निर्मल स्वच्छ बदन पेखै सुख छावै ॥
नाना मणि रचि बने उपस्कर क्रीड़ा हित जे ॥श्रीराधे॥
जुगलविहारी मोद लहैं ता विवि धरि नित ते ॥७६६॥

दर्पन उभै अनूप उच्च आयत निर्मल अति ।
राखे पायत ओर लखै मुद पावै दपति ॥
सैन नहीं सब काज करै नहि स्वल्प होत धुनि ॥श्रीराधे॥
निद्रा भग न होय सक मानत अति जिय गुनि ॥७६७॥

चादरि आयत सौम्य क्षौम सुखदायक सब छिन ।
अष्ट ओर हम गही अष्ट मिलि तानी सो तिन ॥
दपति रूप निहारि धारि उर सीस नवाई ॥श्रीराधे॥
सावधान करि चित्त वृत्ति गति हरे उठाई ॥७६८॥

सौंज सकल सोपान धरी दग फेरि निहारी ।
जथायोग्य जो होय तथाविधि चित्र सवारी ॥
मन बुधि इद्री प्राण नैन ए मीन हमारे ॥श्रीराधे॥
जुगल माधुरी रूप सुधा जल जीव न पारे ॥७६९॥

जुदे होत अकुलात समै अवसर लखि आनै ।
ते सब तहा बमाय नाम सुमिरैं उर छानै ॥
उलटे ही पग धरै हरै नयनै कर जारै ॥श्रीराधे॥
सिथल दसा तन छई चलैं झुकि वा दिसि होरै ॥८००॥

ज्यौं त्यौं जहा प्रमाण आय पहुँची ता ठाई ।
बोलैं शब्द न जात सैन मगल ढिग ताई ॥
तहा बैठि कछु बार सुमिरि दपति छवि नामा ॥श्रीराधे॥
मधुरे स्वर धुनि करी चित्त पायो विश्रामा ॥८०१॥

समत कियो विचारि भोर सेवा सुख सामा ।
दपति लहैं प्रमोद जथाविधि सो दृढ कामा ॥
अपने अपने जूथ वृद नीकै समुझाई ॥श्रीराधे॥
प्रात विसाखा सदन सकल सुख मै असगाई ॥८०२॥

आग अष्ट विमान मुख्य औरौ अनगनतीं ।
तहाँ परस्पर मिलि जथ विधि न करि विनतीं ॥
चढा जाय निज नाम सग ताके ज रहै ।श्रीराधे॥
नभ दिसि ठहरि निहारि सेन मस्तक भू लहतीं ।८०३।

अपने अपने ठाम जाय उतर सब सहचरि ।
द्वार खरी मुरि मैन कुज वदै त्रय विधि करि ॥
अन्तर मदन प्रविस्य वैठि निज सिंहासन पर ।श्रीराधे॥
सेवैं सखी समूह लहै सुख हिलि मिलि तत्पर ।८०४।

वसन पुष्प आभरन गध वीरी त आरती ।
भोजन सकल प्रकार नीर जे मिले प्रसादी ।
जाकी पारी होय तहा सब ता दिन आवे ।श्रीराधे॥
तिनकी आज्ञा भये अष्ट करि भोग लगावैं ।८०५॥

जे जे जिनके सग मुख्य कहि अष्ट बखानी ।
सकल प्रसादी सौंज भोग जे किये प्रमानी ।
लावैं एक प्रधान अपर आली बहु गण लै ॥श्रीराधे॥
सप्त कुज ते जाहि सीस तिनकै शो सब दै ॥८०६॥

तहा तहा ते जाय पाय वदै कर जोरैं ।
विनती भार सुनाय प्रसादी देहि निहोरैं ॥
तेऊ परम प्रवीन जानि महिमा उठि वदी ॥श्रीराधे॥
लै नय अपने हस्त सीस धारै अभिनदी ॥८०७॥

दान मान दै तोष भेटि मृदु गिरा सुनाई ।
श्रीराधे सकेत प्रणय कहि करै बिदाई ॥
सप्त धाम पहुँचाय आय निज प्रभुपद वदै ॥श्रीराधे॥
यह सकेत जनाय सकल भाखै नय मदै ।८०८॥

वगलन बाई दच्छ पीकदानी शुभ धरिकै ॥श्रीराधे॥
कछू दूरि वर मुकुर थापिते ऊभे करिकै ॥७६५॥

लिखे चित्र जिन्ह माहिं लखै मन हर्ष बढावै ।
कितने निर्मल स्वच्छ वदन पेखै सुख छावै ॥
नाना मणि रचि बने उपस्कर क्रीड़ा हित जे ॥श्रीराधे॥
जुगलविहारी मोद लहैं ता विवि धरि तित ते ॥७६६॥

दर्पन उभै अनूर उच्च आयत निर्मल अति ।
राखे पायत ओर लखै मुद पावै दंपति ॥
सैन नहीं सब काज करै नहि स्वल्प होत धुनि ॥श्रीराधे॥
निद्रा भंग न होय सक मानत अति जिय गुनि ॥७६७॥

चादरि आयत सौम्य क्षौम सुखदायक सब छिन ।
अष्ट ओर हम गही अष्ट मिलि तानी सो तिन ॥
दंपति रूप निहारि धारि उर सीस नवाई ॥श्रीराधे॥
सावधान करि चित्त वृत्ति गति हरे उठाई ॥७६८॥

सौंज सकल सोपान धरी दृग फेरि निहारी ।
जथायोग्य जो होय तथाविधि चित्र सवारी ॥
मन बुधि इंद्री प्राण नैन ए मीन हमारे ॥श्रीराधे॥
जुगल माधुरी रूप सुधा जल जीव न पारे ॥७६९॥

जुदे होत अकुलात समै अवसर लखि आनै ।
ते सब तहा बसाय नाम सुमिरें उर छानैं ॥
उलटे ही पग धरै हरै नयनै कर जारै ॥श्रीराधे॥
सिथल दसा तन छई चलै झुकि वा दिसि होरै ॥८००॥

ज्यौं त्यौं जहा प्रमाण आय पहुँची ता ठाई ।
बोलैं शब्द न जात सैन मंगल ढिग ताई ॥
तहा बैठि कछु बार सुमिरि दंपति छवि नामा ॥श्रीराधे॥
मधुरे स्वर धुनि करी चित्त पायो विश्रामा ॥८०१॥

समत कियो विचारि भोर सेवा सुख सामा ।
दंपति लहैं प्रमोद जथाविधि सो दृढ कामा ॥
अपने अपने जूथ वृंद नीकै समुझाई ॥श्रीराधे॥
प्रात विसाखा सदन सकल सुख मै असगाई ॥८०२॥

आए अष्ट विमान मुख्य औरौ अनगनतें ।
तहाँ परस्पर मिलि जथ विधि न करि विनतें ॥
चढ़ि नाथ निज जान संग नारि न रहे श्रीराधे ।
नभ दिसि ठहरि निहारि सेन मस्तक भू लहतें ।८०३॥

अपने अपने ठाम जाय उतर सब सहचरि ।
द्वार खरी मुरि सेन कुंज वंदे त्रय विधि करि ॥
भीतर सदन प्रविश्य बैठि निज सिंहासन वर ।श्रीराधे॥
सेव सखी समूह लहै मुद हित मिलि तत्पर ।८०४।

वसन पुष्प आभरन गंध वीरी त आनी ।
भाजन सकल प्रकार नीर जे मिलै प्रसादी ।
जाकी पारी होय तहा सब ता ढिग आवे ।श्रीराधे॥
तिनकी आज्ञा भये अष्ट करि भाग लगावै ।८०५॥

जे जे जिनके संग मुख्य कहि अष्ट बखानी ।
सकल प्रसादी सौंज भाग जे किये प्रमानी ॥
लागें एक प्रधान अपर आली बहु गण लै ।श्रीराधे॥
सप्त कुंज ते जाहि सीस तिनकै शो सब द ।८०६॥

तहा तहा ते जाय पाय वंदै कर जोरैं ।
विनती भार सुनाय प्रसादी देहि निहोरैं ॥
तेऊ परम प्रवीन जानि महिमा उठि वंदी ।श्रीराधे॥
लै नय अपने हस्त सीस धारै अभिनंदी ।८०७।

दान मान दै तोष भेटि मृदु गिरा सुनाई ।
श्रीराधे संकेत प्रणय कहि करै बिदाई ॥
सप्त धाम पहुँचाय आय निज प्रभुपद वंदै ।श्रीराधे॥
यह संकेत जनाय सकल भाखै नय मंदै ।८०८॥

सुनि प्यारी प्रिय नाम हियो उमगै सिर नावै ।
निज आलिन की रीति पेखि अति प्रीति बढावै ॥
सकल सहचरी वृन्द अष्ट कुंजन जित जे हैं ।श्रीराधे॥
वर स्वामिनी प्रधान अंग सेवै निति ते हैं ।८०९॥

रत्नप्रभा ते आदि अष्ट ए मुख्य हमारै ।
इनकै संग अनन्त जूथपति वृन्द अपारै ॥

तन मन वृत्ति लगाय हमैं सेवै सब भाँती ॥श्रीराधे॥
नैन प्राण सम अधिक मोहि निति परम सुहाती ॥८१॥

अंग अंग आभरन वसन तन मम उतरावै ।
केवल साटी साजि चरन कर वदन धुवावै ॥
मंजुल पट अंगुछाय नम्र ह्वै बिनै सुनावै ॥श्रीराधे॥
भोजन जुगल प्रसाद पाय रुख हरषि लै आवै ॥८११॥

थार कटोरा साजि कटोरी चौकी धरही ।
सकल पदारथ व्यक्त विसद विधि सेती भरही ॥
झारी भरै प्रवीन नेह जुत गिरा सुनावै ॥श्रीराधे॥
प्रेम पुलकि हिय अंग हमैं भोजन करवावैं ॥८१२॥

बीच बीच रस पीय नीर बानो सुख देवै ।
दै खरिका अचवाय वसन पोंछे चित भेवै ॥
मंगल वर मुखवास प्रसादी बीरी देहीं ॥श्रीराधे॥
अंतर सुवन अरपाय निरखि नय मन हरि लेहीं ॥८१३॥

रचना परम रचाय सेज लखि चित्त लुभाई ।
नय मंडल करि मध्य मोहि दै चलै लिवाई ॥
जाय पलंग बैठाय नाय सिर अति सुख पावै ॥श्रीराधे॥
नृत्य गान दरसाय विविधि कौतुक उपजावैं ॥८१४॥

प्रेम हिये हुलसाय जानि रुचि दुग्ध पियावैं ।
वदन हस्त अचवाय पोंछि मुखवास विभावै ॥
अरसाने अंग जानि जतन तै सैन करावैं ॥श्रीराधे॥
सेवै चित्त लगाय परसि तन सुख भर पावैं ॥८१५॥

निद्रा के लखि चिह्न बिलग ह्वै सीस नवावैं ।
नीर पान तें आदि सौंज ढिग पलंग धरावै ॥
ऊपर वसन उठाय चित्त मेरे पद राखै ॥श्रीराधे॥
जीहा सुमिरै नाम करै पूरी अभिलाखै ॥८१६॥

आवैं ताही ठौर सकल पुनि भाग लगावैं ।
भूषन वसन प्रसाद सौंज सब लै हरखावै ॥
मिलै प्रससै नवै नैन बानी सुख लै दै ॥श्रीराधे॥
जथाजोग्य व्यवहार साधि निज कुंज चलै नै ॥८१७॥

जूथ वृन्दपति मौजि आय निज कुञ्ज द्वार पर।
मुरति निहारि जुगल मैन बद सिर जुग कर॥
भीतर कर प्रवेस सग आली जे तिनके। श्रीराधे॥
सेवैं ऐसी भाति प्रभू अपने हित गिनके॥८१८॥

जाहि जहा अनुराग प्रेम मन मेल मिताई।
तहा तथा सो रीति साजि अति नेह बढाई।
आवैं अपने कुज पुज पूरे सुख पाई आराधे।
जुगल सेन थल पेखि धारि उर भीतर जाई॥८१९॥

भूषन वसन उतारि धारि साटी एकै तन।
हस्त पाद मुख धोय पोंछि पट लै जल अचवन॥
शुद्धासन थिर बैठि जुगल श्रीनाम उचारैं॥श्रीराधे॥
रूप माधुरी छटा चरण नख हिये सभारैं॥८२०॥

भोर उठ तें रैन सैन लौं सेवा जेती।
जो जा अरथी होय चित्त सुमिरैं सुख सेती॥
अपनी सखी समेत प्रसादी लै हरखाई॥श्रीराधे॥
सबही को मन तोषि देइ तिन हेत बढाइ॥८२१॥

प्रात वृत्ति अनुसारय बिदा करि सेज पधारैं।
स्यामा स्याम पदारविंद निज मन अलि धारैं॥
अति लोभी चित भौंर गध हित बसै जथा निसि॥श्रीराधे॥
तैसे निश्चल राखि पलग लुठि रहै नीद मिसि॥८२२॥

बहुरि भोर की रीति जथाविधि पहिलें गाई।
जा मडल दिन होय तहा कीजै सुख पाई॥
ऐसें सेवा होत इहाँ दपति इच्छा जस॥श्रीराधे॥
अवधि नेम को लहै प्रेम को पथ कहै तस॥८२३॥

अष्ट जाम की रीति स्वल्प सेवा विधि भाखी।
सुधासिधु अनपार स्वाद जानै कन चाखी॥
गावें जाहि अनत सत समत श्रुति दृढतर॥श्रीराधे॥
नाहि अत लै कहै अहै सो मूढ मदतर॥८२४॥

दोहा—गोपेश्वर या वस्तु को, दुर्गम अतिसै अग।
चरण किसोरी कृपाबल, भाख्यो कछू प्रसग॥१॥

चित्त गहै जिहि कष्ट करि, बचन कहै किहि भांति ।
शनै शनै परिचै किये, उपजै निश्चै सांति ॥२॥
सुनै विचारे हिय गहै करै नेम दृढ प्रेम ।
दंपति चरण सरोज सुख, पावै अनवधि छेम ॥३॥

श्रीललिता गहि मौन दृग, मूंदि रही कछु वार ।
प्यारी चरण सरोज सुख, बूडी सिंधु अपार ॥१॥
तथा सहेली श्रवण करि, सेवानंद अनूप ।
जुगल माधुरी मत्त ह्वै भूली आप सरूप ॥२॥

दंड एक ऐसैं रही, परमानंद समाय ।
सिथिल अंग झुकि झुकि परै, भूषन रव अधिकाय ॥३॥
श्रीललिता सो धुनि सुनी, खोल अंबुज नैन ।
हरषि स्वास दीरघ लई छाय रह्यौ सुख चैन ॥४॥

जुगल माधुरी छके दृग, फेरि लखी सब ओर ।
मस्तक धरनी धारि ते, वंदै करै निहोर ॥५॥
वायु लहै घन ओष्ट चल, मंद हसनि लसि सोय ।
दंत छटा दामिनि झलक, शब्द वचन गति होय ॥६॥

श्रीराधे वरणावली, वृष्टि उमगि रस कीन्हि ।
चातक अली समूह तिमि, तृषित विमल गहि लीन्हि ॥७॥
आनंद उदधि अपार अति, बढ्यौ परम ता ठौर ।
सहचरि अंबुज वदन दृग, विकसे पुतरी भौंर ॥८॥

गोपेश्वर कर जोरि तब, बोले मस्तक नाय ।
महाराज कृतकृत्य हम, भये चरन रज पाय ॥९॥
भानु संग जग पाय जिमि, सीत अंध भ्रम जाय ।
तथा रावरी चरण रज, साधक सकल उपाय ॥१०॥
तीर सुधा निधि के रहै तृषा मिटै नहि जासु ।
बहुरि कहाँ सुख लेस तिहिं मंद भाग्य अति तासु ॥११॥
परम उदार सिरोमणी, आप सरिस हैं आप ।
अपनौ धन सरवस्व दै, मेटत जन परिताप ॥१२॥

अब करुणा ऐसी करौ, यह धन हिय थल पाय ।
जतन जुक्ति मन दृढ करै, छिन छिन अति अधिकाय ॥१३॥

जथा रङ्क लखि रीझि नृप ज्यौं धन देहि अपार ।
ताहि चलन चन मग दै, तहि लगावत पार ॥१४॥
तृन र वरा महि नत मन्य कहा पद पेखि ।
बीन वट पुनि भाखिबो यह कर आपु विसेखि ॥१५॥

गोपेश्वर के वचन सुनि, श्रद्धा मतिजुत प्रेम ।
वस्तु ज्ञान रुचि धारना, उत्कंठा दृढ नम ॥१६॥
श्रीललित हिय नाथ लहि सिद्ध परिश्रम जानि ।
करुणा रस दृग पूरि लखि करी मंद मुसक्यानि ॥१७॥

वचनामृत मृदु धार, रहि सोचत जन हिय रूप ।
ते पावन बलवन ह्वै छिन छिन बढत भूप ॥१८॥
अहा वत्स हिय धन्य तुम, भाग्य बुद्धि जल सेतु ।
दुर्लभ का श्रीपद कृपा, सकल सिद्धि शुभ सेतु ॥१९॥

अधिक होयबे की कृपा, जो पूछी तुम तात ।
मूल हेत अभ्यास दृढ वस्तु पाय सुख छात ॥२०॥
गुरु जथा कण अग्नि लघु देत शिष्य लखि वस्तु ।
जतन किये जग वह्निमय, ना तो क्षार समस्तु ॥२१॥

श्रद्धाग्नि इंधन श्रवन, वायु विचार प्रचंड ।
वस्तु मंत्र अभ्यास घृत, दुति फल गहैं अखंड ॥२२॥
प्रथम सुने मन लाय कै, अर्थ विचारि विनीति ।
मनन करे दृढ धारना त्यागि, अपर मन प्रीति ॥२३॥

नित्यानित्य विचारि दृढ, वस्तु गहै सुख मूल ।
शनै शनै अभ्यास करि, पावै मोद अतूल ॥२४॥
करुणासिंधु अपार अति, शील दयानिधि भार ।
नित्य विहारी जुगल, श्री प्रणत लगावै पार ॥२५॥

दंपति पद प्रापक वचन, सुने सकल सुख मूल ।
जय जय कहि सिर नावहीं, हसि बरषावैं फूल ॥२६॥
गोपेश्वर सकुचाय दृग सीस, नाय कर जोरि ।
श्रीललिता सखि वदन तकि लखत सकल मुख मोरि ॥२७॥

अति उत्कंठा पूछिबे, लाज गहत मन माहि ।
अधिक ढिठाई जानि जिय, प्रगट कहत सो नाहि ॥२८॥

स्यामानुगा विसेष सुख, श्रवण हियें उनमानि।
गोपेश्वर धन धन्य तुम, हमसे जन सुखदानि॥२९॥
यह धुनि सुनि सब विहसि दृग, लखैं तिन्है की ओरि।
तेऊ लाज भरि नम्र ह्वै, सकुचत अग सिकोरि॥३०॥

बोली रग बढायवे, रगदेवि श्री बैन।
अहो प्राण जीवन प्रिये, श्रीललिते सुख दैन॥३१॥
गोपेश्वर मन भरत है, प्रश्न चिह्न दरसाय।
प्रगट सक बस करत नहि, उमगि रहत सकुचाय॥३२॥

सुनि श्रीललिता हरषि हसि, कही अरी मम प्राण।
पूछौ इनतै कृपा करि, सकुचि किते दिनमान॥३३॥
मोहि प्राण ते अधिक प्रिय, कृपापात्र श्री जानि।
इन्हकी सगति पाय कै, प्रगट भई रसखानि॥३४॥
कारन या सुख को एइ, परमारथ तन धारि।
परमानद समुद्र मै, प्रथम दई मझारि॥३५॥
श्री अनुशासन सीस धरि, करिहैं लोक उवार।
छिन छिन इन मन सौख्यता, हम जिय मोद अपार॥३६॥

अतिसै कृपा विचारि जिय, गोपेश्वर मतिसिधु।
नय बोले कर जोरि मृदु, जय गुरु आरतबधु॥३७॥
महाराज हिय सिधु रस, अनवधि रत्न अमोल।
दया कृपादिक लहरि परि, तेई निकसत बोल॥३८॥

जानि परी जन पर कृपा, आपहि ए भरि पूरि।
सकल मनोरथ सिद्धि मम, भये परसि पग धूरि॥३९॥
एक चाह मन मै भई, गई किये अनुताप।
बार बार के पूछिवे, लहै परिश्रम आप॥४०॥
अर्थ वसै जाके हिय, सो नहि रावत लाज।
हर्ष सोक पर वेदना, तजि निज चाहत काज॥४१॥

सो भरोस हिय मै सुदृढ, आप सिधु रसपूर।
पाय तृषा नहि, मेटई, मूढ गवावै मूर॥४२॥
श्री अनुकपा और लखि, चित्त ढिठाई आनि।
प्रगट करौं अभिलाष मन, दानि सिरोमनि जानि॥४३॥

प्रथम मुनी श्री वन्न ने ब्राम्म मन वर कुंज।
नित्य विहारी जुगल तह निरंतर आनंद पुंज ॥४४॥
नव मन कुंज विहार सुन अनवधि सिंधु अपार।
कृपा रावरी सों लह्यो सार परम निर्धार।४५॥
प्रेम नानि मन कुंज जे जत्र सुन्यौ षटकोण
मंडल प्रति वरि नित भरें पचामृत सुख भौन ४६॥
ऋतु अनुकूल विहार तह अप कह्यौ लघु नेम।
सो उत्कंठा चित्त अति, जान्यो चहै विसेष ॥४७॥
वस्तु चाह उत्साह रुचि श्रद्धा प्रीति अभंग।
पेखि दृगन हिय सुख छयो, आलंनिता अंग अंग ॥४८॥
मंद विहंसि बोली वचन कस न कहौ गुनवंत।
लोभ अधिकता होत दृढ धन पाये धनवंत ॥४९॥
सुनौ तहा की रीति जो, सुमिरि कहौं श्रीनाम।
नित्यविहारी जुगल जिमि, तहाँ करै विश्राम ॥५०॥
किय जथा विवहार जग, नित नूतन अधिकाय।
लेस देस परिवेस हित, स्वल्प कहौं सो गाय ॥५१॥

❖ चौपाई ❖

श्रीइच्छा मन नव जस होई। तहा पदारथ प्रगटै सोई॥
दिवस निसा ऋतु काल त्रिभागा। रुचि लखि सेवैं करि अनुरागा ॥१॥
जत्र कोण षट कहि जो गाया। षट ऋतु को तह वास सुहायो॥
सहचरि तन धरि ते तित रहहीं। दंपति सेवा नित चित चहहीं ॥२॥
जा ऋतु को जो रूप कहावै। तथा भाति सो धाम रचावै॥
नूतन छिन छिन करैं तयारी। आवन आसा जुगल विहारी ॥३॥
उत्तर भाग अहै जो मंडल। तहा वसै ऋतुराज अखंडल॥
समाचार आवन को पावै। तन मन फूलिन हियै समावै ॥४।
नाना रूप करै निज अंगा। दंपति ज्यौं सुख लहै अभंगा॥
लता औषधी वृच्छ गुल्म जे। जाति अमित गुन भूरि भरे ते ॥५॥
नूतन पल्लव कली सुवन फर। नमित डार भर भूमि गहैं धर॥
भूमि प्रदेस चित्र मनि छाई। अंकुर उदै फवी हरियाई ॥६॥
ठौर ठौर धारा मधु स्रवहीं। सौरभ गंध दिसा नभ छवहीं॥
मत्त मलिंद करैं कलगाना। मतवारे द्विज बोलै नाना ॥७॥

स्यामानुगा विसेष सुख, श्रवण हियें उनमानि ।
गोपेश्वर धन धन्य तुम, हमसे जन सुखदानि ॥२६॥
यह धुनि सुनि सब विहसि दृग, लखैं तिन्है की ओरि ।
तेऊ लाज भरि नम्र ह्वै, सकुचत अग सिकोरि ॥३०॥

बोली रग बढायवे, रगदेवि श्री बैन ।
अहो प्राण जीवन प्रिये, श्रीललिते सुख दैन ॥३१॥
गोपेश्वर मन भरत है, प्रश्न चिह्न दरसाय ।
प्रगट सक बस करत नहि, उमगि रहत सकुचाय ॥३२॥

सुनि श्रीललिता हरषि हसि, कही अरी मम प्राण ।
पूछौ इनतै कृपा करि, सकुचि क्ति दिनमान ॥३३॥
मोहि प्राण ते अधिक प्रिय, कृपापात्र श्री जानि ।
इन्हकी सगति पाय कै, प्रगट भई रसखानि ॥३४॥
कारन या सुख को एइ, परमारथ तन धारि ।
परमानद समुद्र मै, प्रथम दई मझारि ॥३५॥
श्री अनुशासन सीस धरि, करिहैं लोक उवार ।
छिन छिन इन मन सौख्यता, हम जिय मोद अपार ॥३६॥

अतिसै कृपा विचारि जिय, गोपेश्वर मतिसिधु ।
नय बोले कर जोरि मृदु, जय गुरु आरतबधु ॥३७॥
महाराज हिय सिधु रस, अनवधि रत्न अमोल ।
दया कृपादिक लहरि परि, तेई निकसत बोल ॥३८॥

जानि परी जन पर कृपा, आपहिं ए भरि पूरि ।
सकल मनोरथ सिद्धि मम, भये परसि पग धूरि ॥३९॥
एक चाह मन मै भई, गई किये अनुताप ।
बार बार के पूछिवें, लहै परिश्रम आप ॥४०॥
अर्थ वसै जाके हिय, सो नहि रावत लाज ।
हर्ष सोक पर वेदना, तजि निज चाहत काज ॥४१॥

सो भरोस हिय मै सुदृढ, आप सिधु रसपूर ।
पाय तृषा नहि, मेटई, मूढ गवावै मूर ॥४२॥
श्री अनुकपा और लखि, चित्त ढिठाई आनि ।
प्रगट करौं अभिलाष मन, दानि सिरोमनि जानि ॥४३॥

प्रथम मुनी श्री बन्दन ते द्वादस सत वर कुंज।
नित्य विहारी जुगल तहं विहरत आनन्द पुंज ॥४४॥
नव मन कुंन विहार सुख अनवधि सिंधु अपार।
कृपा रावरी सों लह्यौ सार परम निर्धार ॥४५॥
सेस तीनि सत कुंज जे तत्र सुन्यौ षटकोण।
मंडल प्रति करि नित भये पचासत सुख भौन ॥४६॥
ऋतु अनुकूल विहार तहं आप कह्यौ लघु लेस।
सो उत्कंठा चित्त अति, जान्यौ चहै विसेष ॥४७॥
वस्तु चाह उत्साह रुचि श्रद्धा प्रीति अभंग।
पखि दृगन हिय सुख छयो श्रीललिता अंग अंग ॥४८॥
मन्द बिहँसि बोलीं वचन क्स न कहौं गुनवंत।
लोभ अधिकता होत दृढ धन पाये धनवंत ॥४९॥
सुनौ तहां की रीति जो, सुमिरि कहौं श्रीनाम।
नित्यविहारी जुगल जिमि, तहाँ करैं विश्राम ॥५०॥
कियें जथा विवहार जग, नित नूतन अधिकाय।
लेस देस परिवेस हित, स्वल्प कहौं सो गाय ॥५१॥

* चौपाई *

श्रीइच्छा मन जब जस होई। तहां पदारथ प्रगटै सोई ॥
विषम निमा ऋतु काल त्रिभागा। रुचि लखि सेवैं करि अनुरागा ॥१॥
जत्र कोण षट कहि जो गाया। षट ऋतु को तहं वास सुहायो ॥
सहचरि तन धरि ते तित रहहीं। दंपति सेवा नित चित चहहीं ॥२॥
जा ऋतु को जो रूप कहावै। तथा भांति सो धाम रचावै ॥
नूतन छिन छिन करैं तयारी। आवन आसा जुगल विहारी ॥३॥
उत्तर भाग अहै जो मंडल। तहां बसै ऋतुराज अखंडल ॥
समाचार आवन को पावै। तन मन फूलिन हियै समावै ॥४॥
नाना रूप करै निज अंगा। दंपति ज्यौं सुख लहै अभंगा ॥
लता औषधी वृच्छ गुल्म जे। जाति अमित गुन भूरि भरेते ॥५॥
नूतन पल्लव कली सुवन फर। नमित डार भर झूमि गहैं धर ॥
भूमि प्रदेस चित्र मनि छाई। अंकुर उदै फवी हरियाई ॥६॥
ठौर ठौर धारा मधु स्रवहीं। सौरभ गंध दिसा नभ छवहीं ॥
मत्त मलिंद करैं कलगाना। मतवारे द्विज बोलैं नाना ॥७॥

सीतल मन्द सुगंध समीरा। परसि भरै तन मनमथ पीरा।
भरे सरोवर मनि सोपाना। विकसित पद्म जाति गुन नाना ॥८॥
हंसादिक पच्छी सुख विहरै। जलचर प्रतिध्वान सुनि सिहरैं।
गिरि निर्झर सरि सुभग बहै रन प्रमदा विहरि विभूषै थल लस ॥९॥

उपवन मध्य सरोवर भारी। मनि रचना करि अधिक सवारी॥
निरमल नीर भरयौ ता माहीं। विकसित कंज अनंत सुहाहीं ॥१०॥
चहूँ ओर वन पुष्पित झूमै। जड चेतन व्यवहार विलूमै॥
द्विजगन अलि रवधुनि रमनाई। परम विभूति राजऋतु छाई ॥११॥

तहाँ सरोवर मध्य सुवेदी। रची भूप ऋतु चित्त अखेदी।
विस्तृत विचित्र लसे सोपाना। सची खची सोभित मनि नाना ॥१२॥
तापे कुसुम बिछे सुखकारी। सुखमा पाति युदी अति भारी॥
मध्य सिंघासन सुवन विविध रचि। ऊपर तन्यो वितान पुष्प खचि ॥१३॥

छरी खरी बहु रंग प्रसूनी। जल प्रतिबिंब पाय दूनि दूनी॥
लसै बसन्तो बसन अलो तन। नखसिख भूषन फबे सुवन गन ॥१४॥
छत्र मोर छल चमर आदि जे। सेवा सौंज अनंत कही ते॥
सकल पुष्पमय रची सवारी। सींचि गंध कर गहे अपारी ॥१५॥

प्रगट किये निज तन बहु रूपा। सकल भाँति सुखप्रद ऋतु भूपा॥
दंपति दरसन आरति भारी। उत्कंठा अभिलाष अपारी ॥१६॥
मधुरालाप गीत धुनि छावै। भाव हिये अनुराग बढावै॥
चकित चौंकि चहु ओर निहारै। छिन जुग सत सम बीतत भारै ॥१७॥

जुगल बिहारी जन सुखदाना। भक्त चाह चित सदा बसाना॥
श्रीइच्छा मन ऐसा कीन्हो। दया दिष्टि ऋतुपति तन दीन्ही ॥१८॥
तीजे पहर सोय जब जागे। सीतल भोग निवरि रस पागे॥
मो तन हेरि कही हसि प्यारी। ए ललिते सुनु गिरा हमारी ॥१९॥

सब ऋतुराज अनंत कहावै। जड़ चेतन तन नूतन पावै।
जल बन भूमि अधिक सोभा भर। गुनद विहार विपिन कुसुमाकर ॥२०॥
पीतम सुनि मन मानी बानी। गुन रस खानि बसंत बखानी।
मै दंपति हिय हेतु विचारी। बरनो सुखमा तासु अपारी ॥२१॥

बार बार सिर नै कर जोरी। विनती भाखी विविधि निहोरी॥
महाराज सबके मन ऐसी। श्रीइच्छा सर्वोपरि जैसी ॥२२॥

सीतल मंद सुगंध समीरा। परसि भरै तन मनमथ पीरा॥
भरे सरोवर मनि सोपाना। विकसित पद्म जाति गुन नाना॥८॥
हंसादिक पच्छी सुख विहरैं। जलचर प्रतिध्वान सुनि मिहरैं।
गिरि निर्झर सरि सुभग वहै रन प्रसन्न विहरि विभूषै थल लस॥९॥
उपवन मध्य सरोवर भारी। मनि रचना करि अधिक सवारी॥
निरमल नीर भरयो ता माहीं। विकसित कंज अनंत सुहाहीं॥१०॥
चहूँ ओर वन पुष्पित झूमै। जड चेतन व्यवहार विलूसै॥
द्विजगन अलि रवधुनि रमनाई। परम विभूति राजऋतु छाई॥११॥
तहाँ सरोवर मध्य सुवेदी। रची भूप ऋतु चित्त उमेदी॥
विस्तृत विविध लसै सोपाना। रची खची सोभित मनि नाना॥१२॥
तापै कुसुम बिछे सुखकारी। सुखमा पाति युदी अति भारी॥
मध्य सिंघासन सुवन विविध रचि। ऊपर तन्यो वितान पुष्प खचि॥१३॥
छरी खरी बहु रंग प्रसूनी। जल प्रतिबिंब पाय दूति दूनी॥
लसै बसन्ती वसन अलो तन। नखसिख भूषन फबे सुवन गन॥१४॥
छत्र मोर छल चमर आदि जे। सेवा सौंज अनंत कही ते॥
सकल पुष्पमय रची सवारी। सींचि गंध कर गहे अपारी॥१५॥
प्रगट किये निज तन बहु रूपा। सकल भाँति सुखप्रद ऋतु भूपा॥
दंपति दरसन आरति भारी। उत्कंठा अभिलाष अपारी॥१६॥
मधुरालाप गीत धुनि छावै। भाव हिये अनुराग बढावै॥
चकित चौंकि चहु ओर निहारै। छिन जुग सत सम बीतत भारै॥१७॥
जुगल बिहारी जन सुखदानी। भक्त चाह चित सदा बसानी॥
श्रीइच्छा मन ऐसा कीन्हो। दया दिष्टि ऋतुपति तन दीन्ही॥१८॥
तीजे पहर सोय जब जागे। सीतल भोग निवरि रस पागे॥
मो तन हेरि कही हसि प्यारी। ए ललिते सुनु गिरा हमारी॥१९॥
सब ऋतुराज बसंत कहावै। जड़ चेतन तन नूतन पावै।
जल बन भूमि अधिक सोभा भर। गुनद विहार विपिन कुसुमाकर॥२०॥
पीतम सुनि मन मानी बानी। गुन रस खानि बसंत बखानी।
मै दंपति हिय हेतु विचारी। वरनो सुखमा तासु अपारी॥२१॥
बार बार सिर नै कर जोरी। विनती भाखी विविधि निहारी॥
महाराज सबके मन ऐसी। श्रीइच्छा सर्वोपरि जैसी॥२२॥

सीतल मंद सुगंध समीरा। परसि भरै तन मनमथ पीरा॥
भरे सरोवर मनि सोपाना। विकसित पद्म जाति गुन नाना॥८॥
हंसादिक पच्छी सुख विहरैं। जलचर प्रतिध्वान सुनि निहरैं।
गिरि निर्झर सरि सुभग बहै रस प्रमदा विहरि विभूषै थल लस॥९॥

उपवन मध्य सरोवर भारी। मनि रचना करि अधिक सवारी॥
निरमल नीर भर्यौ ता माहीं। विकसित कंज अनंत सुहाहीं॥१०॥
चहूँ ओर वन पुष्पित झूमै। जड़ चेतन व्यवहार विलूसै॥
द्विजगन अलि रवधुनि रमनाई। परम विभूति राजऋतु छाई॥११॥

तहाँ सरोवर मध्य सुवेदी। रची भूप ऋतु चित्त अरेखी।
विस्तृत विविध लसै सोपाना। रची खची सोभित मनि नाना॥१२॥
तापै कुसुम बिछे सुखकारी। सुखमा पाति युदी अति भारी॥
मध्य सिंघासन सुवन विविध रचि। ऊपर तन्यो वितान पुष्प खचि॥१३॥

छरी खरी बहु रंग प्रसूनी। जल प्रतिबिंब पाय द्युति दूनी॥
लसै बसन्ती वसन अली तन। नखसिख भूषन फवे सुवन गन॥१४॥
छत्र मोर छल चमर आदि जे। सेवा सौंज अनंत कही ते॥
सकल पुष्पमय रची सवारी। सींचि गंध कर गहे अपारी॥१५॥

प्रगट किये निज तन बहु रूपा। सकल भाँति सुखप्रद ऋतु भूपा॥
दंपति दरसन आरति भारी। उत्कंठा अभिलाष अपारी॥१६॥
मधुरालाप गीत धुनि छावै। भाव हिये अनुराग बढावै॥
चकित चौंकि चहु ओर निहारै। छिन जुग सत सम बीतत भारै॥१७॥

जुगल बिहारी जन सुखदानी। भक्त चाह चित सदा बसानी॥
श्रीइच्छा मन ऐसा कीन्हो। दया दिष्टि ऋतुपति तन दीन्ही॥१८॥
तीजे पहर सोय जब जागे। सीतल भोग निवरि रस पागे॥
मो तन हेरि कही हंसि प्यारी। ए ललिते सुनु गिरा हमारी॥१९॥

सब ऋतुराज वसंत कहावै। जड़ चेतन तन नूतन पावै॥
जत बन भूमि अधिक सोभा भर। गुनद विहार विपिन कुसुमाकर॥२०॥
पीतम सुनि मन मानी बानी। गुन रस खानि वसंत बखानी।
मैं दंपति हिय हेतु विचारी। वरनौ सुखमा तासु अपारी॥२१॥

बार बार सिर नै कर जोरी। विनती भाखी विविधि निहोरी॥
महाराज सबके मन ऐसी। श्रीइच्छा सर्वोपरि जैसी॥२२॥

जुगल विहारा जन सुखदाई। बैठे तापै हिय हुलसाई॥
अभिमुख सहचरि मुकुर दिखावै। अग राग चदन तन लावै॥३८॥
कुसुमाभरन विचित्र सजावै। नखसिष भूषि हेरि हिय ल्यावै।
दर्पन देखि जुगल सुख पावैं। तन मन वारि अली बलि जावैं।३९।
धूप दीप आचवन कराई। भोजन समै परम सुखदाई॥
दपति रुचि अनुकूल कराये। वदन हस्त पद कमल धुवाये।४०॥
वसन अगौछि दई मुखवासा। वीरी खात खवावन आसा॥
अतर समोय पुष्प गुच्छा द्वै। जुगल हस्त दीन्हे तन मन ह्वै।४१॥
पुष्प थार आरती सवारी। सुवन अजली दै नैवारी॥
करि परिदच्छिन दडप्रनामा। हरख अपार कहै जुग नामा॥४२॥
गीत नृत्य दरसाय रिझावै। तान मान पूरी गति लावै॥
जुगल विहारी लखि सुख पावै। सहचरि जीवन धननिधि भावै॥४३॥
नृत्य करै ऋतुराज अली सजि। प्रगटावै निजगुन तन मन लजि।
हरख अपार लहै मन माही। वदन विलोकि तृप्ति जिय नाहीं॥४४॥
दपति पूर करै जन कामा। बार बार वदै वर वामा॥
महारास मडल सुधि करहीं। सहचरि जानि मोद मन भरहीं।४५।
ता मडल करि विविधि विहारा। आनद उदधि बहाय अपारा।
उठन हेत इच्छा रुख देखै। विगत निमेष चखन छवि पेखैं॥४६॥
महा विमान सैल हित जोहै। प्रगट भयो दृग गोचर सोहै॥
उठे परस्पर दै गलबाहीं। सहचरि मडल मध्य सुहाहीं॥४७॥
अली चरन रज लै सिर लावैं। परमानद समुद्र समावैं॥
दपति आय सिंघासन राजै। बरखै पुष्प वाद्य वर बाजैं॥४८॥
जय जय धुनि नभ दिसा प्रचारैं। सैल विमान विहार निहारैं॥

सोरठा—यह ऋतुराज विहार, दपति आनद सिंधु को।
लहै अली सुखसार, जुगल नार ते मीन जिमि॥१॥
गोपेश्वर हिय माहि, लव निमेष सुनि गुनि धरै।
भव बधन मिटि जाहि, परि कर मेली होय दृढ॥२॥

❖ चौपाई ❖

परदच्छिन गति आगे चलिकै। मडल जत्र कान मन धरिकै॥
तहा वसै ग्रीषम ऋतु आली। प्रीति जुगल पद अनवधि पाली॥१॥

इरति सुख हित रूप अनन्त [illegible]नि सम कंचन थापना
नाना अंग अनूप रचाय । सकल मनि [illegible] भर छाय ।१॥
अवनि मनै विचारि लहै सुख । अंग अंग विलसे नव दृग सुख
ना विधि रचना करै बनाई । अंग सुना जन मन लहई ॥२॥
कूहन रचे आराम वाटिका । जल भरित मनि स्वेत घटिका ॥
[illegible] रच• वृन्द लगावे आरैं सानन्द चाह रहै नव गेर ॥४॥

तिनके निकट लम तरु छोटे । अपनी जाति सकल गुन मोटे ॥
बेल लता गुल्म बहु नानी । लगे अनूठी रीति सुहाती ।५।
अरागी पुष्प रंग अन गननी । जो जा निकट प्रभा लखि बननी ॥
मरके अंग विविध मनिमै रचि । देखत तहाँ जात मन दृग खचि ॥६॥

सकल विभूति अंग प्रति सरसै । मनो जनक सुखमा स दरसै
ठौर ठौर जल जंत्र अपारा । मनो मेघ बरसे रसधारा ॥७॥
अवर भूमि दिसा लखि भीनी । कूके मोर भौर द्विज रीझी ।
ताके मध्य वेदिका भारी । बना अमल मनि स्वेत सवारी ॥८॥

तापै रची कुंज सुखमा भर । लगी चंद मनि एक विमदतर ॥
जाल झरोखा काम अपारो । जिन मग आवत त्रिविध बयारी ॥९॥
सब अमीकन आकि समाधी । मनि स्वभाव ग्रीषम तन साधी ॥
पुष्प वितान चहूँ दिस ताने । झालरि गुच्छ प्रसून झुमाने ।।१०॥

छरी सुवन रंग भरी खरी है । चलि समीर हलि पुष्प लरी है ॥
दर दर जाल सुवन गसि नाना । परदा चित्र प्रसून अमाना ॥११॥
अष्ट गंध वर कलल बनाई । सकल ठौर करि कर्दम ताई ॥
किये घ्राण सीतल तन होवै । चहूँ ओर सो अतर समोवै ॥१२।

कुंज समस्त अमीकन झरहीं । पाय समीर अनत उडि परहीं ।
भीतर सेज बिछी सुख रासी । मनौ कला ससि कोटि प्रकासी ॥१३॥
कोमल अवधि सीत सुख परसें । दंपति लहैं मोद जिमि दरसें ।
रचना पुष्प रची अति भारी । भूमि पलंग चहुँ ओर सुधारी ।।१४॥

स्वेत वसन तन धरे सहेली । पुष्पाभरन सकल अंग मेली ।
सीतल जुक्ति रचाय अपारी । सेवा अमित सौंज कर धारी ।।१५॥
बार बार ग्रीषम सब ठौरी । देखत फिरैं हुलसि हसि दौरी ।
जुगल विहार हेत रचि कुंजा । सेज निहारि भरै सुख पुंजा ।।१६॥

जुगल विहारी जन सुखदाई। बेठे तापै हिय हुलसाई॥
अभिमुख सहचरि मुकुर दिखावै। अग राग चदन तन लावे॥३८॥
कुसुमाभरन विचित्र सजावै। नखसिष भूषि हेरि हिय ल्याव।
दर्पन देखि जुगल सुख पावें। तन मन वारि अली बलि जावें।३९॥
धूप दीप आचवन कराई। भोजन समै परम सुखदाई॥
दपति रुचि अनुकूल कराये। वदन हस्त पद कमल धुवाये॥४०॥
वसन अगौछि दई मुखवासा। वीरी खात खवावन आसा॥
अतर समोय पुष्प गुच्छा द्वै। जुगल हस्त दीन्हे तन मन ह्वै।४१॥
पुष्प थार आरती सवारी। सुवन अजली दै नैवारी॥
करि परिदछिन दडप्रनामा। हरख अपार कहै जुग नामा॥४२॥
गीत नृत्य दरसाय रिझावै। तान मान पूरी गति लावै॥
जुगल विहारी लखि सुख पावै। सहचरि जीवन धननिधि भावै॥४३॥
नृत्य करै ऋतुराज अली सजि। प्रगटावै निजगुन तन मन लजि।
हरख अपार लहै मन माही। वदन विलोकि तृप्ति जिय नाहीं॥४४॥
दपति पूर करै जन कामा। बार बार वदै वर वामा॥
महारास मडल सुधि करहीं। सहचरि जानि मोद मन भरहीं।४५।
ता मडल करि विविधि विहारा। आनद उदधि बहाय अपारा।
उठन हेत इच्छा रुख देखै। विगत निमेष चखन छवि पेखें॥४६॥
महा विमान सैल हित जोहै। प्रगट भयो दृग गोचर सोहै॥
उठे परस्पर दै गलबाहीं। सहचरि मडल मध्य सुहाहीं॥४७॥
अली चरन रज लै सिर लावें। परमानद समुद्र समावें॥
दपति आय सिंघासन राजैं। वरखै पुष्प वाद्य वर बाजैं॥४८॥
जय जय धुनि नभ दिसा प्रचारैं। सैल विमान विहार निहारैं॥

सोरठा—यह ऋतुराज विहार, दपति आनद सिंधु को।
लहै अली सुखसार, जुगल नीर ते मीन जिमि॥१॥
गोपेश्वर हिय माहि, लव निमेष सुनि गुनि धरै।
भव बधन मिटि जाहि, परि कर मेली होय दृढ॥२॥

* चौपाई *

परदछिन गति आगे चलिकै। मडल जत्र कान मन धरिकै॥
तहा वसै ग्रीषम ऋतु आली। प्रीति जुगल पद अनवधि पाली॥१॥

रति मुख हित रूप अपना। जानि सम रुचि तथा थापनो।
नाना अंग अनूप रचावैं। सकल भांति सोभा भर छावैं ॥२॥
अवनि मनि बिचि रहे सुख। अंग अंग विकसे नन दृग मुख।
विधि रचना करे बनाइ। अंग सुनो सब मो मन लाइ ॥३॥
बृहत रचे आराम वाटिका। चलै सरित मनि स्वेत घाटिका ॥
वृक्ष लगवे आरें सीतल छांह रहै सब गैरै ॥४॥

तिनके निकट लस तरु छोटे। अपनी जाति सकल गुन मोटे ॥
वेलि लता गुल्म बहु जाती। लगे अनूठी रीति सुहाती ॥५॥
क्यारी पुष्प रंग अन गनती जो जा निकट प्रभा लखि बनती ॥
सबके अंग विविध मनिमै रचि। देखत तहाँ जात मन दृग खचि ॥६॥

सकल विभूति अंग प्रति सरसै। मनो जनक सुखमा से दरसै।
ठौर ठौर जल जंत्र अपारा। मनौ मेघ बरसै रसधारा ॥७॥
अंबर भूमि दिसा लगि भीजी। कूकै मोर भौंर द्विज रीझी ॥
ताके मध्य वेदिका भारी। बनी अमल मनि स्वेत सवारी ॥८॥

तापै रची कुंज सुखमा भर। लगी चंद मनि एक विमदतर ॥
जाल झरोखा काम अपारी। जिन मग आवत त्रिविध बयारी ॥९॥
सबै अमाकन आक समादी। मनि स्वभाव ग्रीषम तन साधी ॥
पुष्प वितान चहूँ दिस ताने। झालरि गुच्छ प्रसून झुमाने ॥१०॥

छरी सुवन रंग भरी खरी है। चलि समीर हलि पुष्प लरी है ॥
दर दर जाल सुवन गसि नाना। परदा चित्र प्रसून अमाना ॥११॥
अष्ट गंध वर कलल बनाई। सकल ठौर करि कर्दम ताई ॥
किये प्राण सीतल तन होवै। चहूँ ओर सो अतर समोवै ॥१२॥

कुंज समस्त अमीकन झरहीं। पाय समीर अनत उडि परहीं।
भीतर सेज बिछा सुख रासी। मनौ कला ससि कोटि प्रकासी ॥१३॥
कोमल अवधि सीत सुख परसे। दंपति लहैं मोद जिमि दरसे।
रचना पुष्प रची अति भारी। भूमि पलंग चहुँ ओर सुधारी ॥१४॥

स्वेत वसन तन धरे सहेली। पुष्पाभरन सकल अंग मेली।
सीतल जुक्ति रचाय अपारी। सेवा अमित सौंज कर धारी ॥१५॥
बार बार ग्रीषम सब ठौरी। देखत फिरै हुलसि हसि दौरी।
जुगल विहार हेत रचि कुंजा। सेज निहारि भरै सुख पुंजा ॥१६॥

अति अभिलाष हियें उमगानी। विलसै दंपति इत छिन आनी॥
धार टारि तन मन अकुलाई। सुरति जुगल पन छटा समाई॥१७॥
नित्य विहारी जुगल पियारे। सखायन के जीवन दृग तारे॥
राज भाग भोजन करि राजे। सहचरि मंडल किये समाजै॥१८॥
ग्रीषम आय मिली तिन माहीं। दंपति जिहि उपाय तित नाहीं॥
सारंग राग अलापि सुनावै। उष्ण भाव ता माहि जनावै॥१९॥
पिय प्यारी सुनि लखि मुसुकाने। सहचरि सकल हेतु हिय जाने।
ग्रीषम निज तन साजि विमाना। कुंज प्रथम कहि तासु समाना॥२०॥
मना हिमाचल गुफा सुहाई। रचना पुष्प अनूप रचाई।
लखै विमान होहि दृग न्यारे। आय लग्यो सो ता थल नीरे॥२१॥
जान देखि सब ही ललचानी। हस्त जोरि नै विनय बखानी॥
महाराज आली मन धारें। नेक आय दृग जान निहारें॥२२॥
दंपति जन मन के सुखदाता। सुनि बानी उमगे श्रीगाता।
चले सहचरी मंडल गसि के। विमल पावडे लटकत लसिकै॥२३॥
निरखि विमान वनिक मन आई। श्रीनैनन शीतलता छाई॥
बैठे सुभग सिंघासन प्यारे। अली सुवन बरषै सुख भारे॥२४॥
रचना पुष्प विमान अपारी। हिमिगिरि के जनु कंदर भारी।
भीतर बैठ लह्यो मुद खानी। बाहिर की गति जात न जानी॥२५॥
सहचरि दंपति अंग सिंगारें। हरि चंदन रंग वसन सुधारें॥
चंदन भांति अनेक रचावें। पुष्पाभरन अमित तन लावें॥२६॥
बीरी रूप नेह प्रगटावे। दंपति सो लहि मोद बढावै॥
सुवन गुच्छ भरि अतर बनाये। जुगल हस्त दै अति सुख पाये॥२७॥
तथा सिंगार अली सब सोहैं। अंग अंगजा उभै विमोहैं॥
गीत नृत्य छायो सुख भारी। मंद मंद गति जान प्रचारी॥२८॥
शीतल कुंज निकट चलि आयो। श्रीइच्छा लखि उतरि सुहायो॥
सहचरि जूथ मध्य दोउ प्यारे। विहसि उतरि भीतर पग धारे॥२९॥
सोभा निरखि हरखि सुख पावै। जो देखै दृग अरझि न आवैं॥
लखत लखावत सहचरि वृन्दा। अरस परस दंपति सुख कंदा॥३०॥
घूमत आये सैन कुंज जित। ग्रीषम अली रचो दंपति हित॥
ताहि निहारि सभारि बुद्धि मन। लोचन हियो सिरात परम तन॥३१॥

चहुँ ओर फिरि करि सैनें छवि । अधिक एक ते एक रह फबि
मनहर सेन [illegible] नई । पिय जुगल दृग मन ललचाई ॥३२॥
कहा [illegible] रमनई । दंपति हू जहाँ रह लुनाई ।
ताप [illegible] बड़ाय विराजे । तकिया मृदुल अला बहु लागे ॥३३॥
[illegible] विन [illegible] नृत्य [illegible] बाते । इन परम कौतूहल [illegible] ॥
अमित [illegible] ते आनि पेय रस । सुगम बनाई [illegible] भाव नस ॥३४॥
[illegible] ते पान कराय । वारी अतर सुवारि [illegible] ।
[illegible] सुगंधी [illegible] दृग आई । छवि [illegible] निरखि हिय महराई ॥३५॥
[illegible] भूषन [illegible] । [illegible] छूटन [illegible] ।
बहुबार [illegible] सेन कराइ । जुगल अंग सवन सुख पई ॥३६॥
[illegible] निद्रा अधिक निहारा [illegible] निरखै छवि भारा ॥
[illegible] पलग [illegible] जेती । धरी सुधारि निहारि सुनेता ॥३७॥
[illegible] अंग सिकुरन सीत सरस ते । जानि अधिक सुख वसन परस ते ॥
पट अनुकूल उढायो हँसि कै । वदे चरण सवन सिर खसिके ॥३८॥
[illegible] पगन चले अंग नैनै । जुगल छटा अभि अन्तर लै लै ॥
बाहिर निकसि भई सब ठाढ़ी । मिली परस्पर अति रुचि गाढ़ी ॥३९॥
ग्रीषम मुख्य अली बहु तिनके । प्रीति जुगल पद अतिसै जिनके ।
तिनकी मानि सुदृढ विश्वासा । उनहू के जिय अनवधि आसा ॥४०॥
सत पलग चोकी ते राखा । सवा समै नीति सब भाखी ॥
जौ लौं हम इत आवै नाही । तौ लौं तहाँ न कोऊ जाही ॥४१॥
मौन गहैं बैठी दृग हेरौ । शब्द स्वल्प करि जतन निवेरो ॥
हमहू सब अबहीं आवत हैं । श्रीजू निद्रा सुख पावत हैं ॥४२॥
अस कहि चली सकल हम आदी । निरखि नम्र ह्वै मुख अभिवादी ॥
ताहा मडल बसि कछु बारा । सिद्ध कियो सब तन व्यवहारा ॥४३॥
श्री उठिवे का समय विचारा । निज तन सखियन सजे सवारी ॥
जिमि दंपति लखि दृग सुख पावै । तैसी भाति अली अंग भावै ॥४४॥
[illegible] सैन अली जिन ग्रीषम । अमित जूथ लै आई तित हम ।
समाचार तिनते सब सुनि कै । हरै हरै धारै पग गुनिकै ॥४५॥
कुंज लगी विधि सेति ठाढी । दंपति वदन सुधा तिस बाढी ॥
भीतर आहट दिसि श्रुति लाए । मंगल रव श्रवनन पथ पाये ॥४६॥

भीतर गई नेरिज सुख लूटे। आलस अग बाल छबि छूटे ॥
अग सेय दोऊ बैठारे। तकिया साजि मुकुर कर धारे ४७।
श्रीपद कर मुख नीर धुवाये। वसन अगौछि तिलक रचि लाए ॥
मीतल सकल पदारथ सुखप्रद। नाना रस गुनखानि स्वाद हद ॥४८॥

भोजन किये पेय सुख पाये। श्रीअग जलज धोय अगुछाए ।।
मृदुमुख वास मजु वीरी मुख। खाय खवाय समाय सिधु सुख ॥४९॥
नखसिख सुवन अभूषन धारे। श्रीकर गुच्छ प्रसून प्रचारे ॥
दर्पन अभिमुख जुगल निहारैं। उमगि हिये छबि लखि बलिहारैं ॥५०॥

सुवन अजली अष्ट प्रचारी। पुष्प थार नीराजन वारी ॥
दण्डप्रनाम करे पद परस। जय धुनि नाम कहैं सुख सरसै ॥५१॥
तब दपति जिय ऐसी आई। करै अबै जल केलि सुहाई ॥
कुज निकट औदुञ्चन भारी। पूरन शीतल नीर सुधारा ॥५२॥

केशरि आदि सुगन्ध अनेका। डारी तामै सहित विवेका ॥
विकसित नीरज बहुविधि फूला। सवन रची सोपान सकूला ॥५३॥
पुष्पित गुल्म लसैं चहुँ ओरी। भूमि प्रदेश पुष्प मय सारी ॥
मत्त मलिंद पतत्री विहरैं। त्रिधा समीर नीर लै लहरैं ॥५४॥

तैसी लसै चहूँ दिसि बागा। रचना कुज अनूप विभागा ॥
दपति उठै सहचरि सगा। सो थल पेखि मुदित मन अगा ॥५५॥
विहरत बाग लखत रमनाई। मन प्रसन्नता सब विधि पाई ॥
ता हृद पैठि करी जल केली। निरखि छकी सब सग सहेली ॥५६॥
निकसि वसन हरि चदन रगा। सजे अली दपति श्री अगा ।
ताके तीर सिघासन धारयौ। सकल भाँति रचि पुष्प सवारयौ ॥५७।
दपति आय तहाँ बैठे हित। सखी सीगारैं मन रुचि लखि तित ।
अगराग रचना तन करहीं। सुवनाभरन अग अग धरहीं ॥५८॥

नखसिख भूषि निहारै चित दै। अभिमुख मुकुर दिखावैं कर लै ॥
लखि प्रसन्नता तन मन वारै। दपति रूप छटा उर धारैं ॥५९॥
श्रीपद हस्त वदन जल धोवै। वसन पोछि मुखवास समोवैं ॥
पेय पदारथ अति सुखदाई। स्वाद जथारुचि सुरस पियाई ॥६०॥
श्रीअग धोय अगौछे पट लै। पुनि सुगध मुखवास चित्र दै ॥
भीजि हिये वीरी कर देवै। खात परस्पर लखि सुख लेवै ॥६१॥

अतर सुगंध पुष्प गुच्छ वर ले बलिहारि किये दंपति कर ॥
अष्ट अनन्त सुवन मरताई । पुष्प थार आरत दिखाई ॥६२॥
जय जय धुनि कहि सुवन करावैं । करे प्रनाम नाम गुन गावैं ॥
गावत नृत्य करैं मन लाई । दंपति रीझि पेखि सुखदाई ॥६३॥
जुगल भरे अनुराग निहारें । सहचरि श्रीपद मस्तक धारें ॥
दंपति मन की वृत्ति बढ़ाई । महाविलास मंडल सुधि आई ॥६४॥
प्रापम की सेवा मन धारी । तिहि सनमानि लियो सुख भारी ॥
अली अगाज मन गति जानी । महाविमान छटा दरसानी ॥६५॥
उतरि लख्यो सो अति सुखदाई । दंपति उठ प्रमोद बढ़ाई ।
चित्र पाँवड़े श्रीपग धारे । अली चहूँ दिसि मंडल भारे ॥६६॥
तहाँ सिंहासन चारु विराजे । जय धुनि पूरि बजे बहु बाजे ॥
नृत्य गान आलिन के दरसे । मंगल पुष्प चहूँ दिसि बरसे ॥६७॥
ठौर ठौर सब खरी निहारें । दंपति सैल करै सुख भारे ॥

दोहा—प्रापम अली प्रवीन निति, सेवत रुचि अनुकूल ।
जुगल तोष पावैं जथा जतन करै समतूल ॥१॥
गोपेश्वर मन दीजिये, सुनि हठि इन गुन मध्य ।
कृपा पात्र श्रीचरन रस, होय सुदृढ़ सो सद्य ॥२॥

❖ चौपाई ❖

आगे परम्छिन गति चलिये । मंडल कोन जत्र चख रलिये ॥
तहाँ बसै आली ऋतु पावस । दंपति सेवा मैं जिन थ्यावस ॥१॥
सेवा समै विचारि करै नित । सदा जुगल रुचि नेम गहै चित ॥
समाचार पावै आवन को । निज तन प्रगट करै सावन को ॥२॥
मंडल भूमि हरी लहरावै । इन्द्र वधूजुत सोभा पावै ॥
अमित जाति वन सकल विभूती । प्रगट भई पावस करतूती ॥३॥
घटा घूमि नभ मंडल छाई । दामिनि मध्य छटा चमकाई ॥
गरजै मेघ मंद धुनि प्यारी । बक चातक मयूर छवि भारी ॥४॥
दिन आछन्न लागत अंधियारी । झीनी बूंद परैं हितकारी ॥
गिरि निर्झर सरि पूर तडागा । बहै नीर तजि मान विभागा ॥५॥
सघन विपिन सब ठौर पूर जल । मध्य हरित मनि शुभ चित्राचल॥
अपर जाति मनि सब रंग लागी । भिन्न भिन्न शोभा भर जागी ॥६॥

लता गुल्म वेली द्रुम औषधि । मनिमय अंग परम सुखमावधि ॥
रंग रंग तृन संकुल छाए । वीर वधू द्विज भौर सुहाए ॥७॥
आयत विपुल उचाइ अल्पा । उपर धरा समान सुकल्पा ॥
तहाँ सरोवर अद्भुत भारी । मनि सोपान स्वच्छ छवि कारी ॥८॥
निरमल नीर पूर कमलाकरि । जाति अनंत सुवन विकसित भरि ॥
अलि द्विज भीर करै कौतूहल । दानी द्वार जथा जाचक दल ॥९॥
ताके मध्य बृहत वेदी वर । मनि रचना सुखमा अनवधि वर ॥
घाट अमित सोपान लसै लघु । सोभित ज्यो शृंगार सदन मघु ॥१०॥
रचना पुष्प विचित्र धरा पर । वेदी मध्य अपर वेदी वर ॥
विसित हस्त लसै चौकोरी । स्वल्प सप्त सोपान लखोरी ॥११॥
पावस तहाँ हिंडोर रचावे । मन प्रवस ज्यौं त्यौं कछु पावे ॥
डाँडा खंभ सिंहासन बानिक । देखत बनै न कहै प्रमानिक ॥१२॥
रचना कुसुम रची अतिभारी । नग निर्मित अलि द्विज दुतिकारी ॥
पुष्प रचित पत्ता षटपद जे । सुखमा हेत हिंडोर फबे ते ॥१३॥
ऊपर तन्यौ वितान सुवन मय । छरी प्रसून भरो सोभा चय ॥
झालरि फूल झूमका झूमै । मत्त मलिंद बैठि उडि घूमै ॥१४
सीतल मंद सुगंध बयारी । परसत हिये धीर घन टारी ॥
अरुन वसन सहचरि तन राजैं । नखसिख सुवन अभूषन छाजै ॥१५॥
छत्र मोर छल चामर आदी । सेवा सौंज अमित प्रतिपादी ॥
सकल पुष्प मय रचे सवारी । जा विधि होहि जुगल रुचिकारी ॥१६॥
हस्त गहैं सोहैं सब आली । दंपति आवनि दिसि चख घाली ॥
लव निमेष बीतन सम कल्पा । जुगल माधुरी जोव अनल्पा ॥१७॥
भोजन करि निद्रा सुख पागे । शेष दिवस दंपति हित जागे ॥
आहट पाय अली ढिंग आई । सेवा सकल समै रुचि भाई ॥१८॥
परमानंद भरे दोउ प्यारे । लसै सखी चहु दिसि परिवारे ॥
पावस अली गई ता ठाईं । बाहिर कुंज खरी तरकाही ॥१९॥
कौन उपाय रचौं सुखपूरी । दंपति चलव होय हित भूरी ॥
अस विचारि वीना कर लीन्ह्यौ । मेघ मलार अलापित कीन्ह्यौ ॥२०॥
सो धुनि प्यारी श्रवनन आई । पावस की मूरति उर छाई ॥
पीतम हिय आनंद लह्यो अति । पावस गुन बखान कीन्हें कति ॥२१॥

हेमन्त ता ऋतु के जस भ र । सो म नि बनाय उचारे ॥
स्याम स्या नभ नसमन हुल न नव विनद र ना ।२
न र ब हारे । न न्ये अमित न भार ।
न न सुरतिवन विमान नुर निकट सो अ र न न ॥४
र प्यारी लखि हेतु नवल । हर ि विहसि मन किय न न
उठ र र ई गलबहि चल अल मडल चहु घहीं ।२४
वि ड अ र र बाहिर आय विमल निहारै ॥
न न लगा मन म अ र रो । पावस अ त ह र बिहारा ।२५।
स्याम न ठ सिघासन नाहीं । र पा बर पूर हग जाई
र नृप ता समे सुहाए र न विनोद चले तह अ ये ॥२६॥
न भ न न र्गन सुख पा । पावस र र न निर नाना ॥
इन न र मखी लै संगा । बन विहार सुख लहै अभगा ॥२७॥
गिरि बन विहरि निकट सर आये । निरखि नेन कौतुक मन छाये ॥
ता सर पैठि करी जल क्रीडा । सहचरि संग तथा तजि व्रीडा ॥२८।
भूमि रहे बादर अंधियारी । मध्य मध्य चपला उजियारी ॥
बहै समीर नीर कन बरषै । जलविहार अनवधि सुख सरसै॥२९।
वेद ता सर मध्य कहा जो । रचना जहा हिंडोर लहा सो ।
दंपति निकसि खरे ता आरी । अग अगाछे अली निहारी ॥३०॥
अरुन बसन श्रीअंग सजाए । तथा समान सखी तन लाए ॥
मडल मध्य फिर चहुँ फेरे । सर गिरि बन छवि हुलसित हेरै ।३१॥
देखि हिंडोर जुगल ललचाने । श्रीअबुज हग अधिक जुडाने ॥
भरे मनोरथ दोऊ प्यारे सिघासन बैठे सुख भारे ।३२।
वृंद जूथ सहचरि सब सोहै । सौंज सिंगार लिये कर जोहैं ॥
श्रीइच्छा मन हग रुख पाया । अगराग श्रीअंग रचाया ।३३॥
नाना बन तिलक तन रचिकै । नखसिख सुवन अभूषन सचि कै ।
लोचन बसन पर जो विधि फबहीं । तैसी भाँति अली मन लभहीं ।३४।
मुकुट चद्रिका पुहप रचाई । जुगल सीस लगि धन्य कहाई ।
र अग भरन निहारि सवारै । अभिमुख दर्पन जुग लै धारै ।३५॥
दंपति पेखि लहैं मुद भारी । सहचरि बिसलि जात बलिहारी ॥
श्रीनासा भूषन उतराए । अमिय सुरस रस पान कराये ।३६॥

जल अचवाय अगौछे पटलै । सुभ सुगध मुखवास विहसि दै ॥
वीरी परम मनोहर हितमय । दई जुगल श्रीहस्त सकुचि नय ॥३७।
दपति खात खवावत सुखनिधि । अली मोद पावत जिय बहु विधि॥
पट भूषन लखि शुभ गति कीन्हे । अतर सुवन गुच्छा कर दीन्हे ॥३८।
मुकुर दिखाय अष्ट पुष्पाजलि । चहु दिसि ते वरखै हरखै अलि ॥
पुष्प थार अति चित्र बनाई । करत आरता पद सिर नाई ॥३९।
जय जय धुनि मृदु गिरा उचारै । सुवन वृष्टि करि रूप निहारैं ॥
परदच्छिन दै करैं प्रनामा । गावत छवि दृग सुमिरत नामा ॥४०॥
निकट आय पद रज सिर धारै । तन मन प्रान बुद्धि बलि वारै ॥
पावस झूमि रही सब अगा । प्रीति जुगल पद अमित अभगा॥४१॥
समै देखि रुचि जानि विचारा । नृत्य गान विधि अतुल प्रचारो ॥
ग्राम मूर्छना तान तान सुर । मेघ मलार भार छायो धुर ॥४२॥
हरखि अली हिंडोर झुलावै । त्रिवि सुखसिधु लहरि प्रगटावैं ॥
कहा कहौ सोभा ता छिन की । जे देखै जानै ते तिनकी ॥४३।
वरखा सफल भई तन धारो । दपति सहित प्रमोद निहारो ॥
पीतम रसिक राय चूडामनि । मोद उदधि सब धसैं हिये गनि ॥४४॥
उतरि आय सनमुख भे ठाढे । आनद सिंधु चहू दिसि बाढे ॥
नभ थल दिसा प्रभा झुकि झूमी । सुखमा भार विवस नय दूमी ॥४५॥
पिय पग पटकि लटकि झटकत कर । मद विहसि गति भरो अगमतर ॥
निरखि प्रिया छवि नैन ढुरावै । अहा भाखि बलि हस्त घुमावे ॥४६॥
कबहुँ डोरि गहि मद झुलावे । मुकुट झुकाय नई गति भाव ॥
अरस परस हेरनि दृग फेरनि । सर कटाच्छ थिर ह्वै कसि गेरनि ॥४७॥
कसकनि चोट शब्द मुख जानै । वहि विथा सेंके सुख माने ॥
कही टेरि धुनि मुख श्रीनामा । राधे राधे मम विश्रामा ॥४८॥
सिथल अग जाने जब आली । लाल गहै चहुँ दिसि सुखशाली ॥
लै हिंडोर बैठावैं हँसि हँसि । श्रीजू कर परसत हित लसि लसि ॥४९॥
मिले दोऊ श्रीअग अग लगि । निरखि अली सुख रली नेह पगि ॥
अतुलित हरष उदधि उमगाने । झूलि झुलाय मोद सरसाने ॥५०।
अपरपार भार सुख सागर । कर गहि मान कहै नहि नागर ॥
सहचरि जुगलानद समानी । थाह अथाह न सुरति लहानी ॥५१॥

पावन अली रिझावत नीके । पुलकित भव मकल निज नीके ॥
हरषान निज जन मान बढ़ावे । प्रेम मगन अति नव नव गावे ॥५२॥
सरक हरि सनाप सकल बिधि । सहचरि मगन भई आनन्द निधि ॥
अन्तर निरख वेल पहिचान । महारास हित सुधि उपजान ॥५३॥
तुरत विमान सेज हित जाई । प्रगट्यो आय तहाँ तब सोई ॥
निरखिं विमान भयो मन हरषा । हरषि उठे परी पग बरषा ॥५४॥
सहचरि मंडल मध्य पधारे । मंजु पावड़े आपुन धारे ॥
जाय सिंहासन बैठे आई । जय जय मंगल धुनि दिसि छाई ॥५५॥
नृत्य गान बाजैं बहु जन्त्रा । सेवा साज गहे अलि तन्त्रा ॥
फिरत विमान यथारुचि पाये । जन अति मोद लहत दृग आये ॥५६॥

दोहा—सेवा पंचम की हियै जो सुमिरै छिन एक ।
अधिकारी ता लोक निमि, होय सु लहै विवेक ॥ १ ॥
गोपेश्वर तन दृढ़ सुफल, तिन्हहीं कीन्ह्यौ तात ।
नित्यविहारी जुगल पद, मन दीन्ह्यो लहि गात ॥ २ ॥

◆ चौपाई ◆

आगे चलिये परदच्छिन गति । जत्र कोन मंडल सोभित अति ॥
सहचरि शरद बसै ता माहीं दंपति सेवा नित चित चाहीं ॥१॥
पिय प्यारी जा विधि सुख पावैं । अनुपम नई जतन मन भावै ॥
आवन की धुनि सुनि हरखानी । विकसे अंग अधिक बिमलानी ॥२॥
निज तन संपति लखि सफलाई । सकल मनोरथ पूरनताई ॥
परम रम्य निर्मल मनि स्वेती । सौज अमित प्रगटित करि तेती ॥३॥
रचना जथा रची मनलाई । कहत जीह मन बुद्धि लजाई ॥
पंचम मध्य अहै जो मंडल । सभा कुंज ता बीच अखंडल ॥४॥
खंड कहै नव तासु उचाई । ऊपर गच विस्तृत अधिकाई ॥
सो केवल रचि हीरक मनि की । एक शीला सी लागत बनि की ॥५॥
स्वच्छ मृदुल सम भूमि सुहाई । जुगल रास हित सरद बनाई ॥
मध्य सरोवर ताके जानौ । स्वल्प गभीर बृहत अति मानौ ॥६॥
निर्मल नीर भरयौ ता माहीं । कोर ओर लौं पूर सुहाहीं ॥
हीरक मनि निर्मित जलजाता । विकसित पुष्प तथा सघाता ॥७॥
वेली गुल्म औषधी तीरा । सोभित हीरक मनिमय भीरा ॥
हंसादिक द्विज अलि समुदाई । लस स्वेत मनि सुखमा छाई ॥८॥

ता सर मध्य वेदिका सोहै । प्रभा विलोकि न मोह सुकोहै ॥
अमल स्वेत मनि दीरघ चारी । जल ते प्रगट स्वरूप चहुँ आरी ॥९॥
अतिशय शुभ्र पुष्प ता ऊपर । रचे बिछाय परम सुखमा भर ॥
मध्य सिंघासन विमल स्वेत मनि । जस बैठ्या नानो सो तन बनि ॥१०।
शुभ्र मंजु विष्टर वर रचना । तथा गेंडुवा लखि चय ललना ।
नभ दिसि उज्जल पुष्प विताना । बीच बीच मनि स्वेत अमाना ।११॥
हीरक मुक्ता सुवन गथानी । झालरि झूमन झूम लगान ।
छरा अष्ट मनि स्वेत सुहावैं । शुभ्र सुमन मन चख ललचावैं ।१२।
सहचरि अमित लसैं शृंगारी । मनौ स्वेतिमा बहु तनुधारी ॥
सेवा सौंज सकल कर लीन्हे । सरद विभूति प्रगट सब कीन्हे ॥१३।
ससि मंडल पूरन इंदुलेखा । सरद सहाय विचारि विशेषा ॥
प्रियाचरन नख समिरि विकासी । अमल चाँदनी अधिक प्रकासी ॥१४।
स्रवै अमीकन बहै समीरा । त्रिविधि भाँति गति भाव गभीरा ॥
सोभा सरद लई अति भारी । पाय सहाय चंद परिचारी ।।१५।
सरदादिक सहचरि तहं ठाढी । अनवधि जिय अभिलाषा बाढी ।
नभ दिसि हेरि हेरि सो ठामा । तन मन दृग चंचल चित वामा ॥१६॥
जपै जुगल आनंद निधि नामा । दंपति पद पावै विश्रामा ॥
छिन छिन देह प्रीतिमा छाई । लव निमेष जुग सत सम जाई ॥१७॥
आवन आस पियास अपरिमित । खोजि न लहै गयो धीरज चित ॥
महारास मंडल सुख ठाहीं । नित्यविहारी जुगल सुहाहीं ॥१८॥
बैठे तहा दोउ मुद भारे । हर्ष पूर सहचरी निहारे ॥
सकल भाँति आनंद भर छायो । रास विलास कियो मन भायो ॥१९॥
दंपति हेरि चंद की ओरी । देखि रहे छिन डीठिन मोरी ।
अरस परस छवि रस मन भीने । बोलत वचन नोइ सुख लीन्हे ॥२०॥
आजु अलौकिक चंद उज्यारी । पीतम कहै प्रिये अति प्यारी ।
स्वेत पदारथ याके माहीं । सुखप्रद सुखमा अधिक लहाहीं ॥२१॥
पाय प्रसंग अली गुन वारी । लखि रुख नोइ बखान्यो भारी ॥
सुनि स्यामा मृदु वचन उचारयौ । समे सुहावत वस्तु निरधारयौ । २२।
सरद निसा राका अमरीती । पेखि श्वेत गुन उपजत प्रीती ॥
पिय रुख पाय निहारैं अलिगन । सब तन हेरि प्रिया कीन्हो मन ॥२३॥

करति नित नित नव सुख चाहैं। तेई नाम परम पद लाहैं ॥
इत न दूर शरद अति पाई। यं सुख सेवा उत्तम गाई ॥५४॥
नित नित करि अभिलाषा पूरी। जुगल रिझाय लहैं सुख भूरी।
जुगल बिहारी नित आनन्दा। सेवा नव नौ करि अभिनन्दा ॥५५॥
स थल पंन्ति बिन श्रम पाई। घूमि घूमि देखें मन लाई ॥
चले सहचरी मंडल माहीं। सभा निरखि नैन ललचाहीं ॥५६॥
ठाम ठाम ठाढ़े ह्व हेरें। वचन विलास मोहनी गेरैं ॥
देखा परसपर बिपिन बिहारा। सुखमा शरद फबी अनपार ॥५७॥
प्यारी प्रीतम सहचरि संगा। करत विहार नेह नव अंगा ॥
उमगे सिंधु परम सुख भारी। लीला बिपिन अनूप निहारी ॥५८॥
मध्य भाग ससि आया देखी। निसा गई जुग नाम विसेषा ॥
शरद रूप लखि सेन बिनारी। किरन बिनोद करत पिय प्यारी ॥५९॥
पयसर तीर लता ढिग ठाढे। तोरन पुष्प नेह रस बाढे ॥
टूटत नाहि गिरत जे हे कर। सिथल अंग श्रीदृग आलस भर ॥६०॥
दंपति श्रीनैनन छबि भारी। लेस जनावत नींद खुमारी ॥
परम निकुंज सैन सुखधामा। करी बिनै हम हित विश्रामा ॥६१॥
शरद विमान आय ढिग लाग्यो। दंपति चढ़े भाग्य अलि जाग्यो ॥
सिंघासन बैठे पिय प्यारी। सखी प्रमोद लहै लखि भारी ॥६२॥
हरखत बरखत पुष्प प्रगावत। जय धुनि करत नृत्य मुद छावत।
परम निकुंज सैन थल आवत। मग जन जान पेखि सुख पावत ॥६३॥
निति नूतन विधि सरद सुसेवै। दंपति कृपा परम सुख लेवै ॥
धन्य धन्य ते धन्य कहावैं। जे या विधि सेवा मन लावैं ॥६४॥

दोहा—गोपेश्वर सुखसार गुनि, जे सेवा मन देहिं।
नित्यविहारी जुगल प्रभु, ते निज बस करि लेहिं ॥१॥
नातो आदि अनादि को, स्वामी सेवक दोय।
प्रभु सेवा सर्वस्व जेहि, दास नाम सुभ सोय ॥२॥

◆ चौपाई ◆

आगे चलि परिदछिन कीन्हें। कोन जत्र मंडल मन दीन्हें ॥
यह पंचम जो मंडल गावैं। हिमऋतु सहचरि वास बतावैं ॥१॥

जुगल हस्त दै सीस नवायो। अहो भाग्य लखि सखिन मनायो॥
चौकी स्वेत प्रसून रचाई। तापै हीरक थार धराई॥३९॥
रचना पुष्प करी ता माहीं। जाहि विलोकत नैन सिराहीं॥
पुष्पान्जली अष्ट नै सारी। सो लै थार आरती बारी॥४०॥
जय जय धुनि बोलै सखि हरषै। चहूँ ओर कुसुमावलि बरषै।
जुगल नाम आनद कदंबा। रटैं जीह हिय सो अवलंबा॥४१॥
परिदच्छिन करि दंडप्रनामा। श्रीपद परसै मस्तक वामा॥
पिय प्यारी अतुलित छवि भारी। नखसिख नैन निहारि सुखारी॥४२॥
परमानद उदधि हिय धारै। बार बार तन बलि बलिहारै॥
शरद अली निज भाग्य मनावै। फूली अंगन अंग समावै॥४३॥
जूथप जूथ अनंत अपारी। इढ सुख चाहत जुगल बिहारी॥
जानि समै सब जंत्र मिलाये। नृत्य गान अद्भुत प्रगटाये॥४४॥
शरद विनै कीन्ही सब पाहीं। कृपा करौ मोपै मन माहीं॥
तुमरी चरन रेनु बल मोरे। सत्य कहौ निश्चै तृन तोरे॥४५॥
जो अनुशासन पावौं आजू। पूरन करौं मनोरथ साजू॥
नृत्य गान करि जुगल रिझावौं। कृपा रावरी सब सुख पावौं॥४६॥
कह्यौ हरखि समत हम लीजै। दंपति सुख हित कारज कीजै॥
परमानद सरद सुनि पायो। तन शृङ्गार अनूप रचायो॥४७॥
सबकी पाय सहाय अतूला। कहियै काहि शरद समतूला॥
सब ही संग शरद अगवाहीं। आवत नवत सिंघासन पाहीं॥४८॥
श्रीपद सीस परसि लखि आनन। बलि बलि हस्त लगावत कानन॥
अंबुज दृग कोर निहारी। सुख भरि नै नै चली पछारी॥४९॥
लागी नृत्य करन गुन भारे। गान तान गति भेद सभारे॥
राका चंद्रछटा अमलाई। सामा सकल श्वेत सुखदाई॥५०॥
नृत्य करै ऋतु सहचरि सर्दी। को अस धिर न लहै विमर्दी॥
दंपति हेरि हरखि सुख पावैं। सहचरि बलि नै सुवन झरावे।५१॥
शरदाली जे गुन प्रगटावै। प्रमुदित जुगल पेखि अधिकावैं॥
करत विनोद गइ अति नेरी। जुगल माधुरी भर दृग हेरी॥५२॥
सिथिल भई अंग अंग थहराने। प्रान अगम सुखसिंधु समाने॥
गहि लीन्हो सब ओर अलीगन। श्रीपद सीस दियो लै गहि तन॥५३॥

जुगल हस्त दै सीस नवायो । अहो भाग्य लखि सखिन मनायो ॥
चौकी स्वेत प्रसून रचाई । तापै हीरक थार धराई ॥३६॥
रचना पुष्प करी ता माहीं । जाहि विलोकत नैन सिराहो ॥
पुष्पानली अष्ट नै सारी । सो लै थार आरती बारी ॥४०॥
जय जय धुनि बोलै सखि हरषैं । चहूँ ओर कुसुमावलि वरषैं ।
जुगल नाम आनद कदबा । रटैं जीह हिय सो अवलबा ॥४१॥
परिदच्छिन करि दडप्रनामा । श्रीपद परसै मस्तक वामा ॥
पिय प्यारी अतुलित छवि भारी । नखसिख नैन निहारि सुखा ी ॥४२॥
परमानद उदधि हिय धारै । बार बार तन बलि बलिहारै ॥
शरद अली निज भाग्य मनावै । फूली अगन अग समावै ॥४३॥
जूथप जूथ अनत अपारी । हढ सुख चाहत जुगल बिहारी ॥
जानि समै सब जत्र मिलाये । नृत्य गान अद्भुत प्रगटाये ॥४४॥
शरद विनै कीन्ही सब पाहीं । कृपा करौ मोपै मन माहीं ॥
तुमरी चरन रेनु बल मोरे । सत्य कहौ निश्चै तृन तारे ॥४५॥
जो अनुशासन पावौ आजू । पूरन करौं मनोरथ साजू ॥
नृत्य गान करि जुगल रिझावौं । कृपा रावरी सब सुख पावौं ॥४६॥
कह्यौ हरखि समत हम लीजै । दपति सुख हित कारज कीजै ॥
परमानद सरद सुनि पायो । तन शृङ्गार अनूप रचायो ॥४७॥
सबकी पाय सहाय अतूला । कहियै काहि शरद समतूला ॥
सब ही सग शरद अगवाहीं । आवत नवत सिंघासन पाहीं ॥४८॥
श्रीपद सीस परसि लखि आनन । बलि बलि हस्त लगावत कानन ॥
अबुज दृग कोर निहारी । सुख भरि नै नै चली पछारी ॥४९॥
लागी नृत्य करन गुन भारे । गान तान गति भेद सभारे ॥
राका चद्रछटा अमलाई । सामा सकल श्वेत सुखदाई ॥५०॥
नृत्य करै ऋतु सहचरि सर्दा । को अस धिर न लहै विमर्दा ॥
दपति हेरि हरखि सुख पावैं । सहचरि बलि नै सुवन झरावें ॥५१॥
शरदाली जे गुन प्रगटावै । प्रमुदित जुगल पेखि अधिकावैं ॥
करत विनोद गइ अति नेरी । जुगल माधुरी भर दृग हेरी ॥५२॥
सिथिल भई अग अग थहराने । प्रान अगम सुखसिंधु समाने ॥
गहि लीन्हो सब ओर अलीगन । श्रीपद सीस दियो लै गहि तन ॥५३॥

दंपति नित निज जन सुख चाहैं। सोई दास परम पद लाहैं॥
दंपति कृपा शरद अति पाई। श्रीमुख सेवा उत्तम गाई॥५४॥
निज निज करि अभिलाषा पूरी। जुगल रिझाय लहैं सुख भूरी॥
जुगल विहारी नित्यानंदा। सेवा सब की करि अभिनंदा।५५॥
सो थल पेखि चित्त अस आई। घूमि घूमि देखैं मन लाई॥
चले *सहचरी मंडल माहीं। सोभा निरखि नैन ललचाहीं॥५६॥
ठाम ठाम ठाढे ह्वै हेरैं। वचन विलास मोहनी गेरैं॥
वेदी पयसर विपिन विहारा। सुखमा शरद फबी अनपारा॥५७॥
प्यारी पीतम सहचरि संगा। करत विहार नेह नव अंगा॥
उमगे सिंधु परम सुख भारी। लीला विपिन अनूप निहारी॥५८॥
मध्य भाग ससि आयो देखी। निसा गई जुग जाम विसेषी॥
शरद रूप लखि सैन विसारी। फिरत विनोद करत पिय प्यारी॥५६॥
पयसर तीर लता ढिंग ठाढे। तोरत पुष्प नेह रस बाढे॥
टूटत नाहि गिरत जे हे कर। सिथल अंग श्रीदृग आलस भर॥६०॥
दंपति श्रीनैनन छवि भारी। लेस जनावत नींद खुमारी॥
परम निकुंज सैन सुखधामा। करी विनै हम हित विश्रामा॥६१।
शरद विमान आय ढिग लाग्यो। दंपति चढे भाग्य अलि जाग्यो॥
सिंघासन बैठे पिय प्यारी। सखी प्रमोद लहै लखि भारी॥६२॥
हरखत बरखत पुष्प प्रगावत। जय धुनि करत नृत्य मुद छावत।
परम निकुंज सैन थल आवत। मग जन जान पेखि सुख पावत॥६३॥
निति नूतन विधि सरद सुसेवै। दंपति कृपा परम सुख लेवै॥
धन्य धन्य ते धन्य कहावैं। जे या विधि सेवा मन लावैं॥६४॥

दोहा—गोपेश्वर सुखसार गुनि, जे सेवा मन देहिं।
नित्यविहारी जुगल प्रभु, ते निज बस करि लेहि॥१॥
नातो आदि अनादि को, स्वामी सेवक दोय।
प्रभु सेवा सर्वस्व जेहि, दास नाम सुभ सोय॥२॥

❋ चौपाई ❋

आगे चलि परिदच्छिन कीन्हे। कोन जत्र मंडल मन दीन्हें॥
यह पंचम जो मंडल गावै। हिमऋतु सहचरि वास बतावैं॥१॥

प्रीति प्रतीति नीति सेवा र । गाय सकै को है जस याकी ॥
प्यारी ... हिये ... । नित नूतन ... मन ... ॥२॥
सुनै ... । ... जुगल ... नाना ॥
रचना कुंज ... । ... ॥३॥
भीतर पच है जे मड । ... कुंज ... ॥
एक एक मैं ... । ... ते अष्ट लम्बाई ॥४॥
सभा कुंज ... । ... ॥
कुंज ... रचना । का विधि कहै नैन बिनु रसना ॥५॥
हिमऋतु निज मन किया विचारा । लघुता पीत करौ उपचारा ॥
उष्ण सुभाव द्रुम जे गाये । गढ़ि गढ़ि तिनके सदन सुहाये ॥६॥
भूमि भाग लै गच परिजता । कुंज अंग जे कहे समता ॥
रचना दारुमयी सब कीन्हीं । देखत उलहै प्रीति नवीनी ॥७॥
तापै रंग विचित्र रचाये । जा ढिग जो अति शोभा पाये ॥
रंग रंग परदा दर लाए । अधिक एक ते एक सुहाए ॥८॥
सभा कुंज रचना अति भारी । रंग दारु निर्मित शुभकारी ॥
मृदु गंभीर बिछौना तूला । तापै विविध वसन अनुकूला ॥९॥
परदा पंच पाँति चहुँ पाहों । छूटि रहे दर दुग के माहों ॥
बनिक अनूप शीत मद भंजक । शत्रु समीर दर्प बल गंजक ॥१०॥
चित्र विचित्र लगी छतिवाई । ठौर ठौर गुन रूप सुहाई ॥
मध्य बिछी परिजंक अमूला । बिष्टर सुखद मंजुल तूला ॥११॥
ऋतु अनुकूल वसन नव रंगा । ताजै बिछे शीत गुन भंगा ॥
तकिया मृदुतर उष्ण द्रव्य भरि । लघु दीरघ ते सेज सबै धरि ॥१२॥
खान पान की वस्तु अनंता । मादक स्वाद सबै गुनवंता ॥
लिए सुगंधि उष्ण गुन होई । सुखप्रद अंतर भाति बहु सोई ॥१३॥
से चित किये धरे भरि भाजन । कुंज समस्त उष्णता भाजन ॥
नेक वायु निर्गम कहुँ देखै । मुदै जतन बनाय बिसेखै ॥१४॥
सहचरि अंग वसन ते धारै । रंग उष्णता देत निहारै ॥
भूषन रेसम के रचि कीन्हें । चित्र विचित्र रंग सब दीन्हें ॥१५॥
बिना सुने नहिं परत पिछाने । तिन्हैं देखि मनिमय लघु माने ॥
तैसे सुवन विविध रंग जानौ । शोभा उनते अधिक प्रमानौ ॥१५॥

सहचरि करि सिंगार अस आजै। श्रीतन हेत मौज सब साजैं ॥
छींट वसन भूषन जे गाये। तथा सुवन कर गहे सुहाये ॥१७॥
सीत विनाश जतन बहु भाँती। करि करै लागी छिन राती ॥
हिम ऋतु सखी सकोच गहै मन। जुगल मृदुल अति सीत सहै तन ॥१८॥
बहुरि विचारि हियैं सुख पावै। निज गुन समुझि प्रमोद बढावै ॥
जौ नहिं सीत होय तन मेरै। उष्ण पदारथ दूरि निवेरै ॥१९॥
अमित भाति सुखप्रद जे भोगा। मो ऋतु पाय लहैं सयोगा ॥
भोग वस्तु गुन भोगी दंपति। मो घर आय लहै सुख सपति ॥२०॥
अस विचारि सेवा रुचि बाढी। आवनि आस स्वास भरि गाढी।
छिन छिन करै मनोरथ भारी। पुजवौ आजु सकल निरधारी ॥२१॥
दंपति आवनि मन सब चाहैं। सुरति जुगल पद निधि अवगाहैं ॥
दंपति पद सेवन सुख आसा। तिन्है विहात कल्प सम स्वासा ॥२२॥
इहा सखी सेवै चित लाये। राजभोग सम यो सुख पाये ॥
भोजन करि बैठे पिय प्यारी। सखियन सेवा सब निर्धारी ॥२३॥
राजभोग आरती विताती। सखी विलोकैं हिय हरखानी ॥
नृत्य गान करि जुगल रिझावैं। सकल मनोरथ मन फल पावैं ॥२४॥
हिम ऋतु सखी द्वार पर आई। त्रिविधि समीर बही सुखदाई ॥
सीत उदै ता ठौर लखाना। श्रीतन परस भई मुदखानी ॥२५॥
सकल सहचरी अग तथाहीं। जानि परी हिमऋतु ढिग आई ॥
प्यारी पीतम इच्छा कीन्ही। ओढै वसन वृत्ति हम चीन्ही ॥२६॥
रंग गुलाबी बहु गुन वारे। उभै दुसाला हस्त सवारे ॥
पिय प्यारी तिन मंजु उढाये। ते अतिसै दंपति मन भाये ॥२७॥
श्रीमुख भई परम प्रिय वानी। वस्तु न हेतु समै सुखदानी ॥
चली वार ता सीत कहानी। औगुन स्वल्प अमित गुनखानी ॥२८॥
श्रीपीतम गुन सीत बखाने। हम सौ गुन कहि तथा प्रमाने ॥
सुनि सखियन मन ऐसी आई। हिमऋतु भवन आजु सुखदाई ॥२९॥
जौ देखै दंपति तह राजे। अलकार हिमि को तन साजे ॥
नैन लाभ अनवधि भट्ठु लीजे। कैसे होय जतन सो कीजै ॥३०॥
हमौ विसाखा नय कर जोरैं। कीन्ही विनै सहेतु निहोरैं ॥
महाराज हिमि ऋतु अलि द्वारैं। खरी हिये अभिलाष अपारैं ॥३१॥

सो चाहत मम सदन पधारै। सेवा करौं भरौं सुख भारै॥
जाचक ह्वै श्रीद्वारै आई। कृपा रावरी चित्त बसाई॥३२॥
श्रीजू सबके मन की जानी। भ्रू विलास लखि हम हरखानी॥
आली हिमि विमान सुख रूपा। लै आई सजि समै अनूपा॥३३॥
जो रचना निज मडल कीन्ही। सो सब जान दिखाई दीन्ही॥
मध्य भूमिका कुज जान सो। खरी कनात करी ओरी दो॥३४॥
ऊपर चित्र वितान तनायो। पेखि नैन मन सबन पगायो॥
मजु पावड़े तूल वसन रचि। सीत विनास उपाय करी साँचि॥३५॥
अलि मडल गत जुगल पधारे। छिन छिन श्रीतन वसन सवारे॥
आय जान बैठे सिघासन। लेस विसेष प्रवेसव तासन।३६।
सो मदर कदर सी लागै। बहुल प्रकास बनिक मन पागै।
गीत वाद्य अलि नृत्य रिझावैं। जान चढे दपति सुख आवैं॥३७॥
हिमि ऋतु अली कुज निकटाए। सीत भग बहु जतन सुहाए॥
मध्य सभा जो कुज रचाई। लाग्यो तहा विमान सटाई॥३८॥
कुज विमान कनात लगाई। शीत वात करि जतन मिटाई॥
वसन तूल पावड़े रचाए। मृदु गभीर उष्ण परसाए॥३९॥
उठे परस्पर दै गलबाही। मध्य जुगल सहचरि चहु घाहीं॥
मत्त गयद मराल विमोहत। दंपति चलत चरन गति सोहत॥४०॥
सेज निकट वर पीठ सुहायो। साज समै अनुकूल बनायो॥
तहा विराजे पीतम प्यारी। सहचरि आनद लहत निहारी॥४१॥
हिमि सखि जे रचि राखी सौजै। ऋतु अनुकूल अधिक प्रद मौजै॥
ते सब हमै दिखाई आनी। अद्भुत पेखत अचरज मानो॥४२॥
अगराग पीस सब सगा। जल को नेक न तिन्हैं प्रसगा॥
कनक सलाका लै जित लावैं। तहा लगे अतिसै छवि पावैं॥४३॥
भूषन सुवन पाट मय देखे। उनते ए कछु सरस विसेखे॥
छाट भाँत अद्भुत अति प्यारी। बूटी रग नैन चित हारी॥४४॥
कोमल सींव उष्ण गुन भारी। सब विधि ऋतु अनुकूल सुधारी॥
अतर सुगध घ्राण जब आवै। दै गुन उष्ण प्रमोद बढावै॥४५॥
सकल प्रकार देखि सुख पायो। भलैं वीर सेवा मन ल्यायो॥
निति नूतन दपति सुख चाहौ। सदा भरौ चित इहै उमाहौ॥४६।

प्रेम सिंधु तेई हिय अहहीं। सेवा रत्न जहा अम रहहीं ॥
भयो परस्पर शिष्टाचारा। सखियन आनद लह्यो अपारा ॥४७।
सेवा सुखद सबन मन धारी। भाव प्रीति रुचि जुक्ति विचारी ॥
सौंन देखि मन श्रीप" लायो। वदन विलोकि जीव धन पायो ॥४८॥
हिमि ऋतु सखी खरी मो पासा। दपति सेवा निरखन आसा ।
मै सिर नाय जोरि कर बोली। महाराज नूतन हिमि गोली ॥४९॥
सेवा मन अभिलाष बढावै। श्रीइच्छा रुख जौ लखि पावै ॥
श्रीजू प्रीति सबन की जानी। मद हसीं रद छटा लखानी।५०॥
हेतु पाय आनद भर छायो। सहचरि उर सुख सिंधु उमाह्यौ ॥
दै पट मध्य सखी दोउ ओरी। लिये सिगार सौंन कर सोरी ॥५१।
कोऊ अतर के समै लावैं। रचना बेनी चित्र रचावै ।
अगराग सुखौ तन लावैं। वा ते यह सोभा अति पावै ॥५२॥
छींट घाघरौ श्रीकटि लायो। तथा कचुकी वसन सुहायो ॥
भूषन सुवन प्रथम जो गाये। नखसिख श्रीतन तेइ सजायो ॥५३।
उत्तरीय बूटी रग एकै। भमि वदामि भाति विवेकैं ॥
समै निहारि उठायो तैसें। सीत नसै सोभा अति जैसे।५४॥
रूमी चित्र रुमाल सुहायो। तापै सो शुभ रीति उढायो ॥
स्वेत दुसाला गुनप्रद भारी। ऊपर दियो उढाइ सुधारी ॥५५॥
नखसिख निरखि सखी सुख पावै। मजु मुकुर सनमुख दिखरावे ॥
श्रीजू दर्पन दिसि चख लावैं। निज प्रतिबिब निहारि लुभावैं ॥५६॥
आदि विसाखा अनवधि आली। लाल सिगारैं अति सुख साली ॥
सखी विसाखा माधवि नामा। बैठी हुती उठी सो वामा ॥५७।
पट आवरन अटकि ता पीठे। उचौक्यो परे पिय डीठे ॥
नखसिख यथा सिगारे सखियन। या दिसि अली निहारै अखियन ॥५८॥
अगराग सूखे अति सोहैं। स्याम शरीर फबे मन मोहैं ॥
छींट इजार तथा तन जामा। रग वदामि भाति ललामा ५९॥
बूटी एक वसन सब केरी। श्रीअग लहि छवि भई घनेरी ॥
गुलनार वद लबित लटके। बाम ओर लखि चख मन अटकैं ॥६०॥
चीरा सीस फव्यो अति नीको। बूटी रग भाति ताही को ॥
गोला पेच सजे अस लागै। सिमिटि सभगता जनु बनि पागै ॥६१॥

भूषन सुवन पाट सुख दाई। अंग अंग अनुपम छवि छाई ॥
रूमी श्री सिर लसै रुमाला। तापै श्वेत अमोल दुसाला ॥६२॥
हस्त पाट मय सुवन विराजै। नखसिख अनवधि सुखमा छाजै ॥
सन्मुख दर्पन सखिन दियो जब। रूप निहारि मोद बढ्यौ तब ॥६३॥
ताही छिन माधवि तन लगिकै। मध्या वरन ऊच भौ ठगि कै ॥
श्रीजू हसत हसी सब आली। ता छिवि तथा अधिक वनमाली ॥६४॥
समै अनौसर परदा छूट्यौ। हास विनोद परम सुख लूट्यौ ॥
अरस परस लखि छवि उर ल्यावै। रूप सिंधु थलि अवधि न पावै ॥६५॥
अंग अंग माधुरी निहारै। दंपति रीझि विहास बलिहारै ॥
सहचरि सुखसागर अवगाहै। दृग छवि हेरन हियो उमाहै ॥६६॥
हिमि ऋतु आली जो मुद पायो। जानत सोई जासु उर आयो ॥
आला हिमि कीन्हौ उनमाना। सेवा सुख दमसै परिमाना ॥६७॥
जे भोजन हित वस्तु बनाई। ते सब आनि हमै दिखराई ॥
मादक पाक अनेक बनाए। वरन विचित्र स्वाद अधिकाये ॥६८॥
गुन रसखानि समै सुखदायक। देखत अतिरुच हिय उपजायक ॥
मेवा अमित पक घृत कीन्हे। लवन मिष्ट रस भेद नवीने ॥६९॥
वस्तु अनंत समै अनुसारी। लखि रुचि गुनप्रद रची अपारी ॥
रस पीवन के मादक नाना। नीर आदि गुन स्वाद अमाना ॥७०॥
मिश्रित सकल सुगंधि अनूपम। भोगी भोग्य जोग्यता इत सम ॥
बीरा अतर पुष्प विधि न्यारी। समै सुहावन चख मन प्यारी ॥७१॥
देखि पदारथ हम हरषानी। हिमि सेवा हिय गुनि सुख मानी ॥
बहुरि निहारि प्रिया पीतम छवि। भांति अनूपम आजु रहे फबि ॥७२॥
हिमि जिय अति अभिलाषा जाई। चरन वंदि नय गाई सोई ॥
महाराज आली हिमि असमन। अति करि कृपा होय कछु भोजन ॥७३॥
पूरी करैं सदा जन आसा। भ्रू संकेत भई मृदु हाँसा ॥
जानि सहचरी तन मन भीनी। सपदि जतन भोजन को कीन्ही ॥७४॥
दीरघ चौकी पर जुग थारा। भरे कटोरा धरे अपारा ॥
पान करन के रस जे गाये। गंगाजली स्वल्प जे भाये ॥७५॥
लिये हस्त ठाढी सब आली। सौंज अनरमिति सुख भर साली ॥
श्रीनासा भूषन उतराये। धूप दीप आचवन कराये ॥७६॥

चंपकलता संग मिलि मोरे । करवावन भाजन श्री ओरे ॥
रंगदेवी लै संग सुदेवी । पान करावे रस श्र सेवी ॥७७॥
संग विसाखा चित्रा लीन्हे । श्रीप्रीतम हि मन तस विधि कीन्हे ।
तुंगविद्या इंदुलेखा दोऊ । रस विधि पान करावैं सोऊ ॥७८॥
श्रीमुख आनक बहु मैं सेचौ । परम माधुर्य भरि हिय फेरौ ॥
चंपकलता देत कबहू मुख । न जानत पावन नित ना सुख ॥७९॥
मध्य मध्य रस पान करावे । रंगदेवि दूनौ रस पावैं ॥
पिय दिसि ये लै कर मुख देवैं । संग विसाखा चित्रा सेवैं ॥८०॥
अपना अपना प्यारी श्याम । त लखन हित छवि भरि श्रमा ।
पान करावत रस रस पूरी । तुंगविद्या इंदुलेखा भूरी ॥८१॥
मूंदै सकल पदारथ जैसे । सीतल होय न करि विधि तैसे ॥
सद्य लेहिं भाजन मुख देवै तथा पेय कबहू विधि सेवें ॥८२॥
करवावै भाजन कर अपने । दंपति सीतल है नहि सपनै ॥
स्वल्प कलूला जुगल कराये । शुष्क रुमाल वदन अगु छाये ॥८३॥
थार उठाय शुद्ध विष्टर करि । दई मंजु मुखवास हरख भरि ॥
बीरा परम मनोहर देवै । समै सुखद सोई विधि सेवै ॥८४॥
सुवन पाठ ते अंतर समाये । देत उष्णता गति कर टोये ॥
जुगल हस्त दीन्हे सुख भार । नै बलि सहचरि हरखि निहार ॥८५॥
मुकुर आरसी सनमुख दीन्ह्यो । दंपति पेखि परम मुद लीन्ह्यो ॥
वाद्य मिलाय नृत्ति करि गावै । सारंग राग अलापि रिझावैं ॥८६॥
हिमिऋतु लखि सेवा निज सदना । प्रमुदित जुगल विलोकत वदना ॥
प्यारी पीतम ता दिसि देखैं । वाके भाग्य धन्य सब लेखैं ॥८७॥
श्रीनैनन मादकता छाई । उष्ण सहाय सकल विधि पाई ॥
वचन सिथल श्री अंग अरसाने । लेत जभाई पलक झपाने ॥८८॥
गहत परस्पर दोउ सहारे । परसत अंग लहत सुख सारे ॥
ता छिन की सोभा जिन देखो । निज हिय कागद दृढतर लेखो ॥८९॥
सहचरि अति निज भाग्य सराहैं । यह सेवा फल छिन छिन चाहैं ॥
श्रीतन हेरि अधिक अरसाई । वेगि जतन हम तबै रचाई ॥९०॥
शनै शनै भूषन पट अंग ते । जानि न परे उतारे कब ते ॥
साठो धौत वस्त्र केवल तन । धारि लखी सोभा आनंद घन ॥९१॥

थाभि जतन सहचरि चहुँ ओरी । अरस परस भुज गल दै मोरी ॥
घूमत झूमत झुकत धरत पग । चलत सखी बल डगडग मगमग ।९२॥
खुलत नैन अबुन रतनारे । बहुरि परत पलकें गुन भारे ॥
गोपेश्वर जिन ज्वै निहारे । दसा और अब होत सभारे ॥९३॥
हरे हरे सेज्या ढिग ल्याई । सकल चातुरी प्रगट कराई ॥
जतन जतन दोउ पलग सुताए । पटुता सफल देखि सुख पायें ॥९४॥
मजु सूत पट प्रथम उठायो । तापै रूमी रचित सुहायो ॥
चहूँ ओर बैठी हम सेवैं । दपति अग परसि सुख लेवैं ॥९५।
श्रीतन श्रम सब भाति मिटाये । निद्रा चिन्ह अधिक सुख छाये ॥
अपर वसन करि जतन उठाये । जथा सीत श्रीतन हित दाये ॥९ ॥
ऋतु अनुकूल पदारथ जेते । सेज निकट रचि राखे तेते ।।
चहूँ ओर फिरि घूमि निहारी । सधि बयारि सभारि निवारी ।।९७॥
मौन गहे सब कारज कीन्हें । बाहिर चलब हेत मन दीन्हे ॥
श्रीपद नै नै वदन करहीं । उलटे चरन मद गति धरहीं ॥९८॥
एक दिसा लघु परदा टारी । आली सब निकसी तेहि द्वारी ॥
निसरि कनात आड ते बाहिर । मिलि इक ठौर भई सखि माहिर ॥९९॥
सो सेवा सुख अनुभव करहीं । वचन विलास होत मुद भरहीं ॥
आली हिमि ऋतु हिय अति प्रीती । दपति सेवा रुचि परतीती ।१००।
रीति विनीति नीति लखि जाही । चौकी पलग राखि तह ताही ।।
सावधान करि सबही बातन । बैठौ मौन गहे लघु स्वासन ।१०१।
हम सब निज निज कुज पधारी । नित्य क्रिया सिगरी निरवारी ॥
दिवस सेष लखि उठिवे विरियाँ ।हम निज तन सजि सजि निरवरियाँ१०२
आतुर मन सब ता थल आई । जथा विधान देखि हरखाई ।।
समाचार पूछ्यो तिन ते कस । उन भाष्यौ बैठी जस की तस ।१०३।
लाल अगरि निद्रा तजि हूँकरि । सो धुनि बाहिर सखी श्रवन परि ।।
अति आनद लह्यो मन माहीं । ह्वै निसक भीतर सब जाहीं ।१०४।
अग सेय आलस करि दूरी । दपति उठि बैठे सुख भूरी ॥
सनमुख मुकुर धर्यौ सखि आनी । पेखि मोद पावत सुखदानी ।१०५।
श्रीपद हस्त वदन ताते जल । धोय अगौछे सुष्क बसन भल ॥
मेवा पाक स्वल्प भोजन करि । मादक रस पीये जल हित भरि ।१०६।

पुनि अचवाय दई मुख वामा। दंपति वीरी खात सवामा॥
नृय गान करि सखी रिझावैं। मन अभिलाष अधिक फल पावैं।१०७।
मज्जन हित श्रीमन रुख जानी। सेज निकट सो विधि उनमानी॥
तन मन जतन सवारि न्हवाये। दंपति श्री अंग वसन सजाये।१०८।
हरिचंदन रंग पट मृदु झीने। श्रीतन फबे पेखि सुख लीन्हे॥
महारास मंडल सुधि कीन्ही। श्री इच्छा नैनन गति चीन्ही।१०९।
बृहत विमान सैल हित निन जो। सकल साज पूरित आयो सो॥
कुंज निकट गसिकै सो लाग्यो। पेखि जुगल सखि मन अनुराग्यो।११०।
वसन सुवन पावडे सवारे। अलि मंडल गति जुगल पधारे॥
जान सिंघासन बैठे सरसै। जै भनि सखी पुष्प नभ वरषै।१११।
अगंराग चंदन शुभ जेते। दंपति अङ्ग रचे सखि तेते॥
नखसिख स्वेत पुष्प आभरना। रंग विचित्र थाक बहु वरना।११२।
जुगल सरूप सिंगारे सखियन। तन मन वारि निहारे अखियन॥
सीतल अमिय नीर सुखदाई। प्यारी प्रीतम हरखि पियाई।११३।
अरस परस पीवत मुद भारे। दै मुखवास तमाल सभारे॥
धूप दीप नीराजन वारी। पुष्पांजली वृष्टि भइ भारी।११४।
शीतल मंद सुगंध बयारी। ह्वै अनुकूल वही मुदकारी॥
हिमऋतु सखी सदन गत प्यारे। सेये उष्ण पदारथ सारे।११५।
सेवै शीतलता मन भाई। तथा सकल तस बनी उपाई॥
नृत्य गान मंगल धुनि छाई। कोटिन जान मिले तहँ आई।११६।
हिमि ऋतु सखी अमित गुनखानी। बिदा करो दंपति सनमानी॥
जुगल स्वरूप हेरि हिय धरि कै। चलो अली पद वंद्य सुमिरि कै।११७।

दोहा—हिमऋतु सेवा करि सकल, किये मनोरथ पूर।
सर्वोपरि ते धन्य जिन्ह, चीन्ही सेवा मूर॥१॥
नारि कहावै पतिव्रता, पतिसेवा चित दूर।
माग भरै सिंदूर हसि, फल पावै इढ धूरि॥२॥
गोपेश्वर हिय मै गुनौ, सेवा पदप्रद ऐन।
द्रव्य समेटै सो धनी, होत नहीं वकि बैन॥३॥

❁ चौपाई ❁

कोन जन्त्र गत षष्ठम मंडल। आगे चलि देखिय चख मंगल॥
सकल भीति संपति सुखखानी। को पावै कहि अंत बखानी॥१॥

जहँ सिसिर ऋतु सहचरि बासा । निति नूतन मेवा रुचि प्यासा ॥
छिन छिन मन गुनि सोइ बिभावै । दंपति जा विधि अति सुख पावै ॥२॥
एक समै सुनि सुखनिधि बानी । रोम रोम विकसित हरखानी ॥
जुगल बिहारी आवत मो घर । दीनदयाल प्रनत आरत हर ॥३॥
धन्य भाग्य अतिसै मम भारी । होहि सफल दृग जुगल बिहारी ॥
दारुन सीत अग मम जो है । करौ सुखद सब भाँतिन सोहै ॥४॥
उष्ण जाति जे दारु सुहाए । गढि गढि सुखम अग बनाए ॥
उष्ण गध कस्तूरी आदिक । कलल किये दै अतर प्रमादिक ॥५॥
रूमी बसन उष्ण गुन भारे । बोरि बोरि ता मध्य सवारे ॥
कुज हेत जे काठ रचाये । ए पट तिन ऊपर लपटाये ॥६॥
रचना चित्र विचित्र रचाई । निरखि नैन मन अरुझि लुभाई ॥
ते सब जोरि कुज रचना करि । मडल सकल तथा विधि गुन भरि ॥७॥
विष्टर भूमि वियत आवरना । पजर इव मडल तन वरना ॥
एक द्वार ताकी बहु जतना । स्वल्प समीर न पावै धसना ॥८॥
भीतर सभा मध्य वर कुजा । सीत विनास जतन करि पुजा ॥
सामा जे पूरव कहि गाई । ते इत घटना अमित सुहाई ॥९॥
रूमी बसन उष्ण रस बोरे । चित्र विचित्र लेत चित चोरे ॥
दारुन सीत विमर्दनकारी । बनिक अनूप समै गुन भारी ॥१०॥
सप्त पाति परदा लागे तस । एक एक गुन रूप अधिक जस ॥
छतिवाइ देखत मन लरजै । मनौ तुहिन पर निज बल गरजै ॥११॥
मध्य सिघासन ताके राजै । जाहि बिलोकि तुषार बिलाजै ॥
भूमि बिछौना मृदु गुनदाई । पग परसत गरमी तन छाई ॥१२॥
ठौर ठौर बहु धरी लसती । पूरित वह्नि विधूम हसती ॥
उष्ण सुगध द्रव्य गुन केती । चूरन करी धूप हित तेती ॥१३॥
सकल हसती मै ते डारै । धूम उठै फैलै थल सारै ॥
ज्यौं त्यौं सो सघिन ह्वै निसरै । सीत पलात जात जनु पकरै ॥१४॥
अग अखिल शृगार लसै अस । दारुन सीत शत्रु भयप्रद तस ॥
दंपति सेवा सौज अपारी । रची समै अनुकूल विचारी ॥१५॥
उष्ण गध रस रग रँगाए । तूल ततु बहु भाति सुहाए ॥
तिनके भूषन पुष्प रचाये । निरखत नैन लाभ फल पाए ॥१६॥

तैसे वसन तूल सगीने। तथा रग रस गुनपद भीने॥
अगराग बहु रग सवारे। सूखे लागि लसै दुति भारे॥१७॥
जे जे सेवा वस्तु सुधारी। रुमै सुहावनि सुखद अपारी।
गहे हस्त ठाढी सब आली। सरवस प्रीति जुगल प्रद पाल॥१८॥
आवनि आसा छिन छिन चाहै। दंपति सेवा चित्त उमाहै॥
बाहिर कुज कनात घिराई। ऊपर बृहत वितान सटाई॥१९॥
चहूँ ओर द्रुम जाति लगी जे। जथा कुज तेहि भाति सजी ते॥
औदुचन तिन माहि कितेऊ। तप्त नीरजुत धम सु तेऊ॥२०॥
कितनी ठौर भूमि झर निकसै। वह्नि कला सवा हित विकसै॥
रचा उपाय जतन सब तपनो। देखि विभूति सिसिर सखि अपना॥२१॥
दारुन सीत अग निज जान्यो। स्वल्प सक जिय मै कछु आन्यो॥
अति सुकुमार जुगल प्रभु मेरे। जौ कहुँ मम सुभाव दिसि हेरे।२२॥
तौ आवन दुर्घट मो सदना। ऐसे समुझि शुष्क भौ वदना॥
वृत्ति समेटि विचार उपाई। सेवा सुख विनु दुख अधिकाई॥२३॥
यह ससै कैसे उर नासै। को सहाय जो मेटै त्रासै॥
ग्रीषम सखी सुरति जिय आई। चलौ तहा सब कहौ जनाई॥२४॥
विकल भई तन ता ढिग जाई। मन गत हेतु कह्यौ सब गाई॥
ग्रीषम कही धीर उर धारौ। प्रापति हित श्रीनाम उचारौ॥२५॥
श्रीइच्छा सर्वोपरि जानौ। औरन हेतु कछू परिमानौ॥
इच्छा वश हम सबही रहहीं। कृपा करै तब सेवा लहहीं॥२६॥
आजु सुनी मै हू इक बाता। विपिन विहार भोर जन त्राता॥
करत फिरत मो थल आवैगे। मम तन जो सो सुख पावैगे॥२७॥
अधिक सीत जौ इच्छा देखौ। करौं सहाइ तुम्हार विसेखौ॥
यह सुनि सिसिर चित्त हरषानी। निज गृह चली वद्य जुग पानी॥ २८।
भोर विहार करत श्री जाना। ग्रीषम सदन आय नियराना॥
कछु प्रस्वेद उष्णा लघुताई। श्रीतन ठाम सुभाव जनाई॥२९॥
ग्रीषम सुधि पाई द्रुत धाई। चरन वद नै विनय सुनाई॥
महाराज सीतल उपचारा। आयसु होय करौ रचि भारा॥३०॥
तातौ अली सिसिर ऋतु मडल। निकट जानिये सीत अखडल॥
नेक जानि जौ ता दिसि जावै। महाराज सो अति सुख पावै॥३१॥

जहँ सिसिर ऋतु सहचरि बासा । निति नूतन मेवा रुचि प्यासा ॥
छिन छिन मन गुनि सोइ विभावै । दंपति जा विधि अति सुख पावै ॥२॥
एरु समै सुनि सुखनिधि बानी । रोम रोम विकसित हरखानी ॥
जुगल विहारी आवत मो घर । दीनदयाल प्रनत आरत हर ॥३॥
धन्य भाग्य अतिसै मम भारी । होहि सफल दृग जुगल विहारी ॥
दारुन सीत अंग मम जो है । करौ सुखद सब भाँतिन सो है ॥४॥
उष्ण जाति जे दारु सुहाए । गढि गढि सुखम अंग बनाए ॥
उष्ण गंध कस्तूरी आदिक । कलल किये दै अतर प्रमादिक ॥५॥
रूमी वसन उष्ण गुन भारे । बोरि बोरि ता मध्य सवारे ॥
कुंज हेत जे काठ रचाये । ए पट तिन ऊपर लपटाये ॥६॥
रचना चित्र विचित्र रचाई । निरखि नैन मन अरुझि लुभाई ॥
ते सब जोरि कुंज रचना करि । मंडल सकल तथा विधि गुन भरि ॥७॥
विष्टर भूमि वियत आवरना । पंजर इव मंडल तन वरना ॥
एक द्वार ताकी बहु जतना । स्वल्प समीर न पावै धसना ॥८॥
भीतर सभा मध्य वर कुंजा । सीत विनास जतन करि पुंजा ॥
सामा जे पूरब कहि गाई । ते इत घटना अमित सुहाई ॥ ९ ॥
रूमी वसन उष्ण रस बोरे । चित्र विचित्र लेत चित चोरे ॥
दारुन सीत विमर्दनकारी । बनिक अनूप समै गुन भारी ॥१०॥
सप्त पाति परदा लागे तस । एक एक गुन रूप अधिक जस ॥
छविवाइ देखत मन लरजै । मनौ तुहिन पर निज बल गरजै ॥११॥
मध्य सिंघासन ताके राजै । जाहि बिलोकि तुषार विलाजै ॥
भूमि बिछौना मृदु गुनदाई । पग परसत गरमी तन छाई ॥१२॥
ठौर ठौर बहु धरी लसती । पूरित वह्नि विधूम हसती ॥
उष्ण सुगंध द्रव्य गुन केती । चूरन करी धूप हित तेती ॥१३॥
सकल हसती मै ते डारै । धूम उठै फैलै थल सारै ॥
ज्यौं त्यौं सो सघिन ह्वै निसरै । सीत पलात जात जनु पररै ॥१४॥
अंग सुखिन शृंगार लसै अस । दारुन सीत शत्रु भयप्रद तस ॥
दंपति सेवा सौंज अपारी । रची समै अनुकूल विचारी ॥१५॥
उष्ण गंध रस रंग रँगाए । तूल तंतु बहु भांति सुहाए ॥
तिनके भूषन पुष्प रचाये । निरखत नैन लाभ फल पाए ॥१६॥

तैसे वसन तूल सगीने। तथा रग रस गुनप्रन भीने॥
अगराग बहु रग सवारे। सूखे लागि लसै दुति भारे॥१७॥
जे जे सेवा वस्तु सुधारी। रुमै सुहावनि सुखद अपारी।
गहे हस्त ठाढी सब आली। सरवस प्रीति जुगल प्रद पाली॥१८॥
आवनि आसा छिन छिन चाहैं। दपति सेवा चित्त उमाहै॥
बाहिर कुज कनात घिराई। ऊपर बृहत वितान सटाई॥१९॥
चहूँ ओर द्रुम जाति लगी जे। जथा कुज तेहि भाति सजी ते॥
औंदुचन तिन माहि कितेऊ। तप्त नीरजुत धूम सु तेऊ॥२०॥
कितनी ठौर भूमि झर निकसै। वह्नि कला सेवा हित विकसै॥
रचा उपाय जतन सब तपनो। देखि विभूति सिसिर मखि अपनो॥२१॥
दारुन सीत अग निज जान्यो। स्वल्प सक जिय मै कछु आन्यो॥
अति सुकुमार जुगल प्रभु मेरे। जौ कहुँ मम सुभाव दिसि हेरे।२२॥
तौ आवन दुर्घट मो सदना। ऐसे समुझि शुष्क भौ वदना॥
वृत्ति समेटि विचार उपाई। सेवा सुख विनु दुख अधिकाई॥२३॥
यह ससै कैसे उर नासै। को सहाय जो मेटै त्रासै॥
ग्रीषम सखी सुरति जिय आई। चलौ तहा सब कहौ जनाई॥२४॥
विकल भई तन ता ढिग जाई। मन गत हेतु कह्यौ सब गाई॥
ग्रीषम कही धीर उर धारौ। प्रापति हित श्रीनाम उचारौ॥२५॥
श्रीइच्छा सर्वोपरि जानौ। औरन हेतु कछू परिमानौ॥
इच्छा वश हम सबही रहहीं। कृपा करै तब सेवा लहहीं॥२६॥
आजु सुनी मै हू इक बाता। विपिन विहार भोर जन त्राता॥
करत फिरत मो थल आवैंगे। मम तन जो सो सुख पावैंगे॥२७॥
अधिक सीत जौ इच्छा देखौ। करौ सहाइ तुम्हार विसेखौ॥
यह सुनि सिसिर चित्त हरषानी। निज गृह चली वद्य जुग पानी॥२८॥
भोर विहार करत श्री जाना। ग्रीषम सदन आय नियराना॥
कछु प्रस्वेद उष्ण लघुताई। श्रीतन ठाम सुभाव जनाई॥२९॥
ग्रीषम सुधि पाई द्रुत धाई। चरन वद नै विनय सुनाई॥
महाराज सीतल उपचारा। आयसु होय करौं रचि भारा॥३०॥
तातौ अली सिसिर ऋतु मडल। निकट जानिये सीत अखडल॥
नेक जानि जौ ता दिसि जावै। महाराज सो अति सुख पावै॥३१॥

श्री इच्छा रुख जानि विमाना । सिसिर भवन ढिग आय लगाना ।।
सोऊ मग जोहत ही ठाढी । जूथ सग अभिलाषा गाढी ।।३२।।
देखि विमान हरख भौ भारी । हुलसि विमलि नै तन मन वारी ।।
दपति निज जन हढ सुख दानी । अति उत्कठा ताकी जानी ।३३।।
हम सबके मन तब अस आई । यह सुख लहै नैन सफलाई ।।
पिय प्यारी इच्छा रुष पाई । विनै भार बहु गाय सुनाई ।।३४।।
जुगल विहारी नित्यानदा । सो मन धरी बढ्यौ सुख वृ दा ।।
भीतर मडल जान गयो तब । दारुन सीत सरूप लख्यौ सब ।।३५।।
तासु निवारन विधि अति भारी । कौतुक सहित अपार निहारी ।।
सिसिर विचारत अपने मनमै । मम स्वीकार होय श्रीतन मै ।।३६।।
तब ए सकल पदारथ भारे । सुखप्रद होहि लगै अति प्यारे ।।
कर जोरै दपति दिसि देखै । सेवा सुख हिय चाह विसेखै ।।३७।।
जुगल प्रभू जानी ता मन की । दया दृष्टि दीन्ही दिसि जन की ।।
सिसिर परम निज भाग्य मनायो । सीस जाय श्रीपद परसायो ।।३८।।
सीत प्रवेस भयो श्रीअगा । सखियन सुख पायो अनभगा ।।
अद्भुत छवि सो देखन लागी । चख मन वृत्ति अधिक तह पागी ।।३९।।
सी-सी शब्द करै प्यारी पिय । कपित अग सिकोरि वेगि लिय ।।
रणतकार धुनि रद प्रगटानी । रोमावलि ठाढी छवि सानी ।।४०।।
कहत और निस्सत कछु वानी । मिलत परस्पर पलक झपानी ।।
लखि परमानद सहचरि पावैं । गुणद मजु पट विहसि उठावैं ।।४१।।
सकल उपाय लगी अति प्यारी । बार बार कर वहि निहारी ।।
जे जे सीत निवारन जतना । दपति सुख पावत लखि रचना ।।४२।।
पूछत सब को भेद जथा जो । सिसिर बतावत हरषि सकल सो ।।
सुनि सुनि दपति मृदु मुसुकाहीं । सहचरि पद परि बलि बलि जाहीं।।४३।।
देखत सभा कुज ढिग आए । पिय प्यारी हग आनद छाए ।।
खुली कनात जान गौ भीतर । सटि लाग्यो थल उभै समी तर ।।४४।।
दपति उतरि सभा पग धारे । चहू ओर सहचरि परिवारे ।।
सभाकुज रचना फिरि देखी । पिय प्यारी मुद लह्यौ विशेषी ।।४५।।
मध्य सिंघासन आय निहारै । समै सखद साजित गुन भारै ।।
बैठे विहसि तहा दोउ प्यारै । सहचरि लखि नै तन मन वारै ।।४६।।

सिसिर सहचरी अति सुख पाई। सेवा सौंज सकल तहं ल्याई।।
इम सब जुक्ति अपूरव देखी। सेवा विधि नाकी सत लेखी।।४७।
सबके रूप प्रथम जस गाए। तथा भांति के आनि दिखाए।।
देखि बोध तिनकौ अति कीन्हो। श्रीपद ओर बहुरि चित दीन्हों।।४८।
करी विनै कर जोरि सीस नै। सिसिर अली जिन लगै रगी कै।
महाराज याकै अति लोभा। आजु सिंगार लखौं दृग सोभा।।४९।।
जुगल विहारी जन सुखदाई। चितये मंद अल्प मुसुकाई।।
लहि संकेत अली हरखानी। मध्या वरन कियो बट आनी ५०।
लागीं करन सिंगार जुगल तन। परमानंद उमाह बढ्यो मन।
रंग लवंग वसन गुन भारे। एकै भांति सजे अंग सारे।।५१।
अंगराग सूखे रचि लाए। नाना वरन उष्ण गुन गाए।।
पुष्पाभरन सूत निर्मित जे। समै सुखद श्रीअंग सजे ते।।५२।
नखसिख सकल सिंगार सुधार्यौ। उत्तरीय पट मेल विचार्यौ।।
श्रीमस्तक सो फेरि उठायो। तथा रंग रूमाल सुहायो।।५३।।
कोर विचित्र छोर छवि जाला। सोइ रजाई रंग रसाला।।
अंग अंग नीकै ढकि दीन्हे। लसै माधुरी छटा नवीने।।५४।।
जा देखे गरमी तन छावै। सिसिर आय तस मुकुर दिखावै।
दर्पन पेखि प्रिया मुसुकाहीं। वेस विलोकि मोद मन माहीं।५५।।
श्रीपीतम दिसि करै सिंगारा। सहचरि आनंद लहैं अपारा।।
रंग लवंग इजार फवी तन। तथा भांति जामा छवि को वन।।५६।।
पुष्पाभरन जथाविधि गाए। नख सिख अनुपम भांति सजाए।।
पाग सीस इकवरनी राजै। नैन लहै सुख जीह विलाजै।५७।
ता विधि को रूमाल सुहावै। तैसो मेल रजाई पावै।।
निरखि निरखि सब अंग सिंगारे। जथा फवै तेहि रीति सवारे।।५८।।
दर्पन अमल उष्ण गुन भारी। सनमुख सहचरि दियो सवारी।।
बार बार पिय ता मधि पेखै। सिसिर सिंगार अधिक सुख लेखै।५९।।
चंद्रकला मृगनैनी सोऊ। चंपकलता सखी ए दोऊ।।
जो पट मध्य छोर दोउ ओरी। थाभे खरी हस्त सुख वोरी।।६०।।
सीत विवस करते पट छूट्यौ। दंपति हसे सखिन सुख लूट्यौ।।
पिय प्यारी छवि हेरि परस्पर। इक टक रहे न नैन पलक पर।।६१।।

आनद सिधु झकोरै आली। छिन छिन याही रस की पाली॥
सीत भराब लखै प्यारी पिय। ऐसो जतन तऊ व्यापत हिय॥६२॥
अग्नि हसती धूप अधिक भरि। सधि समीर विमुद्रित सब करि॥
बाहिर जतन नवीन कराई। सीत विघात उपाय रचाइ।६३॥
सकल ठौर सहचरी प्रवीना। सावधान तन मन ह्वै लीना॥
उपाचार नाना विधि करहीं। सेवा समै सुखद मन धरहीं॥६४॥
विनै करी भोजन हित लाई। जथा सीत हिय की सब जाई॥
मोदक मेवा पाक अनेका। तथा पेय रस रचित विवेका॥६५।
मादक पुष्ट उष्ण गुन भरे। सकल स्वाद मय किये अवारे॥
धूप दीप आचवन कराई। श्रीनासा भूषन उतराई॥६६॥
उभै थार कर सखिन धराये। पिय प्यारी दिसि बिलग सुहाये।
रगदेवि सुदेवी दोऊ। तुगविद्या इदुलेखा सोऊ॥६७॥
ए बैठी भोजन करबावै। हम रस पेय सुरीति पिवावै॥
सकल पदारथ मुद्रित कीन्हे। परम जतन आली कर लीन्हे॥६८॥
थार मध्य जे धरे कटोरे। देत पदारथ थोरे थोरे॥
सखी वेगि कर कवल बनावै। सीत विशेष न परसन पावै।६९॥
दपति मुख रुख लहि नय देवै। परमानद छटा छवि लेवै॥
मादक स्वाद अमित गुन भारे। समै सुखद रस रूप अपारे॥७०॥
मध्य मध्य ते पान करावे। जे अपनौ गुन वेगि जनावै॥
आली सब सागर सुख मगना। प्यारी पीतम लखि दुतिवदना॥७१॥
भोजन रुचि अनुकूल कराए। सिसिर समै दपति मुद पाए॥
स्वल्प नीर आचवन कराई। वसन शुष्क श्रीअग अगुछाई॥७२॥
द्रव्य सुगध उष्ण गुनवारी। ते दीन्ही मुखवास सुधारी।
वरी सुभग समै रुचिकारी। खात खवावत प्रीतम प्यारी।७३॥
पुष्पसूत के अतर भिगाये। देत उष्ण गुन लखत सुहाये॥
दपति लै श्रीनासा लावै। पाय सुगध मोद मन छावै॥७४॥
सहचरि मन दै अग निहारै। मृदि सकल तन पट छवि भारै॥
चहूँ ओर फिरि फिरि अलि देखैं। सीत निवारक जतन विसेखै॥७५॥
सनमुख लै दर्पन दिखरावै। जाहि विलोकि उष्ण गुन छावे॥
उष्ण अतर करपूर विमेलो। जुदी जुदी धरि थार सुढेला॥७६॥

तैसे सुवन मध्य रचि लाए। दीपक जोग कपूर जगाए ॥
तेई पुष्प अजलि भरि सारै। नम्रमई नीराजन वारै ॥७७॥
दडप्रणाम करै जय बोलै। पद परसै परिदच्छिन डोलै ॥
अभिमुख ठाढी ह्वै छबि देखै। जीवन धन्य भाग्य निज लेखै ॥७८॥

वाद्य मिलाय नृत्य प्रगटावे। दीपक राग रूप दरसावै ॥
सिसिर करी सेवा बहु जाती। दपति मुद पायो जेहि भाँती ॥७९॥
श्रीतन मादकता छवि छाई। गोपेश्वर देखत बनि आई ॥
जे जे उष्ण पदारथ भोगा। ते सब सफल सिसिर सजोगा ॥८०॥

ऐसे ता मडल सुख लीन्हौ। सिसिर मनोरथ पूरन कीन्हौ ॥
आली सिसिर सेय सचु पायो। धन्य अहो निज भाग्य मनायो ॥८१॥
आजु सिगार भयो या कुञ्जा। सकल प्रकार बढ्यो मुद पुञ्जा ॥
मादक वस श्रीअग अरसाने। आली दृष्टि दिये मन जाने ॥८२॥

भई अवार समै नगिचानी। राजभोग वेला उनमानी ॥
अली विचार करै उर माहीं। बिनती करै न मन सकुचाहीं ॥८३॥
उष्ण अधिकता गुन प्रगटाने। कण प्रस्वेद वदन झलकाने ॥
अ गरि जभा तन वसन सुहावैं। समै जानि आली सिर नावे ॥८४॥

लै रुमाल मृदु करै बयारी। बिनै सुनावैं चतुर विचारी।
महाराज सोवै कछु वारा। श्रीतन आलस सुखद प्रचारा ॥८५॥
सुनि दपति जिय मै सो आई। चितये जतन जानि सुखदाई ॥
श्रीइच्छा उठिवे की जानी। सखी चहूँ दिसि लगी सयानी ॥८६।

परम जतन मण्डल मधि कीन्हे। दपति अङ्ग परसि सुख लीन्हे ॥
मृदुल पावड़े झुकि पग धारै। सहचरि परम प्रवीन सभारे ॥८७।
बाहिर आय लग्यौ शुभ जाना। शीतल रचना सकल रचाना ॥
मध्य सिघासन चानिक भारी। तहाँ आय बैठे पिय प्यारी ॥८८॥

सहचरि उर आनद भर छायो। बाहिर चल्यो विमान सुहायो ॥
ता मडल की सींवा जेती। रचना सीत तहीं लगि तेती। ८९॥
नाघी अवधि विमान जबै सो। सीत सरूप बिलाय तबै गो ॥
श्रीतनहू आलस नहि लेसा। सहे न जात अ ग सो वेसा ॥९०॥

वेगि उतारि अपर पट धारे। सीतल विविध किये उपचारे ॥
शीतल मन्द सुगध बयारी। भयो प्रचार लगी अति प्यारी ॥९१॥

सीतल पुष्प सुगंध अपारे। श्रीतन ते रचि सकल सवारे ॥
रचना तथा विमान सुहाई। सो दंपति मन अतिसै भाई ॥९२॥
सिसिर सहचरी सकुचत जानी। दंपति बोध कियो मृदु बानी ॥
उष्ण पदारथ को जो भोगा। सुखद हमै सो तव संजोगा ॥९३॥
तेरे सदन अधिक सुख पायो। भोग पदारथ सबै सुहायो ॥
अतिसै कृपा प्रभू की जानी। परीचरन जोरे जुग पानी ॥९४॥
दान मान दै बिदा कराई। सब ही वधू गई हरखाई ॥
होत विनोद अमित पथि माही। निरखि जुगल छवि अलि हरखाहीं॥९५॥
राजभोग वर कुंज सुहाई। ता दिसि जान मंद गति जाई ॥
अष्ट जाम सेवा रसभीनी। छिन छिन सेवै अली प्रवीनी ॥९६॥

दोहा—गोपेश्वर जा भाँति सब, सेवत ह्वै अनुकूल।
एकै प्रभू प्रसन्नता, राखि हिये सुख मूल ॥१॥
षट मंडल की रीति मै, स्वल्प कही कछु गाय।
प्रभु इच्छा जस होत तस, निति नूतन अधिकाय ॥२॥
सेवा सार सँभारि मन, करै प्रभू सुख हेत।
जद्यपि नाथ स्वतन्त्र है, ते निज बस करि लेत ॥३॥
जितनी जन पर है कृपा, जुगल प्रभू मन माहिं।
सेवक मति बिस्तार लघु, तितनी जानत नाहिं ॥४॥
ऐसे प्रभु पद कमल रस, मन मलिंद जे होत।
यह चातै इक बार जौ, ते सुमिरै सौ पोत ॥५॥
श्रीजू मोपै अति कृपा, करी भाग्य मम धन्य।
गोपेश्वर तव रूप लहि, हम सब भए प्रसन्य ॥६॥
बीत्यौ सुखम काल यह, दंपति कथा समेत।
या को कारन एक तुम, प्रगट भयो जिन हेत ॥७॥
अनवधि सेवा सिंधु सुख, को कहि पावै पार।
गोपेश्वर ते धन्य मन, जे लव करत संभार ॥८॥
प्रश्न तुम्हारे सुखद अति, मंगल मय रसखानि।
कछू अंग उत्तर दियो, जथा पर्‍यो मोहि जानि ॥९॥
बीज परै ज्यौं सुथल मैं, बाढै एक अनंत।
त्यौं उत्तर जस हिय लहै, तथा रूप दरसंत ॥१०॥

नेम प्रेम धृति नीति मति, श्रद्धा प्रीति प्रतीति।
लागि चाह अनुराग दृढ, तव उर लसै विनीति ॥११॥
सात दात गुण विजयता, वर विज्ञान विचार।
भक्ति विरति श्री कृपा फल, सो तव तन शुभ सार ॥१२॥
ऐसे तन सजोग ते, जस पावै सब कोय।
आनद वृद्धि अपार हित, छिन छिन सौ गुन होय ॥१३॥
गाय गाय सब थकि रहैं लह्यौं न काहूँ अंत।
ऐसी महिमा नित नई, जिनकी सदा अनत ॥१४॥
तिन श्रीप्रभु की जो कृपा, फल ह्वै प्रगटी आय।
तात तुम्हारौ रूप जो, का विधि जान्यो जाय ॥१५॥
यह सुख सब श्रीकृपा ते, मोहि भयो प्रिय प्रान।
जुगल विहारी सेय पद, पाए तुम फल दान ॥१६॥
मम हिय आरति जो भई, जीव लहैं विश्राम।
जन्म तुम्हारो हेतु इहि, जानौ पूरन काम ॥१७॥
यातें प्रीति अपार अति, तुम पर बाढ़त तात।
अब जो भाखौ सो कहैं, आनद प्रद सुभ गात ॥१८॥
श्रीआज्ञा बस चराचर, श्री आज्ञा सब ईस।
मोहि जथा आज्ञा भई, तथा करी धरि सीस ॥१९॥
सो करिवे अब जतन करि, अपनो इत नौ धर्म।
प्रभु अनुशासन सफल सुख, जीव लहैं सब शर्म ॥२०॥
श्रीमुख आज्ञा जो भई, भाखी सकल सुनाय।
श्रीललिता दृग दया भरि, चितई मृदु मुसुकाय ॥२१॥
गोपेश्वर के अंग सब, सहित सनेह निहारि।
वत्सलता वस उमग हिय, पूरित लोचन वारि ॥२२॥
नित्य विहारी जुगल उर, जो अति करुणा वास।
श्रीललिता मूरति सोई, अनुपम प्रगट प्रकास ॥२३॥
श्रीगुरु करुणा रूप लखि, गोपेश्वर मन मोर।
प्रेम नीर पूरन जलद, निरखि लह्यौ मुद ओर ॥२४॥
अंग अंग विकसित अधिक आनद उर न समात।
गद गद स्वर निकसत उमग, वरन सिथल रस बात ॥२५॥

❁ चौपाई ❁

गोपेश्वर धरनी धरि माथा। मानि भाग्य निज अधिक सनाथा ॥
बार बार उठि करै प्रणामा। परै दंड इव कहि मुख नामा ॥१॥
अहो नाथ जन आरतबंधो। चरन सरन श्रीकरुणासिंधो ॥
ऐसे करत कहत कर जोरै। सर्वस श्रीपद रज बल मोरै ॥२॥
श्रीगुरु पद रज मस्तक धरिहौं। छिन छिन उर अनवधि सुख भरिहौं ॥
या विधि जब आये अति नेरै। पाहि पाहि बानी मुख टेरै ॥३॥
श्रीललिता करुणा तन सागर। सहसा उठीं नेह उमग्या भर ॥
वेगि उठाय हियें निज लाए। मनौ तपस्या चिर फल पाए ॥४॥
बड़ी बार लौं लाय रही उर। प्रेम बिवस उभ ओर न मुख सुर ॥
ता छिन सब आली ढिग आईं। परमानंद समुद्र समाईं ॥५॥
श्रीललिता बैठी लै गोदी। सबके दृग जल छाती ओदी ॥
निज कर गोपेश्वर तन परस्यौ। वत्सलता रूपक सब दरस्यौ ॥६॥
नित्यविहारी जुगल नाम वर। अवधि श्रेय सब साधन फल पर ॥
दच्छ श्रवन सो करि उपदेसा। किये अलंकृत निज तन वेसा ॥७॥
धर्म नीति सेवा विधि जेती। सकल रहस्य गुप्त अति नेती ॥
पात्र पाय जग को हित जानी। भेद समस्त कहे सुखदानी ॥८॥
गोपेश्वर मम प्राण सुनौ अस। सेवक हिय अभिलाष होय जस ॥
सो सब प्रभु कै अंगीकारा। जनहित करै सकल व्यवहारा ॥९॥
निजानंद वपु जुगलविहारी। सेवक हित लीला विस्तारी ॥
दास हियें जैसी रुचि देखै। कोटि भाँति सो निज प्रिय लेखै ॥१०॥
भक्ति रूप सेवा कहि गावै। भाव समेत अवधि फल पावै ॥
पंच भाव जे कहे बखानी। प्रभु पद प्रापक अवधि प्रमाना ॥११॥
कछू अंग शृंगार बखान्यौ। यह अति कठिन देश तुम जान्यौ ॥
जाके अधिक प्रिया पद प्रीती। सो या रस की पावै रीती ॥१२॥
सहचरि अंग धरै नित सेवै। जुगल माधुरी को सुख लेवै ॥
जो ऐसे अधिकारहि पावै। परम निकुंज धाम सो आवै ॥१३॥
वृंदावन थल सहचरि वासा। आन रूप नहि लहै निवासा ॥
जड चेतन जेते इत जानौ। ते सब सहचरि तन परिमानौ ॥१४॥

जुगलविहारी प्रभु अस इच्छा । सर्वोपरि धारौ सुत सिच्छा ॥
और बात केहि लेखे माहीं । श्यामहु निज तन लखि सकुचाहीं ॥१५॥
इहां निरंतर विहरै प्यारी प्रीतमहू तैसी गति धारी ॥
यह सिद्धांत हिये गुनि राखौ । पूरन अधिकारी लखि भाखौ ॥१६।
अपर भाव जे च्यारि बखाने । प्रभु पद प्रापक सतु प्रमाने ॥
सांत सख्य वात्सल्य सुदास्यम् । नाथ हृदै नित सुखद विलासम् ॥१७।
जाको जामैं चित्त लुभावै । सो ता विधि तह मन परिचावै ॥
प्रभु पद प्रीति सकल सुख मूला । ता बिनु अपर सदा प्रद सूला ॥१८॥
जा ना विधि हरि पद मन लाये । मचु पावै ससृति बिसराये ॥
सकल भाव ए हरि पद दाई । प्रभु ते अधिक अपर का भाई ॥१९॥
सत्राराध्य बहुत नहिं अहहीं । कहि कहि सबै अवधि अस लहहीं ॥
जन हिय भाव जथा प्रभु देखै । तथा होय सुख लहै बिसखै ॥२०॥
सेवक रुचि अनुकूल सदा हरि । प्रगट होंहि सब दिन तस तन धा ।
यामैं लहियैं बहुत प्रमाना । बूंद रूप सागर पहिचाना ॥२१॥
त्यों भाव शृंगार जथामति । अपर च्यारि की जतन सुनौ जति ।
ए तीनो मंडल शृंगारा । अपर भाव नहिं लहैं प्रचारा ।२२॥
ह्याते निकसै बाहिर जमुना । पैले तीर सकल दुख समना ॥
बसै चतुर मंडल अति भारी । संपति शोभा छटा अपारी ॥२३॥
एक एक मण्डल कौ रूपा । लहै न अन्तकाल कहि जूपा ॥
जमुना निकट लसै जो मंडल । बालकेलि प्रभु करैं अखंडल ॥२४॥
सख्य ठाम ताके जो आगे । सखा संग क्रीड़ा हरि पागै ॥
दास वसै जा ठौर अमाना । सो मंडल आगे परिमाना ॥२५॥
सेव्य प्रभू सेवक जन दासा । जथा भाव तस लहै विलासा ॥
प्रभु सुखदाई ए सब जानौ । उभै परस्पर भर मुद मानौ ॥२६॥
मुख्य धर्म जीवन कर एहा । सब तजि प्रभु पद बाधै नेहा ॥
हरिपद प्रेम अवधि संसारा । ता विनु मिटै न कष्ट अपारा ॥२७।
भरत खंड जब नर तन होई । अवसर इन बातन कर सोई ॥
दृढ समत सबकी अस जानौ । हरि श्रुति संत वचन परिमानो ॥२८।
विषय भोग भुगतै सब ठांहीं । यह संजोग बनत कहु नाहीं ॥
भरत खण्ड शुचि मनुज शरीरा । आयो हस्त अमोलक हीरा ॥२९॥

❀ चौपाई ❀

गोपेश्वर धरनी धरि माथा। मानि भाग्य निज अधिक सनाथा॥
बार बार उठि करै प्रणामा। परै दंड इव कहि मुख नामा॥१॥
अहो नाथ जन आरतबधो। चरन सरन श्रीकरुणासिंधो॥
ऐसे करत कहत कर जोरै। सर्वस श्रीपद रज बल मोरैं॥२॥
श्रीगुरु पद रज मस्तक धरिहौं। छिन छिन उर अनवधि सुख भरिहौं॥
या विधि जब आये अति नेरे। पाहि पाहि वानी मुख टेरै॥३॥
श्रीललिता करुणा तन सागर। सहसा उठीं नेह उमग्या भर॥
वेगि उठाय हियें निज लाए। मनौ तपस्या चिर फल पाए॥४॥
बड़ी बार लौं लाय रही उर। प्रेम विवस उभ ओर न मुख सुर॥
ता छिन सब आली ढिग आईं। परमानंद समुद्र समाईं॥५॥
श्रीललिता बैठी लै गोदी। सबके दृग जल छाती ओदी॥
निज कर गोपेश्वर तन परस्यौ। वत्सलता रूपक सब दरस्यौ॥६॥
नित्यविहारी जुगल नाम वर। अवधि श्रेय सब साधन फल पर॥
दच्छ श्रवन सो करि उपदेसा। किये अलंकृत निज तन वेसा॥७॥
धर्म नीति सेवा विधि जेती। सकल रहस्य गुप्त अति नेती॥
पात्र पाय जग को हित जानी। भेद समस्त कहे सुखदानी॥८॥
गोपेश्वर मम प्राण सुनौ अस। सेवक हिय अभिलाष होय जस॥
सो सब प्रभु कै अंगीकारा। जनहित करै सकल व्यवहारा॥९॥
निजानंद वपु जुगलविहारी। सेवक हित लीला विस्तारी॥
दास हियें जैसी रुचि देखै। कोटि भाँति सो निज प्रिय लेखै॥१०॥
भक्ति रूप सेवा कहि गावै। भाव समेत अवधि फल पावै॥
पंच भाव जे कहे बखानी। प्रभु पद प्रापक अवधि प्रमानी॥११॥
कछू अंग शृंगार बखान्यौ। यह अति कठिन देश तुम जान्यौ॥
जाके अधिक प्रिया पद प्रीती। सो या रस की पावै रीती॥१२॥
सहचरि अंग धरैं नित सेवै। जुगल माधुरी कौ सुख लेवै॥
जो ऐसे अधिकारहि पावै। परम निकुंज धाम सो आवै॥१३॥
वृंदावन थल सहचरि वासा। आन रूप नहि लहै निवासा॥
जड चेतन जेते इत जानौ। ते सब सहचरि तन परिमानौ॥१४॥

जुगलविहारी प्रभु अस इच्छा। सर्वोपरि धारौ सुत सिच्छा॥
और बात केहि लेखे माहीं। श्यामहु निज तन लखि सकुचाहीं॥१५॥
इहां निरन्तर विहरै प्यारी। प्रीतमहू तैसी गति धारी॥
यह सिद्धांत हिये गुनि राखौ। पूरन अधिकारी लखि भाखौ॥१६॥
अपर भाव जे न्यारि बखाने। प्रभु पद प्रापक सतु प्रमाने॥
सान्त सख्य वात्सल्य सुदासम्। नाथ हृदै नित सुखद विलासम्॥१७॥
जाका जामै चित्त लुभावै। सो ता विधि तह मन परिचावै॥
प्रभु पद प्रीति सकल सुख मूला। ता बिनु अपर सदा प्रद सूला॥१८॥
जा ना विधि हरि पद मन लाये। मचु पावै संसृति बिसराये॥
सकल भाव ए हरि पद दाई। प्रभु ते अधिक अपर का भाई॥१९॥
सर्वाराध्य बहुत नहि अहहीं। कहि कहि सबै अवधि अस लहहीं॥
जन हिय भाव जथा प्रभु देखै। तथा होय सुख लहै विसेखै॥२०॥
सेवक रुचि अनुकूल सदा हरि। प्रगट होंहि सब दिन तस तन धरि।
यामै लहियै बहुत प्रमाना। बूंद रूप सागर पहिचाना॥२१॥
कह्यौ भाव शृंगार जथामति। अपर न्यारि की जतन सुनौ जति।
ए तीनो मंडल शृंगारा। अपर भाव नहि लहै प्रचारा॥२२॥
ह्याते निकसै बाहिर जमुना। पैले तीर सकल दुख समना॥
बसै चतुर मंडल अति भारी। संपति शोभा छटा अपारी॥२३॥
एक एक मण्डल कौ रूपा। लहै न अन्तकाल कहि जूपा॥
जमुना निकट लसै जो मंडल। बालकेलि प्रभु करै अखंडल॥२४॥
सख्य ठाम ताके जो आगे। सखा संग क्रीड़ा हरि पागै॥
दास बसै जा ठौर अमाना। सो मंडल आगे परिमाना॥२५॥
सेव्य प्रभू सेवक जन दासा। जथा भाव तस लहै विलासा॥
प्रभु सुखदाई ए सब जानौ। उभै परस्पर भर मुद मानौ॥२६॥
मुख्य धर्म जीवन कर एहा। सब तजि प्रभु पद बांधै नेहा॥
हरिपद प्रेम अवधि संसारा। ता बिनु मिटै न कष्ट अपारा॥२७॥
भरत खंड जब नर तन होई। अवसर इन बातन कर सोई॥
दृढ समत सबकी अस जानौ। हरि श्रुति संत वचन परिमानौ॥२८॥
विषय भोग भुगतै सब ठाहीं। यह संजोग बनत कहु नाहीं॥
भरत खण्ड शुचि मनुज शरीरा। आयो हस्त अमोलक हीरा॥२९॥

जगत विकार श्वान सम देखी । सोई पवारत मद विसेखी ॥
ऐसो भ्रम दृढतर उर छायो । असहु वस्तु विचारन आयो ॥३०॥
माटी ईंट अश्मके लायक । तिन्है करत चितामणि घायक ॥
नर तन बिना अपर जे देहा । विषय भोग कारज तिन पहा ॥३१॥
असुचि विषै तैसे तन तेऊ । तिन्है दोष नहि लावत केऊ ॥
नरहरि नातौ इतनौ भारी । लखियै ताको रूप विचारी ॥३२॥

हरि समान जो पदवी पावै । सो का ऐसी ठौर लगावै ।
ताते सकल दोष भाजन यह । हरि श्रुति सत सदा टेरत कह ॥३३॥
इतनी बड़ी अनथ जो करई । कहो निरय सो काहे न परई ॥
ऐसी दशा देखि दुख लागे । हा धिक मूढन प्रभु पद पागे ॥३४॥

हम सम सुखी अपर नहि अहई । यह चिंता नितप्रति चित रहई ॥
सो उपकार तात तुम करहू । श्रीआज्ञा निज मस्तक धरहू ॥३५॥
दया विवश मैं विनती कीन्ही । श्रीजू मोहि बडाई दीन्ही ॥
होहु जाय भवसागर सेतू । जन्म तुम्हार तात एहि हेतू ॥३६॥
धर्म हानि जबहीं प्रभु देखै । सीदै साधु असुर बल पेखै ॥
अपनी कला तबै प्रगटावै । निज पथ थापि कुपथ विघटावे ॥३७॥

जीव उबार करै प्रभु आपै । हरि बिनु मेटि सकै को तापै ॥
जापै करै कृपा अनपारी । ताहि देहिं जस जग हितकारी ॥३८॥
यातें प्रभू तुम्है जस दीन्हौ । मोपै परम अनुग्रह कीन्हौ ॥
प्रभू कृपा सब कारज साधक । सकल अमगल मेटि विबाधक ।३९॥
मन मै ससै कछू न आनौ । श्रीइच्छा सर्वोपरि जानौ ॥
भक्ति भाव उपदेसौ जाई । भरत खड आरत समुदाई ॥४०॥

मन रुचि देखि जथा अधिकारा । भाखौ तासौ तथा प्रकारा ॥
जीव दुख नाशन सब धर्मा । अपर न जानौ शुभतर कर्मा ॥४१॥
अति प्रसन्नता प्रभु की जानौ । मेरे वचन सत्य करि मानौ ॥
जो जो मन इच्छा तुम करिहौ । श्रीजू कृपा सर्व सुख भरिहौ ॥४२॥
जे तुमते लहिहैं उपदेशा । ते बासी ह्वैहै एहि देशा ॥
हस कृष्ण समत सनकादिक । जानत जिन्है सकल ब्रह्मादिक ।४३॥
तिनतै प्रीति अधिक्तर कीन्ह्यो । विगत सक सुख लीन्ह्यौ दीन्ह्यो ।
सुनौ हेतु यामै है जोई । परमानद सिधु अति सोई ॥४४॥

रगदेवि ए बैठी जे हैं। सम्प्रदाय वर थापक ते हैं॥
निंबारक ऐसो लहि नामा। कीन्ही कला प्रगट गुन धामा॥४०॥
शनकादिक समत मन धारी। तिनकी कीरति करी अपारी॥
अष्ट एक तन हम सब जानौ। शनकादिक निज समत मानौ॥४६॥
दोऊ मिलि जीवन सुख दीजै। धर्म सनातन करि जस लीजै॥
अपर सुनौ सुखदायक बाता। परमानद भरौ मन ताता॥४७॥
श्रीवृषभान नद निधि दोऊ। ब्रजमडल प्रगटैगे सोऊ॥
नित्यविहारी जुगल स्वरूपा। तहाँ पधारेगे सुख जूपा॥४८॥
हम सब सहचरि वृन्द अपारी। तहा प्रगट करिहै तन सारी॥
जे जे इतै पदारथ देखौ। ह्वै हैं प्रगट तहा ते लेखौ॥४९॥
तहा आय मिलिहौ प्रिय प्राना। या कारज तुम्ह हीं प्रस्थाना॥
जे तुम्हरौ मत धारन करिहै। यथाभाव ते मिलि सुख भरिहै॥५०॥
जाके हियें परस यह होई। प्रभु अनुग्रह भाजन सोई।
जुगलविहारी प्रभु करुणामय। ते हिय धरो नाम रसना लय॥५१॥
नाम रूप महिमा अनथाहैं। गावत सबै अत नहि लाहैं॥
जो यह रीति कही हम गाई। श्रीइच्छा अनुशासन पाई॥५२॥
जीवन प्रान परमधन अपनौ। ऐसौ जानि हियै गुनि जपनो॥
अपर च्यारि ते मडल गाये। जाते पथि मिलिहै सुख छाए॥५३॥
सग तुम्हारे सहचरि जे हैं। जो पूछौगे ते सब कै हैं॥
ए मम प्राण सुनौ अस बानी। श्रीउठिवे बिरिया नियरानी॥५४॥
हमै न अब कहिवे अवकासा। समै जानि उपजो मन त्रासा॥
कहौ वृत्ति मन की अब कैसी। ताकी जतन कीजियो तैसी॥५५॥
सेवा समुझि रूप उर आयो। उपाराम श्रीललिता पायो॥
वचन तरग थभी सुख पाई। रस वरषा करि सबै सिराई॥५६॥
जै जै धन्य धन्य धुनि पूरी। कुसुमावलि वरषत सुख भूरी॥
गोपेश्वर उठि सनमुख ठाढे। कर जोरैं आनद उर बाढे॥५७॥
बाले वचन प्रेम रस भारे। सुनत श्रवन सब होहि सुखारे॥
गुर मूरति निज हित हिय धारी। भक्ति विनै जुत गिरा प्रचारी॥५८॥
दोहा—कृपासिंधु गुरु रूप श्री, शरनागत जन पाल।
दीन उधारन रीति उर, निसि दिन बसत विसाल॥१॥

जगत विकार श्वान सम देखी। सोई पवारत मद विसेखी॥
ऐसो भ्रम दृढतर उर छायो। असहु वस्तु विचारन आयो॥३०॥
माटी ईंट अश्मके लायक। तिन्है करत चितामणि बायक॥
नर तन बिना अपर जे देहा। विषय भोग कारज तिन एहा॥३१॥
असुचि विषै तैसे तन तेऊ। तिन्है दोष नहि लावत केऊ॥
नरहरि नातौ इतनौ भारी। लखियै ताको रूप विचारी॥३२॥
हरि समान जो पदवी पावै। सो का ऐसी ठौर लगावै।
तातै सकल दोष भाजन यह। हरि श्रुति सत सदा टेरत कह॥३३॥
इतनी बड़ी अनय जो करई। कहो निरय सो काहे न परई॥
ऐसी दशा देखि दुख लागे। हा धिक मूढन प्रभु पद पागै॥३४॥
हम सम सुखी अपर नहि अहई। यह चिंता नितप्रति चित रहई॥
सो उपकार तात तुम करहू। श्रीआज्ञा निज मस्तक धरहू॥३५॥
दया विवश मैं विनती कीन्ही। श्रीजू मोहि बडाई दीन्ही॥
होहु जाय भवसागर सेतू। जन्म तुम्हार तात एहि हेतू॥३६॥
धर्म हानि जबहीं प्रभु देखै। सीदैं साधु असुर बल पेखै॥
अपनी कला तबै प्रगटावै। निज पथ थापि कुपथ विघटावै॥३७॥
जीव उबार करै प्रभु आपै। हरि बिनु मेटि सकै को तापै॥
जापै करै कृपा अनपारी। ताहि देहिं जस जग हितकारी॥३८॥
यातें प्रभू तुम्हे जस दीन्हौ। मोपै परम अनुग्रह कीन्हौ॥
प्रभू कृपा सब कारज साधक। सकल अमगल मेटि विबाधक॥३९॥
मन मै ससै कछू न आनौ। श्रीइच्छा सर्वोपरि जानौ॥
भक्ति भाव उपदेसौ जाई। भरत खड आरत समुदाई॥४०॥
मन रुचि देखि जथा अधिकारा। भाखौ तासौं तथा प्रकारा॥
जीव दुःख नाशन सब धर्मा। अपर न जानौ शुभतर कर्मा॥४१॥
अति प्रसन्नता प्रभु की जानौ। मेरे वचन सत्य करि मानौ॥
जो जो मन इच्छा तुम करिहौ। श्रीजू कृपा सर्व सुख भरिहौ॥४२॥
जे तुमते लहिहैं उपदेशा। ते बासी ह्वैहैं एहि देशा॥
हस कृष्ण समत सनकादिक। जानत जिन्है सकल ब्रह्मादिक॥४३॥
तिनतै प्रीति अधिक्तर कीन्ह्यो। विगत सक सुख लीन्ह्यौ दीन्ह्यो।
सुनौ हेतु यामै है जोई। परमानद सिधु अति सोई॥४४॥

रंगदेवि ए बैठी जे हैं। सम्प्रदाय वर थापक ते हैं॥
निंबारक ऐसो लहि नामा। कीन्ही कला प्रगट गुन धामा॥४५॥
शनकादिक समत मन धारी। तिनकी कीरति करी अपारी॥
अष्ट एक तन हम सब जानौ। शनकादिक निज समत मानौ॥४६॥
दोऊ मिलि जीवन सुख दीजै। धर्म सनातन करि जस लीजै॥
अपरं सुनौ सुखदायक बाता। परमानद भरौ मन ताता॥४७॥
श्रीवृषभान नद निधि दोऊ। ब्रजमंडल प्रगटैगे सोऊ॥
नित्यविहारी जुगल स्वरूपा। तहाँ पधारेंगे सुख जूपा।४८॥
हम सब सहचरि वृन्द अपारी। तहा प्रगट करिहैं तन सारी॥
जे जे इतै पदारथ देखौं। ह्वै हैं प्रगट तहा ते लेखौ॥४९॥
तहा आय मिलिहौ प्रिय प्राना। या कारज तुम्ह हीं प्रस्थाना॥
जे तुम्हरौ मत धारन करिहैं। यथाभाव ते मिलि सुख भरिहैं॥५०॥
जाके हियें परस यह होई। प्रभू अनुग्रह भाजन सोई।
जुगलविहारी प्रभु करुणामय। ते हिय धरो नाम रसना लय॥५१॥
नाम रूप महिमा अनथाहै। गावत सबै अंत नहि लाहै॥
जो यह रीति कही हम गाई। श्रीइच्छा अनुशासन पाई॥५२॥
जीवन प्रान परमधन अपनौ। ऐसौ जानि हियै गुनि जपनो॥
अपर च्यारि ते मंडल गाये। जाते पथि मिलिहैं सुख छाए॥५३॥
संग तुम्हारे सहचरि जे है। जो पूछौगे ते सब कै हैं॥
ए मम प्राण सुनौ अस बानी। श्रीउठिवे बिरिया नियरानी॥५४॥
हमै न अब कहिवे अवकासा। समै जानि उपजो मन त्रासा॥
कहौ वृत्ति मन की अब कैसी। ताकी जतन कीजियै तैसी॥५५॥
सेवा समुझि रूप उर आयो। उपाराम श्रीललिता पायो॥
वचन तरग थमी सुख पाई। रस वरषा करि सबै सिराई॥५६॥
जै जै धन्य धन्य धुनि पूरी। कुसुमावलि वरषत सुख भूरी॥
गोपेश्वर उठि सनमुख ठाढे। कर जोरैं आनद उर बाढे॥५७॥
बाले वचन प्रेम रस भारे। सुनत श्रवन सब होहि सुखारे॥
गुर मूरति निज हित हिय धारी। भक्ति विनै जुत गिरा प्रचारी॥५८॥
दोहा—कृपासिंधु गुरु रूप श्री, शरनागत जन पाल।
दीन उधारन रीति उर, निसि दिन बसत विसाल॥१॥

जगत विकार श्वान सम देखी । सोई पवारत मद विसेखी ॥
ऐसो भ्रम दृढतर उर छायो । असहु वस्तु विचारन आयो ॥३०॥
माटी ईट अश्मके लायक । तिन्है करत चिंतामणि घायक ॥
नर तन बिना अपर जे देहा । विषय भोग कारज तिन एहा ॥३१॥
असुचि विषै तैसे तन तेऊ । तिन्है दोष नहि लावत केऊ ॥
नरहरि नातौ इतनौ भारी । लखियै ताको रूप विचारी ॥३२॥
हरि समान जो पदवी पावै । सो का ऐसी ठौर लगावै ।
ताते सकल दोष भाजन यह । हरि श्रुति सत सदा टेरत कह ॥३३॥
इतनी बड़ी अनथ जो करई । कहो निरय सो काहे न परई ॥
ऐसी दशा देखि दुख लागे । हा धिक मूढन प्रभु पद पागै ॥३४॥
हम सम सुखी अपर नहि अहई । यह चिंता नितप्रति चित रहई ॥
सो उपकार तात तुम करहू । श्रीआज्ञा निज मस्तक धरहू ॥३५॥
दया विवश मै विनती कीन्ही । श्रीजू मोहि बडाई दीन्ही ॥
होहु जाय भवसागर सेतू । जन्म तुम्हार तात एहि हेतू ॥३६॥
धर्म हानि जबहीं प्रभु देखै । सीदै साधु असुर बल पेखै ॥
अपनी कला तबै प्रगटावै । निज पथ थापि कुपथ विघटावे ॥३७॥
जीव उवार करै प्रभु आपै । हरि बिनु मेटि सकै को तापै ॥
जापै करै कृपा अनपारी । ताहि देहिं जस जग हितकारी ॥३८॥
यातें प्रभू तुम्है जस दीन्हौ । मोपै परम अनुग्रह कीन्हौ ॥
प्रभू कृपा सब कारज साधक । सकल अमगल मेटि विबाधक ।३९॥
मन मै ससै कछू न आनौ । श्रीइच्छा सर्वोपरि जानौ ॥
भक्ति भाव उपदेसौ जाई । भरत खड आरत समुदाई ॥४०॥
मन रुचि देखि जथा अधिकारा । भाखौ तासौ तथा प्रकारा ॥
जीव दुख नाशन सब धर्मा । अपर न जानौ शुभतर कर्मा ॥४१॥
अति प्रसन्नता प्रभु की जानौ । मेरे वचन सत्य करि मानौ ॥
जो जो मन इच्छा तुम करिहौ । श्रीजू कृपा सर्व सुख भरिहौ ॥४२॥
जे तुमते लहिहैं उपदेशा । ते बासी ह्वैहै एहि देशा ॥
हस कृष्ण समत सनकादिक । जानत जिन्है सकल ब्रह्मादिक ॥४३॥
तिनवै प्रीति अधिक्तर कीन्ह्यो । विगत सक सुख लीन्ह्यौ दीन्ह्यो ।
सुनौ हेतु यामै है जोई । परमानद सिधु अति सोई ॥४४॥

रंगदेवि ए बैठी जे हैं। सम्प्रदाय वर थापक ते हैं॥
निंबारक ऐसो लहि नामा। कीन्ही कला प्रगट गुन धामा॥४५॥
शनकादिक समत मन धारी। तिनकी कीरति करी अपारी॥
अष्ट एक तन हम सब जानौ। शनकादिक निज समत मानौ॥४६॥
दोऊ मिलि जीवन सुख दीजै। धर्म सनातन करि जस लीजै॥
अपरं सुनौ सुखदायक बाता। परमानंद भरौ मन ताता॥४७॥
श्रीवृषभान नंद निधि दोऊ। ब्रजमंडल प्रगटैंगे सोऊ॥
नित्यविहारी जुगल स्वरूपा। तहाँ पधारेंगे सुख जूपा॥४८॥
हम सब सहचरि वृन्द अपारी। तहा प्रगट करिहैं तन सारी॥
जे जे इतै पदारथ देखौ। ह्वै हैं प्रगट तहा ते लेखौ॥४९॥
तहा आय मिलिहौ प्रिय प्राना। या कारज तुम्ह हीं प्रस्थाना॥
जे तुम्हरौ मत धारन करिहैं। यथाभाव ते मिलि सुख भरिहैं॥५०॥
जाके हियें परस यह होई। प्रभू अनुग्रह भाजन सोई॥
जुगलविहारी प्रभु करुणामय। ते हिय धरो नाम रसना लय॥५१॥
नाम रूप महिमा अनथाहै। गावत सबै अंत नहि लाहै॥
जो यह रीति कही हम गाई। श्रीइच्छा अनुशासन पाई॥५२॥
जीवन प्रान परमधन अपनौ। ऐसौ जानि हियै गुनि जपनो॥
अपर च्यारि ते मंडल गाये। जाते पथि मिलिहैं सुख छाए॥५३॥
संग तुम्हारे सहचरि जे है। जो पूछौगे ते सब कै हैं॥
ए मम प्राण सुनौ अस बानी। श्रीउठिवे बिरिया नियरानी॥५४॥
हमै न अब कहिवे अवकासा। समै जानि उपजो मन त्रासा॥
कहौ वृत्ति मन की अब कैसी। ताकी जतन कीजियो तैसी॥५५॥
सेवा समुझि रूप उर आयो। उपाराम श्रीललिता पायो॥
वचन तरंग थभी सुख पाई। रस वरषा करि सबै सिराई॥५६॥
जै जै धन्य धन्य धुनि पूरी। कुसुमावलि वरषत सुख भूरी॥
गोपेश्वर उठि सनमुख ठाढे। कर जोरैं आनंद उर बाढे॥५७॥
बोले वचन प्रेम रस भारे। सुनत श्रवन सब होहि सुखारे॥
गुरु मूरति निज हित हिय धारी। भक्ति विनै जुत गिरा प्रचारी॥५८॥

दोहा—कृपासिंधु गुरु रूप श्री, शरनागत जन पाल।
दीन उधारन रीति उर, निसि दिन बसत विसाल॥१॥

नाथ रावरी कृपा ते, पूरे मम सब काज।
इढ दुर्लभ जो वस्तु अति, दई भरी सुख साज ॥२॥
अब करुणा ऐसी करौ, छिन छिन रुचि अधिकाय।
जतन सिद्धि याकी सबै केवल आप सहाय ॥३॥
धर्म दास को एक निति, गुरु आज्ञा परिमान।
ताहि किये सुख जस सदा, इष्ट लाभ जग मान ॥४॥
श्रीमुख जो आज्ञा भई, सो मम मस्तक मौर।
जहा राखिये रहब तह जीवन आपन और ॥५॥

एक रही अभिलाष मन, भाग्य अल्प लखि लाज।
धावत मन ता ओर अति, मो गति श्री महाराज ॥६॥
जुगल विहारी रूप जस तस देखौ भरि नैन।
चरन कमल रज रावरी, कहा न दीन्ह्यौ चैन ॥७॥
गोपेश्वर के वचन सुनि, श्रीललिता सुनि पाय।
हरखि उमगि अति नेह भरि, बोलीं मृदु मुसुकाय ॥८॥
श्रीआज्ञा ऐसी नही, इनके मन अति चाह।
चितै सवन की ओर हास, आली कहा निवाह ॥९॥

ता छिन सुनि सब मौन गहि, लागी करन विचार।
अति करुणा जन पर सदा, लह्यौ एक उपचार ॥१०॥
रग उदधि जिन को हियो, रगदेवि रसखानि।
जनपालक निति रीति मन, सदा सिद्ध असि बानि ॥११॥
निज पुरुषारथ प्रगट करि, भरि करुणा रस बैन।
कही अहो ललिते सुनौ, जतन किये सुख ऐन। १२॥
यह उपाय मो मन भई, चलिवे हैं आठाम।
जालरध्र ह्वै देखिये, करि लैहैं निज काम ॥१३॥

सोरठा—सुनि पाया अति हर्ष, सकल सभा गद गद भई।
जानि दया उतकर्ष, सब सहचरि तन मन नई ॥१॥
बहुरि कही सुभ बात, विदा करौ अब ही भल।
बढि जैहैं मन गात, सेवा लखि ता थल चले ॥२॥
सुनी गिरा सुख रूप, श्रीललिता सो मन धरी।
आनद लह्यो अनूप, जतन बिदा ता छिन करी ॥३॥

❖ चौपाई ❖

गोपेश्वर जुग रूप सुहाये। वाम दच्छ पूरव जे गाये॥
इतहैं दोऊ सहचरि वेषा। नारि पुरुष ह्वैहै त्यहि देसा॥१॥
नैन सैन करि निकट बुलाए। दै आदर सनमुख बैठाए॥
निज तन भूषन वस्त्र मगाए। सुवन माल तिन अंग सजाए॥२॥
धर्म नीति गुण साधु जहा लौ। भक्ति भाव वर अंग तहा लौ॥
प्रभु पद प्रीति रीति सुखदाई। बार बार कहि हृदै दृढाई॥३॥
नित्य अनित्य जगत् हरि रूपा। कह्यो ज्ञान वैराग्य अनूपा॥
च्यारयौ जुग की रीति सुनाई। दिन दिन धर्म छीनता गाई॥४॥
हरि हरिजन करुणानिधि पूरे। सब जुग जीव कर दुख दूरे॥
कलि के जीव कहे अघखानो। अल्प सत्व क्रोधी अभिमानी॥५॥
जो अधर्म तिहि धम बखानै। निज मन रुचि सोई सुभ जानै॥
देह असुचि केवल मलग्रामा। मानै ताहि सकल सुखधामा॥६॥
नाते नेह जतन जग नाना। देह हेतु सब करैं प्रमाना॥
सेवै ताहि इष्ट की नाही। ठानि विवाद अपर कछु नाही॥७॥
पश्चाचार जथारुचि धर्मा। सब ममान सत कर्म अकर्मा॥
लोकसिद्ध परलोक न मानै। नास्तिक भग नसावैं आनै॥८॥
प्रभू विमुख गति कबहु न पावै। ते सठ हठि नर्कालय जावै॥
तहाँ क्लेश जे भुगतै भाई। तिनको अत लहै को गाइ॥९॥
ज्यौ त्यौ कर्म अवधि जौ आवै। गर्भवास नाना दुख पावै॥
पुनि धरि देह आयु लह जेती। तथा बितीत करै सठ तेती॥१०॥
बहुरि नर्क पुनि गर्भ निवासा। बधे फिरै दुर आसा पासा॥
भरतखड जस कर्म कमावै। तिनही के फल सब थल पावै॥११॥
ऐसी दसा देखि दुख लहियै। तातै ताल बार बहु कहियै॥
नाम रूप श्री जुगलविहारी। लव निमेष हिय धरै सभारी॥१२॥
तौ भवसागर लहै उबारा। होहि सुखी दुख मिटै अपारा॥
ताकी जतन प्रभू तुम कीन्हे। सुख जस हमैं लोक सब दीन्हे॥१३॥
अब सुत वास लहो तह जाई। जीव उधार करौ मन लाई॥
यातें अपर नहीं सतकर्मा। प्रभु आज्ञा पालन निज धर्मा॥१४॥

जिहि ब्रह्माड चतुर्मुख है विधि । प्रभु अनुशासन सीस धरै निधि ॥
सप्त द्वीप विभाग धरा जह । सागर सप्त सप्त विधि के तह ॥१५॥
जबूद्वीप मध्य है जामैं । खड विभाग कहै नव तामैं ॥
भरतवर्ष अति उत्तम गावे । कर्मक्षेत्र सब ताहि बतावै ॥१६।

सप्त पुरी पुहुमी अति सूची । तिन हू मै मथुरा गुन ऊचो ॥
ताके निकट करौ सुखबासा । हिय निति राखि जुगल प्रभु आसा॥१७॥
ए प्रिय प्राण बहुत का कहियै । सद्गुन सकल तुम्है मै लहिय ॥
जे बातै हम गाय सुनाई । तिनको सुमिरन है सुखदाई ॥१८॥
श्रीपद रेणु सकल सुखमूला । जाते देस काल अनुकूला ॥
सो धरि मौलि सिद्धि सब केरी । भव सरिता हूजै सुत बेरी ॥१९॥

भाग्य उदैकारक सब काला । यह सुहाग पट परम विसाला ॥
श्रीजू मोहि कृपा करि दीन्हा । या सम हित मै अपर न चीन्हा ॥२०॥
तुम पर मो हिय ममता भारी । लीजै सीस सुमगल धारी ॥
जा छिन यह निज मस्तक धरिहौ । मो समान सब ही गुन भरिहौ ॥२१॥
गोपेश्वर सिर दियो उठाई । परम सुहाग छटा छवि छाई ॥
बहुरि कही सबके पद वदौ । जीहा जुगल नाम अभिनदौ ॥२२॥

इनतें बिदा लहौ सिर नाई । छिन छिन मुद मगल अधिकाई ॥
हम अष्टन की अष्ट सखी वर । अष्ट अष्ट मै कही श्रेष्ठतर ॥२३॥
ते जैहैं तुम कह पहुचावन । जिनके नाम लिये जग पावन ॥
रत्नप्रभा माधवि मृगनैनी । तथा रसालिका रसनिधि दैनी ॥२४।
मजुमेधा चित्रलेखा सुख सर । कलकठी कावेरी हित भर ॥
इनके सग अपर बहु जे हैं । पथि के भेद सकल ते कै है ॥२५॥
इहाँ सकल द्वादश सत कुजा । ते दिखाय दैहै सुख पुजा ॥
ऐसे सब मडल दरसाई । विरजा पार तीर लगि जाई ॥२६॥

तुह्म बिदा करि फिरि इत ऐहै । समाचार हम ते सब कै है ॥
वर विमान सुन्दर गुन भारी । करौ यात्रा बैठि सुखारी ॥२७॥
अर्बाह याते कहि सब गावै । बहुरि बोलिवे समै न पावै ॥
दरसन हेत चलौगे तहवा । सैन करै श्री जू सुख जहवा ॥२८॥
तहा वचन औशोर कछु नाहीं । बिदा होहुगे नय मन माहीं ॥
श्रीलखिता करुणानिधि पूरी । नेह विवस बहु जतन विसूरी ॥२ ॥

बार बार जीवन हित लागी। कही दया अनवधि मन पागी ॥
वायु प्रश्न पाये हिय रसनिधि। वचन तरग उठे नाना विधि ॥३०॥
थभै समीर वेग जैसे ही। हियो उदधि निश्चल तैसे ही ॥
वचन प्रवाह अटक जब देखो। जय जय धुनि भइ बहुरि विसेखी॥३१॥
धन्य कहै कुसुमावलि वरषै। हिये उछाह उमग अति हरषै ॥
सेवा प्रीति बढावन हारी। दपति रूप होय रुचि भारी ॥३२॥
सेव्य कृपा सेवक दृढधर्मा। अष्टजाम करिवे जे कर्मा ॥
प्रीति परस्पर अचल सुहाई। स्वामी दास एक समताई ॥३३॥
सकल प्रसग पुष्ट सब अगा। सुनत बिकार अमित जग भगा ॥
श्रीललिता हिय गर्त अपारा। जुगल सरूप नीर नित भारा ॥३४॥
सदा उठै माधुर्य्य सुलहरी। वदन तीर प्रसरैं ते ठहरी ॥
श्रवण अग लहि जस सुख पायो। जानत चित्त जान किमि गाया ॥३५॥
सबहीं अपनो भाग्य सराह्या। जो अलभ्य दृढ लाभ सुपायो ।
ए माधुर्य्य लहरि उरधारी। गोपेश्वर अति भये सुखारी ॥३६॥
आज्ञा करी प्रमाण सीस धरि। तन मन अग प्रफुल्लित मुद भरि ॥
आज्ञा प्रथम भई सबके पद। वदन करौ लाभ एई हद ॥३७॥
गोपेश्वर सो रची उपाई। करत प्रणाम धरा तन लाई ॥
नमस्कार अनगनती भाव। अस्तुति दीन वचन मुख गावैं ॥३८॥
लहै मान नैनै ढिग आवै। भक्ति प्रेमजुत सिर पद लावैं ॥
मगल विविध आसि का लहहीं। बिदा पदारथ धरि सिर गहहीं ॥३९॥
सबके हियें प्रीति अधिकाई। सो प्रगटी गोपेश्वर पाई ॥
प्राण समान लखै दृग भरि भरि। दोउ हस्त लावत उर धरि धरि ॥४०॥
हिय उमगे रोके नहि रहहीं। गद्गद कठ नैन जल बहहीं ॥
गरल गाय अनवधि सुख पावत। छूटत जनु सरवस्व गँवावत ॥४१॥
सबही उठि उठि मिलीं परस्पर। सुहृद नेह वस तन मन कातर॥
सेवा समै नेह इत भारी। आदोलित मन उभै निहारी ॥४२॥
बडे कष्ट धीरज उर आन्यौ। सेवा धम प्रबल अति जान्यौ ॥
गोपेश्वर के सग सुहाई। दई सखी जे पूरब गाई ॥४३॥
कह्यौ सकल वृत्तात जनाई। तिन धार्यौ उर मस्तक नाई ॥
सबही निज निज तन तब साजे। जूथ वृन्द मिलि रचे समाजे ॥४४॥

चली अली सुखनिधु थहावत । मगल सैन कुज थल आवत ॥
गोपेश्वर मन बुधि गुनि अ'छे । चले रगदेवी के पाछे ॥४५॥
तेऊ कुज निकट झुकि आई । जा दिसि पायत सेज सुहाई ॥
जालरध्र ह्वै जुगल निहारे । अनबधि सिधु लहै सुख भारे ॥४६॥

गोपेश्वर मस्तक कर धारे । जालरध्र पथि नैन प्रचारे ॥
नखसिख दपति रूप निहारै । अग अग दृढ टरै न टारै ॥४७॥

नीकै जुगल सरूप निहारे । कछू बार पुनि लै उर धारे ॥
झपै नैन तन दशा भुलानी । सुरति जुगल छवि छटा समानी ॥४८॥
सखियन तवै थाभि बैठारे । चहूँ ओर ते गहे सभारै ॥
रगदेवि जू दशा निहारी । बात हियें गुनि भली विचारी ॥४९॥

अवहीं इन कहँ लेहु उठाई । धरौ विमान वेगि तुम जाई ॥
नयो प्रेम नहि रीति पिछाने । जानै कहा जगे हठ ठाने ॥५०॥
सहचरि सुनि सो करी उपाई । राखि विमान अनत लै जाई ॥
उभै दण्ड बीते अस रीती । गोपेश्वर तन भई प्रतीती ॥५१॥

सहचरि गोद लिये गहि अचल । करत बयारि किये पट चचल ॥
नैन खोलि चितये तन ओरी । रूप छके दृग डीठि न जोरी ॥५२॥
नीकै भई चेतना तन की । देखी रीति भली निज मन की ॥
बहुरि चाह जिय भई अपारैं । अबकै पुनि श्रीरूप निहारैं ।५३।

विरह विकलता तन मन छाई । उच्च शब्द बोलै अकुलाई ॥
एहो श्रीरगदेवी ललिते । कहा कगई अग सबै चपलते ॥५४॥
वेगि लेहु मेरी सुधि धाई । दपति रूप छटा रस प्याई ॥
जान चढी सहचरी प्रवीनी । देखि विरह गति प्रगट नवीनी ॥५५॥

लै विमान अनतैं ठहरायो । तिनकैं हिये विरह दुख छायो ॥
सहचरि कुज दिखावन लागीं । करै निरूपन मन अनुरागी ॥५६॥
तिनकी वृत्ति जुगल तन फसि कै । जथा पक हृद दुर्बल धसिकै ॥
चलै न अनत जतन बहु करिकै । चुबक अद्रि लोह जिमि परिकै ॥५७॥

नित्यविहार धाम कौ रूपा । बडी बार लौ सुन्यौ अनूपा ॥
स्रवन चित्त अतिसै सुखदाई । जाहि विलोकि जुगल सुधि आई ॥५८॥
जुगल विहारी प्रिय थल जान्यो । नैन निहारि हियो हुलसान्यो ॥
अहो प्रभू यामै निति विहरैं । उमगत हृदै स्वास लै कहरैं ॥५९॥

लागे पूछन सकल विधाना। समै विहार कृपा अग नाना ॥
जब जा थल जो लीला होई। आदि अत लौ पूछौ सोई ॥६०॥
परम प्रवीन अली सग जेहैं। रुचि अनुकूल कहत सब तेहैं ॥
परम निकुज कुज द्वादस सत। तहा विहार समै लीला जत ॥६१।
सर्व अग परिपुष्ट बखानै। गोपेश्वर सो विधि उर आने ॥
बाहिर निकसि अपर मडल लखि। जहा बसै ललितादि अष्ट सखि ॥६२।
भये प्रश्न उत्तर बहु जाती। जान्यो सकल रूप जिहि भाती ॥
परमानद भार उर लहि कै। आगे चले हिये सो गहिकै ॥६३।
तीजौ मडल देख्यौ आई। अमित कोटि सहचरि जह छाई ॥
सेवा सुख अधिकार विलासा। पूछि श्रवण करि पुजई आसा ॥६४॥
चलत जान जमुना तट आयो। मडल तीन अत जो गायो ।'
ताहि देखि॰ अतिसै मन पागे। गोपेश्वर कहिवे अस लागे ॥६५॥
इहा बसै तेई बड भागी। जुगल विहार लखै अनुरागी ॥
ता थल की पूछी सब रीती। नीकी विधि सुनि करी प्रतीती ॥६६॥
आगे चलत जान जब जान्यौ। मुरकि हेरि तन मन थहरान्यौ ॥

दोहा—जब गोपेश्वर मुरकि चख, देखन लागे धाम।
नित्यविहारी जुगल अति, जो दायक अभिरामा ॥१॥
सुरति भई मन आय सब, तुरित वियोग असह्य ॥
विरह ताप तन मन तपो, सके न चित्त निगृह्य ॥२॥
श्रीगुरु प्रभु आज्ञा प्रबल, लखि जन गति सकुचाय।
जथा कथचित धीर धरि, उठे उमगि अकुलाय ॥३॥
हस्त जोरि जुग सीस धरि, हिय करि गुरु प्रभु रूप।
गद्गद स्वर जीहा वचन कहे दीन अनुरूप ॥४॥
आवत एक भरोस दृढ, नाथ सुभाव विचारि।
जन अघ लखैन काल त्रय, अपनी ओर निहारि ॥५॥

सोरठा—सुधि लीजौ प्रभु मोरि, मोहि न गत्ति दूसर अपर।
महिमा जदपि न थोरि, तौ नेह अति दीन पर ॥१॥
बार बार सिर नाय, ता दिसि दडप्रणाम करि।
गोपेश्वर उर ल्याय, श्रीगुरु प्रभु मूरति सुधरि ॥२॥
मौन धारि नय अग, बैठे बहुरि विमान थल।
हिय अनुराग अभग, बाढत नव लव निमिष पल ॥३॥

❁ चौपाई ❁

पुनि विमान गति मद प्रचारी । चल्यो वियत पथ सुखद सभारी ॥
पर्यो चतूरथ मडल डीठी । जाहि निरखि रुचि उपजत मोठी ॥१॥
मदिर कलस उदै नभ देसा । पेखि लजत रवि अमित निसेसा ॥
सोभा सदन छटा दिसि छाइ । बानिक अनुपम सकल सुहाई ॥२॥
या मडल को एकहु अगा । कहै चतुर्मुख आयु ममगा ॥
बहुतन धरि धरि वनन करई । लहै न अत लाज नित भरई ॥३॥
या विधि कोसो मडल पेखी । रचना सदन अनत असेखी ॥
गोपेश्वर लखि अति अनुरागे । प्रश्न कियो सुख तन मन पागे ॥४॥
अहो सखी मम इष्ट सयानी । कृपा करौ लखि मोरि अयानी ॥
ससै होत कछू मन मोरे । वदन करि पूँछौ कर जोरे ॥५॥
या मडल की रीति कहा है । देखत उपजत प्रीति महा है ॥
बास कौन को लीला कैसी । सकल निरूपन कीजै तैसी ॥६॥
रत्न प्रभा ते आदि अष्ट वर । सहचरि तिनकै सग वृन्द भर ॥
प्रमुदित भई सबै ते अति मन । हँसि चितई गोपेश्वर के तन ॥७॥
रत्नप्रभा बोली मुसुकाई । लै समत सब का सुखदाई ॥
गोपेश्वर सुनिये मन लाई । जा या मडल रीति सुहाई ॥८॥
श्रीवृषभान वसै या ठामा । कीरति जिनकी हैं वर वामा ॥
धम तनातन सो वृष कहिये । ताको भान सकल जहँ लहिये ॥९॥
कीरति तहाँ वसै अति पावनि । जो निति लागत प्रभुहि सुहावनि ॥
इन आधान सबै सुभ कर्मा । जाव लहै करि उत्तम सर्मा ॥१०॥
धर्म सनातन पावन कीरति । प्रभु ते प्रगट भई जुग मूरति ॥
जहाँ धर्म तहाँ कीरति रहइ । नारि पुरुष नातौ दृढ लहई ॥११॥
ते तन धरि या मडल बसहीं । सर्वश्रेय मडल दुति लसहीं ॥
जस महिमा सपति गरुवाई । अनवधि जितनी उत्तमताई ॥१२॥
सब सुख पाय बसै इन द्वारे । छिन छिन सेवत वृत्ति सभारै ॥
कहौ, ईसता कहाँ बखानी । है जितनो गहि सकत न बानी ॥१३॥
कारन इन बातन को जोहै । जाते इत ऐसी दुति सोहै ॥
सो कहते अति जोहा लाजत । मूषक पीठिन मदर साजत ॥१४॥
जौ प्रभु आज्ञा ओर निहारैं । तौ मन त्रास होत अनपारे ॥
प्रभु आज्ञा ऐसो करि दीन्ही । पथि ससै करिहौ कहि छीनी ॥१५॥

[म प्रभु कृपापात्र अति पूरे। सद्गुन सकल बसै तन भूरे॥
[अ]धिकारी तुम सब विधि भारी। इतनी शक्ति न कथन हमारी॥१६॥
[प्र]भु आज्ञा वस जस हम जानै। कछू अग सा गाय बखानै॥
[रू]पेश्वर सुनिये मन लाई। प्रभु पद रज बल कहँ लगाई॥१७।
[श्री]वृषभान सग ीरति वर। बसै सदा या मडल शुभतर॥
[ति]न दिन सुख अनवधि अधिकाई। प्राति प्रभू पद पूरा पाई॥१८॥
[श्र]द्धा नेम प्रेम अनुरागा। भक्ति भाव अतिसै जिय जागा॥
[से]वा रुचि बाढी अति भारी। छिन छिन उमगत चाह अपारी॥१६॥
[भ]क्तन के पूरै निति कामा। जुगलविहारी जन विश्रामा॥
[बृ]हत विमान बैठि दो प्यारे। सहचरि सग लिये गन सारे॥२०।
[क]रत विहार फिरत सब ठाई। निकसे आय सहज या घाई॥
प्रभु आगमन सुन्यौ इन काना। उर उमग्यो आनन्द अमाना।२१।
[पू]जा सौज सकल रस कीन्हीं। कीरति सग सुखद निज लीन्ही॥
[म]गल गावत आवत दोऊ। साथ समाज तथा विधि साऊ॥२२॥
निकट जाय बहु किये प्रणामा। रहे निहारि जुगल छवि धामा॥
बहुरि धीर धरि चित्त सभारी। पूजा हेतु वृत्ति मन झारी॥२३॥
भक्ति भाव जुत पूजा कीन्ही। सेवा विधि नीकै जिन चीन्हा॥
सकल भाँति सुख दियो अपारी। बार बार नै आरति वारी॥२४॥
दै परिदच्छिन करैं प्रणामा। सुमिरै जुगल नाम अभिरामा॥
रहे निहारि अनूपम जोरी। बडी वार लौं डीठि न मोरी॥२५॥
नीकै नखसिख पेखि सरूपा। हियँ जुगल छवि धरि अनुरूपा॥
नैन झपे तन सुधि कछु नाहीं। जुगल स्वरूप लखै उरमाहीं॥२६॥
उठ्यो विमान भई धुनि भारी। इनहूँ तब दृग पलक उघारी॥
देखि विमान परे पुहुमी पर। करि प्रणाम ता दिसि जोरे कर॥२७॥
आए सदन मगन सुख सागर। हिय इठि धसे नागरी नागर॥
सुरति जुगल छवि छटा समानी। तथा भाँति मुख निकसत बानी॥२८॥
कहै सुनै दोऊ अस बाता। अहो जुगल प्रभु जनि परित्राता॥
दोऊ हिये अभिलाष बढावैं। बार बार कर जोरि मनावें॥२६॥
दोऊ एक समत बहरावैं। जा विधि प्रभु सेवा मन लावै॥
दीनदयाल दया जो करहीं। तौ प्रभु जुगल बाल तन धरहीं॥३०॥

हमरे सदन करै शिशु लीला। होय हमारे हिय सम सीला॥
तौ दिन रैन रहै गर लाये। सोवैं छिन छिन अति सुख पाये॥३१॥
वात्सल्य दृढ भाव नयो हिय। सब छिन ईहै वृत्ति छाई जिय॥
ऐसे इनकैं निसदिन जाहीं। तन मन सुरति आन कछु नाहीं॥३२॥
इनके सदन जथा प्रभु आये। सो आगे कहिहै सुखदाए॥
अब सुनिये बानी रससानी। सकल भाँति मगल मुदखानी॥३३॥
कछू दूरि आगे हग दीजै। परम अनूप प्रभा लखि लीजै॥
जो देखत हौं मदिर भारी। उदै कलम फैली उजियारी।३४॥
कोटिन भवन सकल दुति पूरे। मणि समूह लागे गुन भूरे॥
रचना कहै न अत लहाई। अधिक एक तै एक सुहाई॥३५॥
या मडल की पहिलै महिमा। गाय कही हम सब गुन गरिमा॥
शोभासिधु सकल सुख धामा। सुनिये जिनको इत विश्रामा॥३६॥
श्रीनद राय जसोदा रानी। परमानद मोद सुखखानी॥
नद शब्द को अर्थ प्रमानै। सदा वृद्धि ऐसो बुध जानै॥३७॥
आ अक्षर जौ पूरव दीजै। आनद रूप जानि सो लीजै॥
सदा वृद्धि जा आनद केरी। हरि बिन अनत मिलै नहिं हेरी॥३८॥
सब साधन उत्तर फल आनद। समत सिद्ध सकल अस मानद॥
आनद रस जा थल बढवारी। तहाँ चुचातौ जस सहकारी॥३९॥
आलौ वहौ कहौ बरु ओदा। आनद अग प्रमाण जसोदा॥
आनद रस भीजौ जस जाकौ। कहो रूप सो कहियै काकौ॥४०॥
अमित अड उपजै सब काला। देखि परै बहु रूप विसाला॥
का जानै पुनि का है जावै। नाम रूप कहुँ खोज न पावै॥४१॥
तौ आनद जस की बढवारी। कौन ठौर कहियै निरधारी॥
हरि की कला दोउ ए जानो। सब दिन वृद्धि विशेष प्रमानौ॥४२।
प्रभु निज अग ते ए प्रगटाये। आनद जस द्वै रूप सुहाए॥
क्रिया एक ही देखी तिनकी। ऐसी रीति करी प्रभु जिन्हकी॥४३॥
नारि पुरुष करि नेह दृढायो। नद जसोदा नाम धरायो॥
धर्म सनातन कीरति जा थल। आनद जस निति वास तहाँ भल॥४४॥
या मडल मधि बसै सुखारे। मगल मोद नए निति भारे॥
श्रीवृषभान महिषि कीरति हैं। नदराय तैसें जसुमति हैं॥४५॥

निकट निकट सब दिन ए हरई। प्रीति परस्पर अनवधि लहई॥
इनतें अधिक अधिक ए गुनते। सुख संपत्ति विभूति जस उनतें॥४६॥
अनवधि छिन छिन प्रेमप्रतीती। जुगलविहारी प्रभु पद प्रीती॥
कृपा दुहुन की एक समाना। कारज करै बढै हित नाना॥४७॥
नंद जसोदा संग एक दिन। जमुना निकट गये मंगल छिन॥
मज्जन करि तट बैठे ध्यावै। जुगल माधुरी को सुख पावै॥४८॥
ताही समै विमान विहारा। जुगलविहारी करत अपारा॥
चलत विमान परिसि धारा सरि। उभै कूल देखै जन मुद भरि॥४६॥
विविध भाँति कुसुमावलि वरषै। निरखि माधुरी तन मन हरषै॥
नंद जसोदा प्रभु छवि देखा। निज हिय पट राखी हगरेखा॥५०॥
ता छिन ते कछु अपर न भावै। बार बार सोई सुधि आवै॥
खान पान सुख भोग विलासा। बिसरि गई बाढो प्रभु प्यासा॥५१॥
चिंता एक हियै उर छाई। सोचि कहैं का करिय उपाई॥
जौ प्रभु दीनबंधु आरतिहर। अंतर्जामी ईश सर्व पर॥५२॥
जन हित प्रभू करै बहु लीला। दास हिये जस देखै शीला।
सदा सनातन ऐसी रीती। समुझि होत सुख विनसत भीती॥५३
तौ हमरी अभिलाषा भूरी। जुगल प्रभू करि है दृढ पूरी॥
सर्वाराध्य सर्वपर स्वामी। तदपि दास इच्छा अनुगामी।५४
जौ ये साची सदा कहानी। तौ चित चाह सब फल दानी॥
जुगल प्रभू बालक तन धारी। शिशु लीला सुखसिंधु अपारी॥५५॥
हमैं देहि सब दिन सवकाई। सेवा करै सदा मन भाई॥
निरखि निरखि शिशु कौतुक भारे। परमानंद लहैं अनपारे।५६।
रैन दिना ऐसे मन भावैं। चाह नई अनवधि उमगावैं॥
वात्सल्य हिय भाव बढ्यो अति। निश्चल भई अनन्य इहै गति॥५७॥
इनहू कौ ऐसे सब काला। होत विनीत बढ़त हित जाला॥
निसदिन दोऊ या विधि लागे। अचल प्रेम प्रभु पद अनुरागे॥५८॥
गोपेश्वर प्रभु की अस रीती। निज तन ते जन पर अति प्रीती॥
जुगल विहारी जन सुख चाहैं। सदा इहै दृढ चित्त अवगाहैं॥५६
इन दोउन के मन की जानी। जुगल परस्पर बोले बानी॥
शिशु लीला इन दृढ उर धारी। हमहू कहं सो लागत प्यारी॥६०

लाल कहैं सुनियें श्रीप्यारी । चलिये इनके सदन सवारी ॥
ललितादिक यह भेद न जानै । इहाँ न सेवा भग प्रमानै ॥६१॥
ए इत ऐसे ही सुख पावै । नित्य विहार अखड विभावैं ॥
बालकेलि ता थल चलि कीजै । तिन सुख दै अपनौ मुद लीजै ॥६२॥
श्रीप्यारी मृदु सुनि पिय बानी । मन अति हर्ष मद मुसुकानी ॥
वचन समै अनुकूल कहे सुख । जे सुनि भक्त लहै सब दिन सुख ॥६३।
भक्तन के काजै सब कीजै । तिन कौ सुख अपनो लखि लीजै ॥
जा विधि जन अति होहि सुखारे । तेइ निरतर कर्म हमारे ॥६४॥
अचरज कौन कहा अनहोनो । कीरति धर्म अहै हम जोनी ॥
जहाँ धर्म तह कीरति रहई । इन बिन हमै कहो को लहई ॥६५॥
जन हित जतन अधिक मन भाई । चलिय वेगि सो करिय उपाई ॥
सखी अगजा ए ललितादिक । इन पर हमै अधिक प्रेमादिक ॥६६॥
इन बिन काज कछू नहि सरिहै । कपट जानिये ऊ दुख भरिहै ॥
ए अनन्य मोहू अति प्यारी । इनतै उचित न कपट विहारी ॥६७
इन कह देखि सदा सुख पावौ । मै पल एक न इन्है भुलावौ ॥
प्यारी वचन दास हित साने । सुनि प्रीतम अति मन सकुचाने ।।६८।
सो विधि प्रगट करन उर धारी । जातै मिटै लाज अति भारी ।।
ऐसें चित्त विचारन लागे । ए गुन तबै हिये वर जागे ॥६६।
सख्य दास्य को रूप विचार्यौ । यह सिद्धात मुख्य निरधार्यौ ॥
कहियै सखा मित्र सो गाई । ताकी ऐसी रीति सुहाई ॥७०।
मित्र भाव जातै जो मानै । अतर स्वल्प कपट नहि आनै ॥
दृढ विश्वास अचल अनुरागा । देह उभै नहि लखै विभागा ॥७१।
छिन छिन सकल भाति हित चाहै । नेह वृद्धि लखि भरै उछाहै ॥
सखा मित्र यह रूप कहावै । या विधि सदा सुखी जस पावै ॥७२।
जा छिन कपट होय मन माहीं । प्रीति पुरानी तबै नसाहीं ॥
यामै दृढ दृष्टात प्रमानै । जाके सुने हृदय बुध आनै ॥७३
जीव मोर प्रतिबिंब कहावै । सखा बताय सदा श्रुति गावै ।
जद्यपि मोतें अतर नाहीं । तऊ भेद नहि गनत सिराही ॥७४
माया रूप कपट कहि गाई । सो अतर परि भेद जनाई ॥
निपट निकट तोऊ अति दूरी । पलक आड चख वस्तु विदूरी ॥७५

जहा कपट तह माया कहहीं विगत कपट अप्राकृति लहहीं ॥
प्रगट करौ निष्कपट स्वरूपा । कृपा तहा राखौ अनरूपा ॥७६ ।
सखा मित्र अस करि वर नामा । जे अप्राकृत गुन तिन धामा ॥
मडल तिनको जुदौ कहावै । सज्ञा सख्य ठाम मो पावे ॥७७॥
तहा करै बसि विविध विलासा । सकल अमायक वस्तु सुपामा ।
वात्सल्य मडल हम जैहे । बाल रूप लीला दरसैहे ।७८॥
तहा सग हमरौ ते करिहै । सख्य भाव अ तर सुख भरिहैं ॥
प्रिया सग ज्यौ सखी रहैंगी । बालकेलि सुख सबै लहैंगी ॥७९ ।
तैसे हमरे सग रहैंगे । सखा समान प्रमोद लहैगे ॥
तब हमते प्यारी जब मिलिहै । उभै मडली सगै भिलिहैं ॥८०॥
उतै सखी इत सखा हमारे । कौतुक आनि परैगे भारे ॥
सखा दोष, हम निज सिर लैहै । तिन की छाह छुवन नहि दैहैं ॥८१॥
तब प्यारी निश्चै जिय जनिहै । मम दृढ प्रीति सखन पर गनिहैं ।
यह सिद्धात हिय ठहराई । लाज मिटन की जतन सुहाई ॥८२॥
तब प्रसन्न ह्वै डीठि पसारी । ललितादिक देखी सखि सारी ॥
सेवा तत्पर तन मन लागी । सेवा सुख छिन छिन अनुरागी ॥८३॥
सेवा अपनौ धर्म पिछानै । सेवा छाडि अपर नहि जानै ॥
समै समै सेवा सुख देहीं । वर माँगै सेवा रुचि लेही ।८४॥
सखी कहाय दास गुन जीत । प्यारी चित्त गहै याहीते ॥
ए गुन तौ इनही मै दीखै । अनत मिलै नहि विस्वा वोसै ॥८५॥
याते भलै जुदै प्रगटैयै । तिनमे सकल दास गुन पैयै ॥
दास रीति ऐसो सुखदाई । जा तन होय सु लहै बडाई ॥८६॥
जथा देह के अग कहावैं । सज्ञा नाम जुदे ते पावैं ॥
जाकी जैसी वृत्ति कहावै । ताते सा कारज बनि आवै ॥८७॥
दस इद्री समुदाय कहै तन । हृदय चतुष्टय मुख्य अहै मन ॥
निज निज कारज ओर निहारै । समै समै लै देहो पारै ॥८८॥
जाके काज बनै ताही तैं । सज्ञा जुदी मिली याहाते ॥
सकल पदारथ सग्रह करहीं । केवल सुख देहा अनुसरहीं ॥८९॥
छिन छिन प्रीति अधिक अधिकाई । सेवै देह निरतर चाई ॥
कबहू निज सुख जुदौ न दाहै । सेव सेव्य सोइ सुख लाहैं ॥९०॥

लाल कहैं सुनियें श्रीप्यारी। चलिये इनके सदन सवारी॥
ललितादिक यह भेद न जानै। इहाँ न सेवा भग प्रमानै॥६१॥
ए इत ऐसे ही सुख पावै। नित्य विहार अखड विभावैं॥
बालकेलि ता थल चलि कीजै। तिन सुख दै अपनो मुद लीजै॥६२॥
श्रीप्यारी मृदु सुनि पिय बानी। मन अति हर्ष मद मुसुकानी॥
वचन समै अनुकूल कहे मुख। जे सुनि भक्त लहै सब दिन सुख॥६३॥
भक्तन के काजै सब कीजै। तिन कौ सुख अपनो लखि लीजै॥
जा विधि जन अति होहि सुखारे। तेइ निरतर कर्म हमारे॥६४॥
अचरज कौन कहा अनहोनो। कीरति धर्म अहै हम जोनी॥
जहाँ धर्म तह कीरति रहई। इन बिन हमै कहो को लहई॥६५॥
जन हित जतन अधिक मन भाई। चलिय वेगि सो करिय उपाई॥
सखी अगजा ए ललितादिक। इन पर हमै अधिक प्रेमादिक॥६६॥
इन बिन काज कछू नहि सरिहै। कपट जानिये ऊ दुख भरिहै॥
ए अनन्य मोहू अति प्यारी। इनतै उचित न कपट बिहारी॥६७॥
इन कह देखि सदा सुख पावौ। मै पल एक न इन्है भुलावौ॥
प्यारी वचन दास हित साने। सुनि प्रीतम अति मन सकुचाने॥६८॥
सो विधि प्रगट करन उर धारी। जातै मिटै लाज अति भारी॥
ऐसे चित्त विचारन लागे। ए गुन तबै हिये वर जागे॥६९॥
सख्य दास्य को रूप विचार्यौ। यह सिद्धात मुख्य निरधार्यौ॥
कहियै सखा मित्र सो गाई। ताकी ऐसी रीति सुहाई॥७०॥
मित्र भाव जातै जो मानै। अतर स्वल्प कपट नहि आनै॥
दृढ विश्वास अचल अनुरागा। देह उभै नहि लखै विभागा॥७१॥
छिन छिन सकल भाति हित चाहै। नेह वृद्धि लखि भरै उछाहै॥
सखा मित्र यह रूप कहावै। या विधि सदा सुखी जस पावै॥७२॥
जा छिन कपट होय मन माहीं। प्रीति पुरानी तबै नसाहीं॥
यामै दृढ दृष्टात प्रमानै। जाके सुने हृदय बुध आनै॥७३॥
जीव मोर प्रतिबिंब कहावै। सखा बताय सदा श्रुति गावै।
जद्यपि मोतें अतर नाही। तऊ भेद नहि गनत सिराही॥७४॥
माया रूप कपट कहि गाई। सो अतर परि भेद्र जनाई॥
निपट निकट तोऊ अति दूरी। पलक आड चख वस्तु विदूरी॥७५॥

जहा कपट तह माया कहहीं विगत कपट अप्राकृति लहहीं ॥
प्रगट करौ निष्कपट स्वरूपा । कृपा तहा राखौ अनरूपा ॥७६।
सखा मित्र अस करि वर नामा । जे अप्राकृत गुन तिन धामा ॥
मडल तिनको जुदौ कहावै । सज्ञा सख्य ठाम सो पावे ॥७७॥
तहा करै बसि विविध विलासा । सकल अमायक वस्तु मुपासा ।
वात्सल्य मडल हम जैहे । बाल रूप लीला दरसैहे ।७८॥
तहा सग हमरौ ते करिहै । सख्य भाव अ तर सुख भरिहैं ॥
प्रिया सग ज्यौं सखी रहैंगी । बालकेलि सुख सबै लहैंगी ॥७९॥
तैसे हमरे सग रहैगे । सखा समान प्रमोद लहैगे ।
तब हमते प्यारी जब मिलिहै । उभै मडली सगै झिलिहै ॥८०॥
उतै सखी इत सखा हमारे । कौतुक आनि परैगे भारे ॥
सखा दोष, हम निज सिर लैहै । तिन की छाह छुवन नहि देहै ॥८१॥
तब प्यारी निश्चै जिय जनिहै । मम दृढ प्रीति सखन पर गनिहैं ।
यह सिद्धात हिय ठहराई । लाज मिटन की जतन सुहाई ॥८२॥
तब प्रसन्न ह्वै डीठि पसारी । ललितादिक देखी सखि सारी ।
सेवा तत्पर तन मन लागी । सेवा सुख छिन छिन अनुरागी ॥८३॥
सेवा अपनौ धर्म पिछानै । सेवा छाडि अपर नहि जानै ॥
समै समै सेवा सुख देहीं । वर माँगै सेवा रुचि लेही ।८४॥
सखी कहाय दास गुन जीते । प्यारी चित्त गहै याहीते ॥
ए गुन तौ इनही मैं दीखै । अनत मिलै नहि विस्वा वीसै ॥८५॥
याते भलै जुदे प्रगटैयै । तिनमे सकल दास गुन पैयै ।
दास रीति ऐसो सुखदाई । जा तन होय सु लहै बडाई ॥८६।
जथा देह के अग कहावै । सज्ञा नाम जुदे ते पावैं ।
जाकी जैसी वृत्ति कहावै । ताते सा कारज बनि आवे ॥८७॥
दस इद्री समुदाय कहै तन । हृदय चतुष्टय मुख्य अहै मन ॥
निज निज कारज ओर निहारै । समै समै लै देहो पारै ॥८८॥
जाके काज बनै ताही तैं । सज्ञा जुदी मिली याहीते ॥
सकल पदारथ सग्रह करहीं । केवल सुख देहा अनुसरहीं ।८९॥
छिन छिन प्रीति अधिक अधिकाई । सेवै देह निरतर चाई ॥
कबहू निज सुख जुदौ न दाहै । सेव सेव्य सोइ सुख लाहै ॥९०॥

लाल कहैं सुनियें श्रीप्यारी । चलिये इनके सदन सवारी ॥
ललितादिक यह भेद न जानै । इहाँ न सेवा भग प्रमानै ॥६१॥
ए इत ऐसे ही सुख पावै । नित्य विहार अखंड विभावैं ॥
बालकेलि ता थल चलि कीजै । तिन सुख दै अपनौ मुद लीजै ॥६२॥
श्रीप्यारी मृदु सुनि पिय बानी । मन अति हर्ष मंद मुसुकानी ॥
वचन समै अनुकूल कहे मुख । जे सुनि भक्त लहै सब दिन सुख ॥६३॥
भक्तन के काजै सब कीजै । तिन कौ सुख अपनो लखि लीजै ॥
जा विधि जन अति होहि सुखारे । तेइ निरंतर कर्म हमारे ॥६४॥
अचरज कौन कहा अनहोनी । कीरति धर्म अहै हम जोनी ॥
जहाँ धर्म तहं कीरति रहई । इन बिन हमै कहो को लहई ॥६५॥
जन हित जतन अधिक मन भाई । चलिय वेगि सो करिय उपाई ॥
सखी अगजा ए ललितादिक । इन पर हमै अधिक प्रेमादिक ॥६६॥
इन बिन काज कछू नहि सरिहै । कपट जानिये ऊ दुख भरिहै ॥
ए अनन्य मोहू अति प्यारी । इनतै उचित न कपट विहारी ॥६७॥
इन कह देखि सदा सुख पावौ । मै पल एक न इन्है भुलावौ ॥
प्यारी वचन दास हित साने । सुनि प्रीतम अति मन सकुचाने ॥६८॥
सो विधि प्रगट करन उर धारी । जातै मिटै लाज अति भारी ॥
ऐसें चित्त विचारन लागे । ए गुन तबै हिये वर जागे ॥६९॥
सख्य दास्य को रूप विचार्यो । यह सिद्धांत मुख्य निरधार्यो ॥
कहियै सखा मित्र सो गाई । ताकी ऐसी रीति सुहाई ॥७०॥
मित्र भाव जातै जो मानै । अंतर स्वल्प कपट नहि आनै ॥
दृढ विश्वास अचल अनुरागा । देह उभै नहि लखै विभागा ॥७१॥
छिन छिन सकल भांति हित चाहै । नेह वृद्धि लखि भरै उछाहै ॥
सखा मित्र यह रूप कहावै । या विधि सदा सुखी जस पावै ॥७२॥
जा छिन कपट होय मन माहीं । प्रीति पुरानी तबै नसाहीं ॥
यामै दृढ दृष्टांत प्रमानै । जाके सुने हृदय बुध आनै ॥७३॥
जीव मोर प्रतिबिंब कहावै । सखा बताय सदा श्रुति गावै ।
जद्यपि मोते अंतर नाही । तऊ भेद नहि गनत सिराही ॥७४॥
माया रूप कपट कहि गाई । सो अंतर परि भेद जनाई ॥
निपट निकट तोऊ अति दूरी । पलक आड चख वस्तु विदूरी ॥७५॥

जहा कपट तह माया कहहीं विगत कपट अप्राकृनि लहहीं ॥
प्रगट करौ निष्कपट स्वरूपा । कृपा तहा राखौ अनरूपा ॥७६॥
सखा मित्र अस करि वर नामा । जे अप्राकृत गुन तिन धामा ॥
मडल तिनको जुदौ कहावै । सज्ञा सख्य ठाम सो पाव ॥७७॥
तहा करै बसि विविध विलासा । सकल अमायक वस्तु सुपासा ।
वात्सल्य मडल हम जैहे । बाल रूप लीला दरसैहे ।७८॥
तहा सग हमरौ ते करिहै । सख्य भाव अ तर सुख भरिहैं ॥
प्रिया सग ज्यौ सखी रहैंगी । बालकेलि सुख सबै लहेगे ॥७६॥
तैसे हमरे सग रहैंगे । सखा समान प्रमोद लहैंगे ॥
तब हमते प्यारी जब मिलिहैं । उभै मडली सगै फिलिहैं ॥८०॥
उतै सखी इत सखा हमारे । कौतुक आनि परैगे भारे ॥
सखा दोष, हम निज सिर लैहै । तिन की छाह छुवन नहि दैहै ॥८१॥
तब प्यारी निश्चै जिय जनिहै । मम दृढ प्रीति सखन पर गनिहैं ।
यह सिद्धात हिय ठहराई । लाज मिटन की जतन सुहाई ॥८२॥
तब प्रसन्न ह्वै डीठि पसारी । ललितादिक देखी सखि सारी ॥
सेवा तत्पर तन मन लागी । सेवा सुख छिन छिन अनुरागी ॥८३॥
सेवा अपनौ धर्म पिछानै । सेवा छाडि अपर नहि जानै ॥
समै समै सेवा सुख देहीं । वर माँगै सेवा रुचि लेही ।८४॥
सखी कहाय दास गुन जीत । प्यारी चित्त गहै याहाते ॥
ए गुन तौ इनही मैं डीखे । अनत मिलै नहि विस्वा वीसे ॥८५॥
याते भलै जुरे प्रगटैयै । तिनमे सकल दास गुन पैयें ॥
दास रीति ऐसा सुखदाई । जा तन होय सु लहै बडाई ॥८६॥
जथा देह के अग कहावै । सज्ञा नाम जुरे ते पावै ॥
जाकी जैसी वृत्ति कहावै । ताते सो कारज बनि आवै ॥८७॥
दस इद्री समुदाय कहै तन । हृदय चतुष्टय मुख्य अहै मन ॥
निज निज कारज ओर निहारै । समै समै लै देहो पारै ॥८८॥
जाके काज बनै ताही तैं । सज्ञा जुदी मिली याहीते ॥
सकल पदारथ सग्रह करहीं । केवल सुख देहा अनुसरहीं ॥८९॥
छिन छिन प्रीति अधिक अधिकाई । सेवै देह निरतर चाई ॥
कबहू निज सुख जुदौ न दाहै । सेव सेव्य सोइ सुख लाहै ॥९०॥

लाल कहैं सुनियें श्रीप्यारी। चलिये इनके सदन सवारी॥
ललितादिक यह भेद न जानै। इहाँ न सेवा भग प्रमानै॥६१॥
ए इत ऐसे ही सुख पावै। नित्य विहार अखंड विभावैं॥
बालकेलि ता थल चलि कीजै। तिन सुख दै अपनौ मुद लीजै॥६२॥
श्रीप्यारी मृदु सुनि पिय बानी। मन अति हर्ष मंद मुसुकानी॥
वचन समै अनुकूल कहे मुख। जे सुनि भक्त लहै सब दिन सुख॥६३॥
भक्तन के काजै सब कीजै। तिन कौ सुख अपनो लखि लीजै॥
जा विधि जन अति होहि सुखारे। तेइ निरंतर कर्म हमारे॥६४॥
अचरज कौन कहा अनहोना। कीरति धर्म अहै हम जोनी॥
जहाँ धर्म तह कीरति रहई। इन बिन हमैं कहो को लहई॥६५॥
जन हित जतन अधिक मन भाई। चलिय वेगि सो करिय उगाई॥
सखी अंगजा ए ललितादिक। इन पर हमै अधिक प्रेमादिक॥६६॥
इन बिन काज कछू नहि सरिहै। कपट जानिये ऊ दुख भरिहै॥
ए अनन्य मोहू अति प्यारी। इनतै उचित न कपट विहारी॥६७॥
इन कह देखि सदा सुख पावौ। मै पल एक न इन्है भुलावौ॥
प्यारी वचन दास हित साने। सुनि प्रीतम अति मन सकुचाने॥६८॥
सो विधि प्रगट करन उर धारी। जातै मिटै लाज अति भारी॥
ऐसें चित्त विचारन लागे। ए गुन तबै हिये वर जागे॥६९॥
सख्य दास्य को रूप विचार्यौ। यह सिद्धांत मुख्य निरधार्यौ॥
कहियै सखा मित्र सो गाई। ताकी ऐसी रीति सुहाई॥७०॥
मित्र भाव जातै जो मानै। अंतर स्वल्प कपट नहि आनै॥
दृढ विश्वास अचल अनुरागा। देह उभै नहि लखै विभागा॥७१॥
छिन छिन सकल भांति हित चाहै। नेह वृद्धि लखि भरै उछाहै॥
सखा मित्र यह रूप कहावै। या विधि सदा सुखी जस पावै॥७२॥
जा छिन कपट होय मन माहीं। प्रीति पुरानी तबै नसाहीं॥
यामै दृढ दृष्टांत प्रमानै। जाके सुने हृदय बुध आनै॥७३॥
जीव मोर प्रतिबिंब कहावै। सखा बताय सदा श्रुति गावै।
जद्यपि मोते अंतर नाही। तऊ भेद नहि गनत सिराही॥७४॥
माया रूप कपट कहि गाई। सो अंतर परि भेद जनाई॥
निपट निकट तोऊ अति दूरी। पलक आड चख वस्तु विदूरी॥७५॥

जहा कपट तह माया कहहीं विगत कपट अप्राकृति लहहीं ॥
प्रगट करौ निष्कपट स्वरूपा । कृपा तहा राखौ अनरूपा ॥७६।
सखा मित्र अस करि वर नामा । जे अप्राकृत गुन तिन धामा ॥
मडल तिनको जुदौ कहावै । सज्ञा सख्य ठाम सो पाव ॥७७॥
तहा करै बसि विविध विलासा । सकल अमायक वस्तु सुपासा ।
वात्सल्य मडल हम जैहें । बाल रूप लीला दरसैहे । ७८॥
तहा सग हमरौ ते करिहै । सख्य भाव अ तर सुख भरिहै ॥
प्रिया सग ज्यौ सखी रहैगी । बालकेलि सुख सबै लहैगी ।७६।
तैसे हमरें सग रहैगे । सखा समान प्रमोद लहैगे ।
तब हमते प्यारी जब मिलिहै । उभै मडली सगै झिलिहै ॥८०।
उतै सखी इत सखा हमारे । कौतुक आनि परैगे भारे ॥
सखा दोष,हम निज सिर लैहै । तिन की छाह छुवन नहि दैहै ॥८१॥
तब प्यारी निश्चै जिय जनिहै । मम दृढ प्रीति सखन पर गनिहैं ।
यह सिद्धात हिये ठहराई । लाज मिटन की जतन सुहाइ ॥८२॥
तब प्रसन्न ह्वै डीठि पसारी । ललितादिक देखी सखि सारी ॥
सेवा तत्पर तन मन लागी । सेवा सुख छिन छिन अनुरागी ॥८३॥
सेवा अपनौ धर्म पिछानै । सेवा छाडि अपर नहि जानै ॥
समै समै सेवा सुख देहीं । वर माँगै सेवा रुचि लेही । ८४॥
सखी कहाय दास गुन जीते । प्यारी चित्त गहै याहीते ॥
ए गुन तौ इनही मैं दीखै । अनत मिलै नहि विस्वा वीसै ॥८५॥
याते भले जुदे प्रगटैयै । तिनमे सकल दास गुन पैयै ।
दास रीति ऐसो सुखदाई । जा तन होय सु लहै बडाई ॥८६॥
जथा देह के अग कहावै । सज्ञा नाम जुदे ते पावैं ॥
जाकी जैसी वृत्ति कहावै । ताते सो कारज बनि आवै ॥८७॥
दस इद्री समुदाय कहै तन । हृदय चतुष्टय मुख्य अहै मन ॥
निज निज कारज आर निहारै । समै समै लै देहो पारै ॥८८॥
जाके काज बनै ताही तैं । सज्ञा जुदी मिली याहीते ॥
सकल पदारथ सग्रह करहीं । केवल सुख देहा अनुसरहीं । ८६॥
छिन छिन प्रीति अधिक अधिकाई । सेवै देह निरतर चाई ॥
कबहू निज सुख जुदौ न दाहैं । सेव सेव्य सोइ सुख लाहैं ॥६०॥

इनकी प्रीति अनन्य निहारी। सेव्य देह अन रीति विचारी ॥
अहै आप पोखै इन सबहिन। बिलग भेद करि मानै कबहिन ॥९१॥
निसदिन इनकी जतन विचारै। जथा लहै सुख तथा सवारै ॥
इनहीं तें निज सोभा मानै। इनके हेत कृपा वहु ठानै ॥९२॥
इनतै अधिक अनत नहि प्रीती। सर्वोंपरि इनकी परतीती ॥
इनतै जो प्रतिकूल विभासै। वेगि जतन करि ताहि विनासै ॥९३॥

देही इन कह निज तन मानै। इन बिन अपनौ सुख नहि जानै ॥
अरस परस ए कैसी रीती। अनवधि प्रेम प्रीत परतीती ॥९४॥
सेवक अवधे अग सब गावै। दास कहाय उच्च पद पावै ॥
इनकी रच्छा ते सुख भारी। देही कीरति लहै अपारी ॥९५॥
अग देह ते पृथक न अहहीं। जुदे भये देही किमि कहहीं ॥
एक एक ते भारी सब दिन। ऐसे मोद बढै नव छिन छिन ॥९६॥

स्वामी सेवक अहै एक तन। क्रिया भेद सज्ञा दूजो गन ॥
सेवै सेवक दास कहावै। पालन पदवी ईश लहावै ॥९७॥
ऐसे भये उभय सुख पावै। जस वितान नित नूतन छावै ॥
जितने मेरे अग अहैं ए। दास नाम तन प्रगट करै ते ॥९८॥

बसै जुदे मडल ते जाई। दास नाम सो बाम लहाई ॥
तहा बास करि वस्तु अमायक। सेवा की ते जानि सहायक ॥९९॥
जथा भक्ति वर भावहि ए रुचि। तथा प्रगट तन मोर लखै सुचि ॥
सेवै मेरौ रूप निरतर। भाव सुफल पूरै सुख अतर ॥१००॥
ए वर्त्तै मेरी रुचि देखी। मै इनकी रुचि चलो विसेखी ॥
मोहि समै लखि लखि मुद देवै। ऐसे सेय सदा सुख लेवै ॥१०१॥
बैठि विमान सैल सुख लैहै। प्रिया समेत कबहु तित जैहै ॥
ललितादिक सखि सग रहैगी। दासन की गति नैन लहैगी ॥१०२॥
दखि परस्पर अनवधि प्रीती। सेवक सव्य विचित्र विनीती ॥
तब मेरे हिय की यह लाजा। मिटिहै ऐसो बने समाजा ॥१०३॥

पीतम ए द्वै जुक्ति विचारी। सख्य दास्य मन धरी सभारी ॥
तब उर आनद अतिसै छाया। काज सिद्ध सकोच गवायो ॥१०४॥
लागे देखन सबकी ओरी। प्रिया वदन ससि सखी चकोरी ॥
कबहू देखि माधुरी भारा। स्रवै सुधा छवि किरिनि अपारा ॥१०५॥

तन मन छकै झपै दृग जिनके। शांत अचल अंग हले न तिनके ॥
हिये स्वामिनी छटा समानी। मन बुधि इंद्री तहां पगानी ॥१०६॥
सुरति वृत्ति नहिं चलत चलायें। सिद्ध समाधि न सहज लगाये ॥
प्रतिमा उपल रीति जो होई। देखी दशा सखी की सोइ ।१०७॥

प्रीतम हिय सभ्रम कछु आयो। सखियन अद्भुत रूप दिखायौ ।
जासो जोग कहैं सब गाई। सिद्धि करैं जोगी हठ लाई ॥१०८॥
बीते जन्म अमित इहि भांती। लव निमेष नहिं पावे सांतीं ॥
छिन छिन इनके अंग अनेका। देखि परैं गुन सिद्ध प्रवेका ॥१०९॥
जानि परी प्यारी चतुराई। इन तन निज महिमा दरसाई ।

जुक्ति हमारी दुर्लभ कीन्हो। ऐसी शक्ति सखिन मे दीन्ही ॥११०।
मन की बात मनै मैं राखी। डर ते आप सकत नहिं आखी ॥
चतुर चतुर की ऐसी रीती। प्रगट न होय चाह मन जीती ।१११।
बहुरि लाल मन करत विचारा। अबकै सो कीजै उपचारा ।
लाज मिटन की जतन विचारो। भई जुक्ति बलहीन हमारी ।११२।

सखियन कौ देख्यौ जस रूपा। प्रगट करैं ताके अनुरूपा ॥
तौ कछु हिय पावै सचु लेसा। प्यारी लखै नैन यह देसा ।११३।
तब निष्कपट हियो हम होवै। ऐसे जन तन चित्त भिजोवै ॥
शांताकार कहै मोहि वेदा। प्रगट करौ मेटौ निज खेदा ।११४।
ऐसो रूप होय जब जाको। शांत विशेष कहै अंग ताको ॥
इन्द्री चंचलता मिटि जावै। कबहूँ मन उद्वेग न पावै ।११५।

असद् वासना हिय ते जावैं। जे याको निति प्रति भटकावैं ॥
देह विषय आधिन न होवै। कारज अपनो छिन छिन जोवै ।११६।
नित्यानित्य विचार रहै थिर। मृत्यु काल देखै ठाढौ सिर ॥
ग्यान विराग भक्त त्रय पीने। कबहूँ हिय ते होय न हीने ।११७
जोग जुक्ति जे सकल कहावै। ते हठि साधि अवधि निज पावै ॥
माया पर अव्यय सुख राशी। अमित अंड प्रति रोम निवासी ।११८
जुगल विहारी नित्य स्वरूपा। अंग अंग छवि जाल अनूपा ।
हमते जथा होय दृढ प्रीती। समुझि विचार करै अस नीती ।११९
प्राणायाम वायु गति सोधै। नाद बिंदु को मेल प्रबोधै ॥
मूलाधार चक्र षट जेते। बल समीर सूध करि तेते ।१२०।

शनै शनै इमि आवै कठै। थिर ह्वै निज इष्टै उत्कठै ॥
या थल जागी होय सचेता। मारग बहुत वायु पथ तेता।१२१॥
अतिबल ते जौ ऊपर जावै। फूटै अड सिद्धि नहि पावै ॥
अन्य बासना खोजि बहावै। ताके सहित सोई गति छावै।१२२।
याते जो जुक्ति द्वै गाई। क्रिया जोग जुक्ति निपुनाई ॥
जीव प्राण औ इष्ट स्वरूपा। ए त्रय मेल करै सुख जूपा।१२३॥
सावधान ह्वै ऊपर जाई। पद्म सहस्र पत्र थल पाई ॥
तहाँ समाधि रहै जत वारी। जो लै जाय सो टरै न टारा।१२४।
बसै प्रमाण जितौ सकल्पा। बहुरि वायु उतरै ग्गत स्वल्पा।।
ऐस करत करत अस होई। जोग सिद्ध फल जानौ साई।१२५।

निज मन इष्ट रूप ए दोई। इनके मध्य अपर नहि कोई ॥
सोवत जागत बैठे बाढे। जेते कर्म करै हित गाढे।१२६।
सुरति एक सा सब छिन रहइ। अन्य वासना गध न लहइ ॥
जब लग ऐसी वृत्ति न होई। हवि समाधि नित साधै सोई।१२७।
अचल दशा जानै जब ताका। सहज समाधि भई तब याको ॥
विना तरग सिधु सुख जो है। शाता रूप जोगी तन त्यो है।१२८।
ऐसे भए माहि तें पाव। भक्ति भाव यह शात गनावै॥
ऐस प्रगट करो बहुतेरे। शात नाम होवै जिनकेरे।१२९।
मडल सोई नाम कहावै। तहाँ वास इनको सुख छावै।।
जहाँ अमायक सिगरी सामा। करै विलास नित्य अभिरामा।१३०।
जा विधि को रुचि मातन करिहै। प्रगट सेय अनवध सुख भरिहै ॥
सहित लाडिलो काहू दिन मै। करत विहार जाव हम तिनमै।१३१।
ललितादिक सखि देखै तबहीं। मो मन लाज मिटैगी तबहीं ॥
प्रभू सत्य सकल्प कहावै। जो मन करै सो प्रगट दिखावै।१३२।

जैसे सख्य दास मन भाई। शात भाव की रीति सुहाई ॥
प्रगट भए ताही छिन तैसे। प्रभू देखि सुख पावै जैसे।१३३।
मडल तीन विचित्र अनूपा। भए सु कहियै किमि तिन रूपा ॥
तिनमै ते सुख वास करैं निति। भोग विलास कहै न लहै मिति।१३४।
तिनको रूप धाम अति नीको। प्रभू लह्यौ सुख लखि हित जीको ॥
अति प्रसन्नता मन मै आई। तीनौ जुक्ति भली बनि आई।१३५।

इन तेहूँ है काज घनेरे। जे जे उदय होहि मन मेरे॥
मै उत्पन्न करौ जग सघा। धर्म सेतु थापौ अनुलघा।१३६।
ता पथ जीव तरै भव वारिधि। पावै मोहि मिटै ससृति विधि॥
मध्य अधर्मशील पापी नर। जहाँ तहाँते होहि उजागर।१३७।
धर्म सेतु हठि दुष्ट नसावै। सीदै साधु असाधु बढावैं॥
सो मौते सहि जात न कैसे। उत्तम अग पीर नर जैस।१३८।
जब जब ऐसी रीति निहारौ। प्रगट होय निज धर्म सभारौ॥
जा थल जैसौ देखौ कामा। तैसो तन धारौ अभिरामा।१३९।
दुष्ट निवारि करौ बहु लीला। जीव शर्म हित अस मम सीला॥
त्रिगुणमई सब सृष्टि कहावै। गुण आधीन सु लहै सुभावै।१४०।
श्रद्धा रुचि मन होवै तैसी। गुण की वृत्ति जथा जिहि जैसी॥
स्वर्ग मृत्यु पाताल देव नर। जीव जिते जग सकल चराचर।१४१।
जा विधि काज होत जह जानौ। मै तस रूप तहा उनमानौ॥
जैस जाको मन मो माहीं। लगै अधिकसुख नित अधिकाहीं।१४२।
तथा होय सब काल सुधारौ। ऐसे जीव समस्त उधारौ॥
मेरौ रूप अपर नहि होई। बन्यौ रहै जैसो नित साई।१४३।
ऐस पच भाव अधिकारा। प्रगट भई ए कला हमारा॥
नित्य निवास करै या ठामा। जथा भाव पावै विश्रामा।१४४।
जीव उधारन हेत जबै जस। भुवन चतुर्दस काज परै तस॥
प्रगट करै तह निज तन जाई। जीव दया दृढ हृदय बसाई।१४५
भाव रूप जे मै उपजाये। सदा एक रस रहैं सुहाए॥
जाके हिय दृढतर जो भाऊ। ताका तैसो अचल सुभाऊ।१४६
अपन भाव सहित मोहि सेवै। जहा रहै सोई सुख लेवै॥
भाव भक्ति के मै आधीना। भाव नीर सम मो मन मीना।१४७
जहा रहै भाविक जन जाई। तहा बसौ मै अति सुख पाई॥
जैसो मै तैस तन राऊ। सत्य भाव लाला तिम तेऊ।१४८
इनकौ सुख सब दिन इक सारौ। माया करै न जहा प्रचारौ॥
जा थल इनको होय निवासा। देश लहै सो अधिक सुपासा।१४९
इनकी सदा एक सी रीती। अचल भाव जस मो तन प्रीती॥
इनके सहज विनोद प्रचारा। अनायास उधरै जग सारा।१५०

मै निज लोक बसौं जा भाँती । लीला करौं लोक मन माती ॥
तैसे नित्य रहै ए इतहीं । जीव उधार करै जित तितहीं ।१५१।
मै मेरे जन समत एकै । पर उपकार गहै जिय टेकै ॥
ज्यौं आतप ऋतु अबुद पाँती । छावै नभ दिसि सकल सुहाँती ।१५२।
वायु अधीन चलै अनयासा । मेटै जीव ताप तन त्रासा ॥
तैसे मम इच्छा वश भोजन । करै विनोद लोक आनद घन ।१५३।

मिली सहाय मोहि अति भारी । काज किय बहु लाज विचारी ॥
क्रिया एक फल देइ अनन्ता । सो श्रम होय परम मुदवन्ता ।१५४।
ऐसे जानि लाल अति हरषे । रोम रोम आनद भर सरसे ॥
बहुरि करी सुधि तेई बाते । उपजी लाज प्रथम जिय जात ।१५५।

जे अनन्य निज दास कहावे । तिनते कपट न शोभा पावे ॥
ऐसो हेत लिये वर बानी । प्यारा मुख ते पूरव जानी ।१५६।
लाल मनहि मन अति सकुचाने । प्रिया मोहि मन कपटी जाने ॥
ऐसी लाज बढी जिय माहीं । किया विचार कौन विधि जाहीं ।१५७।

सखा दास जन शात रचाए । धाम विलास दिये मन भाए ॥
प्रीति परस्पर रीति नेह की । मानो तहा समान देह की ।१५८।
भाव अचल गुन बिसद अनूपा । सदा एक रस जिनके रूपा ॥
तिन्है विरचि अतिसै सुख पायौ । लाज मिटी मन धीरज आयो ।१५९।

स्वस्थ चित्त ह्वै अस मन आई । अधिक सखी कै हम निपुनाई ॥
न्यूनाधिक्य समान विचारै । जानि बलाबल जिय निर्धारै ।१६०।
इनमै एक ठौर गुन भूरी । अन्त न मिलै शक्ति अस पूरी ॥
हमरी जथा बहुत गुन स्वल्पा । यामै हर्ष न मानै कल्पा ।१६१।

तानि बार पुरुषारथ नेमा । बहुरि न मिलै मोद जस छेमा ॥
प्रिया जीति सब दिन चलि आई । छिन छिन हमै सोइ सुखदाई ।१६२।
जो मन भई सो प्रगट न कहियै । याही मै मुद अनवधि लहियै ॥
जब प्यारी देखैगी नैना । तब तैसे सुनिवै सुख बैना ।१६३।

अब जो प्रथम होत ही बाता । ताकी जलन करै मुद त्राता ॥
पिय प्यारी मिलि समत कीन्ह्यौ । निज भक्तन अनवधि सुख दीन्ह्यौ ।१६४।
जुगलविहारी अस मन धारी । शिशु लीला कीजै जन प्यारी ॥
गोपेश्वर सनिये सुख बानी । भक्त लहै मुद मगलखानी ।१६५।

श्रीजू प्रगट कह्यौ सखियन तें। अरी सुनौ जो उपजी मन ते॥
धर्म सनातन सो वृषभाना। कीरति उच्च तहा परिमाना।१६६।
आनद वृद्धि सदा जित मोदा। ताके सग रहैं जसओदा॥
ए तन धारि भए पति नारी। ऐसी इच्छा हुती हमारी।१६७।
जमुना पार चतूरथ मडल। वात्सल्य अस नाम सुमगल॥
तहो बास ते करैं सुखारे। प्रीति पुनीत अचल पद सारे।१६८।
वात्सल्य दृढ भाव हियें धरि। नारि पुरुष अस नेम अचल करि॥
शिशु लीला देखन दृग चाहैं। हम तन ऐसो जुक्ति उमाहै।१६९।
तहाँ जाय करिहै शिशु लीला। तुमहू होहु हमै सम सीला॥
नित्य विहार इतै अस रहई। बालकेलि ता थल निरवहई।१७०।
कीरति ग्रह प्रगटै हम जाई। लाल जसोदा तन सुखदाई॥
तिनके उदर वायु ते पूरे। होत वृद्धि बीते दिन भूरे।१७१।
प्रसव काल अब अति नियरानौ। ऐसे प्रगटैगे हम जानौ॥
उदर निवास हमै नहि कबहूँ। भक्त वश्य तन धार तबहूँ।१७२।
जननी अति निद्रा वश होई। ताहि न रहै तहाँ सुधि कोई॥
सद्य प्रसूत बाल तन धारी। प्रगट होव तन सेज प्रचारी।१७३।
माता उदर वायु कढि जाई। निद्रा विगत देह सुधि पाई॥
तब जानै बालक जन मायो। सत्य सुकृत भाग्यन फल पायो।१७४।
जन्म कर्म अनमाय हमारे। करै भक्त पावैं सुख भारे॥
ऐसे लाल जसोदा के तन। प्रगट होय दैहै सुख निज जन।१७५।
भक्तन हिये भाव जस होई। हमै सिद्ध करिवैं हित सोई॥
वात्सल्य मडल के बासी। श्रीवृषभान निकट सुखरासी।१७६।
अपर भक्त यह भाव विभावै। हमरे चरण सदा चित लावैं॥
तिनके सदन सकल तुम जाई। प्रगट होहु अस मो मन आई।१७७।
बाल अवस्था हू के माही। छिन अतर हम तुम ते नाही॥
परम कृपा रस सानी बानी। श्रीमुख तें सुनि सब हरखानी।१७८।
बार बार करि दडप्रणामा। आज्ञा मौलि धरी अभिरामा॥
गोपेश्वर या विधि प्रभु सब दिन। भक्तनहित चाहत अति छिनछिन १७९।
प्रगट भए इन, सदन सुहाए। निति नव आनद भर मुद छाये॥
श्रीवृषभान उच्च यह कीरति। नद जसोदा की तैसी रति।१८०।

दोउ भवन सिंधु सुख बाढे। नाते भए परस्पर बाढे॥
छठी अन्नप्रासन ते आदी। उत्सव होहिं परम अहलादी।१८१।
श्रीतन दिन दिन पावत वृद्धी। ते सब करत मनोहर सिद्धी॥
श्रीअंग जोइ अवस्था आवै। या मंडल सो लीला छावै।१८२।
सबके सदन मनो गिरिराजू। आनन्द सरित प्रवाह समाजू॥
जन मन जैसी इच्छा करहीं। जुगलविहारी सो चित धरहीं।१८३।
ऐसें प्रभु भक्तन कै काजैं। लीला त्रिविधि करत नहिं लाजै॥
जे जे इतै होत सुखदाई। ते सब देखौगे ब्रज जाई।१८४।
जौ इत कछू विलोकन चाहौ। बीतै आयु न अवधि लहाहौ॥
लीला नित्य अमित इत होवै। तृप्ति न मानै जन नित जोवै।१८५
सनत्कुमार सुनो मम बानी। रत्नप्रभा सो मन गति जानी॥
बोलीं बचन भक्ति रस गुरुवे। प्रभु आज्ञा पालन बिनु हरुवे।१८६।
गोपेश्वर श्रीआज्ञा जैसी। करिवे वेगि सीस धरि तैसी॥
अपर सुनौ वृत्तांत सुहायो। जाके सुने धीर बहुतायो।१८७।
कलि के जीव विषय जल मानै। जिनके चित्त मीन गति जानै।।
विषय वियोग होत विनसावैं। ता बिनु लव धीरज नहिं पावै।१८८।
विषय अनित्य नित्य यह जीवा। तोसे यति न मानत पीवा।
त्रिगुण पदारथ देह समेता। विषय स्वरूप जानिये एता।१८९।
तिनते जीव नेह दृढ साधै। बार बार तिनकौ तन लाधै।।
जड़के संग भयो जड़ सोऊ। तापै लगत उपाय न कोऊ।१९०।
वेद पुरान जतन बहु कीन्ही। तहाँ धर्म शिक्षा दृढ दीन्ही॥
साधु भक्त मुनि आदि अनेका। कहे किये बहु भाँति विवेका।१९१।
धर्म सनातन थापन करहीं। हरि हरिजन तन सबदिन धरहीं॥
शुद्धाचरन करैं करवावै। भ्रष्ट जीव सतमारग लावै।१९२।
सदाचार करि ते मन सोधैं। नित्यानित्य लहै तब बोधैं।
जगत अनित्य जानि हरि साँचैं। त्यागि विषय प्रभु श्रीपद राचैं।१९३।
ऐसे जीव सकल जग माहीं। धर्म सेतु चढि हरिपुर जाँहीं॥
कलि गत जीव विषय रस जीवन। मानत नास जबै नहिं पीवन।१९४।
प्रथम उपाय भई जे भारी। ते कलि होत न कारज कारी॥
भेषज वैद्य देइ कहि पथ्या। रोगी निस दिन भाषै मिथ्या।१९५।

औषध खाय पथ्य नहि करई । गोपेश्वर सो काहे न मरई ॥
ऐसें कलि के जीव विमूढा । ऊपर धर्म विषय हिय गूढा ।१९६।
अंत करण शुद्ध नहि जिनके । ते उपाय साधक किमि तिनके ॥
ऐसो वैद्य मिलै जौ आई । मेटै दोष कुपथ्य खवाई ।१९७।
गोपेश्वर अस बनै सजोगा । तौ कलि जीव लहै हरि जोगा ।
कलि जीवन की दशा निहारी । खेद लह्यौ हिय जुगल विहारी ।१९८।
आरतबंधु दीन हितकारी । अनवधि करुणासिंधु अपारी ॥
कहौ जीव ते हरि को काजा । होय कहा जो निति दुख भाजा ।१९९।
तौ प्रभू निज सील अधीना । उमगत हियो देखि जिन दीना ॥
जुगलविहारी नित्यानंदा । जन सुख चाहत आनंदकंदा ।२००।
कलि गति पेखि विचारत मन मै । करुणा रस छायौ दोउ तन मैं ॥
रचियै ऐसी कछू उपाया । जीव लहै ध्रुव पद निर्माया ।२०१।
सेवै विषय शुद्ध हिय होवै । हमरौ रूप हृदय तब जोवै ॥
नित्य निवास लहैं इत आई । सिद्ध होय हम रची उपाई ।२०२।
सब दिन ऐसो क्रम चलि आयो । जो हम कीन्ह्यौ चरित सुहायो ॥
गावै सुनै हियें अनुमोदै । करै प्रेमजुत लहै विनोदै ।२०३।
कलि जीवन के हृदय मलीने । सदा विषय रस ही दृढ भीने ॥
ते गुन तिन कह लागत रूखे । ए छिन छिन विषयन के भूखे ।२०४।
विषय जगत नाना विधि केरी । श्रुति बुध उभै मुख्य निर्वेरी ॥
प्रथम नारि सर्वोपरि गाई । इंद्री पंच फसै जित जाई ।२०५।
सो कलिजुग धन के आधीनो । जीव सकल धन तें निति हीना ॥
सतमारग की चाल कहा है । जिहि तिहि भाति द्रव्य मन चाहै ।२०६।
पर धन पर तिय को अपहारा । कलिजुग सिद्ध मुख्य व्यवहारा ॥
अपर विषय सब इनके माही । इहै पाय ते बहु प्रगाटाहीं ।२०७।
चोर जार विष इनके भूपा । भोगी अपर प्रजा अनुरूपा ॥
ए गुन कलि जीवन के प्राना । रैन दिवस हिय इन को ध्याना ।२०८।
इनकी जतन करै हठि धाई । इनकी कथा सुनै चित लाई ॥
इनमै रुचि छिन छिन अधिकाई । इनकी संगति सदा सुहाई ।२०९।
जे इन गुन गति अतिसै भारे । तेई गुरु मानौ जग सारे ॥
परम धर्म इव ए गुन चाहैं । तिनते कृपा अधिकता लाहैं ।२१०।

बिन उपदेश करै सब प्रानी । अपनौ हित सरवस दृढ जानौ ॥
इनके हेत प्राण परिहरई । गलें सरै पुनि तेई करई ।२११।
इनने जीवन की अति प्रीती । दृढनर इनही माहिं प्रतीती ॥
याते इनको मै आचरना । करौं मुख्य निज तन आभरना ।२१२।

जीव गहैं सब अति सुख पाई । अनायास बधन कटि जाई ॥
उभय दोष मै निज सिर धारौं । ऐसे कलिके जीव उधारौं ।२१३।
मोपर अपरन दूजौ कोई । जाकी सक मोहि चित होई ॥
अजस भये मेरौ का बिगरै । कलिजुग जीव सब सुख निवरै ।२१४।

पावन पतित मोर अस नामा । जीव शुद्ध हित करिबें कामा ॥
जौ जस अजस बिचारै कीजै । आरतबधु नाम तजि दीजै ।२१५।
जस के हेतु पचै जग सारौ । यामै अपनौ सुख निर्धारौ ॥
पर सुख हेत अजस जे गहहीं । आरतबधु सत्य ते अहहीं ।२१६।

चोर जार मै जगत कहावौ । कलि जीवन पद परम लहावौ ॥
पिय प्यारी मिलि समत कीन्हो । सहचरि वृद श्रवन सुख लीन्हो ।२१७
गोपेश्वर श्रीश्यामा बोली । कारज रीति सबै कहि खोली ॥
जौ समत पिय ऐसो दृढतर । कीजै यह विधान सुख भर वर ।२१८।

अमित अड हमरे तन रहई । हम इच्छा तें सब निरवहई ॥
जा ब्रह्माड चतुमुख है विधि । तिन पूरव कीन्ह्यो तप है सिधि ।२१९।
वर प्रसाद सबही विधि पायो । ताकौ समै निकट अब आयो ॥
अष्ट वसुन मै द्रोण मुख्य जे । धरा सग तप सिद्ध किये ते ।२२०।
तिनते वचन कहे ता रीती । सिद्ध कियें लहियै उर प्रीती ॥
बसें चतूरथ मडल माहीं । कीरति श्रीवृषभान सुहाहीं ।२२१।
नदराय सग सदा जसोदा । उभे परस्पर अवधि प्रमोदा ॥

इनके सदन भए हम बालक । सदा हमारे ए प्रतिपालक ।२२२।
चलै प्रथम ए जित हम चहई । भुवन चतुर्दस अति जस लहई ॥
भोगभूमि सिगरौ ब्रह्मण्डा । कर्मक्षेत्र एकै लघु खडा ।२२३।
भरत सर्व जाकौ कहि गावैं । जीव जहाँ करनो फल पावै ॥

तहाँ करैं जा विधि के कर्मा । भुगतै जीव अनत दुख शर्मा ।२२४।
तामै सप्त पुरी थल सूची । मथुरा तिनहू मै अति ऊची ॥
तहाँ जाय दोऊ ये बसही । अपने भाव सहित सुख लसही ।२२५।

एई ग्राम नाम बर एई। हमैं सदा सुखदायक जेई ॥
चलै सकल ए ताही ठामा। जमुना ब्रज बृंदावन धामा ।२२६।
ब्रह्मा द्रोण दो उनकी नारी। तहाँ जाय अस करे बिचारी ॥
विधि वृषभान अंग धसि रहई। बामा सो कीरति तन चहई ।२२७।
नंदराय तन द्रोण बसैं हित। धरा जसोदा अंग चहै चित ॥
अपनो परिकर लै तह चलियै। बात बिचारी तौ अति भलिये ।२२८।
इनके सदन बाल तन धरियै। लीला मन भाई तह करियै ॥
जा विधि जीव लहै विश्रामा। कीजै तित लीला अभिरामा ।२२९।
कलिके जीवन की जस रीती। करिवै जतन तथा अस नीती ॥
जुगलविहारी जन हितकारी। यह सिद्धांत कियो निर्धारी ।२३०।
अरस परस दंपति हसि कहिकै। जीव उधार जुक्ति निरवहिकै ॥
परमानंद लह्यो दोउ याहीं। सहचरि सो सुनि चित्त सिहाहीं ।२३१।
गोपेश्वर पहिलैं ए बातै। भई श्रवन सुख उपजत जातै ॥
श्रीललिता ते मन धरि राखी। समै पाय विनती नय भाखी ।२३२।
माया जीव संग लह खेदा। चेत धरायो सिगरो भेदा ॥
जुगलविहारी सैन अवस्था। श्रीललिता सब कही व्यवस्था ।२३३।
श्रीजू सुनि सो सकल सँभारी। जीव उधार क्रिया मन धारी।
प्रगट कियो श्रीहस्त सुखद फल। आदि अंत सब हेतु कह्यो भल ।२३४।
श्रीललिता तस कीन्ह्यो जाई। परमानंद लह्यो तुम पाई ॥
गोपेश्वर सो रूप तुम्हारौ। प्रभू क्रिया बाढ्यो जस भारौ ।२३५।
याते मथुरा मंडल जाई। बास करौ आनंद रस छाई ॥
प्रथम भए तुमहीं प्रस्थाना। प्रभु चलिवे को हेतु पिछाना ।२३६।
जो तुम सुनी रही कछु शेषा। नैनन देखोगे ब्रज देशा ॥
नित्य विहार अपर लीला सब। चखन पेखि लहिहौ सुख भर अब।२३७।
गोपेश्वर गुनिये सो बाता। समुझि हियें उमगत सब गाता ॥
प्रभु अति कृपा जथा जीवन पर। तथा अपर को सब सुख जस पर ।२३८।
अवरनि की को कहै कहानी। मायाधीन हीनमति प्रानी ॥
जो माया पर ईश कहावै। जाकौ वेद सदा जस गावै ।२३९।
जद्यपि तिन नाना वपु धारे। जुग जुग जीव अनंत उधारे ॥
अजस बचाव सुजस विस्तारे। संक सहित अस नेम सभारे ।२४०।

विन उपदेश करै सब प्रानी। अपनौ हित सरवस दृढ जानौ ॥
इनके हेत प्राण परिहरई। गलें सरै पुनि तेई करई ।२११।
इनने जोवन की अति प्रोती। दृढतर इनकी माहिं प्रतीती ॥
याते इनको मैं आचरना। करौं मुख्य निज तन आभरना ।२१२।
जीव गहैं सब अति सुख पाई। अनायास बधन कटि जाई ॥
उभय दोष मैं निज सिर धारौं। ऐस कलिके जीव उधारौं ।२१३।
मोपर अपरन दूजो कोई। जाकी सक मोहि चित होई ॥
अजस भयें मेरौ का बिगरै। कलिजुग जीव सघ सुख निधरै ।२१४।
पावन पतित मोर अस नामा। जीव शुद्ध हित करिवें कामा ॥
जौ जस अजस बिचारैं कीजै। आरतबधु नाम तजि दीजै ।२१५।
जस के हेतु पचै जग सारौ। यामै अपनो सुख निर्वारौ ॥
पर सुख हेत अजस जे गहहीं। आरतबधु सत्य ते अहहीं ।२१६।
चोर जार मैं जगत कहावौ। कलि जीवन पद परम लहावौ ॥
पिय प्यारी मिलि समत कीन्हो। सहचरि वृद श्रवन सुख लीन्हो ।२१७
गोपेश्वर श्रीश्यामा बोली। कारज रीति सबै कहि खोली ॥
जौ समत पिय ऐसो दृढतर। कीजै यह विधान सुख भर वर ।२१८।
अमित अड हमरे तन रहई। हम इच्छा ते सब निरवहई ॥
जा ब्रह्मांड चतुर्मुख है विधि। तिन पूरव कीन्ह्यो तप है सिधि ।२१९।
वर प्रसाद सबही विधि पायो। ताको समै निकट अब आयो ॥
अष्ट वसुन मै द्रोण मुख्य जे। धरा सग तप सिद्ध किये ते ।२२०।
तिनते वचन कहे ता रीतो। सिद्ध कियें लहियै उर प्रीतो ॥
बसे चतूरथ मडल माही। कीरति श्रीवृषभान सुहाहीं ।२२१।
नदराय सग सदा जसोदा। उभे परस्पर अवधि प्रमोदा ॥
इनके सदन भए हम बालक। सदा हमारे ए प्रतिपालक ।२२२।
चलै प्रथम ए जित हम चहई। भुवन चतुर्दस अति जस लहई ॥
भोगभूमि सिगरौ ब्रह्मण्डा। कर्मक्षेत्र एकै लव खडा ।२२३।
भरत सर्व जाको कहि गावै। जीव जहाँ करनो फल पावै ॥
तहाँ करैं जा विधि के कर्मा। भुगतै जीव अनत दुख शर्मा ।२२४।
तामै सप्त पुरी थल सूचो। मथुरा तिनहू मैं अति ऊची ॥
तहाँ जाय दोऊ ये बसहीं। अपने भाव सहित सुख लसहीं ।२२५।

ग्राम नाम बर एई। इमै सदा सुखदायक जेई॥
सकल ए ताही ठामा। जमुना ब्रज वृंदावन धामा।२२६।
द्रोण दो उनकी नारी। तहाँ जाय अस करे विचारी॥
वृषभान अग धर्मि रहई। वामा सो कीरति तन चहई।२२७।

राय तन द्रोण बसैं हित। धरा जसोदा अग चहैं चित॥
परिकर लै तह चलियै। बात विचारी तौ अति भलियै।२२८।
के सदन बाल तन धरियै। लीला मन भाई तह करियै।।
विधि जीव लहैं विश्रामा। कीजै तित लीला अभिरामा।२२६।

के जीवन की जस रीती। करिवे जतन तथा अस नीती॥
विहारी जन हितकारी। यह सिद्धांत कियो निर्धारी।२३०।
रस परस दंपति हसि कहिकै। जीव उधार जुक्ति निरवहिकै॥
मानंद लह्यो दोउ धाहीं। सहचरि सो सुनि चित्त सिहाहीं।२३१।

पेश्वर पहिलैं ए बातै। भई श्रवन सुख उपजन जातै॥
ललिता ते मन धरि राखी। समै पाय विनती नय भाखी।२३२।
या जीव संग लह खेदा। चेत धरायो सिगरो भेदा॥
गलविहारी सैन अवस्था। श्रीललिता सब कही व्यवस्था।२३३।
जू सुनि सो सकल सँभारी। जीव उधार क्रिया मन धारी।
ट कियो श्रीहस्त सुखद फल। आदि अंत सब हेतु कह्यो भल।२३४।

ललिता तस कीन्ह्यो जाई। परमानंद लह्यो तुम पाई॥
पेश्वर सो रूप तुम्हारौ। प्रभू क्रिया बाढ्यो जस भारौ।२३५।
ते मथुरा मंडल जाई। बास करौ आनंद रस छाई॥
थम भए तुमहीं प्रस्थाना। प्रभु चलिवे को हेतु पिछाना।२३६।
जो तुम सुनी रही कछु शेषा। नैनन देखोगे ब्रज देशा॥
नित्य विहार अपर लीला सब। चखन पेखि लहिहौ सुख भर अब।२३७।
गोपेश्वर गुनिये सो बाता। समुझि हियें उमगन सब गाता॥
प्रभु अति कृपा जथा जीवन पर। तथा अपर को सब सुख जस पर।२३८।

अवरनि की को कहै कहानी। मायाधीन हीनमति प्रानी॥
जो माया पर ईश कहावै। जाकौ वेद सदा जस गावै।२३६।
जद्यपि तिन नाना वपु धारे। जुग जुग जीव अनंत उधारे॥

बिन उपदेश करै सब प्रानी। अपनौ हित सरवस दृढ जानौ ॥
इनके हेत प्राण परिहरई। गर्ले सरै पुनि तेई करई ।२११।
इनने जीवन की अति प्रीती। दृढतर इनही माहिं प्रतीती ॥
याते इनको मै आचरना। करौं मुख्य निज तन आभरना ।२१२।
जीव गहैं सब अति सुख पाई। अनायास बधन कटि जाई ॥
उभय दोष मैं निज सिर धारौं। ऐसे कलिके जीव उधारौं ।२१३।
मोपर अपरन दूजौ कोई। जाकी सक मोहि चित होई ॥
अजस भये मेरौ का बिगरै। कलिजुग जीव सब सुख निधरै ।२१४।
पावन पतित मोर अस नामा। जीव शुद्ध हित करिबे कामा ॥
जौ जस अजस विचारैं कीजै। आरतबधु नाम तजि दीजै ।२१५।
जस के हेतु पचै जग सारौ। यामै अपनौ सुख निर्धारौ ॥
पर सुख हेत अजस जे गहहीं। आरतबधु सत्य ते अहहीं ।२१६।
चोर जार मैं जगत कहावौं। कलि जीवन पद परम लहावौं ॥
पिय प्यारी मिलि समत कीन्हो। सहचरि वृद श्रवन सुख लीन्हा ।२१७
गोपेश्वर श्रीश्यामा बोली। कारज रीति सबै कहि खोली ॥
जौ समत पिय ऐसो दृढतर। कीजै यह विधान सुख भर वर ।२१८।
अमित अड हमरे तन रहई। हम इच्छा तें सब निरवहई ॥
जा ब्रह्माड चतुर्मुख है विधि। तिन पूरब कीन्ह्यो तप है सिधि ।२१९।
वर प्रसाद सबही विधि पायो। ताकौ समै निकट अब आयो ॥
अष्ट वसुन मै द्रोण मुख्य जे। धरा सग तप सिद्ध किये ते ।२२०।
तिनतें वचन कहे ता रीतो। सिद्ध कियें लहियै उर प्रीतो ॥
बसें चतूरथ मडल माहीं। कीरति श्रीवृषभान सुहाहीं ।२२१।
नदराय सग सदा जसोदा। उभे परस्पर अवधि प्रमोदा ॥
इनके सदन भए हम बालक। सदा हमारे ए प्रतिपालक ।२२२।
चलै प्रथम ए जित हम चहई। भुवन चतुर्दस अति जस लहई ॥
भोगभूमि सिगरौ ब्रह्मण्डा। कर्मक्षेत्र एकै लत्र खडा ।२२३।
भरत सर्व जाकौ कहि गावैं। जीव जहाँ करनो फल पावै ॥
तहाँ करैं जा विधि के कर्मा। भुगतै जीव अनत दुख शर्मा ।२२४।
तामैं सप्त पुरी थल सूवो। मथुरा तिनहू मैं अति ऊंची ॥
तहाँ जाय दोऊ ये बसही। अपने भाव सहित सुख लसही ।२२५।

एई ग्राम नाम वर एई। हमै सदा सुखदायक जेई॥
चलै सकल ए ताही ठामा। जमुना ब्रज वृंदावन धामा।२२६।
ब्रह्मा द्रोण दो उनकी नारी। तहाँ जाय अस करै विचारी॥
विधि वृषभान अंग धर्मि रहई। वामा सो कीरति तन चहई।२२७।
नंदराय तन द्रोण बसैं हित। धरा जसोदा अंग चहैं चित॥
अपनौ परिकर लै तह चलियै। बात विचारी तौ अति भलिये।२२८।
इनके सदन बाल तन धरियै। लीला मन भाई तह करियै॥
जा विधि जीव लहै विश्रामा। कीजै तित लीला अभिरामा।२२९।
कलिके जीवन की जस रीती। करिवै जतन तथा अस नीती॥
जुगलविहारी जन हितकारी। यह सिद्धांत कियो निर्धारी।२३०।
अरस परस दंपति हसि कहिकै। जीव उधार जुक्ति निरवहिकै॥
परमानंद लह्यो दोउ थाहीं। सहचरि सो सुनि चित्त सिहाही।२३१।
गोपेश्वर पहिलैं ए बातै। भई श्रवन सुख उपजन जातै॥
श्रीललिता ते मन धरि राखी। समै पाय विनती नय भाखी।२३२।
माया जीव संग लह खेदा। चेत धरायो सिगरो भेदा॥
जुगलविहारी सैन अवस्था। श्रीललिता सब कही व्यवस्था।२३३।
श्रीजू सुनि सो सकल सँभारी। जीव उधार क्रिया मन धारी।
प्रगट कियो श्रीहस्त सुखद फल। आदि अंत सब हेतु कह्यो भल।२३४।
श्रीललिता तस कीन्ह्यो जाई। परमानंद लह्यो तुम पाई॥
गोपेश्वर सो रूप तुम्हारौ। प्रभू क्रिया बाढ्यो जस भारौ।२३५।
याते मथुरा मंडल जाई। बास करौ आनंद रस छाई॥
प्रथम भए तुमहीं प्रस्थाना। प्रभु चलिवे को हेतु पिछाना।२३६।
जो तुम सुनी रही कछु शेषा। नैनन देखोगे ब्रज देशा॥
नित्य विहार अपर लीला सब। चखन पेखि लहिहौ सुख भर अब।२३७।
गोपेश्वर सुनिये सो बाता। समुझि हियें उमगन सब गाता॥
प्रभु अति कृपा जथा जीवन पर। तथा अपर को सब सुख जस पर।२३८।
अवरनि की को कहै कहानी। मायाधीन हीनमति प्रानी॥
जो माया पर ईश कहावै। जाकौ वेद सदा जस गावै।२३९।
जद्यपि तिन नाना वपु धारे। जुग जुग जीव अनंत उधारे॥
अजस बचाव सुजस विस्तारे। संक सहित अस नेम सभारे।२४०।

निंदा सदा अजस की कीन्ही । धर्म धारि जस पदवी लीन्ही ॥
प्रभुता सही सक मन ऐसी । राजा जथा प्रजा तिन तैसी ॥२४१॥
निंद्य करम कोऊ हम करिहै । जीव सोइ जीहा उर धरिहैं ॥
उभै प्रकार भीति मन धारी । सदा ससकित नीति सभारी ।२४२।
जाकौ अजस होय जग माहीं । ता सम अधम अपर कोउ नाही ॥
नर्क परै बहु जीवन डारै । जो करि पाप जगत विस्तारै ।२४३।
वेद कहै अस धर्म दिखाई । पाप सुकर्म सुभा शुभदाई ॥
करै एक फल भुक्तैं केते । गावै सुनै सहायक तेते ।२४४।
षटकारकजुत कर्म कहावै । राजा प्रजा तथा फल पावै ॥
निंदा सम नहि पातक दूजो । करै अल्प प्राणी की हू जो ।२४५।
जाकी निंदा सो अति पापी । निंदक जन ते जग सतापी ॥
निंद्य करम ते निंद होई । जग अस रीति गहै सब कोई ।२४६।
उभय प्रकार सक मन आनी । चले सभारि वेद गहि बानी ॥
प्रभु के जे अवतार घनेरे । या विधि जस कीन्हे बहुतेरे ।२४७।
अजस भीति जस प्रीति जनाई । सका गही कही करवाई ॥
जाके सीस नियता कोई । ताकी रीति सदा अस होई ।२४८।
जा पर ईश न दूजो कोऊ । लच्छन द्वार जानिये सोऊ ॥
जो मन चाहै तैसे करै । नीति अनीति सक नहि धरै ।२४९।
सेवैं तौ सकल जुत त्रासा । सो अवतारन केर निवासा ॥
जो कछु करै धर्म सो होई । सीस धारि मानै सब कोई ।२५०।
गोपेश्वर सपति अधिकाई । कृपा द्वार सब होत लखाई ॥
अवतारी अवतार कहावै । तिनकौ रूप क्रिया प्रगटावै ।२५१।
जो दृगगोचर होय पदारथ । चाहत मद प्रमाण अपारथ ॥
कारन कारन जुगलविहारी । जीव दया ऐसी उर धारी ।२५२।
कलि जीवन रुचि पाप निहारी । सोइ तरन की जतन विचारी ॥
निंद्य करम कीजै आचरना । सदा निषेध वेद जो बरना ।२५३।
अजस हमार होहु जग माहीं । एकलि जीव परम पद जाँहीं ॥
शका शून्य दया उर इतनी । महिमा सकै गाय को जितनी ।२५४।
गोपेश्वर प्रभु महिमा जैसी । हिये समुझि सुख लहियै तैसी ॥
महिमा अग इतौ पहिचानौ । निंदा करि पद प्रापति जानौ ।२५५।

चोर जार कहि कहि सब गैहैं। पूरन अवधि अजस की दैहैं॥
कपटी कारे औगुन भारे। लपट छली कठोर लबारे।२५६।
ऐसी गाथा सत सहसाई। गैहैं जीव जथा मन भाई॥
जुगलबिहारी महिमा भारो। गाय अजस जग हाहि सुखारी।२५७।
गोपेश्वर जस भाग्य तुम्हारौ। देखि न परै ढूढि जग सारौ॥
प्रभु की कृपापात्र जो होई। ताकी समता अरर न कोई।२५८।
या मडल की रीति सुहाई। पूछी तुम मति सम हम गाई॥
बालक तने धरि जुगलबिहारी। निज भक्तन सुख देत अपारी।२५९।
प्रभु गुन समुझि हिय मुद भरिये। आज्ञा जथा वेगि सो करिये॥
ताते कीजै अब प्रणामा। चलिवे पथ सेष दिन जामा।२६०।

दोहा—रत्नप्रभा के वचन सुनि, गोपेश्वर अति गूढ।
तन पुलकावलि नैन जल, हियो उमग हलि मूढ़॥१॥

अस बोले रस प्रेम भरि, करि प्रणाम बहु बार।
रत्नप्रभे गुरु अपर तन, दीन्हौ मोद अपार॥२॥

नीके नैन निहारि सो, मडल परम अनूप।
करि प्रणाम लै नाम मुख, हरखि चले सुखरूप॥३॥

* चौपाई *

निरखत हरखत भर सुख बरखत। चल्यो विमान मद गति सरसत॥
आगे चले दृष्टि पथ आयो। मडल सख्य सकल सुख छायो॥१॥
कारन प्रथम सर्व सुनि लीन्हौ। याते प्रश्न बहुत नहि कीन्हौ।
रचना धाम विचित्रित देखी। सकल भाति सपति तह लेखो॥२॥
सखा रूप गुन भाग्य विसाला। नखसिख फबे सिंगार रसाला॥
शोभा अनवधि नैन निहारी। टरत न डीठि तहाँ तें टारी॥३॥
गोपेश्वर लखि मन ललचाने। प्रश्न कियो हिय अति हरखाने॥
इनके दर्शन लागत प्यारे। उपजत मन सकल्प हमारे॥४॥
रत्नप्रभा बोलीं मुसुकाई। मानत, का इत अचरज ताई॥
निसिवासर हरि के सग रहहीं। सख्य भाव अनवधि सुख लहहीं॥५॥
प्रभु इनकी रुचि लखि अनुसरहीं। ए सेवा हरि की तस करहीं॥
हास्य प्रौढ़ समता अग लीन्हे। उभय ओर नूतन रस भीने॥६॥

नेह दुहूँ दिसि बाढै भारी। सोई करन उपाय विचारी॥
तीन काल ऐसे इत जाहीं। रहैं निमग्न मोद निधि माहीं॥७॥
गोपेश्वर ए सखा कहावै। सेवक ह्वै समता अग पावै॥
इनकी शोभा सपति जस सुख। का विधि कहै लहै को अस सुख॥८॥

दोहा—निज निज मतिसम गावहीं, लहैं न अत अनत।
सम सेवक सपति कृपा, भाखै कौन समत॥१॥
प्रभु प्यारे जिनकौ लगैं, ते भाजन प्रभु प्रीति।
गोपेश्वर तिन सन तेई, चलियै ऐसी नीति॥२॥
सुख सपति आनद घर, मडल सख्य विलोकि।
करि प्रणाम आगे चले, अरस परस अवलोकि॥३॥

❖ चौपाई ❖

मद मद गति चलत विमाना। देखत ठाम अनूप अमाना॥
कछू दूरि दृग गोचर भएऊ। मडल दास्य प्रथम जो कहेऊ॥१॥
ताकी रचना अति ही भारी। अधिक एक एकन ते प्यारी॥
चित्त लुभात नैन पथ आये। मन इद्री अरभ्रत सुख पायें।२॥
दास अपार बसै जित भारे। मानौ सबै भक्ति तन धारे॥
प्रीति अनन्य सदा प्रभु पद की। छुटा न परस अपर सुख मद की॥३॥
जद्यपि भोग अमायक पाए। जातन करि निरनै ते गाए॥
स्वामी सेवा सुख के आगै। सकल जिन्है ते फीके लागै॥४॥
अगी अग रीति जिनकेरी। सेवा पालन उभै निवेरी॥
सेवैं दास प्रभू जन पालै। उभै ओर सुख बढै रसालै॥५॥
अष्ट जाम तन मन वच सेवैं। अजित प्रभू निज वस करि लेवै॥
प्रभू कृपा अवलोकनि बोलनि। हिये बसो सो रीति अडोलनि॥६।
छिन छिन सो मुख सुमिरन करहीं। देह दशा विह्वलता भरही॥
चलत फिरत ठाढें थल राजै। प्रेम चिह्न झिगरे तन भ्राजै॥७॥
छके जके से दास अमोला। गोपेश्वर लखि दृग मन लोला॥
जब तें चले निकुञ्ज ठाम ते। देखत आवत ग्राम ग्रामतें॥८॥
इनकी रीति लगत मोहि प्यारी। कछू अग इत परत निहारी॥
गोपेश्वर के मन की जानी। रत्नप्रभा बोली मृदु बानी॥९॥
ए अनन्य प्रभु के निज दासा। प्रगटे श्रीतन ते हरि आसा॥
हरि इनमै ए हरि के माहीं। अगी अग भेद कछु नाहीं॥१०॥

श्रीमुख अधिक बडाई दीन्ही । ठौर ठौर अस्तुति अति कीन्ही ॥
अमित अड कारन मम देही । याते अधिक अपर को नेही ॥११॥
सर्वाराध्य ईशता भारी । श्रीशोभा जा मध्य अपारी ॥
ऐसे तन की करौ न आसा । छाँडि अनन्य भक्त प्रिय दासा ॥१२॥
अनुगामी इनको नित रहहुँ । दास चरणरज मस्तक गहहुँ ॥
इन अनुकूल न मम तन होई । कोटि शत्रु सम लेखौ सोई ॥१३॥
दास हिये प्रभुपद तस प्रीती । अधिक अधिक उभ दिसि दृढ रीती ॥
गोपेश्वर कहु इनकी महिमा । जानि सकै को जितनी गरिमा ॥१४॥
जे दासन त प्रीति बढावैं । प्रभुपद लहैं जगत जस पावैं ॥
हरिगुन अमित जथा तिमि दासा । ऐसी मति सब विधि सुखवासा ॥१५॥
ऐसे दास बसै या मडल । प्रभु सेवा रुचि प्रीति अखडल ॥
हरि हरिजन महिमा इक सारी । समुझि हिये धरिये गुनि भारी ॥१६॥
जौ इत बसि कछु दखन चाहौ । जाय काल बहु अत न लाहौ ॥

दोहा—गोपेश्वर मन जानिये, प्रभु महिमा अनपार ।
समुझि ताहि निति कीजियै, नमस्कार बहु बार ॥ १ ॥
नीकै नैन निहारियै, मडल दास्य अनूप ।
प्रेम भरे प्रभु तत्परे लखियै दास स्वरूप ॥ २ ॥
करि प्रणाम सुख लीजियै, दीजै मग दिसि चित्त
चलै विमान सु देखियै, कौतुक जे जे चित्त ॥ ३ ॥

❖ चौपाई ❖

रत्नप्रभा के वचन सुहाये । सुनि गोपेश्वर अति सुख पाये ॥
बार बार बहु करी प्रणामा । सब सुमिरै मुख दपति नामा ॥१॥
चल्यो विमान मद गतिचारी । देखी पथि शोभा अति भारी ॥
वन उपवन वाटिका अरामा । विमल जलासै सुखप्रद धामा ॥२॥
देखत आवत मोद बढावत । हरखि उमगि दपति गुन गावत ॥
जो मडल पहिले कहि गायो । शात नाम सो दृग पथ आयो ॥३॥
जा थलके जड चेतन वासी । शात स्वरूप लसें सुख रासी ॥
डोलैं सात समीर सुहाई । चचलता चर अचर गवाई ॥४॥
शाताकार बसैं जन जामै । शाति लहै जो जावै वामैं ॥
करै प्रचार शात रस भीने । भक्ति जोग सीवा तन कीन्हे ॥५॥

देखि परैं तिनके अग कैसे । बिन उद्वेग अबुनिधि जैसे ॥
मन इद्री तन की गति ऐसी । प्रतिमा शात अचल रह जैसी । ६॥
प्रभुपद वृत्ति सिमिटि अति लागी । अवि चल सुरति अडिग तह पागी ॥
बैठे खरे परे पथि डोलै । लगी समाधि अग नहि लोलै ॥७॥
गोपेश्वर अस दशा निहारी । बडी बार लौ हिये विचारी ॥
अभ्यतर इनकैं सुख भारी । बाहिर कृपा न कछू प्रचारी ॥८॥
गोपेश्वर मन शका आई । प्रगटन भाषत रहत लजाई ॥
उत्कठा उपजी उर भारी । बोले विहसि लाज अग टारी ॥९॥
रत्नप्रभे अनवधि सुखदाता । शक भई अस मन जनत्राता ॥
शात भक्त ए आप बखाने । सेवा अग न परत पिछाने । १०॥
भक्ति रूप सेवा गुण गाई । सा इत एक न होत लखाई ॥
प्रतिमा की सी रीति गहें ए । प्रभु सेवा केहि भाति लहें ए ॥११॥
जौ कहियै मन ते सब करहीं । मन प्रमाण सर्वोपरि धरहीं ॥
जहाँ न प्रगट प्रभू अग देखै । मन प्रमाण ताही थल लेखै ॥१२॥
सबही मडल प्रगट प्रचारा । प्रभू देत निज जन सुख भारा ॥
इनकी रीति कहा नहि जानै । आप कहै सोई परिमानै ॥१३॥
रत्नप्रभा सुनि सूधी बानी । गोपेश्वर तन लखि हरखानी ॥
बोली मद विहसि वर बैना । जिनके सुनै लहै सब चैना ॥१४।
गोपेश्वर तुम ते का अविदित । तौ सुन्यो चाहत जो विधि इत ॥
या मडल की ऐसी रीती । दृढ सिद्धात प्रभू पद प्रीती ॥१५॥
ताके हेत कृपा बहु साधै । प्रभू कृपा तिनको फल लाधै ॥
जोग अग जे आठ कहावैं । ते करि सिद्धि समाधि लगावै ॥१६॥
ताते मन अति निश्चल होई । शात अग गावे सब सोई ॥
अत करण चतुष्टय थिरता । तन इद्री गति हू तत्समता ॥१७॥
शात नाम यह मडल अहई । जो इत बसै साति अति लहई ॥
शात सुभाव सहित रुचि जैसी । प्रभु पद उपजै श्रद्धा तैसी ॥१८॥
जैसो रूप हिये अति भावै । मन समाधि ताही ते लावे ॥
तैसो रूप प्रभू प्रगटावैं । भक्ति जोग फल सिद्धि लखावे ॥१९॥
इनके मन की रुचि जस देखैं । प्रभू तथा अपने हिय लेखै ॥
ए प्रभु कौ सुख छिन छिन चाहैं । प्रीति उभय दिसि वृद्धि उमाहै ॥२०॥

इनके सन्न प्रभू नित रहहीं । शात भाव सेवा सुख लहहीं ॥
समै समै सेवैं सबही विधि । उभय ओर बाढै आनदनिधि ॥२१॥
सेवक सेव्य उभय ममसीला । ता विधि की होवैं इत लीला ।
ऐसे निति अनवधि सुख माहीं । रये निमग्न दिवस निसि जाहीं ॥२२॥
स्वत सिद्ध जो शात सुभाऊ । गति गभीर सु तासु प्रभाऊ ॥
बाहिर भीतर सुख निधि भूरे । शात भक्त ए सब गुन पूरे ॥२३॥
जाकी शात वृत्ति अति हाई । ताहि न सहसा जानै कोई ॥
काज परै जैसो जा विधि जब । हिय को हेतु सबै प्रगटै तब । २४॥
जन महिमा श्रीमुख अस गावै । मोको सब सर्वज्ञ बतावै ॥
जन गुन जानि सको नहि पारा । जिन मै ऐसो बल अति भारा ॥२५॥
दुराराध्य दुर्गम दुस्साधी चड प्रताप अचल अनबाधी ॥
सकल सुरासुर त्रसि तर है निति । नाघि न सकै चराचर मम मिति ॥२६॥
जद्यपि ऐसो रूप हमारौ । जन करि राखत वस्य न चारौ ॥
मोते बली अधिक अति एई । निज रुचि मोहि नचावत तेई ॥२७॥
गोपेश्वर श्रीमुख इमि गाई । जन महिमा सब काल बढाई ॥
जानि सकै को तिनको भेवा । जिनकी कृपा प्रभू पद देवा ॥२८॥
भक्ति जोग सगल तन धारी । ते या मडल बसैं मझारी ॥
शात रूप मडल सुखदाई । लखैं शाति उपजत हिय आई ॥२९॥
या मडल की ऐसी रीती । स्वल्प अग भाखी मै नीती ॥
जान्यौ चहौ कछू जो अगा । बीतै जन्म न अत प्रसगा ॥३०॥
हरि हरि जन महिमा अनपारा । हियैं समुझि लहियै सुख भारा ॥
जे तुम प्रश्न किये मन भाए । ते मति सम हम गाय सुनाए ॥३१॥
अब कहियै कैसी रुचि मन की । सुधि कीजै तौ भलैं गवन की ॥
दिन अवशेष देश सो दूरी । प्रभु आज्ञा बल तर अति भूरी ॥३२॥
सेवा हेत हमै तह जानौ । तुम्है प्रसन्न राखि अस मानौ ॥
अब जैसी कछु आज्ञा कीजै । तथा श्रवन धरि मन सुख लीजै ॥३३॥
जुगलविहारी कृपा अपारी । गोपेश्वर सो तुम सिर धारी ॥
तुम्है प्रसन्न सदा हम चाहैं । दपति सेवा सुख जिमि लाहैं । ३४॥
साधु प्रसन्न भये सुख जैसौ । गाय न सकैं वेद विधि तैसौ ॥
सुगम रीति हरि पावन केरी । करि सिद्धात सबन निरवेरी ॥३५॥

मन वच कर्म साधु की सेवा। हरि हरि जन समत वर एवा ॥

दोहा—रत्नप्रभा मुख खानि ते, रत्न बैन सुख दैन।
सुनि गोपेश्वर धारि हिय, पायो अनवधि चैन ॥१॥
बोले वचन विनीत अति, प्रेम भक्ति रससानि।
नाय मौलि तिमि अग सब, सकुचि जोरि जुग पानि ॥२॥
रत्नप्रभा श्री तव प्रभा, जौ जन तन परसाय।
मोह तिमिर विनसाय ध्रुव, जुगल धाम दरसाय ॥३॥
वचन रावरे सुनत हिय, चाह सौगुनी होत।
नित्यविहारी जुगल प्रभु, गोप्य रहस्य उदोत ॥४॥
श्री ललिता करुणा उदधि, तिनको प्रतिनिधि अग।
सहज सुभाव उठत वचन, ए माधुर्य तरग ॥५॥
परसत परमानद सुख, उपजत हिये अथाह।
वचन तरगन प्रति मिलत, रत्न रहस्य सुलाह ॥६॥
परपरा सबध अस, देखि परयौ मोहि नैन।
जुगल प्रभू परिकर जितौ, केवल जन सुख दैन ॥७॥
कृपा रावरी तें सकल, पायो लाभ अतूल।
अब दिन दिन छिन छिन सदा, बाढैगो सुखमूल ॥८॥
चरण वदना उठि किये, गोपेश्वर बहु बार।
रत्नप्रभा उठि लाय हिय, बाढ्यो मोद अपार ॥९॥
बडी बार चख लखि रहे, जुगल प्रभू सुखधाम।
हियें ल्याय दृग मूदि पुनि, बैठे सुमिरत नाम ॥१०॥

◆ चौपाई ◆

राधाकृष्ण नाम धनि कीन्ही। सर्वोपरि सीवा सुख लीन्ही ॥
निरखि परस्पर सब हरखाने। विविधि भाति आनद सरसाने ॥१॥
मडल शात अनूपम भारी। गोपेश्वर जुत प्रीति निहारी ॥
हस्त जोरि निज मस्तक लाये। सुख समूह अनवधि उर छाये ॥२॥
इच्छा गवन विमान निहारी। चल्यौ मद गति सुखद सभारी ॥
दिसा भूमि देखत चहु ओरे। जहा तहा अरभ्रन मन जोरे ॥३॥
वापी कूप सरोवर नाना। फूले कज भ्रमर द्विज गाना ॥
बन उपवन वाटिका अरामा। रचना चित्र विचित्रित धामा ॥४॥

अमित भांति आरन्य सुहाए। सब ऋतु शोभा नखसिख छाए ॥
विहरैं नर नारी बहु ताए। ठाम ठाम सुषमा अधिकाए ॥५॥
निरखत हरखत हिय सुख सरसत। बनिक अनूपम दृग मन करषत ॥
चल्यौ विमान मंद गति आवत। सबके तन मन सुख उपजावत ॥६॥
ज्यौं ज्यौं जान चलत या दिसि तन। त्यौं त्यौं गोपेश्वर विह्वल मन ॥
व विलास वै आनंद सागर। वै माधुर्य्य लहरि मुदता भर ॥७॥

दंपति नाम रूप गुण सीला। जनहितकरतविविधिविधिलीला ॥
तथा अगजा रीति अनूपा। परिकर सबै प्रणत हित रूपा ॥८॥
बार बार उर सो सुधि आवत। छिनछिनतनमनगतिविकलावत ॥
चतुर सखी कहि कहि समुझावत। प्रभू कृपा सर्वोपरि गावत ॥९॥
देखि परी विरजा सरि भारी। परम धाम चहु दिसि परिवारी ॥
योजन लक्ष गर्भ विस्तारा। घेरे धेनु लोक वर सारा ॥१०॥
लोक प्रमाण जानि किमि जावै। प्रभु इच्छा आधी न कहावै ॥
विरजा उभय कूल अति सोहैं। निरखत सब के दृग मन मोहैं ॥११॥

हाटक मणि रचना बहु भाँती। घाट भूमि तट परम सुहाती ॥
तीर उभय वर वृक्ष सुहाए। लता औषधा वेली छाए ॥१२॥
गुल्म समूह पुष्प फल भारा। परसत भूमि झूमि झुकि डारा ॥
मत्त भ्रमर द्विजगन रव करहीं। त्रिविध समीर सुखद अनुसरहीं ॥१३॥
जल के मध्य कमल सब जाती। फूलि रहे सुषमा सरसाती ॥
हंसादिक विहरैं जलक्रीड़ा। पद्म खंड कीन्हे सुख नीड़ा ॥१४॥

जीव नीर अभ्यंतरचारी। करैं केलि गति विषम विसारी ॥
माया गुण जहँ नहि संसर्गा। प्रभु सेवा हित इत सब वर्गा ॥१५॥
विरजा मध्य कूट मणि नाना। योजन सत द्वी त्रि परिमाना ॥
रचना तिनपै अमित सुहाई। धाम विहार भूमि सुखदाई ॥१६॥
केते दंपति क्रीड़ा के थल। अपर लोक वासी विहरैं भल ॥
चलत विमान नीर नगिचाई। शोभा सकल नैन पथ आई ॥१७॥

पँहुच्यौ पै ले तीर विमाना। मानौ शोभा तनी विताना ॥
कहा कहौं रचना तट भारी। मन अटकत चख नेक निहारी ॥१८॥
उतरि विमान भूमि थिर भएऊ। सरि तट शोभा लखि सुख लएऊ ॥
उतरि तीर विहरे कछु बारा। मज्जन हेत बहुरि मन धारा ॥१९॥

नीर केलि नान विधि कीन्ही। वन विहार तन श्रम करि छीनी ।।
निकसि निकसि तट पट अग धारे। नखासख सकल सिगार सवारे ।।२०।।
अरस परस मिलि मोद बढाए। वचन अमिय सम सुने सुनाए ।।
रत्नप्रभा बोली मृदु बानी। प्रभु आज्ञा कारज उनमानी ।।२१।

दोहा—श्री जमुना या तीर वर, आया जबै बिमान।
वात्सल्य मडल रह्यो, कछू बार परिमान ।।१।।
जे जे मडल च्यारि मै, बसै सदा सुख पूर।
समाचार तिन सब सुन्यौ, निज कानन मुद भूर ।।२।।
तैसै ता ता ठाम ह्वै, चल्यौ जान सुख देत।
नैन पेखि तन मन करी, चलियै देखन हेत ।।३।।
आए सकल विमान निज, चढि चढि ते बहु लोग।
मज्जन करि भरि सभा, थल बैठे सुख सयोग ।।४।।
सबके श्रवन सुनाय अस, वचन कहे हितसार।
रत्नप्रभा श्रीजुगल प्रभु, आज्ञा सूचनहार ।।५।।
गोपेश्वर तुम धन्य अति, धन्य जन्म गुण नाम।
धन्य भाग्य मति धन्य जस, धन्य बसौ जिहि ठाम ।।६।।
नित्यविहारी जुगल प्रभु, महिमा अपरपार।
जाहि जनावै सो लखै, अपर भ्रमै जग जार ।।७।।
भाग्यशील तुम सम कोऊ, या छिन दूसर नाहि।
प्रभू कृपा भाजन भये, सब नित जाहि सिहाहि ।।८।
सेवक धर्म प्रमाण तुम, कीन्ह्यौ सर्व प्रकार।
श्रीआज्ञा मस्तक धरी, जानि सकल सुखसार ।।९।।
अब सो कीजै प्राण हित, जीव लहै ज्यौ चैन।
प्रगट भये या हेत तुम, प्रभू दियो जस ऐन ।।१०।।

✤ चौपाई ✤

गोपेश्वर सब भाति सयाने। समुझि हेतु मन ही सकुचाने ।।
प्रिय विश्लेष दुखद अति होई। प्रभु आज्ञा गुरुतर अति सोई ।।१।।
करि विचार धीरज उर आन्यौ। सेवक धर्म रूप अस जान्यौ ।।
दास अनन्य प्रभू गति एका। सदा धरै हिय इहै विवेका ।।२।।

आज्ञा प्रतिपालन निज धर्मा। सकल भांति सोई प्रद शर्मा ॥
प्रभु महिमा जिय माहि विचारी। जन सुख हेत कृपा जिन्ह सारी ॥३॥
अस विचार दृढतर उर कीन्ह्यौ। वचन प्रभाषि सभा सुख दीन्ह्यौ ॥
सेवक धर्म प्रेम रस सानी। गोपेश्वर बोले नै वानी ॥४॥
ए श्रीरत्नप्रभे हितकारी। जन पर अनवधि दया तिहारी ॥
मोहि सदा इन पद रज आसा। बल भरोस सोई सुख वासा ॥५॥
जो कछु आज्ञा सीस हमारे। कृपा जतन सब हस्त तिहारे ॥
सेवक प्रभु बल सदा सुखारे। स्वामी सील दास अति प्यारे ॥६॥
जे जन गुन ते मोहि न एकौ। बुद्धि विचार न शक्ति विवेकौ ॥
दीनबधु प्रभु सहज सुभावा। सो भरोस मो मन दृढ आवा ॥७॥
निज सुभाव वस मम सुधि लेवै। कमठ अड इव नित चित देवैं ॥
तुम सर्वज्ञ दयानिधि पूरे। जन पालन हित तन मन सूरे ॥८॥
मै अल्पज्ञ सकल विधि हीना। विनय करौ केहि भाँति मलीना ॥
तुमते अविदित है कछु नाहीं। कहा जनाय कहौं प्रभु पाहीं ॥९॥
शक एक मोरे मन आवत। निज अज्ञान सोई तित छावत ॥
तुम दंपति सेवा सुखसागर। भई निमग्न रहत निसि वासर ॥१०॥
तहाँ अपर सुधि एकौ नाहीं। जानि न जात काल कित जाहीं ॥
जौ माता पतिसेवा राचै। तौ बालक तन का विधि बाँचै ॥११॥
पतिसेवा तिनकौ दृढ धर्मा। शिशुकै आन भाँति नहि शर्मा ॥
बालक बल निति रोदन एकै। जननी जस मन गहै विवेकै ॥१२॥
अस कहि गोपेश्वर विह्वल मन। नैन स्रवै जल पुलकावलि तन ॥
प्रेम विवस उपरुद्धित कठा। उठे चरन परिवैं उत्कठा ॥१३॥
डगमगात सँभरै नहि देहा। सभा निरखि बूडी जल नेहा ॥
अपर सहचरी गहि पग डारे। रत्नप्रभा कर मस्तक धारे ॥१४॥
बहुरि उठीं ते लिए उठाई। किए सुखी अति हिये लगाई ॥
सकल सभा करुणा रस मगना। कहै सबै इन सम कोउ जग ना ॥१५॥

नीर केलि नान विधि कीन्ही । वन विहार तन श्रम करि छानी ।।
निकसि निकसि तट पट अग धारे । नखासख सकल सिंगार सवारे ।।२०।।
अरस परस मिलि मोद बढ़ाए । वचन अमिय सम सुने सुनाए ।।
रत्नप्रभा बोली मृदु वानी । प्रभु आज्ञा कारज उनमानी ।।२१।

दोहा—श्री जमुना या तीर वर, आया जबै विमान ।
वात्सल्य मडल रह्यौ, कछू वार परिमान ।।१।।
जे जे मडल च्यारि मै, बसै सदा सुख पूर ।
समाचार तिन सब सुन्यौ, निज कानन मुद भूर ।।२।।
तैसै ता ता ठाम ह्वै, चल्यौ जान सुख देत ।
नैन पेखि तन मन करी, चलियै देखन हेत ।।३।।
आए सकल विमान निज, चढि चढि ते बहु लोग ।
मज्जन करि भरि सभा, थल बैठे सुख सयोग ।।४।।
सबके श्रवन सुनाय अस, वचन कहे हितसार ।
रत्नप्रभा श्रीजुगल प्रभु, आज्ञा सूचनहार ।।५।।
गोपेश्वर तुम धन्य अति, धन्य जन्म गुण नाम ।
धन्य भाग्य मति धन्य जस, धन्य बसौ जिहि ठाम ।।६।।
नित्यविहारी जुगल प्रभु, महिमा अपरपार ।
जाहि जनावै सो लखै, अपर भ्रमै जग जार ।।७।।
भाग्यशील तुम सम कोऊ, या छिन दूसर नाहि ।
प्रभू कृपा भाजन भये, सब निर्ति जाहि सिहाहि ।।८।
सेवक धर्म प्रमाण तुम, कीन्ह्यौ सर्व प्रकार ।
श्रीआज्ञा मस्तक धरी, जानि सकल सुखसार ।।९।।
अब सो कीजै प्राण हित, जीव लहै ज्यौ चैन ।
प्रगट भये या हेत तुम, प्रभू दियो जस ऐन ।।१०।।

❋ चौपाई ❋

गोपेश्वर सब भाति सयाने । समुझि हेतु मन ही सकुचाने ।।
प्रिय विश्लेष दुखद अति होई । प्रभु आज्ञा गुरुतर अति सोई ।।१।।
करि विचार धीरज उर आन्यौ । सेवक धर्म रूप अस जान्यौ ।।
दास अनन्य प्रभू गति एका । सदा धरै हिय इहै विवेका ।।२।।

आज्ञा प्रतिपालन निज धर्मा। सकल भाति सोई प्रद शर्मा॥
प्रभु महिमा जिय माहि विचारी। जन सख हेत कृपा जिन्ह सारी॥३॥
अस विचार दृढतर उर कीन्ह्यौ। वचन प्रभाषि सभा सुख दीन्ह्यौ॥
सेवक धर्म प्रेम रस सानी। गोपेश्वर बोले नै बानी॥४॥
ए श्रीरत्नप्रभे हितकारी। जन पर अनवधि दया तिहारी॥
मोहि सदा इन पद रज आसा। बल भराम सोई सुख वासा॥५॥
जो कछु आज्ञा सीस हमारे। कृपा जतन सब हस्त तिहारे॥
सेवक प्रभु बल सदा सुखारे। स्वामी सील दास अति प्यारे॥६॥
जे जन गुन ते मोहि न एकौ। बुद्धि विचार न शक्ति विवेकौ॥
दीनबधु प्रभु सहज सुभावा। सो भरोस मो मन दृढ आवा॥७॥
निज सुभाव बस मम सुधि लेवैं। कमठ अड इव नित चित देवैं॥
तुम सर्वज्ञ दयानिधि पूरे। जन पालन हित तन मन सूरे॥८॥
मै अल्पज्ञ सकल विधि हीना। विनय करौ केहि भाँति मलीना॥
तुमते अविदित है कछु नाहीं। कहा जनाय कहौ प्रभु पाहीं॥९॥
शक एक मोरे मन आवत। निज अज्ञान सोई तित छावत॥
तुम दपति सेवा सुखसागर। भई निमग्न रहत निसि वासर॥१०॥
तहाँ अपर सुधि एकौ नाहीं। जानि न जात काल किन जाही॥
जौ माता पतिसेवा राचै। तौ बालक तन का विधि बाँचै॥११॥
पतिसेवा तिनकौ दृढ धर्मा। शिशुकैं आन भाँति नहि शर्मा॥
बालक बल निति रोदन एकै। जननी जस मन गहै विवेकै॥१२॥
अस कहि गोपेश्वर विह्वल मन। नैन स्रवै जल पुलकावलि तन॥
प्रेम विवस उपरुद्धित कठा। उठे चरन परिवैं उत्कठा॥१३॥
डगमगात सँभरै नहि देहा। सभा निरखि बूडी जल नेहा॥
अपर सहचरी गहि पग डारे। रत्नप्रभा कर मस्तक धारे॥१४॥
बहुरि उठीं ते लिए उठाई। किए सुखी अति हिये लगाई॥
सकल सभा करुणा रस मगना। कहै सबै इन सम कोउ जग ना॥१५॥
धन्य कृपा श्रीजुगलविहारी। धन्य भाग्य जिन मस्तक धारी॥
जुगल कृपा जे भाजन अहहीं। ते जगमौलि सबै अस कहहीं॥१६॥
रत्नप्रभा गोपेश्वर कर गहि। अति आनद दियो बानी कहि॥
वात्सल्य रूपक प्रगटाई। जननी शिशु दृढ प्रीति लखाई॥१७॥

नीर केलि नान विधि कीन्ही। वन विहार तन श्रम करि छानी ।।
निकसि निकसि तट पट अग धारे। नखासख सकल सिगार सवारे ।।२०।।
अरस परस मिलि मोद बढ़ाए। वचन अमिय सम सुने सुनाए ।।
रत्नप्रभा बोली मृदु वानी। प्रभु आज्ञा कारज उनमानी ।।२१।।

दोहा—श्री जमुना या तीर वर, आयो जबै विमान।
वात्सल्य मडल रह्यौ, कछू वार परिमान ।।१।।
जे जे मडल च्यारि मै, बसै सदा सुख पूर।
समाचार तिन सब सुन्यौ, निज कानन मुद भूर ।।२।।
तैसै ता ता ठाम ह्वै, चल्यौ जान सुख देत।
नैन पेखि तन मन करी, चलियै देखन हेत ।।३।।
आए सकल विमान निज, चढि चढि ते बहु लोग।
मज्जन करि भरि सभा, थल बैठे सुख सयोग ।।४।।
सबके श्रवन सुनाय अस, वचन कहे हितसार।
रत्नप्रभा श्रीजुगल प्रभु, आज्ञा सूचनहार ।।५।।
गोपेश्वर तुम धन्य अति, धन्य जन्म गुण नाम।
धन्य भाग्य मति धन्य जस, धन्य बसा जिहि ठाम ।।६।।
नित्यविहारी जुगल प्रभु महिमा अपरपार।
जाहि जनावै सो लखै, अपर भ्रमै जग जार ।।७।।
भाग्यशील तुम सम कोऊ, या छिन दूसर नाहि।
प्रभू कृपा भाजन भये, सब निंत जाहि सिहाहि ।।८।।
सेवक धर्म प्रमाण तुम, कीन्ह्यौ सर्व प्रकार।
श्रीआज्ञा मस्तक धरी, जानि सकल सुखसार ।।९।।
अब सो कीजै प्राण हित, जीव लहै ज्यौ चैन।
प्रगट भये या हेत तुम, प्रभू दियो जस ऐन ।।१०।।

* चौपाई *

गोपेश्वर सब भाति सयाने। समुझि हेतु मन ही सकुचाने ।।
प्रिय विश्लेष दुखद अति होई। प्रभु आज्ञा गुरुतर अति सोई ।।१।।
करि विचार धीरज उर आन्यौ। सेवक धर्म रूप अस जान्यौ ।।
दास अनन्य प्रभू गति एका। सदा धरै हिय इहै विवेका ।।२।।

आज्ञा प्रतिपालन निज धर्मा। सकल भांति सोई प्रद शर्मा ॥
प्रभु महिमा जिय माहि विचारो। जन सुख हेत कृपा जिन्ह सारी ॥३॥
अस विचार दृढतर उर कीन्ह्यौ। वचन प्रभाषि सभा सुख दीन्ह्यौ ॥
सेवक धर्म प्रेम रस सानी। गोपेश्वर बोले नै वानी ॥४॥
ए श्रीरत्नप्रभे हितकारी। जन पर अनवधि दया तिहारी ॥
मोहि सदा इन पद रज आसा। बल भराम सोई सुख वासा ॥५॥
जो कछु आज्ञा सीस हमारे। कृपा जतन सब हस्त निहारे ॥
सेवक प्रभु बल सदा सुखारे। स्वामी सील दास अति प्यारे ॥६॥
जे जन गुन ते मोहि न एकौ। बुद्धि विचार न शक्ति विवेकौ ॥
दीनबंधु प्रभु सहज सुभावा। सो भरोस मो मन दृढ आवा ॥७॥
निज सुभाव बस मम सुधि लेवैं। कमठ अंड इव नित चित देवैं ॥
तुम सर्वज्ञ दयानिधि पूरे। जन पालन हित तन मन सूरे ॥८॥
मै अल्पज्ञ सकल विधि हीना। विनय करौ केहि भाँति मलीना ॥
तुमते अविदित है कछु नाहीं। कहा जनाय कहौ प्रभु पाहीं ॥९॥
शंक एक मोरे मन आवत। निज अज्ञान सोई तित छावत ॥
तुम दंपति सेवा सुखसागर। भई निमग्न रहत निसि वासर ॥१०॥
तहाँ अपर सुधि एकौ नाहीं। जानि न जात काल कित जाही ॥
जौ माता पतिसेवा राचै। तौ बालक तन का विधि बाँचै ॥११॥
पतिसेवा तिनकौ दृढ धर्मा। शिशुकैं आन भाँति नहि शर्मा ॥
बालक बल निति रोदन एकै। जननी जस मन गहै विवेकै ॥१२॥
अस कहि गोपेश्वर विह्वल मन। नैन स्रवै जल पुलकावलि तन ॥
प्रेम विवस उपरुद्धित कंठा। उठे चरन परिवैं उत्कंठा ॥१३॥
डगमगात सँभरै नहि देहा। सभा निरखि बूडी जल नेहा ॥
अपर सहचरी गहि पग डारे। रत्नप्रभा कर मस्तक धारे ॥१४॥
बहुरि उठीं ते लिए उठाई। किए सुखी अति हिये लगाई ॥
सकल सभा करुणा रस मगना। कहै सबै इन सम कोउ जग ना ॥१५॥
धन्य कृपा श्रीजुगलविहारी। धन्य भाग्य जिन मस्तक धारी ॥
जुगल कृपा जे भाजन अहहीं। ते जगमौलि सबै अस कहहीं ॥१६॥
रत्नप्रभा गोपेश्वर कर गहि। अति आनंद दियो वानी कहि ॥
वात्सल्य रूपक प्रगटाई। जननी शिशु दृढ प्रीति लखाई ॥१७॥

जड़ विशेष पशु सगति जेऊ। मृतक चर्म चाटत गहि तेऊ॥
भक्तन हूँ या मै गुन भारी। जानि वृत्ति सो प्रिय उर धारी॥१८॥
वात्सल्य प्रभु विष इक भावा। अनवधि सुखप्रद जन मन आवा॥
अमित जतन करि सो सुधि करहीं। पाय पाय फल पुनि उर धरहीं॥१९॥
याते नेह अचल यह मानौ। विन कीन्हे हिय उपजत जानौ॥
ऐसे बहु इतिहास बखाने। गोपेश्वर सुखसिधु समाने॥२०॥
बार बार पद वदन करहीं। लय रज हिय चख मस्तक धरई॥
नैनै पुनि बहु भाँति निहोरै। माग मन दीजै हम ओरै॥२१॥
जद्यपि हमै जोग्यता नाहीं। बड भरोस राउर जिय माहीं॥
विनती एक दया उर भीजै। जब तब समै जानि सुधि लीजै॥२२॥
श्रीगुरु श्रीस्वामिनी श्रीललिता। रगदेवि श्रीगुरु गुन सलिता॥
अष्ट प्रधान एक तन जे है। अपर समस्त मुकुट मम ते हैं॥२३॥
आप जबै अवसर जित जानौ। जौ करुणा मो दिसि मन आनौ॥
तौ प्रसग पाये सुधि मेरी। चेत धराउब बलि बलि तेरी॥२४॥
जाको काज जहाँ ते होई। सर्व प्रकार तासु प्रभु सोई॥
हमरी गति आपै लौ लागी। तुम निति जन चाहत सुख भारी॥२५॥
आप सदा निज प्रभु सग रहहीं। दपति सेवा सुख निधि लहहीं॥
जुगलविहारी नित्यानदा। सर्वाराध्य प्रभू स्वच्छदा॥२६॥
विहरैं नित्य विहार अपारे। कौतुक होहि नए निति भारे॥
समै समै इतिहास विनोदा। विविधि वार्त्ता होहि प्रमोदा॥२७॥
आरतबधु सुभाव तुम्हारौ। जौ ता थल कहु मोहि सभारौ॥
जुगल प्रभू श्रवनन मम नामा। परै सरै तो पूरन कामा॥२८॥
यह सब राउर हस्त पदारथ। भाखौ मै कहि सत्य जथारथ॥
आप दया करि जौ चित धरिहैं। हम से जीव परम सुख भरिहै॥२९॥
अस कहि बहुरि परे गहि चरणा। त्राहि त्राहि प्रभु हौ पद शरणा॥
प्रभा दया रसभीनी लीनी। रत्नप्रभा त्यौं सभा प्रवीनी॥३०॥
कछू बार नहि बोले कोई। प्रिय वियोग दुख काहि न होई॥
बहुरि खोलि हग देखैं सबही। सोई दशा बाढ उर तबही॥३१॥
ज्यौं त्यौं समुझि धीर मन धारै। काज विलब न उचित विचारै॥
लाय हिये पाये सुख भारे। गोपेश्वर अति किये सुखारे॥३२॥

जथा मनोरथ तिनके जाने। रत्नप्रभा ते किये प्रमाने॥
जन पर अनवधि करुणा देखी। सकल सभा सुख लह्यौ विसेखी॥३८॥
धन्य धन्य जय जय धुनि करहीं। हरखि वरखि पुष्पन मुद भरहीं॥
रत्नप्रभा निज कंठ उतारी। रत्न सुवन जुग माल सुखारी॥३४॥
गोपेश्वर ग्रीवा पहिराई। सकल प्रकार प्रीति दरसाई॥
नैन श्रजल तन पुलकित दोऊ। रुके कंठगति बैन न होऊ॥३५॥
लखै परस्पर नेह पगाने। प्राण हानि मानत विलगाने॥
श्रीजू रंगदेवि की आली। कलकंठी अनवधि गुनशाली॥३६॥
समै विचारि प्रेम लखि भारी। गोपेश्वर के निकट पधारी॥
गोपेश्वर गुरु सम लखि देहा। परे चरण पूरन परिनेहा॥३७॥
तिन उठाय निज कंठ लगाए। सकल रीति हिय गात सिराए॥
मणि प्रसून जुग माल उतारी। निज उरतें सो हँसि कर धारी॥३८॥
पूरन प्रीति पूरि जुग नैना। हेरि कहे मुख तैसे बैना॥
ऐसे सब सुख दै पहिराई। गोपेश्वर उर माल सुहाई॥३९॥
या विधि को देख्यौ व्यवहारा। षट औरौ गुन रूप अपारा।
तैसौ मिलि तन मन मुद लीन्हे। गोपेश्वर आनंदित कीन्हे॥४०॥
अपर सहचरी वृंद अनेका। मिलि सनमानै सहित विवेका॥
जे आए चौमंडल वासी। भक्त जुगल पद आनंद रासी॥४१॥
शिष्टाचार करै मिलि भारी। उभय ओर मुद लहैं अपारी॥
गोपेश्वर विवि रूप सुहाए। प्रथम विभेद रीति कहि गाए॥४२॥
दोऊ तन सब विधि सनमानै। अरस परस निधि नेह समाने॥
अष्ट सखी मिलि मंडल कीन्हे। ते विवि रूप मध्य कर लीन्हे॥४३॥
सकल सभा घेरे चहुँ घाहीं। सबके हियें नेह उमगाही॥
मंद मंद गति आए तितहीं। भूमि प्रदेस जानवर जितहीं॥४४॥
दोऊ रूप जान बैठारे। मंगल भांति अनेक सवांरे॥
मंगल बानी मुख कहि गावैं। मंगल द्रव्य वारि सुख पावैं॥४५॥
विदा हेत मस्तक दै रोरी। मंगल समै थाभि चित जोरी।
बहुरि कह्यौ वृत्तांत सुहायो। पथि निर्वाह जथा सुख छायो॥४६॥
प्राण सुखद सुनिये हित बानी। एहि विमान बैठौ मुदखानी॥
करियै वर मंगल प्रस्थाना। मारग मैं मिलिहैं थल नाना॥४७॥

जो जन जो सत कोटि बखानै । मिलिहै सो वैकुठ प्रमानै ॥
आगैं चली पचानत कोरी । मिलिहैं सो ब्रह्मांड बहोरी ॥४८॥
जहां बसै ब्रह्मा चतुरानन । तहा जाइवै तुह्मै शुभानन ॥
एक समै हरि वामन तन धरि । तीन पैड़ नापे विक्रम करि ॥४६॥
प्रभु के चरण अगुष्ठ प्रसगा । भयो ऊपरि ब्रह्मांड विभगा ॥
ता मारग प्रविसीं नभ गगा । प्रभु पदकमल परसि सुचि अगा ॥५०॥

दरस परस मज्जन तन कीन्हे । सकृत अबुकण हूँ सुख दीन्हे ॥
जहा तहा बसि नाम उचारै । गगा सुमिरि जाय भव पारै ॥५१॥
सो केवल प्रभु पद रज महिमा । गोपेश्वर कहियै किमि गरिमा ॥
यह इतिहास जान सब कोई । विस्तरि किय गहर अति होई ॥५२॥

प्रति ब्रह्मांड प्रभू जस छायो । जुग जुग जीव हेतु करि भायो ॥
सुनियें अब निमित्त कहिवे कौ । मारग सोई तुमै जैवे कौ ॥५३॥

धसै नीरजा द्वारै होई । गति विमान पथ जानौ सोई ॥
भीतर अड भूमि लौ जाते । लखिहौ मध्य लोक पथि साते ॥५४॥
मथुरा मडल मगल भूमी । ताहि न सकै कोऊ थल जूमी ॥
तहा बसौ जीवन सुखदाता । प्रभु आज्ञा पालन हित ताता ॥५५॥

तबै विमान विदा करि दीजै । जीव लहै सुख सो विधि कीजै ॥
अस कहि रत्नप्रभा गहि मौना । चित्त विचार्यौ अब शुभ गौना ॥५६॥
अपर विमान आय नगिचानौ । समत यह सब को ठहरानौ ॥
लखै परस्पर कछू न बालें । बार बार मूदै दृग खोले ॥५७॥
नैननहीं हिय भाव जनावै । प्रेम प्रीति अनुराग दिखावै ॥
नेह रज्जु दृढ़ बद्ध भये मन । चल्यौ चहै डग धरत न ए तन ॥५८॥

इनको मन तिन तन करि बासा । तिनहूँ के मन इन तन आसा ॥
मानौ इन मनते ते जाहीं । तिन मन तें इनहूँ गति लाहीं ॥५६॥
रत्नप्रभा आदिक सब आली । चढीं विमान अपर सुखशाली ॥
जे जे कौतुक देखन आये । निज निज जान चढ़े मुदपाए ॥६०॥

उठे विमान सकल धुनि छाई । जय जय राधाकृष्ण सुहाई ॥
धेनु वत्स की ऐसी रीती । मुरि मुरि पेखि बढावै प्रीती ॥६१॥
गति विमान वश अतर भारे । देखि न परैं विशेष निहारे ॥
उर धरि धीर पीर मन भारी । उभय दिसा गति एकै सारी ॥६२॥

कहत सुनत तेई हित बातें। उमगत चित्त शिथिल गति गातें॥
ऐसें निज निज पथि दिस जाहीं। नेह प्रसगन कहत सिराहीं॥६३॥
अप अपने मडल ढिग आई। शिष्टाचार परस्पर भाई॥
बिदा होय गवने निज धामा। जा मडल जिनको विश्रामा॥६४॥
रत्नप्रभादिक सखी प्रवीना। सब कहु मिलि सुख दियो नवीना॥
ऐसे मंडल च्यारि विलघी। जमुना पार भई सखि सघी॥६५॥
देखत मडल उभय निजाले। पूछत दपति जन प्रतिपाले॥
महारास मडल सुधि पाई। वन विहार करि बैठे आई॥६६॥
सध्या समै आरती वेला। पहुँची आय भयो सुख मेला॥
निज निज सेवा जाय लगानी। दपति छबि निधि मीन पगानी॥६७।
समै समै सेवा मन दीन्हौ। दपति सेय सकल सुख लीन्हौ॥
परम निकुञ्ज धाम सुखदाई। रैंन सैन दपति करवाई॥६८॥
अग अग सहचरि सब लागीं। सेवा सुख रस तन मन पागीं।
त्रिविध वार्ता होत कहानी। उभय ओर बाढत मुदखानी॥६९॥
जुगलविहारी जन हितकारी। निज भक्तन चाहत सुख भारी॥
दास प्रसग चलै सुधि आई। श्रीस्यामा बोलीं मुसुकाई॥७०॥
ए ललिते जो फल हम दीन्हौ। ताको रूप कहौ कस कीन्हौ॥
भक्त प्रेम रस सानी बानी। सुनि श्रीललिता अति हरखानी॥७१॥
बार बार बलि मस्तक नायो। श्रीमहिमा जस अनवधि गायो॥
महाराज जो श्री मन धारै। सो विस्तार लहै अनपारै॥७२॥
गोपेश्वर को जन्म प्रसगा। उत्तर प्रश्न भयो जस अगा॥
वर विमान बैठाय बिदाई। सहचरि सग दई सुखदाई।७३॥
आदि अत लौं जो विधि कीन्ही। श्रीप्रताप जुत सब कहि दीन्ही॥
अपर कही सो बात सुनाई। महाराज पथि की सुधि आई॥७४॥
ए सहचरी बिदा करि आई। रत्नप्रभा ते आदि सुहाई॥
तिन ते कही कहौ रा वीरा। मारग रीति नीति गभीरा॥७५॥
तिन सब क्रमहीं तें कहि गाई। जा जा थल जो क्रिया सुहाई॥
भक्ति विवेक प्रेम अनुरागा। श्रद्धा नेह धर्म वर त्यागा॥७६॥
जे जे सदगुन अमित कहावै। वरनत कविवर अ त न पावै॥
महाराज पद रज सिर लाए। गोपेश्वर तन ए सब छाए॥७७॥

महाराज महिमा बल भारी। गोपेश्वर की रीति अपारी ॥
श्रीजू सुनि पूछै सुख पावै। तथा सहेली जन गुन गावै ॥७८॥
निज भक्तन के सुनि गुनग्रामा। श्रीजू अति पायो विश्रामा ॥
ताही समै नींद दृग आई। उठीं सखी सब मस्तक नाई ॥७९॥
गोपेश्वर चरचा सब कुंजा। छाय रही महिमा जस पुंजा ॥

दोहा—जब तब चित्त लुभाय प्रभु, सुनै दास गुन गान।
नित्यविहारी जुगल हिय, जन पर प्रेम अमान ॥ १ ॥
गोपेश्वर की रीति जब, कहैं सखी सुख पाय।
नित्यविहारी जुगल मन, सुनि सुनि अति ललचाय ॥ २ ॥

❖ चौपाई ❖

जान चढे गोपेश्वर आवत। श्रीप्रभु श्रीगुरु कृपा मनावत ॥
ते सुख ते रस तेइ विनोदा। चित्त विभावत लहत प्रमोदा ॥१॥
अरस परस दोउ ता रस पागे। कहत सुनत आवत अनुरागे ॥
तेज पुंज आगे दृग देख्यो। यह वैकुंठ अहै मन लेख्यो ॥२॥
ताके निकट गयो जब जाना। करत विहार लखे जग नाना ॥
तिन विमान वपु अद्भुत देख्यो। करै वितर्क न परै स रेख्यो ॥३॥
अति आश्चरज लह्यो मन माहीं। धाय गए नारायन पाहीं ॥
जान सरूप अनूपम गायो। आजु लगे अस डीठि न आयो ॥४॥
रमा रवन सुनि हिये विचारी। जानि परी जैसी विधि सारी ॥
सर्वाराध्य सर्वपर कारन। तिन धारी जिय जीव उधारन ॥५॥
नित्य विहारिनि ओकर फल जो। आए बैठि विमान विमल सो ॥
प्रभु महिमा हियमै उनमानी। कृपापात्र सर्वोपरि जानी ॥६॥
निज मर्य्याद बढावन हेतू। करि आचरन बँधावत सेतू ॥
संग लीन्ह पूजन की सामा। सकल लोक वासी सुख धामा ॥७॥
मंगल गावत बाहिर आए। देखि विमान परम सुख पाए ॥
पूजन करि सब विधि सनमाने। नित्यविहारी सम जन जाने ॥८॥
शिष्टाचार बढाय परस्पर। विदा भए सब आज्ञा तत्पर ॥
श्रीपति गोपेश्वर संग दीने। चारि पार्षद परम प्रवीने ॥९॥
चल्यो विमान भयो सुख भारी। जय धुनि पूरि प्रसून प्रचारी ॥
श्रीपति निज परिकर कहि बोधे। सर्वाराध्य जुगल प्रभु सोधे ॥१०॥

च्यारि पार्षद् विवि गोपेश्वर । आवत गावत गुन परमेश्वर ॥
प्रभु महिमा गावत सुख छाये । पचास कोटि जो जन चलि आये ॥११॥
डीठि पर्‌यौ गोलक ब्रह्मडा । गगाद्वार मिल्यो मुदखडा ॥
ता मारग ह्वै कियो प्रवेशा । देखे बहुरि लोक लोकेशा ॥१२॥
सत्यलोक आयो जब जाना । विधि सुनि समाचार सुख माना ॥
पूजा करी धन्य दिन मान्यौ । कृपापात्र सर्वोपरि जान्यौ ॥१३॥

शिष्टाचार भयो अति भारी । हियें जुगल महिमा थिर धारी ॥
बिदा भए सुख लै दै पूरौ । जय धुनि सहित सुवन झरि भूरौ ॥१४॥
सकल ठौर फैली यह बाता । सुनि गुनि सब रमगत मन गाता ॥
सत्यलोक ते चल्यौ विमाना । दरसन हेत सग बहु जाना ॥१५॥
जा जा लोक निकट जब आवत । पूजा मान अधिकतर पावत ॥
देववृन्द लखि होहि सुखारे । अरस परस बाढै मुद भारे ॥१६॥

चलै जहाँ ते ते सग लागे । अधिक अधिक पावत सुख आगे ॥
दखि देखि गोपेश्वर चाँहीं । सकल देव मन माँहि सिहाँहीं ॥१७॥
अहो रूप गुण तेज प्रभाऊ । जस महिमा अस लही न काऊ ॥
कीरति विसद पूज्यता भारी । साधु विभूषण रहनि अपारी ॥१८॥
जे जे गुण इन मै थिर देखै । भरि ब्रह्मड कहूँ नहि लेखैं ॥
का जानै कैसौ तब किन्हो । जा फल तें ऐसो तन लीन्हौ ॥१९॥

ऐसे निज निज रुचि अनुमानी । कहैं सुनै नाना विधि बानी ॥
च्यारि पार्षद जे सग आए । तिन विधि तें सब गुन कहि गाए ॥२०॥
ता थल ऋषिगण सुनत रहे जे । सुख हित जान सग आए ते ॥
देववृन्द जब ऐसे भाषै । गोपेश्वर सुख सब अभिलाषै ॥२१॥
तब ते ऋषिगन कहै बखानी । अहो सुरन की लखो अयानी ॥
गोपेश्वर को रूप न जानै । जो ए कहै सो कौन प्रमानै ॥२२

इनकै बल तप जज्ञ दान अति । हरि प्रापक जो रीतिन सा मति ॥
बडे कष्ट करि स्वर्ग आए । सत्यलोक लौं के सुख पाए ॥२३॥
कर्म छीन पुनि गर्भ निवासा । हियें सोइ दुख रूप दुरासा ।
ता बस कर्म करै बहु भाँती । फिरै सकल जग लहैं न साँता ॥२४॥
गोपेश्वर सुख देखि सिंहाहीं । मदन गहैं लाज मन माँहीं ॥
नित्यविहारी जुगल प्रभू जे । जिन पर अपर ईश नहि दूजे ॥२५॥

सर्वाराध्य सर्व गति जोई । जिनकी आज्ञा लघै न कोई ॥
भ्रूनर्तन ब्रह्माड अपारा । बनै मिटै इच्छा व्यवहारा ॥२६॥
काल प्रकृति इच्छा आधीना । अपर जीव लेखै को दीना ॥
ब्रह्मा कोटि कोटि विधि करहीं । होय सोई जस इच्छा धरहीं ॥२७॥
अमित कोटि ब्रह्माड समूहा । छोटे बडे जीव जत जूहा ॥
इच्छाधीन रहै निसिवासर । जुगलविहारी ईश परावर ॥ ८॥
तिन प्रभु इच्छा सो फल रूपा । गोपेश्वर तन भई अनूपा ॥
जीव उधार हेत मन कीन्ही । सो पदवी इन कह प्रभु दीन्ही ॥२९॥
अपर ईश निज पद अभिमानी । माया वस परि सो नहि जानी ॥
या ते देह गहै पुनि त्यागै । बहुरि कृपा तैंसी अनुरागै ॥३०॥
गोपेश्वर इच्छा को अगा । जुगल कृपा बल माया भगा ॥
अपर जीव सब निज सुख चाहै । इनकै पर हित चित्त सदा है ॥३१॥
इन समान एई इत दीसै । कहै सस हम बिस्वावीसैं ॥
ए आये निज सम सुख देवै । सुनौ देव जो है मन लेवै ॥३२॥
नित्यविहारी सब सुखधामा । जिह्वा रटौ जुगल प्रभु नामा ॥
तिनकी कृपा सदा उर भावौ । नर तन मिलै सुइहै मनावौ ॥३३॥
जुगलविहारी करुणासागर । जतन जीव हित करी उजागर ॥
गोपेश्वर आये इहि हेतू । सुनि विचार गहियै मन चेतू ॥३४॥
भरतखड पुहुमी पर जाई । प्रभू दया वस नर तन पाई ॥
गोपेश्वर मुख लै उपदेशा । करि अभ्यास समुझि सो देशा ॥३५॥
हिय अनुराग जुगल पद पैहौ । इनते अधिक सदा सुख लैहौ ॥
नित्य विहार प्रभू पद धामा । अनायास मिलिहै विश्रामा ॥३६॥
यामै गोपेश्वर दृढ़ कारन । ए आए इत जीव उधारन ॥
ऐसें भाषि सकल मुनि बानी । बहुरि मौनता जीहा आनी ॥३७॥
लोक लोकवासी जे आए । मुनि वृत्तात हिये सुख छाए ॥
सबके मन सोई विधि आई । करिये वेगि जतन दृढ जाई ॥३८॥
जय गोपेश्वर कहि मन हरषैं । चहूँ ओर कुसुमावलि वरषै ॥
गोपेश्वर तन मन सकुचावै । कियो न कछू जथा ए गावै ॥३९॥
जुगलविहारी महिमा भारी । बार बार सिर नाय सभारी ॥
ऐसे कौतुक अमित प्रकारा । आवत करत लहत सुख भारा ॥४०॥

प्रेम विवस गोपेश्वर टेरै । जुगलविहारी गति मति मेरै ॥
सबही के मुख निकसत सोई । दिसा विदिसा प्रतिधुनि होई ॥४१॥
पूजा लेत देत सुख भूरे । आये लोक लोक लखि रूरे ॥
देखि परी मथुरा सुख रासी । जो श्रीगुरु मुख गाय प्रकासी ॥४२॥
गोपेश्वर लखि दृग सुख लीन्हौ । हस्त जोरि सिर नम्रित कीन्हौ ॥
शोभा सकल प्रकार अपारी । अधिक एकते एक निहारी ॥४३॥
जमुना निकट बहै आनद मै । परसत नीर निवृत्त होत भै ॥
तहा उतरि तन मज्जन कीन्हो । सहित समाज सकल सुख लीन्हौ॥४४॥
बहुरि आश्रम हेत विचारी । भूमि सकल ऋतु जो अति प्यारी ॥
कछू दूरि चलि कै थल देखी । सर्वानन्द उदोत विशेषी ॥४५॥
तीनि दिसा जमुना परिवारै । वृक्ष जाति सघटित अपारै ॥
तरु सपति सब दिन इक सारी । अलि द्विजगन सेवै शुभकारी ॥४६॥
वैर विहाय जीव सब रहहीं । परमानन्द सदा उर लहहीं ॥
फूलै कज सरोवर नाना । क्रीड़ै हस करै जलपाना ॥४७॥
त्रिविध समीर बहै सब काला । छिन छिन बढै प्रमोद विसाला ॥
अनवधि गुण जे ता थल माहीं । वरनै विबुधन गाय सिराहीं ॥४८॥
भावी नित्य विहार जहाँ है । को शुभ वस्तु न प्रगट तहाँ है ॥
गोपेश्वर लखि अति मन माना । सो थल आश्रम काज प्रमानी ॥४९॥
सकल देव मिलि उटज बनावैं । सेवा निज निज प्रथक जनावैं ।
आश्रम रचना करि अति भारी । दण्ड एक मै सकल सवारी ॥५०।
विविध भांति की सामा सोई ।सब छिन सुखप्रद चित्त विमाई ॥
सब देवन मिलि विनय सुनाइ । कीजै सफल हस्त निपुनाई ॥५१॥
चलि कै आश्रम मध्य विराजै । दीजै यह सुख सकल समाजै ॥
गोपेश्वर सुनि आनद पायो । भाव सुरन कौ सा मन आयो ॥५२॥
बैठे आश्रम मध्य सुखारे । सकल समाज लसै परिवारे ।
मुनिवर वृद्ध देव दिगपाला । जानि अपूरव समै विसाला ॥५ ॥
गोपेश्वर मस्तक अभिषेका । किये जथा विधि सहित विवेका ॥
दान मान दै सब सनमाने । जे जे जथाजोग्य उनमाने ।५४॥
तब सही मिलि समै विचारयो । समत यह निश्चै निरधारयो ॥
अब चलियै निज निज गृह ओरी । एऊ सुख पावै या ठौरी ।।५५॥

कछू काल बीते पुनि ऐहैं। जो उर विथा सो गाय सुनैहैं॥
ऐसे समुझि राखि मन माही। विनय करी गोपेश्वर पाहीं॥५६॥
अब करुणा करि आज्ञा दीजै। सुखद निवास आप इत कीजै॥
बहुरि आय पद वदन करिहै। कृपा रावरी सब सुख भरिहैं।५७॥
वचन विलास भयो दोउ पाही। परमानन्द लह्यौ मन माही॥
बिदा भये सुरवृन्द सुखारे। भरि प्रमोद निज सदन सिधारे॥५८॥
लोक लोक चरचा यह छाई। कहै सुनै तृष्णा अधिकाई॥
गोपेश्वर आश्रम सुख पाई। करै विमान बिदा मन आई॥५६॥
षोड़स पूजन को उपचारा। साजि थार सो लै कर धारा॥
आए वर विमान के पाहीं। निरखि भयो सुख अति मन माहीं॥६०॥
शीश नाय पूजा विधि कीन्हीं। सप्त बार परिदच्छिन दीन्हीं॥
दडप्रणाम किये बहु बारे। भक्ति सहित मुख वचन उचारे।६१॥
अहो विमान धन्य तुम देहा। प्रभु सेवा सब समत एहा॥
प्रभु कौ रूप सदा उर धारौ। धन्य जन्म सब भाति तुम्हारौ॥६२॥
प्रभु आज्ञा पालन के हेतू। कियो आय हम इहा निकेतू॥
जो वृत्तात लख्यो तुम नैना। जाय सुनाउ बसो काहु बैना॥६३॥
जा विधि करुणा मम पर होई। जतन विचारि कहब तुम सोई॥
या विधि प्रेम भरे उर दोऊ। चल्यौ विमान बिदा ह्वै सोऊ॥६४॥
परम निकुज धाम जब जाना। पौहुच्यौ जाय लह्यौ सुख नाना॥
नित्यविहारी जुगल स्वरूपा। सहचरि सग समाज अनूपा॥६५॥
काहू समै जान तिहि राजै। मडल अपर जायवे काजे॥
तबतें समाचार सब गायो। मारग आश्रम जो द्दग आयो॥६६॥
जुगलविहारी महिमा गाई। गोपेश्वर जिमि पूजा पाई॥
प्रभु सुन्यौ निज जन सनमाना। हिये हरष पायो विधि नाना॥६७॥
गोपेश्वर की चरचा बाढी। प्रभु उर उपजी करुणा गाढी॥
प्रभु जिय भक्त सदा अति भावैं। दास प्रभू पद बल सुख पावै॥६८॥

दोहा—बोले सनत्कुमार तब, सुनि गोपेश्वर बैन।
यह प्रसग जो सकल तुम, कह्यौ परम सुख दैन॥१॥
रत्नप्रभा पुनि जान कौ, जो भाख्यो वृत्तात।
सो जान्यौ तुम कौन विधि, कहिये मोहि नितात्त॥२॥

अपर शक मो मन भई, सो सुनिये चित लाय।
माया मोहित जीव उर, जथा भांति भ्रम जाय ॥३॥
जब ते आपनि वास इत राउर भयो अखंड ॥
जस महिमा कीरति अधिक, व्यापि रही ब्रह्मंड ॥४॥

यह जानत सब कोय जग, जीव उधारन हेत ॥
गोपेश्वर आज्ञा प्रभू, कीन्ह्यौ इतै निकेत ॥५॥
आदि अंत लौ रीति यह, जो भाखी मोहि पाहि।
अब ताई कहु अनत हूँ, गाय कही कै नाहिं ॥६॥

जौ कीन्ही उपदेश यह, पद्धति दया विचारि।
कहौ लोक तिहि को गयो, सबै बृहति निवारि ॥७॥
जा पथ आगे जात कोउ, समाचार सो पाय।
निसिवासर जन पथिक जे, ता मारग सब जाय ॥८।

पावत कथनि प्रमाण दृढ़, जौ लहिये दृष्टांत।
परंपरा सबके हिये, अचल रहै सिद्धांत ॥९॥
सनत्कुमार अपार हिय ज्ञान भक्ति वैराग।
गोपेश्वर तिन मुख वचन, सुनि उमग्यो अनुराग ॥१०॥

चौपाई

सनत्कुमार परम सुख दीन्ह्यौ। प्रश्न सकल जग हित लै कीन्ह्यौ ॥
मोहि देत अतिसै जस भारी। मै सब जानौ रीति तिहारी ॥१॥
हंस रूप श्रीकृष्ण बखानी। श्रीमुख ते तुम पद्धति जानी ॥
परमधाम गोलोक मध्य जो। वृंदा विपिन निकुंज कहै सो ॥२॥

राधाकृष्ण जुगल वपुधारी। विहरै नित्य विहार विहारी ॥
जिनकी आज्ञा वश सब रहहीं। ईश ईश ईशन पर अहहीं ॥३॥
जुगल रूप सेवा अधिकारी। अष्ट अंगजा अंगी सारी ॥
तिन मै रंगदेवि करुणानिधि। जुगल वस्य करिवैं जिनकी विधि ॥४॥

श्रीगुरु मोहि कियो उपदेशा। पद्धति श्रीललिता निःसेसा ॥
दर्शन हित मै मन ललचायो। तहा न ताको उत्तर पायो ॥५॥
परम गुरू श्रीरंगदेवि जू। आरतबंधु न काहि सेवि जू ॥
तिनकी कृपा जुगल प्रभु देखे। दीनदयाल तेई अति लेखे ॥६॥

तहँ सुन्यौ मै अस व्यवहारा। गुरु मुख ते निर्णय निरधारा॥
सनत्कुमार सुनौ मन लाई। बात सकल जीवन सुखदाई॥७॥
कलि जुग अमल होय सब ठाई। प्रगट रहै हम कोऊ नाहीं॥
हमरौ अतरद्धान निहारै। तब कलिजुग धरनी अतिचारै॥८॥
मेटि सकल प्राचीन सुपथा। जीव लगावै प्रेरि कुपथा॥
जीव चलै सब जमपुर जाहीं। नर्क दड अति दुख लहाहीं॥९॥
यह अनीति कलिजुग की देखी। रगदेवि हिय दया विशेषी॥
जुगल प्रभू अनुशासन लेई। भरत खड प्रगटैगे तेई॥१०॥
दक्षिण दिशा द्रविड शुभ देसा। मूगोपतन ग्राम विसेषा॥
द्विजकुल तन धरि पावन करिहै। आदि अचारज सज्ञा धरिहैं।११॥
नित्य सनातन जो निज नियमा। जुगल पदारविंद दृढ प्रेमा॥
सोई नेम जिनकै आनद पद। याते नियमानद नाम वद॥१२॥
बाल अवस्था तै ब्रज ऐहै। रीति सनातन अपनी गैहैं॥
गोवर्द्धन गिरि निकट सुहायो। निंब ग्राम आश्रम जग गायो॥१३॥
तहा बास करि दृढ़ उर धारी। वृदा कानन नित्य विहारी॥
सेवा सहचरि भाव प्रकासा। राधाकृष्ण नाम विश्वासा॥१४॥
जुगल माधुरी सिधु समाने। निसिवासर बीतत नहि जाने॥
जीव दया अतिसै जिय धारी। परपरा मर्य्याद सभारी॥१५॥
करि उपदेश सकल जग तारौं। सप्रदाय सब काल प्रचारौं॥
सप्रदाय तासौं बुध कहही। हरिमुख मत्र श्रवण निज लहहीं।१६॥
हरिके शिष्य तिन्है सब गावैं। ते निज शिष्य न सोई सुनावै।
परपरा पीढो मिलि आवै। धर्म सनातन इहै कहावै॥१७॥
जाकौ वेद नित्य प्रतिपादै। सप्रदाय सोहै निर्वादै॥
निज इच्छा तें जो मत ठानै। आधुनीक तिहि जग परमानै॥१८॥
परपरा बिनु पथ चलावै। पथाई श्रुति सग न पावै॥
राजमार्ग तजि ऊवट धावै। जो समर्थ सो ज्यौं त्यौं पावै॥१९।
जो ताके अनुगामी होवैं। भवार्णव भ्रमि सर्वस खोवैं॥
नियमानद प्रभू अस नाता। करिहैं चित्त विचारि पुनीता॥२०।
सप्रदाय हित जब मन धारयौ। परपरा सबध विचारयौ॥
हमरे मत मै जो अनुकूला। गहै तासु मत दृढ श्रुतिमूला॥२१॥

करि बिचार निर्धार कियो अस । मनकादिक समत हमरौ तस ॥
इस रूप श्रीकृष्ण प्रबोधे । करि उपदेश शिष्य कहि बोधे ॥२२॥
द्वैताद्वैत प्रभू मत दीन्हो । भेदाभेद सोई इन चीन्हो ॥
अगी अग ताहि पर मानो । स्वामी सेवक तथा विजानो ॥२३॥
निर्विशेष सविशेष जुगल है । याते मत अविरोध प्रबल है ॥
राधाकृष्ण हमारे स्वामी । सनकादिक तिनके अनुगामी ॥२४॥
अहै अगजा रूप हमारो । अगी अग लहैं निरधारौ ॥
सकल अग हमरे जे इनके । मिले एक थल भेद न जिनके ॥२५॥
याते सनकादिक मत लाजै । सप्रदाय अपनी दृढ कीजै ॥
जे जग जीव गहैं यह धर्मा । अनायास पावै ते शर्मा ॥२६॥
जाको नाम रूप ताही को । लाधै सुमिरि धाम वाही का ।
ऐसे माया फद निवारै । करि यह जतन सदा जग तारै ॥२७॥

दोहा—परम निकुज स्थान मै, प्रभू गत सैन ।
अष्ट अगजा सखी सब, करी सभा सुख ऐन ॥१॥
श्रीललिता उपदेश मोहि, किन्हौ विविध प्रकार ।
सनत्कुमार तबै सुन्यौ, यह सवाद उदार ॥२॥
रगदेवि पदरज कृपा, मै देख्यो दृग इष्ट ।
परम गुरू ते मम अहै, तुम सब भाति अभीष्ट ॥३॥
मै श्रीगुरु मुख ते सुन्यौ, यह वृत्तात अनूप ।
तुहीं परम जस दहिगी, रगदेवि सुख रूप ॥४॥
सनत्कुमार तुम्हार जस, व्यापि रह्यौ श्रीधाम ।
प्रश्न करत हौ प्रेम वस, मोहि देन विश्राम ॥५॥

◆चौपाई◆

मै जानत हौं रूप तुह्मारा । सुनि राख्यौ जस प्रथम अपारा ॥
कृपा करी अतिसै मै जानी । प्रश्न हेतु लै भाखा बानी ॥१॥
अविदित वस्तु कहा तुम ते जा । कहै अपूरब ता लै । हमसो ॥
साधुमौलि तिनकी अस रातो । छिन छिन अनुभवि प्रभु पद प्रीती ॥२॥
जद्यपि प्रभु गुन ताके जानै । तौ सुनत अति सै रुचि मानै ॥
जो मेरे मुख सुनि सुख लहिये । कहौं जथा मति मन गुनि गहिये ॥३॥

रत्नप्रभा औ जान प्रसगा। पूछौ आप तासु गति अगा॥
करियै मोर वचन परिमाना। श्रीगुरु कृपा सकल मैं जाना॥४॥
अपर आप जो पूछी बाता। सो सुनिय जनमुख सुख दाता॥
मम उपदेश पाय बहु जावा। सुखा भए लहि धाम अतीवा॥५॥
जौ सबकी कछु रीति बखानौ। बीतै काल अमित अस जानौ॥
तिन मैं एक दोय कहि गावौं। यथा सिंधु लघु बूंद लखावौं॥६॥
त्रिगुणमई सब सृष्टि कहावै। सात्विक राजस तामस गावै॥
गुणाधीन जीवन के रूपा। उत्तम मध्य अधम निरूपा॥७॥
उत्तम अधम दोय जौ गहियै। मध्यम मध्यम आपुहें लहियै॥
मैं उपदेशे जीव अनंता। परम धाम ते गये समता॥८॥
तिन मैं उत्तम अधम बखानौ। ते सुनि मध्यम मन उनमानौ॥
उत्तम की गाथा अब सुनिये। आग अधम कहै अस गुनिये॥९॥
जे मनु अहैं चतुर्दस भूपा। सृष्टि क्रिया तिन हस्त अनूपा॥
तिनमैं जो स्वारोचिष नामा। सुनौ तास गुन अति अभिरामा॥१०॥
च्यारि मिले जुग चौकरि कहियै। ते चौकरी बहत्तरि गहियै॥
इतनै काल किन्हति राजू। पाल्यौ तीन लोक सुख राजू॥११॥
आयु अवधि जाना नियरानी। तन धन दिसि आई मन ग्लानी॥
चित्त भयो अतिसै परितापा। व्यर्थकाल खोया करि दापा॥१२॥
दस इंद्री वर विषय कहावैं। सूकर श्वान सबै ते पावैं॥
हमहूँ तिन हित आयु गवाई। हाँ धिक् लाज न सुर तन पाई॥१३॥
अब जो गई सो हाथ न आवै। रही शेष कछु तथा न जावै॥
अस विचार उपज्यौ मन माहीं। कौन भाँति निश्चै पद जाहीं॥१४॥
अब लौं विषम रूप पहिचान्यौ। को परात्पर सो नहि जान्यौ॥
सकल प्रजा हम कह प्रभु मानै। हम ब्रह्मा त अधिक न जानै॥१५॥
विधि निज सुख कै बार बखानी। अपनौ जन्म पद्म परिमानी॥
पद्मनाभ नारायन कहहीं। नार अयन जे नित सुख रहहीं॥१६॥
पुनि वैकुंठ लोक विधि देख्यौ। रूप चतुर्भुज सोइ सरेख्यो॥
तिन पर अपर ईश नहि काई। जो परात्पर कहियै सोई॥१७॥
तौ तिन पाय गर्भ पुनि बासा। यह निहारि उपजत मन त्रासा॥
श्रीमुख श्रुति समत अस गावें। जाव ईश लहि गर्भ न पावैं॥१८॥

गर्भ लह्यौ जय विजय प्रचारी । अधम निशाचर अघ तन धारी ॥
ताहू मै ससै अति होई । दोय बार मिलि पुनि तन सोई ॥१९॥
का जानै तीजै अब कैसी । जो ह्वैहै सो देखव तैसी ॥
जाहि पाय माया सग छूटै । सर्व काल मश्रित भय टूटै ॥२०॥
यह ससै मन कौ को मेटै । अचल वृत्ति करि चित्त समेटै ॥
स्वारोचिष मनु मन धरि धीरा । विनु सत्सग मिटै नहि पीरा ॥२१॥
सकल ठौर कीजै परिजटना । साधु सत मिलि ह्वैहै जतना ॥
सनत्कुमार फिरन ते लागे । जहाँ तहाँ पूछैं अनुरागे ॥२२॥
चित्त जथारथ बोधन पावैं । मनु सुख राखि अनत पुनि जावैं ॥
एक समय मम आश्रम आए । जीव चराचर लखि सुख पाये ॥२३॥
जुगल स्वरूप धरे मन माहीं । तिन जीवन के छिन इम जाहीं ॥
जुगलानद अमी भर वरसै । सुखद भूमि आश्रम अस दरसै ॥२४॥
मनु मन उपजी शाति विशेषा । चमत्कार कछु है या देसा ॥
श्रद्धा प्रीति भरे मनमाहीं । मद मद आवत मो घाहीं ॥२५॥
निकट आय निज नाम सुनाई । करि प्रणाम बहु विनय जनाई ॥
कुशल प्रश्न अति शिष्टाचारा । भयो मोदप्रद हित व्यवहारा ॥२६॥
स्वस्थ चित्त ह्वै बैठे दोऊ । लच्छन तन मन निरखैं सोऊ ॥
मनु मन सब विधि भई प्रतीती । अधिकारी लखि मम उर प्रीती ॥२७॥
मनु निज मन को हेतु जनायो । अमित प्रकार प्रसग सुनायो ॥
जे जे ससै उर धरि राखे । ते सर्वांग प्रकट कहि भाषे ॥२८॥
सकल प्रकार विथा मन गाई । मति विस्तार जहाँ लगि पाई ॥
सर्वाराध्य सर्व पर जोई । जा पर कारन अपर न कोई ॥२९॥
कीजै वेगि जतन प्रभु सोई । ता पद प्रापति मो दृढ होई ॥
आरत जानि कृपा अब कीजै । निज पदरज मम मस्तक दीजै ॥३०॥
अस कहि चरन परयौ ह्वै दीना । मैं ऊ अति अधिकारी चीन्हा ॥
सनत्कुमार सुमिरि गुरु चरना । ता प्रति हेतु सकल मै वरना ॥३१॥
जो प्रसग मै तुम तें गायो । आदि अत सब अग सुहायो ॥
सो पद्धति मनु कर्ण सुनाई । तिन हू तहाँ प्रीति अति पाई ।३२॥
एक मास याही थल कीन्ही । सेवा दपति जम मनु चीन्ही ॥
सनत्कुमार सुनौ मन लाई । जाके सुने जगत भ्रम जाई ॥३३॥

जुगल प्रभू अस करुणा कीन्ही । मास गये निज सनिधि दीन्ही ॥
अर्ध रात्र कौतुक अस जानौ । आयो वर विमान परिमानौ ॥३४॥
मुख्या सखी विसाखा केरी । ते विमान पर रही घनेरी ।
वसनाभरन पुष्प मनि नाना । लिये हस्त गावत कल गाना ॥३५॥
स्वारोचिष सोई तन जानौ । सहचरि अग भयो परि मानौ ।
भूषन वसन तासु अग साजे । वरषि प्रसून वाद्य वर बाजे ॥३६॥
नाम कह्यो चपा अस गाई । लह्यौ प्रमोद सबन उर लाई ॥
मै ढिग जाय लखी सो लीला । धन्य जुगल प्रभु करुणा सीला ॥३७॥
मो ते तिन तें शिष्टाचारा । सनत्कुमार भयो सुख भारा ॥
चपा निकट लखी मै जाई । कहा कहौ शोभा अधिकाई ॥३८॥
माधवि मो तन कह्यौ जनाई । गोपेश्वर सुनियें सुख पाई ॥
जूथ विसाखा जू बहु जानौ । एक जूथ पालक इन मानौ ॥३९॥
तुम्हरी कृपा लह्यौ पद ऐसो । गाय न सके वेद विधि तैसो ॥
अस कहि बिदा भई लै जाना । उन हमहू पायो सुख नाना ॥४०॥

दोहा—स्वारोचिष मनु स्वर्गपति, सकल देव सिर मौर ।
उतम अधिकारी कह्यो, जिन पाई अस ठौर ॥१॥
यह पद्धति लव निमिष हू, जै मन मै थिर होय ।
सनत्कुमार श्रीजुगल पद, लहै न ससै कोय ॥२॥
प्रभु महिमा दिसि हेरि नित, सुगमहोत सब रीति ।
अपने कर्मन ओर लखि, जग पावत अति भीति ॥३॥
जुगल नाम जीहा सुमिरि, महा अधम इह बार ।
सनत्कुमार अपार भव, सिधु होत सो पार ॥४॥
प्रश्न कियो तुम जगत हित, मोहि परम सुख दानि ।
एक कह्यौ दूजौ सुनौ, गावौ ताहि बखानि ॥५॥

❖ चौपाई ❖

मथुरापुरी प्रबल अति भूमी । जाकी समता अपर न जूमी ॥
कम किय तह अक्षै होई । करै शुभाशुभ जा विधि जाई ॥१॥
कर्मक्षेत्र गावै सब कोई । उपजे बीज परै थल सोई ॥
सुनौ तहाँ की कथा सुहाई । या प्रसग मै जो सुखदाई ॥२॥

बसै तहाँ द्विजवर इक पंडित । प्रीति प्रभू पद हिये अखंडित ॥
धर्म वैष्णव तिन को भारी । प्रभू कृपा जिन तत्व विचारी ।३॥
आगम निगम हेत सब सोजे । किये तथा ते अपर प्रबोधे ॥
सारङ्गेश नाम तिन जानौ । मूरति परम धर्म की मानौ ।४।
सौकर नाम पुत्र तिन पायो । जो श्रुति पाप सिंधु कहि गायो ॥
खेलै शिशु लीला अस क्रीडा । पेखि लगै अब उपजै ब्रीड़ा ।५॥
ज्यौं ज्यौं बढत अवस्था आवै । त्यौं त्यौं पाप मेरु प्रगटावै ॥
द्यूत कर्म अतिसै रुचि कीन्ही । धन हित चौर वृत्ति जिन लीन्ही ॥६॥
गृह धन छीन भया जब जान्यौ । पर धन सब अपनौ करि मान्यौ ॥
शिशु कन्या भरमावै घातै । धन अपहार करै सुख रातै ॥७॥
भ्रष्टाचार सकल तिन धार्‌यौ । भक्षाभक्ष न कछू विचार्‌यौ ॥
मद्य मास ते आदि अमेधा । तिन तें पुष्ट करै तन मेधा ।८।
कछू अवस्था जब अधिकानी । वेश्या तिन सरवस करि मानी ॥
धन के हेत पाप अति भारी । करै विघात सदा नर नारी ।९।
नाम पासुला गुण विख्याता । वेश्या रूप अधिक मृदु गाता ॥
जमुना पार रहै सब काला । विषयी नर ताके प्रतिपाला ॥१०॥
सौर सुने ताके गुन भारें । जाय तहा निज तन मन वारे ॥
ताके भवन रहै निसिवासर । धन अपहार करै जा ता थर ॥११॥
एक दिना वेश्या मो बोली । तेरी तिया करौं मैं गोली ॥
धन अधिकाय जाय जब ल्यावौ । तौ मेरो अग परस न पावौ ॥१२।
सौर कही सब ऐसैं करिहौं । तोर वचन गुरु सम उर धरिहौं ॥
सौर तबै चलि निज गृह आयो । सकल कुटुंब अधिक भय पायो ॥१३॥
सत्कुल जन्म सील गुन वारी । धर्म देह देखी निज नारी ॥
ताहि ताडना दै धन चाह्यौ । वेश्या दासी करौ सुनायौ ॥१४।
माता पिता कुटुंब समेता । सबहीं कष्ट लह्यौ अतिचेता ॥
तिन मिलि समत एक विचार्‌यौ । सौर बाँधि नीके करि मार्‌यौ ॥१ ॥
लाग्यो प्राण देन हठि जबहीं । धर्म लोक भय छोड़यो तबहीं ॥
सौर चल्यौ वेश्या घर आयो । माता पिता त्रास अति पायो ॥१६॥
असत्प्रजा देखी दुखदाई । तिन अतिसै प्रभु कृपा मनाई ॥
भयो विराग सर्व सुख हेतू । ते वन गवने त्यागि निकेतू ॥१७॥

सौर गये वेश्या के तीरा। रीतौ देखि भई तेहि पीरा॥
क्रोध भरी बोली अस बानी। नीच तुच्छतर ताहि बिजानी॥१८॥
अरे धूर्त्त शठ वचक पापी। दुष्ट मूढ मिथ्या आलापी॥
आगे आव वदन तव जारौं। धूरि झोकि जूती बहु मारौं॥१९॥
जो कहि गयो सो वस्तु कहा है जा अवमान्यौ सद्न जहा हैं॥
ऐसे कहि भृकुटी सो तानै। सौर लोक त्रय सूने जानै॥२०॥
कपित अग वचन नहि आवै। मनमै जुक्ति अनत विभावै॥
जा विधि अति प्रसन्न यह होवै। कृपा कटाक्ष मोरि दिसि जोवै॥२१॥
बोल्यौ अस विचारि मन माहो। तुम बिन मोहि सरन कोउ नाहीं॥
धन अति भार भयो मग माहीं। धरा गाड़ि आयो तव पाहीं॥२२॥
वेश्या मन उपज्यो कछु लोभा। बोली बहुरि जनावत छोभा॥
अरे कितव जो तू परिमानै। को अस मद सत्य करि जानै॥२३॥
सौर शपथ कोटिन विधि खाई। अल्प प्रतीति तासु उर आई॥
चलि अब धरी कहा सो देखै। तौ बानी तेरी फुर लेखै॥२४॥
पैले पार धरी सो जानौ। चलिहै भोर निसागत मानौ॥
सुनि वेश्या उर अति रिसि आई। अरे क्रूर ते मरु कहु जाई॥२५॥
सौरा त्रास वस है अस भाष। चलौ अबै जौ मन अभिलाषैं॥
चले वेगि लोभी दोउ कामी। दुस्तर जमुना देखी सामी।२६॥
बेरा बाँधि उतरि इत आये। काम लोभ दोऊ मन छाये॥
कहै पासुला सौर लबारे। देखैं ठौर कहा धन धारे॥२७॥
सौर कही बैठो तुम या थल। लै आवत मै अबै एक पल॥
लोभाधीन होय तह राजी। सौर उपाय चित्त अस साजी॥२८॥
मथुरा भीतर वेग चलौं अब। खोजौ पतन बड़ो धनी सब॥
आधी राति आसुरी वेला। भूत पिशाच करै बहु खेला।२९॥
सौर निशक चल्यौ मन माहीं। काम अध पेखत कछु नाहीं॥
सौर शरीर पुज अघ भारी। धरनी ताहि न सकै सँभारी॥३०॥
देखत प्रत असुर सब भागै। त्रास गहैं जिनि पातक लागैं॥
जा जा ओर सौर तन जाई। सो थल पाप रूप दरसाई॥३१॥
परसि सौर तन वायु जात जित। सकल जीव मन असुचि होत तित॥
ऐसे मथुरा बीथी डोलै। महा अधम पर धन चित लोलै॥३२॥

पैठ्यो काहू धनी अगारा। देख्यौ वित्त धर्‌यो बहु भारा ॥
हाटक मुद्रा मन भरि लीन्ही। सुरति पासुला तन दिसि कीन्ही ॥३३॥
आवत मग आनद उर छायो। अब सो करियै मो मन भायो ॥
निकस्यो जबही मथुरा बाहिर। मिले चौरगण लखि धन जाहिर॥३४॥
सौर अकेलौ ते बहु कोरी। मार्‌यौ बहुत लियो धन छोरी ॥
सौर अचेत पर्‌यौ ता ठामा। चोरन कियो अनत विश्रामा ॥३५॥
तिन ता धन को भाग लगायो। निज निज अस सबन मिलि पायो ॥
तिनमै एक पासुला मीता। ते निज मन कारज अस चीता ॥३६॥
चालयै अबै तासु के भवना। कछू द्रव्य दै कीजै वरना ॥
इहा पासुला धन हित लागो। बैठी सोचै कष्ट अभागी ॥३७॥
निज मति की निदा अति भावै। सौर ओर मन क्रोध बढ़ावै ॥
ता छिन मिल्यौ चोर सो जाई। जो चाहत मारग सो पाई ॥३८॥
देख्यौ विपुल वित्त निज पासा। निशा शेष उपजी मन त्रासा ॥
ते दोऊ मिलि पारै गमने। वेश्या सदन जाय सुख वरने ॥३९॥
सनत्कुमार सौर की बाता। सुनियें जथा भई सुखदाता ॥
कामाधीन होय नर जोई। ताकै अनहोनी नहि कोई ॥४०॥
सौर विचार करै मन माहीं। मोहि अधार अपर कोउ नाहीं ॥
गयो वित्त अतिसै तन पीडा। ता ढिग चलत लहत मन व्रीड़ा ॥४१॥
उठ्यौ धारि साहस अति गाढो। ज्यौं त्यौं कष्ट सहित ह्वै ठाढो ॥
लखै ताहि तन दुख नसाई। करिहै सो जो वा मन भाई ॥४२॥
अस कहि चल्यौ धरत पग डगमग। एक पासुला मै देखै जग ॥
तहा आय सो जबै न देखी। पर्‌यौ धरनि मुरछाय विशेखी ॥४३॥
जथाकथचित् लहि तन ज्ञाना। वाय च्छिप्र ह्वै सकल भुलाना ॥
धावै गिरै उठै तन तारै। ऊचे स्वर पासुला पुकारै ॥४४॥
रोदन करै विकल मुरझावै। कष्ट अपार पार नहि पावै ॥
घूमत आयो आश्रम मेरे। बार बार आरत सुर टेरैं ॥४५॥
ताको शब्द पर्‌यो मम काना। जानि दुखी मन अति अकुलाना ॥
जौ देखौं ताके ढिग जाई। दशा प्रमत्त कष्ट अधिकाई ॥४६॥
कीन्हौ भाति अनेक विचारा। कीजै कौन इहा उपचारा ॥
श्रीगुरु कृपा लही मति ऐसी। सनत्कुमार सुनो तुम तैसी ॥४७॥

राधा नाम सुनायो करणा। सौर भयो अतिसै सुचि वरणा॥
अंत करण शुद्धता छाई। प्रभु पद प्रीति बढी सुखदाई॥४८॥
मै देख्यौ ता उर अधिकारा। कह्यौ सकल पद्धति व्यवहारा॥
सुखद माधुरी लहरि प्रसंगा। आदि अंत वरन्यौ सब अंगा॥४६॥
सेवा सौर समै पहिचानी। लाग्यौ करण जुगल मुद खानी॥
दंपति पद सरोज मन लाग्यौ। सौर तहा निसि वासर पाग्यौ॥५०॥
जौ कछु प्रश्न करै मो पाहीं। उत्तर कहौ शंक मन मांही॥
इतनौ भयो तहा परिवेसा। समुझि परयौ नीकैं सो देसा॥५१॥
मोरे चित्त मोद अति छायो। सौरभ ले निश्चल पद पायो॥
कछू न्यून दिन मास बितानौ। अचरज भयो महा परिमानौ॥५२॥
वेला भोर ब्रह्म जो गाई। प्रगट्यौ वर विमान तहँ आई॥
रत्नप्रभा ते आदि अष्ट जे। श्रीललिता जू मुख्य सखा ते॥५३॥
अपर सहचरी संग अनेका जिन हिय प्रीत जुगल पद एका॥
भूषन वसन प्रसून प्रसादी। श्रीललिता दीन्हे अहलादी॥५४॥
मंगल वस्तु लिये सखि राजै। मंगल गान वाद्य वर बाजै॥
जहाँ सौर बैठ्यौ आराधै। तहा विमान लग्यौ निर्बाधै॥५५॥
मै शुभ धुनि सुनि सभ्रम मान्यौ। सौर प्रसंगन सो चित आन्यौ॥
पाप प्रचंड उदधि अनपारा। सौर लहै गोधाम अवारा॥५६॥
कौतुक हेत लख्यो मै आई। रत्नप्रभा देखी सुखदाई॥
तिन सब ते मोते व्यवहारा। भयो जथाविधि शिष्टाचारा॥५७॥
रत्नप्रभा मुख ते सब जानी। सौर लही गति मंगल खानी॥
अचरज पाय प्रश्न मै कीन्हौ। सौर समान अधम नहि चीन्हौ॥५८॥
मासहु पूरौ होनहि पायो। अचरज महा जान द्रुत आयो॥
रत्नप्रभा ससै सब खोली। श्रीमुख हेतु गिरा कहि बोली॥५९॥
जुगल प्रभू अस हियें विचारी। सौरै दीजै धाम सवारी॥
उत्तम अधिकारी गति पावै। जथायोग्य सब कोऊ गावै॥६०॥
अधम शीघ्र हमरे पद आवै। अधम उधार तबै जस छावै।
जो पापी गति वेगि न लहई। पावन पतित हमै को कहई॥६१॥
गोपेश्वर महिमा प्रभु भारा। छिन छिन आनंद होत निहारा॥
श्रीजू निज मुख आज्ञा दीन्ही। ललिता जूथपाल सखि कीन्ही॥६२॥

लवगलतिका अस नाम सुधारी । ल्यावौ जाय हमैं सो प्यारी ॥
यातें आयो वेगि विमाना । गोपेश्वर तुम सम को आना ॥६३॥
जा उपदेश लहत पद पावत । सुजस तुम्हार सकल जग गावत ॥
यह सुनि माहि भई अति लाजा । रत्नप्रभा साध्यौ सो काजा ॥६४॥
सौर सहचरी वे सब नायो । नखशिख सकल सिंगार रचायो ॥
लवगलतिका धारयौ शुभ नामा । कठ लगाय लह्यौ विश्रामा ॥६५॥
मगल गाय सुवन वरषाई । मम सुख दै लै गई लिवाई ॥
समाचार पाछे ते पायो । लोक लोक प्रति यह जस छायो ॥६६॥
जा जा लोक गयो वर जाना । पूजा करी लोकपति नाना ॥
समुझि हियें प्रभु महिमा भारी । करै प्रणाम धरा तन धारी ॥६७॥

दो०—सनत्कुमार जुगल प्रभू, करुणासिंधु अपार ।
आस्रत पर जो नेह हिय, को पावै कहि पार ॥१॥
महिमा समुझत ही बनै, गने न अत लहाय ।
नाम रूप श्रीजुगल प्रभू, तरै न को लव ध्याय ॥२॥
सकल काल परिमाण मोहि, जानि परयौ अस मीत ।
रसिक सग लव किये बिनु, लहै न मुद जन भीत ॥३॥
जथा खानिगत रत्न बहु, जानि सकै नहि कोय ।
खननहार नर जगत मैं, प्रगट करै सब सोय ॥४॥
तथा तुम्हारौ आगमन, मोहि भयो सुखसार ।
कहत सुनत प्रभु गुन विसद, बीत्यौ काल हमार ॥५॥
इस रूप श्री कृष्ण प्रभु, कियौ तुम्हैं उपदेश ।
हमसे जन पहुँचावे, परम धाम निज देश ॥६॥
सनत्कुमार तुम्हार जग, फिरिवो याही काज ।
जथा मेघ सर्वस्व दै, ठाम ठाम सुख साज ॥७॥
जद्यपि तीरथ शुद्ध है, रहै ठाम इक दौन ।
धन्य साधु तुम रसि जे, जाय करै सुचि पीन ॥८॥
भयो तुम्हारौ आगमन, जब ते मम थल माहिं ।
परमानन्द रस वरष भर, भये मग्न मन माहिं ॥९॥
सुनि तिहारे वदन ते, दोहा रीति अनूप ।
ब्रह्म सभा सवाद वर, स्वामी इस सरूप ॥१०॥

राधाकृष्ण सरूप जस, सर्व सेव्य तस धाम।
अपर लोकपति लोक सुनि, सबको सो विश्राम ॥११॥
सुचि ललचानौ मोर मन, कह्यौ स्वल्प कछु गाय।
श्रीप्रभु श्रीललिता कृपा, मति समान तुम पाय ॥१२॥

छप्पै अल्प कवित्त कछु भाख्यो लोक प्रमान।
सप्तावर्ण विभाग करि, जथा निवास अमान ॥१३॥
नित्यविहारी जुगल श्री, अगजाय जिमि जानि।
छंद रीति वरनन किया, नखसिख हित पहिचानि ॥१४॥
स्वल्प रास की रीति पुनि, वन विहार जल केलि।
भोजन सुख भरि सैन थल, निद्रा सहचरि मेलि ॥१५॥

लखे जीव माया परे, भोगै कष्ट अपार।
प्रश्न कियो श्रीजू निकट, श्रीललिता सुखसार ॥१६॥
सनत्कुमार जथा भयो, जन्म मोर सो भाखि।
श्रीललिता मिलि अगजा, प्रश्नोत्तर अभिलाखि ॥१७॥

ससै होहि निवृत्त सब, मन पावै विश्वास।
श्रीललिता मो तन कहे, छप्पै बहु इतिहास ॥१८॥
स्वामी श्रीअनिरुद्ध मिलि, नारद जो सवाद।
नाम रूप निरनै कह्यो, कारन सो निर्वाद ॥१६॥

स्वामी सेवक रूप कहि, सेवा करी प्रमान।
अष्ट जाम की रीति वर, कछू अरिल्ल बखानि ॥२०॥
चौपाई की रीति सौं, कह्यौ जन्त्र षटकोन।
ऋतु सबधी होत नित, प्रभु विहार जित जौन ॥२१॥

दंपति हास्य विनोद सुख, मडल च्यारि बखान।
जथा निवास विभूति वपु, भक्ति कृपा परिमान ॥२२॥
बिदा हमारी जथाविधि, रत्नप्रभा के सग।
आये पूछत देखते, लोक भक्त सुख अग ॥२३॥

विरजा पार सभा भई, नेह वचन उलहानि ॥
बिदा होय तब हम चले, आये लोक पिछानि ॥२४॥
ठाम ठाम मिलि सुख लियो, देव सग इत आय।
श्रीजमुना मज्जन कह्यौ, आश्रम पुहुमि रचाय ॥२५॥

नित्यविहारी जुगल पद, श्रीगुरु चरण भरोस।
कछू काल बीत्यौ इतै, जीव करत सतोस ॥२६॥
नाम रूप उपदेश लहि, मोते जीव अपार।
जुगल धाम पायो अचल, जथा भाव निर्धार ॥२७॥

अपर जीव विश्वास हित, प्रभु महिमा दरसाय।
मनु अधिकारी वर कह्यौ, सौर अधम अधिकाय ॥२८॥
सनकुत्मार अपार अति, महिमा श्रीप.रेनु।
धन्य धन्यतर सो अहै, गहै चतुर्फल देनु ॥२९॥

जुगलानद ममुद्र की, ए माधुरी तरग।
श्रीललिता मुख हम लही, भाषो तेइ सभग ॥३०॥
यह सब तुम आगमन तें, लह्यौ सिंधु सुख पूर।
सत • मिलैं जिहि कृपा करि, सो प्रभु वल्लभ भूर ॥३१॥

जा दिन ते इन बसत हे, अब लौं जो चित चाह।
सो सब विधि पूरन भई, तुम अलभ्य लहि लाह ॥३२॥
भयो कृतारथ रूप मै, आश्रम सहित समाज।
सनत्कुमार कृपा करी, भए सिद्ध मम काज ॥३३॥

सोरठा—सुनि गोपेश्वर बैन, चैन ऐन हिय नैन भरि।
बाले सब सुख दैन, सनत्कुमार विचार करि ॥१॥
गोपेश्वर प्रभु रूप, प्रगट भये तुम सर्व हित।
दीन्ही वस्तु अनूप, कृपा रावरो अधिक इत ॥२॥

गोपेश्वर तन प्रान, जौ तुम पद पर वारिये।
तौ न मन सचु मान, जैसी कृपा निहारिये ॥३॥

महिमा राउर पेखि, चित्त समुझि सुख होत अति।
कहियै काहि सरेखि, अपर न सम कोउ जगत गति ॥४॥
जो हम हिय वृत्तात, अविदित तुम ते सो नहीं।
याते यह सिद्धात, नमस्कार सब पर कही ॥५॥

अस कहि सनत्कुमार, सनमुख ठाढ़े जोरि कर।
भरी सभा अनपार, च्यारि खानि जत जाव वर ॥६॥
सहसा उठि सब कोय, सुवन वरषि जय धुनि कहै।
प्रीति परस्पर जोय, रीति अलौकिक उर गहै ॥७॥

गोपेश्वर सनकादि मिलि, जा बिधि भयो प्रसंग।
अमित अछ जस सो भयो, वर माधुरी तरंग ॥१६॥
सिंधु लहरि जे करत्त हैं, परस स्वल्प तन कोय।
भेटत सकल समुद्र ते, पाप जाहि जस होय ॥१७॥
जुगल रूप सुखसिंधु की, लहरि कही या माहि।
एकौ जे नर हिय गहैं, परमधाम ते जाहि ॥१८॥
सुनै सुनावै मोद सो, गाय विचारै हेतु।
कृपापात्र ते होहि दृढ, जुगल प्रभू भव सेतु ॥१९॥
जो जाके मन मै रुचै, गहै जुक्ति जो अल्प।
गर्भवास नहि लहै पुनि, कहै देव तेहि कल्प ॥२०॥
गोपेश्वर सनकादि वर, तिनकौ यह संवाद।
श्रीललिता पदरज कृपा, जानि भयो अहलाद ॥२१॥
बार बार ता ओर मन, धावै वरबस मोर।
लाज लगै निज दिसि निरखि, बुद्धि भाग्य बल थोर ॥२२॥
धीरज ज्ञान विचार मति, मो उर ते नहि कोय।
मन थाभा किहि भाँति अति, प्रबल कहै सब सोय ॥२३॥
मन आधीन सबै रहैं, जीतै ताहि सुजान।
यातें मन वस होय मै, कही इहै परिमान ॥२४॥
मै बोध्यो मन आपनौ, गाय जथामति मोरि।
सुनि सज्जन करि है छमा, बदौ बहुत निहोरि ॥२५॥
जैसौ आवत बोलि जिहि, सो बोलै तिहि रीति।
साधु विचारैं हेतु वर, सुनि पावै मन प्रीति ॥२६॥
करि पारी अति धृष्टता, लख्यो न अपनी ओर।
सुनि साहस करिहैं दया, संत विवेकी मोर ॥२७॥
पर हित चाहत काल सब, सज्जन सहज सुभाय।
शशि शीतलता जग भरै, को तिहि करै सहाय ॥२८॥
ज्यौ नृप प्रगट करै प्रथम, राजपथ सब हेत।
ऊँच नीच ता मग चलै, भूप सकल सुधि लेत ॥२९॥
जे प्रभु कैं वल्लभ सदा, साधु जगत सुख दानि।
तिन गाये हरि गुन अमित, भव वन राह प्रमानि ॥३०॥

तहाँ सबै गति पावही, बुध हम से मति मद।
बिगरै सुधरै हित तेई, राह धनी बल कद ॥३१॥
याते करिहै अति कृपा, सुनि गुनि गिरा भदेस।
काहू विधि ता मग चले, पहुँचै वाही देस ॥३२॥
जो ऊँचे मग पग धरै, यद्यपि है अति छोट।
साधु धनी जसवत जे, रीझि बिसारै खोट ॥३३॥
हरि जस सुधा समस्त गुण, पूर सुखद सब रीति।
मो हूतै ते मद अति, जे सुनि लह तन प्रीति ॥३४॥
पाप मलिन जिन के हृदय, ते तन दृग मति अध।
प्रगट न देखै उदै रवि, ज्यौ पीनस सुचि गध ॥३५॥
जुगलानद समुद्र तहाँ, उठै लहरि माधुर्य्य।
रसिक झकोरा लेहि नित, विमुख उलूकन सूर्य्य ॥३६॥
भव वारिधि तामै भरे, मणि घोघा सब ठाम।
भाग्य जथा जिहि लाभ तस, अस विचार सुख धाम ॥३७॥
जगत चराचर जीव जे, प्रभु कृत सिद्ध सुभाव।
अपनो मन गुन दोष मै, देखत भाव कुभाव ॥३८॥
याते हो वदन करो, सीस धरा निज लाय।
सकल दया मो पै करौ, जे जग जीव निकाय ॥३९॥
गुरु हरि हरि जन कृपा लहि, को न होत जग जोग्य।
भक्त विमल पद कमल रज, सब विधि मोहि मनोज्ञ ॥४०॥
सो मस्तक धारन कियें, जानि पर्‍यौ अस मोहि।
जुगल सिंधु माधुर्य्य वर, लहरि बसी हिय सोहि ॥४१॥
अल्ह हृदय पचि सकि नही, बाहिर निकसी धाय।
लहरि बहरि परिवर्ण कछु भयो ग्रथ समुदाय ॥४२॥
जुगल प्रभू पद सुमिरि हिय, श्रीललिता बल पाय।
कही माधुरी लहरि कछु, मै लघुमतिसम गाय ॥४३॥
मिष्ट लग्यो जीहा अधिक, लहरि माधुरी पर्स।
ज्ञान इतौ मो मै कहा, होत निरस कै सर्स ॥४४॥
समुझि परत जो मोहि कछु, कह त्यौ तथा विचारि।
यह भरोस मन दृढ़ कियौ, लैहै सत सुधारि ॥४५॥

जौ श्री ललिता उर कृपा, मोपै है लवलेस।
तौ भाखौं या के गुने, पावै तहा प्रवेस ॥४६॥

विंध्य निकट तट सुर्धुनी, गिरिजा पत्तन ग्राम।
हरि भक्तन कै आश्रैं, कृष्ण दास विश्राम ॥४७॥

अथ माधुर्य्य सुलहरि अस, कहियै जाकौ नाम।
कृष्ण दास मुख श्री कृपा, प्रगट भयो ता ठाम ॥४८॥

अष्टादस सत लीजियै, सबत बावन सग।
भाद्र मास सुख सिंधु श्री, जन्मारभ तरग ॥४९॥

तिरपन सबत कौ अमल, अति वैसाख सुमास।
लहरि माधुरी सुख लह्यौ, सापूरन मन आस ॥५०॥

यत्पद्माकरपद्मसद्मसुखद श्रेयावधि सपद्मम् ।
यन्नारायणसर्वसौख्यशुभद हृत्पपद्ममोदावहम् ॥
तद्राधावरपादसिंधुप्रभव सर्वान्समीहास्पदम् ।
त सिंधु प्रणमामि चित्तशिरसी श्यामानुगाख्योह्यहम् ॥१॥

कात्या भूमिसरोजनीलकमले तुच्छीकृतेवर्ण्यणे ।
सजाता प्रतिबिबतस्तु हरिता यूनो छवि सा च वै ॥
दुर्ज्ञेया श्रुतिब्रह्मशंभुप्रमुखैर्यत्नैर्हि भक्ति विना ।
तत्साद्धं हृदि चिंतयामि युगल श्रीकृष्णदासोह्यह ॥२॥

उदयति यस्मिन्सिंधौ माधुर्य्यलहरिर्भर ।
तस्मिन्पिपासा सवृद्धा कृष्णदासस्य मानसे ॥३॥
राधा राधा पुनराधा राधा राधास्मराम्यह ।
कृष्णदासोन जानाति राधा नामाद्विना पर ॥४॥

इति श्रीकृष्णदासविरचितयुगलानंदसमुद्रमाधुर्य्यलहरिर्नाम
समाप्तोऽय ग्रन्थ ॥

आचार्य बलदेव उपाध्याय,
प्रोफेसर हिन्दू विश्वविद्यालय की
रचित पुस्तकें :—

(१) भारतीय दर्शन—मंगलाप्रसाद पुरस्कार, बिरला पुरस्कार से सम्मानित प्रामाणिक दर्शनग्रन्थ। परिवर्धित चतुर्थ संस्करण मूल्य ८)

(२) बौद्ध दर्शन मीमांसा—डालमिया पुरस्कार २१००) तथा उत्तर प्रदेशीय सरकार के द्वारा दत्त १२००) से पुरस्कृत प्रामाणिक बौद्ध-दर्शन ग्रन्थ। मूल्य ६)

(३) भारतीय साहित्यशास्त्र—भारतीय आलोचना शास्त्र का अनुपम-ग्रन्थ मूल्य ८)

(४) धर्म और दर्शन—भारतीय दर्शन का पूरक ग्रन्थ। मूल्य ३)

(५) कवि और काव्य—संस्कृत कविता तथा कवियों की विस्तृत आलोचना। मूल्य ३)

(६) संस्कृत साहित्य का इतिहास— मूल्य ५)

(७) आचार्य शङ्कर—अद्वैत वेदान्त के प्रतिष्ठापक आचार्य की जीवनी तथा उपदेश का अनुपम विवरण। मूल्य ३)

(८) आर्य संस्कृति के मूलाधार—भारतीय संस्कृति का मार्मिक विवेचन। मूल्य ५॥)

शारदा मन्दिर, काशी।